CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

CC-0. Digitized by eGangotri, Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

श्रीहरिः

॥ श्रीमद्भगवद्गीता ॥

॥ सटीकम् ॥

॥ शिवकुमार प्रसाद मिश्रः ॥

॥ मु० कोवढलिया ॥

॥ पो० दरौली ॥

॥ जि० छपरा ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

* भगवद्गीता सटीक *

जिसमें
श्रीमत्परमहंस परिव्राजक श्रीस्वामी आनन्दगिरि
महाराज की बनाई हुई श्रीभगवद्गीता उप-
निषदों की भाषा टीका संयुक्त है ॥
जो
श्रीमद्ब्राह्मणवंशविद्वज्जनैर्वन्दिता श्रीवैष्णव
सम्प्रदायचन्द्रिका परम उदार श्री जानकीदेवी
जी की आज्ञानुसार दिल्ली में छपी थी ॥
वही
पांचवींबार
विष्णुभक्तउपासकों और हरिपदप्रेमानुरागियोंके अनुरागार्थ ॥

* लखनऊ *
मुंशी नवलकिशोर (सी, आई, ई) के छापेखाने में छपी
नवम्बर सन् १९०४ ई० ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

इस मतलबमें जितने प्रकारकी उपनिषद् छपी हैं वे सब नीचे लिखी हैं ॥

केनोपनिषद् भाषाटीकासहित =)

सामवेदीय तलवकारशाखीय भाषा टीका सरल मध्यदेशी हिन्दीभाषा में है जिसको पण्डित यमुनाशंकर ने राजशास्त्री मिहिरचन्द की सहायता से अनुवाद किया इसमें भी पदों के अन्वयपूर्वक भावार्थ स्पष्ट किया है और ऐसा टीका किया है कि अल्पज्ञ मनुष्यों के भी समझ में आजावे ॥

ईशावास्य उपनिषद् भाषाटीकास०-)॥

पंचोली यमुनाशंकर नागर ब्राह्मणकी भाषा टीका सहित—जिसमें मन्त्रों के अर्थ समझने के लिये पदोंके अन्वय किये गये और फिर पदार्थ की रीतिपर समझाकर भावार्थ स्पष्ट कियागया ॥

प्रश्नोपनिषद् भाषाटीकासहित ≡)

पंचोली यमुनाशंकर नागर ब्राह्मण की भाषा टीका सहित—इस में भी सब ऊपर के लिखेहुये अलंकारहैं शिष्य के पूछेहुये अच्छे प्रश्नों का उत्तर गुरुने बताकर ब्रह्मरूप लखाया है ॥

माण्डूक्योपनिषद् भाषाटीकासहित ॥=)

पंचोली यमुनाशंकर नागर ब्राह्मण की भाषा टीका सहित—जिस में ओंकार स्वरूपका प्रतिपादन व ब्रह्म और आत्माकी अभेदता का निरूपण चार प्रकरणों में अच्छी तरह से किया है ॥

कठवल्लीउपनिषद् भाषाटीकासहित ≡)॥

पंचोली यमुनाशंकर नागर ब्राह्मण की भाषा टीका सहित—इसमें भी ऊपर लिखेहुये के अनुसार भावार्थ स्पष्टकियागया और समझने की सुगमताके लिये गुरुशिष्यसंवाद पूर्वक पूर्णज्ञान लखाया है ॥

मुण्डकउपनिषद् भाषाटीकासहित =)।

पंचोली यमुनाशंकर नागर ब्राह्मण की भाषा टीका सहित—जिसमें वादी

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

भगवद्गीतासटीक ॥

मङ्गलाचरण

ॐ तत्सत् १ ॐ तत्सत् २ ॐ तत्सत् ३

ॐ श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ श्रीसच्चिदानन्दस्वरूप परमअनूप श्रीमहाराजाधिराज श्रीस्वामी श्रीकृष्णचंद्रजी महाराज के चरणकमलों को वारंवार साष्टांग दण्डवत् नमस्कार करके श्रीमहाराजजीकी कृपा और आज्ञासे परमानन्द की प्राप्ति के लिये अपनी बुद्धि के अनुसार ब्रह्मविद्या योगशास्त्र श्रीभगवद्गीता उपनिषदों का तात्पर्यार्थ हरद्वार मथुराजी के मध्यस्थ द्वारनिवासियों की प्राकृत देशभाषा में निरूपण करताहूं कैसेहैं श्रीकृष्णचन्द्र महाराज कि नित्यमुक्त पूर्णब्रह्म सनातन उत्तम पुरुष शुद्ध आत्मा स्वयंप्रकाश एकरस स्वतंत्र श्रेष्ठ परात्पर परमपुरुष परमधाम परमगति परमपद परमपवित्र परमआत्मा निराकार निर्विकार निरवयव निरंजन निर्गुण अद्वैत अरूप अखण्ड अज अमर अचल अच्युत अक्षर अव्यक्त अगोचर अप्रमेय अचिन्त्य अनन्त हैं, और भी विष्णु शिव शक्ति चिति देवादि अनन्त विशेषण हैं फिर कैसे हैं श्रीमहाराज कि चरणकमलनेत्रादि अवयव अनुपम महासुन्दर मनोहर हैं जिनके पीताम्बरादि वस्त्र धनुषआदि शस्त्र वंशी चकडोर मुकुट पंखमोर मकरवत् आकृतिवाले कलकुण्डल और रविवत् आकृतिवाले बाले श्वेत रक्त हरित मोतियों के सहित जटित पँचरंगी मणि मोतियों की माला और अनेक रंगवाले फूलोंकी माला कड़े पैंजनी जड़ाऊ तगड़ी पहुँची अँगूठी छल्ले अंगदादि आभूषण धारणकर रक्खेहैं जिन्होंने बालों में अतर मस्तकपर केसर का प्रातिपदिक चन्द्रवत् तिलक जिसके बीच में

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

सूर्य्यवत् बिन्दा चन्दन का लगा रक्खा है जे किसी समय धूलि भस्म भी अखण्ड धारण रखते हैं पान इलायची चाबते रहते हैं बाल किशोर तरुण अवस्था है जिनकी अकेले वा युगलरूप होकर वा स्वामी सखा बनकर वनों में और चित्र विचित्र मन्दिरों में लीला विहार करते रहते हैं मन्द मुसकानसहित बोलना है जिनका इस प्रकार अचिंत्य अलौकिक आश्चर्य अगोचर अतर्क्य अप्रमेय अनन्तप्रभुता शक्ति बल वीर्य्य विद्यावान् हैं जैसे अपने बलके अनुसार आकाश में पक्षी की गति है इसी प्रकार वेद शास्त्र ऋषीश्वर मुनीश्वर शेष शारदा सन्त महन्त महात्मा साधु भक्त पण्डित असंख्यात कल्पों में अबतक परमानन्दस्वरूप श्रीकृष्णचंद्र महाराज मेरे स्वामीके गुणों को पूर्वोक्त रीति करके वर्णन करते चले आते हैं तो भी पार नहीं पाते परमानन्दस्वरूप होने से श्रीमहाराज सबको प्यारे लगते हैं आनन्दस्वरूप से किसी का वैर नहीं किसी को आनन्दकी असूया क्रुद्ध हुआ सुना भी न होगा और जो आनन्द पदार्थको परमानन्दस्वरूप श्रीकृष्णचंद्र महाराजसे पृथक् एकगुण विलक्षण अर्थ समझते हैं और श्रीमहाराज को आनंदजनक और आनन्दगुणक रूपादिमान् पदार्थवत् समझते हैं तो भी परमानन्दस्वरूप श्रीकृष्णचंद्र महाराज से सिवाय श्रेष्ठ और कोई पदार्थ आनन्दगुणक और आनन्दजनक नहीं श्री कीर्त्ति सत्य संतोष समता शमदमादि यह सब उसी भगवत् की विभूति हैं जो कदाचित् वेद शास्त्र मूर्तिमान् होकर और शेष शारदा और ऋषीश्वर मुनीश्वर और वर्त्तमानकाल में जो सन्त महन्त पण्डित हैं वह सब मुझसे ऐसा कहें कि परमानन्दस्वरूप श्रीकृष्णचंद्र महाराजसे पृथक् श्रेष्ठ स्थावर वा जंगम सावयव वा निरवयव प्रमेय वा अप्रमेय कोई और पदार्थ है प्रत्युत प्रत्यक्ष अनुभव भी करादें तो भी मुझको उस पदार्थ की चाह नहीं और न मैं जिज्ञासा करता हूं और न कुछ इस बात के निर्णय करने में मेरा किसी से वाक्यवाद है और जो श्रीमहाराजभी यही कहें तो उनका कहना मेरे शिर माथेपर है परन्तु मुझ में तो यह सामर्थ्य नहीं कि परमानन्दस्वरूप श्रीमहाराज से मैं पृथक् होजाऊं जो श्रीमहाराज यह जानें कि किसी प्रकार हमसे पृथक् होसक्ता है तो श्रीमहाराज में अनन्त अचिंत्य शक्ति है श्रीमहाराजजी मुझको आप से पृथक् कर दें यह मेरी प्रीति नाता सम्बन्ध ऐसा है कि जो श्रीमहाराज भी इस को कदाचित् पृथक् किया चाहें तो भी नहीं हो सक्ता फिर औरों की तो क्या सामर्थ्य है क्योंकि यह सम्बन्ध लौकिक वैदिक नहीं कि जो शब्द अनुमानादि प्रमाणों से जाता रहे यह अ-

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

नादि तादात्म्य सम्बन्ध है जो श्रीमहाराज में सद्गुण समझकर मेरी प्रीति हुई हो तो असद्गुण जानकर जाती रहे मेरी प्रीति स्वाभाविकी सनातन है प्रमाण-जन्य नहीं और जो भगवद्भक्त श्रीमहाराज की भक्तवत्सलादि सद्गुण कर लो किंवा वैदिक विद्यामें नागर राजराजेश्वर सुरेश्वर ईश्वर परमेश्वर महेश्वर परात्पर दुःखदरिद्रहर श्रीमान् सामर्थ्यवान् शोभा सुन्दर की खानि सुकुमार परमउदार दाता जगत्का कर्त्ता भर्त्ता अन्तर्यामी जगत्स्वामी हिरण्यगर्भ विराट् विश्वरूपादि कहकर प्रत्यक्ष शब्द अनुमानादि प्रमाणों करके सिद्ध करते हैं ऋषीश्वर मुनीश्वर शेष शारदादि की साक्षी देते हैं सो वे कहो समझो इसीप्रकार प्रीति करो उनको इतना सावकाश है मुझको तो चर्चा करनेका वा आपसे पृथक् पदार्थ में मनलगाने का न सावकाश है न सामर्थ्य है मेरी प्रार्थना तो श्रीमहाराज से यह है कि जो कुछ अबतक मुझ से मूर्खताहुई सो तो हुई और मेरे भलेकेलिये मेरे निमित्त अबतक जो कुछ आपको मेरी जान में विक्षेप हुआ सोभी हुआ परन्तु अब श्रीमहाराज को मेरे निमित्त किंचित्मात्र भी विक्षेप न हो मुझको यह बड़ा आश्चर्य है कि वे कैसे आपके भक्त थे जिन्हों ने आपसे सहायचाही द्रौपदी गजेन्द्रादि की ऐसी क्या क्षति होतीथी जो अपने प्यारे को विक्षेपदिया श्री रामचन्द्र अवतारमें आपने हनुमान्जीसे यह कहा कि हे वीर ! जो कुछ तुमने हमारी सहायभक्तिकरी सो लोकों में प्रसिद्ध है उसके प्रत्युपकार में यह वरदान देताहूं कि ऐसा कोई काल न हो जो मैं तुम्हारा सहाय करूं हे भगवन् ! यही मैंभी चाहताहूं और लिखेदेताहूं कि ऐसाही आपका चिन्तन और निश्चय मेरेलियेहो अबतक जो जो अनुग्रह आपने मुझपर किये कहांतक कहूं अनन्त हैं जो कुछ आपने मेरा उपकार और उद्धार अपनी तरफ देखकर किया उसकी तो अवधि होचुकी और जो कुछ मुझको करनाचाहिये था उसका प्रारम्भ भी न होनेपाया केवल अपनी राज्य करते हुयेही आपने सफल करके मुझको सनाथ और कृतार्थ करदिया अब कि यह आपकी महिमा है तो मैं सिवाय आपके और किसको श्रेष्ठ उत्तम ब्रह्म परमेश्वर मानूं और इस जगह कैमुतिकन्याय है कि प्रथम मैं सकाम संसार के दुःखों में दुःखी अनेक जंजाल झगड़ों में फँसाहुआथा एक समय विषयानन्द में मनको बहलानेकेलिये आपकी लीलानुकरण और स्वरूपानुकरण को देखा मैंने सो वह अनुकरण आपके स्वरूप और लीलाके सामने लेशमात्र भी नहीं था और प्राकृत भाषामें आपके गुणोंको सुना अबतक सिवाय आपकी कृपाके नहीं जानताहूं कि इसमें क्या कारणथा जो अपने आप विना यत्नके आपकेगुण स्व-

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

रूप में प्रीति होनेलगी और दुःखों की निवृत्ति और आनन्दका आविर्भाव होने लगा तब तो मैंने केवल आपके चरित्र और गुणों के श्रवणकोही दुःखों का दूर करनेवाला और परमानन्दको प्राप्त करनेवाला समझा फिर ऐसा हुआ कि वेद शास्त्रों में और बड़े बड़े महात्मा सन्त महन्त पण्डितों के मुख से आपकी बड़ाई सुनी आपका बड़ा प्रभावसुना फिर वेद गीतादि शास्त्र और सुपात्र सज्जन आप के भक्तोंको प्राणों से भी प्यारा मैंने जानकर उन में मन लगाया शास्त्र और सद्गुरुओंकी कृपा और आपके प्रथम अनुग्रहसे मुझको यह ज्ञानहुआ कि आपही साक्षात् परमानन्द ज्ञानस्वरूप हैं जिसके वास्ते सबलोग नानाप्रकार के यत्न करते हैं आपके जानने में कुछभी यत्न नहीं और न किसी साधन की इच्छा है क्योंकि आप स्वयम्प्रकाश ज्ञानस्वरूप हैं आपको बुद्ध्यादि जड़ पदार्थ कैसे प्रकाश करसक्ते हैं इसप्रकार अपने आप साक्षात् आप मुझको अनुभव अपरोक्ष हुये अब मैं भला आपसे कैसे पृथक् होसक्ताहूं तात्पर्य जब गृहस्थ आश्रम में अनेक संसार के झगड़ों में और शास्त्रार्थ जानने के लिये मत मतान्तर के झगड़ों में लगाहुआ था तब तो सबको त्यागकर आपके सम्मुख हुआ फिर अब आप से कैसे जुदा होसक्ताहूं ॥

यह मङ्गलाचरण समाप्त हुआ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

वक्तव्य अर्थ को मनमें रखकर उसकी संगति के लिये प्रथम और कथा कहनी उसको उपोद्घात कथा कहते हैं तात्पर्य्य गीता और गीता पर टीका जैसे और जिसवास्ते बनी सो कथा लिखते हैं बिना उपोद्घात कथा सुने तात्पर्यार्थ गीताका समझमें न आवेगा सोईसुनों श्रीमत्परमहंस परिव्राज श्रीस्वामी मलूकगिरिजी महाराज मुझ आनन्दगिरि इस सज्जन मनोरञ्जनी टीकाकारके गुरुदेव हैं उनके चरणकमलों का पूजनेवाला अनुचर शिष्य हूं मैं और श्रीपण्डितराज पण्डितजी श्रीमोहनलालजी महाराज रहनेवाले कुरुक्षेत्रान्तर्गत कपिस्थलग्रामके मेरे विद्यागुरु हैं सुयश कीर्त्ति और माहात्म्य इन दोनों महामुनीश्वरोंका वर्त्तमानकालके महात्मा सज्जनलोग सबही जानते हैं मैं क्या लिखूं यह दोनोंमहाराज वर्त्तमानकाल में साक्षात् श्रीवेदव्यासभगवान् और श्रीभगवत्पूज्यपाद श्री शङ्कराचार्य महाराजहैं इन दोनों महाराज और श्रीकृष्णचन्द्र महाराज और श्री स्वामी आत्मागिरिजी महाराजकी कृपा सहाय से और अन्य महापुरुषों की भी सहाय से मुख्य बीबीवीरा ब्राह्मणी प्रसिद्ध बीबी झुनिया देवी के निमित्त यह भाषा टीका बनाई है जिस बीबीवीरा ने श्रीबीर बिहारीजी महाराज और श्री वीरेश्वर महादेवजी महाराज का मन्दिर सिकन्दराबाद में बनाकर और विधिवत् संवत् १९२७ में प्रतिष्ठा करके जो कुछ द्रव्य उसकेपास था जिस जगह उसका सत्त्वथा जो उसके आश्रयथा समस्त श्रीमहाराज के समर्पण करके उसी दिन विधिवत् सर्वस्वदानका संकल्प करदिया एक पुरानी धोती अपने पास रक्खी और कुछ अपने पास नहीं रक्खा फिर श्रीवृन्दावनमें जाकर वासकिया पहलेभी पुष्करादि बहुत तीर्थोंका सेवन किया श्रीजगन्नाथस्वामी श्रीकेदारनाथ बदरीनारायणस्वामी श्रीनाथजी के दर्शनकिये ऐसे ऐसे पुण्य करनेसे उनका अन्तःकरण शुद्धहुआ और भगवत्तत्त्व जानने की उनकी इच्छाहुई, सुखपूर्वक उनको ब्रह्मतत्त्व जानने के लिये मुख्य बीबीवीरा ब्राह्मणी के निमित्त यह टीका बनाई गई है विशेषकरके शङ्करभाष्य और आनन्दगिरिजी की टीकानुसार भले अर्थ लिखा है और किसी किसी जगह श्रीधरीटीकानुसार और किसी किसी जगह महापुरुषों के मुखारविन्द का श्रवण कियाहुआ अर्थ और किसी किसी जगह अपनी बुद्धिके अनुसार भी लिखाहै श्रीकृष्णचन्द्र का अर्जुन से जैसे संवाद हुआ प्रथम सो सुनना अवश्य है इसवास्ते वह प्रसंग लिखते हैं श्रीकृष्णचन्द्र महाराजजी के अर्जुन परमभक्तथे अर्जुन को बिना ब्रह्मज्ञान युद्धके [illegible] शोक मोह होगया श्रीमहाराज उस समय अर्जुन के पास थे [illegible]

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

से इसको यह शोक मोह हुआ है ब्रह्मज्ञान सुनाने से दूरहोगा यह विचारकर परमकरुणा की खानि श्रीभगवान् ने समस्त वेदों का सार ब्रह्मज्ञान साधनों के सहित उपदेश कर स्वधर्म्म में स्थित करदिया क्योंकि विना स्वधर्म का अनुष्ठान किये और विना अन्तरङ्ग उपासना किये ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति नहीं ऐसे विचित्र समय श्रीमहाराज ने जो यह ब्रह्मज्ञान अर्जुन को उपदेश किया इसका तात्पर्य यह है कि कोई वक्ता तो ऐसी रीति से कथा कहते हैं कि जो श्रोता का चित्त भले प्रकार एकाग्र हो तब वक्ता का तात्पर्य्य समझमें आता है और किसी वक्ताकी कथा विक्षेपचित्त को भी एकाग्र करदेती है सिवाय इसके महत्पुरुषों के वाक्य में सामर्थ्य होती है श्रीमहाराज ने अर्जुन को ऐसी रीतिसे उपदेशकिया कि विक्षिप्त चित्त भी एकाग्र होजावे महात्मा सर्वज्ञजन देश काल वस्तु के सहित अधिकार समझकर कहते हैं वेदों में जो विस्तारपूर्वक ब्रह्मविद्या का निरूपण है वहां देश काल वस्तु के सहित अधिकार देखना चाहिये और गीता में संक्षेप करके जो ब्रह्मज्ञान निरूपण किया है यहां भी देश काल वस्तुके सहित अधिकार देखना योग्यहै सत्ययुग द्वापर त्रेताकालमें ब्राह्मण राजा वनमें वास करके तपसे पापों को नाश कर ब्रह्मविद्याका विचार करते थे अवस्था उनकी बहुत होतीथी रोगी कम होतेथे उनकेवास्ते वेदों में विस्तारके सहित ब्रह्मविद्या का उपदेश युक्त है दूसरे यह कि वह उपदेश समष्टि के वास्ते है किसी एक अपने प्यारेकेवास्ते नहीं कि जो विचार २ अर्थ लिखाजावै और यह उपदेश एक अपने प्यारे सखा परम-भक्तके वास्ते इसहेतु से श्रीमहाराज ने बहुत विचार के सहित यह गीताग्रन्थ कहाहै सिवाय इसके श्रीमहाराजने यह भी समझा कि अर्जुन से ऐसी रीतिके साथ कहना चाहिये कि जो शीघ्र अर्जुन की समझ में आजावे नहीं तो प्रथम हँसी हमारी है क्योंकि (वक्तुरेवहितज्जाड्यं यत्रश्रोतानबुद्ध्यते) तात्पर्य कहनेवाले की भाषा अच्छी नहीं कि जो श्रोता नहीं समझताहै अब भलेप्रकार विचार करना योग्यहै कि यह गीताग्रंथ कैसा उत्तमहै कि जिसके वक्ता श्रीकृष्ण-चन्द्र महाराज पूरणब्रह्म और श्रोता अर्जुन और वेदव्यासजी कर्त्ता हैं इन तीनों की महिमा जगत् में प्रसिद्ध है परमकरुणाकर श्रीवेदव्यास नागरने यह विचार कर कि विशेषकरके कलियुगमें मन्दबुद्धि आलसी कुतर्की मन्दभाग्य कम अव-स्थावाले रोगी होंगे और खेती वनिज नौकरी भिक्षा इन चार प्रकार की आजी-विकाहीमें दिन रात्रि खोवैंगे उनके उद्धारके वास्तेभी यत्नकरदेना योग्यहै क्योंकि कलियुगमें वेदोंका पढ़ना सुनना तो पृथक् रहा वेदोंकी पोथीभी वास्ते प्रमाण देने

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

के मिलनी कठिन होगी जो अर्थ जिसके मनमें आवेगा संस्कृत वा भाषाकी पोथी बनाकर कह दिया करेगा कि यह ग्रंथ अनादिहै वा वेदोंके अनुसार है उसी रास्ते पर मूर्ख अनजान चलने लगेंगे वह समय अब वर्त्तमान हो रहाहै कैसे कि असंख्यात नाममात्र के पण्डितों ने वेदकी पोथी भी नहीं देखी और बातें वेदों का प्रमाण देकर बोलते हैं प्रत्युत बहुत लोग वेदों से भी परेकी बात कहते हैं और जो जो झगड़े उपाधिजल वितण्डा जीवों के आपसमें परमार्थका निर्णय करने के लिये फैल रहाहै सो प्रसिद्ध है एक जीवका एकजानी शत्रु होरहा है और अनेक पुरुषों की इन झगड़ों में जान जातीरही और परमार्थ की जगह परमार्थ फैलगया ॥

तात्पर्य ऐसी ऐसी व्यवस्था समझकर व्यासजी ने श्रद्धावानों के लिये उसी अर्थको जो श्रीभगवान् ने युद्धके प्रारम्भसमय अर्जुन को उपदेश कियाथा उसी को सबसे श्रेष्ठ समझकर युक्तिके साथ सातसौ ७०० श्लोकों में लिखकर श्रीमद्भगवद्गीता उपनिषद् उन भगवद्गीता मंत्रोंका नामरक्खा अठारह अध्याय किये हर एक अध्यायके अन्त में श्रीभगवद्गीता उपनिषद् ब्रह्मविद्या योगशास्त्र उस ग्रंथको लिखा तात्पर्य यह ग्रंथ योगशास्त्र है भोगशास्त्र नहीं और इसमें ब्रह्मविद्याका निरूपणहै कर्म्मउपासना योग इस ब्रह्मज्ञानका साधन कहाहै और यह श्रीभगवान् के कहेहुये उपनिषद् हैं सब श्लोक इस ग्रंथके मंत्रहैं और रक्षाके लिये इस ग्रंथको महाभारतमें जमाया उन सातसौ मंत्रमें बहुतमंत्र तो साक्षात् श्रीकृष्णचन्द्र महाराजजी के मुखारविन्द से प्रकटहुये हैं और कुछ श्लोक व्यासजीके बनायेहुये हैं इस गीताके श्लोकका चौथाभाग अर्द्धभागभी मंत्रहै इस हेतुसे मंत्रशास्त्रवाले इस गीताको मालामंत्र कहते हैं और मंत्रशास्त्रकी विधिपूर्वक पाठकरते हैं जो सकाम पाठ करते हैं उनको तो मनोवाञ्छित फल होताहै और जो निष्काम पाठ करते हैं उनका अन्तःकरण शुद्ध होकर ब्रह्मज्ञान द्वारा उनको परमानन्दकी प्राप्ति होती है गीतामाहात्म्यके ग्रंथ बहुत हैं उनमें एकएक अध्यायके श्रवण पाठ करनेका माहात्म्य और अर्द्ध अर्धार्द्ध श्लोकों के पढ़ने सुननेका माहात्म्य जुदा जुदा इतिहासोंके सहित लिखाहै उन ग्रंथों से प्रतीत होताहै कि असंख्यात पापी अंत्यज दुराचार प्रत्युत पशु पक्षी भूत प्रेत राक्षसादि गीताजीके एकएक अध्याय आधे २ श्लोकोंको पक्षी राक्षसोंके मुखसे अनजानमें अश्रद्धापूर्वक श्रवण करके और गीतापाठीकी चिताके धूम और उसके देहकी भस्मका स्पर्शकरके और उसके अस्थिसम्बन्धि जलका स्पर्श कर अन्तकालमें परमपदको प्राप्तहुये यहां कैमुतिक

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

न्यायहै कि जो अधिकारी विधिश्रद्धा सहित श्रोत्रीय ब्रह्मनिष्ठोंसे पढ़ते सुनतेहैं वे मुक्त होजावें तो इसमें क्या कहनाहै जिसको इतिहासों के सहित गीतामाहात्म्य के श्रवण करनेकी इच्छाहोवै तो पद्मपुराण में पृथक् पृथक् अठारह अध्यायों के अठारह माहात्म्यहैं लक्ष्मीनारायण का और सदाशिव पार्वतीजी का संवाद है उसमें और स्कन्दादिपुराणों में भी बहुत हैं सिवाय इसके प्रत्यक्ष प्रमाण में किसी और प्रमाणकी कुछ इच्छा नहीं होती बहुत महात्मा वर्त्तमानकाल में प्रत्यक्ष देखलो कि जो केवल गीताजीके प्रतापसे महात्मा सन्त साधू सज्जनहोगये हैं इस गीतापर बावन टीका प्रसिद्धहैं और दो भाष्यहैं एक तो हनुमान्जी का बनायाहुआ और दूसरा श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य्य श्रीमत्शङ्कराचार्य्यजी का बनायाहुआ जिसपर श्रीस्वामीआनन्दगिरिजी की टीकाहै और हनुमान्भाष्यपर श्रीमहाराज पण्डितराज मोहनलालजी की टीकाहै और श्रीसम्प्रदाय और माधवीसम्प्रदाय और निम्बार्क सम्प्रदायवाले भी अपने आचार्योंके किये हुये भाष्य गीतापर कहते हैं सो उन भाष्योंको उनकी सम्प्रदायवाले पढ़ते सुनते हैं इसीप्रकार बावन टीकासे सिवायहैं कम नहीं और देशभाषा और यामिनीभाषामें भी बहुत हैं और इस ग्रन्थमें किसीप्रकारका संशय नहीं जैसे कोई मनुष्यकृत श्लोकों को श्रुति स्मृति बतादेताहै और कोई श्रुति स्मृतिको मनुष्यकृत बतादेते हैं जैसे श्रीमद्भागवतको कोई कहते हैं कि यही व्यासकृतहै और कोई कहते हैं कि भगवति भागवत व्यासकृतहै यह मनुष्यकृतहै तात्पर्य गीता ऐसा ग्रंथनहीं इस ग्रंथको अन्य द्वीपोंके निवासी भी सब ग्रन्थों से श्रेष्ठ बताते हैं सिवाय इसके बड़े बड़े पण्डित साधु विरक्त षट्शास्त्रों के पढ़ेहुये कि जो राजलक्ष्मी पुत्रादि पदार्थों को त्याग करके ब्रह्मलोकादि को तृणकी बराबर समझकर बनवास करते हैं वे भी एक पुस्तक गीताजी की अवश्य अपने पास रखते हैं सदा पाठ करते रहते हैं तात्पर्य जितनी स्तुति महिमा श्रीभगवद्गीताजी की लिखी जावै वह कमसे भी कम है जिसकी परमानन्द की इच्छाहो वह श्रद्धा विधि सहित श्रोत्रीय ब्रह्मनिष्ठोंसे गीता पढ़े सुने नित्य पाठकरे ॥ धर्म्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे इस श्लोकसे पूर्व्व जो नव श्लोक अङ्ग करन्यासादि के जो मंत्रहैं वे सातसौ श्लोकोंकी संख्यासे पृथक् सिवाय हैं उनके सहित पाठकरना योग्यहै धर्मक्षेत्रे यहांसे लेकर दूसरे अध्यायके दश श्लोक तक सत्तावन श्लोक कृष्णार्जुन संवाद की संगतिकेलिये हैं फिर समस्त गीता में मुक्तिका साक्षात् कारण केवल ज्ञाननिष्ठाका वर्णन है और ज्ञाननिष्ठाका उपाय कर्म्मनिष्ठाका निरूपण है समस्त गीताशास्त्र में ये दो निष्ठा हैं उपासनाका

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

कर्म्मनिष्ठाही में अन्तर्भावहै प्रथम के छः अध्यायों में कर्मकाण्डका वर्णन है और सातवें अध्याय में बारहतक उपासनाका वर्णन है और तेरह से अठारहतक ज्ञान निष्ठाका निरूपण है जैसे वेदोंमें कर्म उपासना ज्ञान तीनकाण्ड हैं ऐसेही गीता जीमें तीनकाण्ड हैं ये तीनों काण्ड परस्पर सापेक्ष हैं अर्थात् स्वतंत्र ये तीनों मुक्ति के कारण नहीं कर्म तो उपासना ज्ञानकी अपेक्षा रखता है और उपासना प्रथम कर्मकी और फिर ज्ञानकी अपेक्षा रखता है और ज्ञान प्रथम कर्म्म उपासना दोनों की अपेक्षा रखता है कर्म्म करने से अन्तःकरण शुद्ध होता है उपासना से चित्त एकाग्र होता है फिर ज्ञानद्वारा मुक्ति होती है इसप्रकार ये तीनोंकाण्ड परस्पर सापेक्ष हैं इसको क्रमसमुच्चय कहते हैं समसमुच्चय इसको समझना न चाहिये क्योंकि एक काल में एक पुरुषसे कर्मनिष्ठा और ज्ञाननिष्ठा इन दोनों का अनुष्ठान नहीं होसक्ता इनका स्थित गतिवत् विरोधहै कर्त्ता भी और अकर्त्ता भी एक काल में कैसे समझाजावे तात्पर्य्य यह है कि प्रथम कर्मनिष्ठा मुख्य रहती है और ज्ञाननिष्ठा गौण ॥ जब कर्मनिष्ठा परिपाक होजाती है तब ज्ञान निष्ठा मुख्य होजाती और कर्मनिष्ठा गौण फिर ज्ञाननिष्ठा परिपाकहोकर समस्त दुःखोंको मूल के सहित नाशकरके परमानन्दको प्राप्त करदेतीहै सब सन्त महन्त महात्मा वेद शास्त्रोंका यही सिद्धान्त है ॥ यह नियमहै कि महावाक्यार्थ ज्ञान के विना मुक्ति कभी नहीं होती है और महावाक्यार्थका ज्ञान जब होता है प्रथम पदार्थका ज्ञान होजावे महावाक्यमें तीनपद हैं ॥ तत् १ त्वम् २ असि ३ तत् और त्वम् इन पदोंका अर्थ वाच्य और लक्ष्यभेदसे दो दो प्रकार हैं श्रीभगवद्गीता में विचारना चाहिये कि महावाक्यार्थ किसप्रकार और कहां निरूपण हुआ सो सुनो समस्तगीता में महावाक्यार्थही श्रीमहाराज ने निरूपण कियाहै॥ तत्रतु प्रथमेकाण्डे कर्मतत्त्यागवर्त्मना ॥ त्वंपदार्थोविशुद्धात्मासोपपत्तिर्निरूप्यते १ अ० प्रथमकाण्डमें कर्मकरना उसके फलको न चाहना संग आसक्तिरहित कर्म्म करना इस मार्ग करके त्वंपदका अर्थ दो प्रकारका वाच्य और लक्ष्य निरूपण किया है शुद्ध सच्चिदानन्द स्वरूप जीवका त्वं पदका लक्ष्यार्थ है और अविद्या में और अविद्या के कार्य गुण कर्म फलमें जो सक्त सो त्वं पदका वाच्यार्थहै १। द्वितीये भगवद्भक्तिनिष्ठावर्णनवर्त्मना ॥ भगवान्परमानन्दस्तत्पदार्थोविधीयते २ अ० दूसरे काण्ड में भक्तिनिष्ठा मार्ग करके तत्पदका अर्थ निरूपण किया अर्थात् श्रीभगवान् को परमानन्दस्वरूपादिमान् जो कहा सो तो तत्पदका लक्ष्यार्थ है और सर्वज्ञ सर्वशक्तिमान् कर्त्ता हर्त्तादि स्वरूप भगवत्का तत्पदका वाच्यार्थहै २

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

तृतीयेनुतयोरैक्यंवाक्यार्थोवर्णितःस्फुटः। एवमप्यत्रकाण्डानांसम्बन्धोस्तिपरस्परम्
३ अ० तीसरे काण्डमें दोनों पदोंकी एकता लक्ष्यार्थ में निरूपणकरी सब क्षेत्रों में क्षेत्रज्ञ मुझकोंही जान तू इत्यादि श्लोकों करके स्पष्ट महावाक्यार्थ निरूपण किया इसप्रकार तीनों कालोंका परस्पर सम्बन्ध है ३ ॥

अथ संकेत ॥

इस टीका में जो संकेत हैं उनको प्रथम कण्ठ करलेना योग्य है क्योंकि हर एक जगह काम पड़ेगा सोई लिखतेहैं ॥ मू० यह मूलका संकेत है॥ अ० यह अर्थका संकेतहै॥ सि० यह सिवायका संकेतहै जो अर्थ मूलपदसे सिवाय श्लोकार्थ के बीच में लिखा है वह इस + फूल के संकेतपर्यन्तहोगा ॥ टी० यह टीकाका संकेत है जिसजगह पदका अर्थ भलेप्रकार नहीं लिखागया उसको फिर टीकामें विस्तार सहित लिखाहै ॥ पू० यह संकेत पूर्णका है पदके पूर्णकरनेके लिये चकार एकारादि श्लोकों में प्रायशः लिखेहोते हैं किसी जगह अर्थ भी देते हैं जिसजगह पदपूर्णार्थ चकारादि होंगे वहां अर्थ में पू० यह सङ्केत लिखाहोगा उ० यह सङ्केत उत्थानिका और उपोद्घातका है ॥ यह सङ्केत श्लोकके अङ्कका है पाठ करनेके समय सि० मू० टी० इन संकेतों को मनमेंही समझलेना उच्चारण नहीं करना तात्पर्य इन संकेतों को छोड़कर शेषका उच्चारण करना योग्य है ॥ अर्थ तो सब पदोंका लिखाजावेगा परन्तु टीका सब पदों की न होगी ॥

देशभाषा की स्तुति ॥

प्रथम देशभाषा सुनकर मुझको बोधहुआ है इस हेतुसे मुझको देशभाषा प्रिय लगती है मनुष्यलोक में देवभाषा तो कोई कोई बोलते समझते हैं प्रायशः सब प्राकृत देशभाषा बोलते समझते हैं और इस लोक में यह चाल है कि जो देशभाषा के ग्रन्थोंको पढ़ाते सुनातेहैं तो अर्थ उनका देशभाषाही में समझाते हैं और प्रसिद्धहै कि असंख्यात सन्त महात्मा साधु देशभाषामेंही भगवत्के गुणानुवाद सुनकर भगवत्को प्राप्तहुये और असंख्यात जन वर्त्तमानकालमें भगवत्के सम्मुख हैं मैं नहीं जानता कि कोई २ मूर्ख भाषा की निन्दा क्योंकरताहै और अपनी हँसी कराकर क्यों पापका भागी होता है हँसी तो उसकी ऐसी होतीहै कि एकआदमी देवभाषा में कथा बाँचताहुआ देशभाषा में अर्थ समझाताथा वह वक्ता देशभाषा में बोला कि देशभाषा का प्रमाण नहीं उसका पढ़ना सुनना निष्फल है यहसुन कर समझनेवाले श्रोता सब उठखड़ेहुये और देशभाषा में कहनेलगे कि वक्ता

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

तो बड़ाही मूर्ख है वक्ताको क्रोध आगया सुननेवालोंको नास्तिक मूर्ख शूद्र वर्ण-सङ्कर यह कहकर देशभाषा में गाली देनेलगा सुननेवालों ने वक्ता से कहा कि सुनो महाराज हमारे तो देशभाषा प्रमाण सफलहै गालियों का फल दुःख हम को होता है और तुम्हारे तो देशभाषा प्रमाण नहीं निष्फलहै तुमने हमारे कहने का क्यों बुरामाना और हम तो तेरे कहने में वदतोव्याघात दोष समझ कर और तुझको कृतघ्नी समझकर उठखड़ेहुये जो बोलता है उसी की बुराई करता है जिस देशभाषा की कृपासे तेरे अनेक व्यवहार सिद्ध होते हैं उसके उपकार को नहीं मानता प्रत्युत असूया करता है यह सुनकर वह वक्ता चुपहुआ फिर सब श्रोता उसकी हँसी करतेहुये चलेगये अकेले वक्ता जी बकते रहे और पापका भागी ऐसे होताहै कि जिसे देवभाषा समझनेकी तो सामर्थ्य नहीं उसको देश-भाषा से भी हटादेना कितना बड़ा अनर्थ है इसमें संदेह नहीं कि देवभाषा मुमुक्षु के लिये अत्यन्त हितकारी है परन्तु मन्दमति क्याकरे प्रायशः चारों वर्ण जो अपने २ इष्टदेव मत से अनजान होरहे हैं और अन्यद्वीपनिवासियों के पंजे में फँसे चलेजाते हैं इसमें यही हेतु है कि वे लोग तो सब अपनी देशभाषा में इष्ट उपासना को सुन पढ़कर शीघ्र समझलेते हैं और यह वर्णाश्रमी देशभाषा को निष्फल अप्रमाण मूर्खों से सुनकर पशुवत् बने रहते हैं तात्पर्य मेरा यह है कि जिसको देवभाषा के पढ़ने सुनने समझने की सामर्थ्य है वह तो भूलकर भी देशभाषा की पोथियों को न पढ़े न सुने और जो असमर्थ हैं वे देश को परम हितकारी समझें देशदेश भाषा भाषा में निन्दा स्तुति सुनी हुई तो फलदाताहै भगवत् के गुण सुनेहुये सफल क्यों न होंगे तात्पर्य देशभाषा बेसन्देह प्रमाण सफल है अब देशभाषा में परमानन्दस्वरूप श्रीकृष्णचन्द्र महाराजजी के गुणों को सावधान होकर सुनो जो पुरुष ब्रह्मविद्याकी प्रक्रिया को न जानता हो वह प्रथम ब्रह्मविद्या की प्रक्रिया को यादकरे तब गीताका तात्पर्य सिद्धान्त समझ में आवेगा क्योंकि ब्रह्मविद्या वेदान्तशास्त्र में गीता सिद्धान्त ग्रन्थ है प्रक्रिया के प्रकरण पृथक् हैं सज्जनमनोरंजनी इस देशभाषा की टीका से पृथक् एक ब्रह्म-विद्याकी प्रक्रिया देशभाषा में मैंने भी वर्णन करी है जिसका नाम आनन्दामृत-वर्षिणी प्रसिद्ध है उसको इस टीका का अङ्ग और एक देश पूर्व भाग समझना योग्य है जबकि आनन्दामृतवर्षिणी प्रक्रिया इस टीकाका पूर्वभाग है इसी हेतुसे वेदान्तसंज्ञाका इस टीका में मैंने निरूपण नहीं किया केवल सिद्धान्त पदार्थों का निरूपण है और इसी हेतु से सज्जन विद्वान् साधु महात्मा पंडितों से कुछ

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

इसमें प्रार्थना नहीं करी न सम्बन्ध अधिकारि इत्यादिकों का लक्षणकहाहै आनन्दामृतवर्षिणी में अधिकारि सम्बन्धादिकों का लक्षण लिखचुकाहूं सज्जन साधु अपनी सज्जनता साधुताकी तरफ़ देखकर बिगड़ी अशुद्धकविताको भी शुद्धकर देते हैं और दुष्ट शुद्धमेंभी दोष निकाला करते हैं इन दोनोंका यहस्वभाव अनादि अभङ्ग है सज्जन तो यह समझते हैं कि एक पुरुष से जो कुछ प्रयत्न होसका वह उसने किया सुधारदेना हमको चाहिये निर्दोष कविता सर्वज्ञ जनोंकी होती है असर्वज्ञके कहनेमें जो दोष प्रतीतहोताहो तो उसको ग्रहण न करना चाहिये दो एक दोष प्रतीत होनेसे उसके समस्त पुरुषार्थका क्यों नाश करना चाहिये सिवाय इसके यह भी समझना चाहिये कि मुझको जो यह दोष प्रतीत होताहै तो मैं सर्वज्ञहूं वा अल्पज्ञहूं जो सर्वज्ञ गुण दोषों का निर्णयकरे तबतो सबको प्रमाण होताहै नहीं तो निन्दक दुष्ट कहलाताहै क्योंकि गुण को गुण और दोषको दोष सर्वज्ञही नियम करके कहसक्ता है जो अभाग्य दोष निकालताहै उसके बकने को मूर्ख मानता है सज्जन हंसकी सदृश सारग्राही होते हैं इसीहेतुसे निन्दक दुष्टों से भी प्रार्थना करनी व्यर्थ है सज्जनों के चरणों को नमस्कार करके सज्जनमनोरंजनी यह श्रीभगवद्गीता उपनिषदोंकी टीका अर्थात् श्रेष्ठ जनोंके मनकोरंजन आनन्द देनेवाली टीका का प्रारम्भ करताहूं॥

श्रीगणेशाय नमः॥ मू० ओम् १ अस्य २ श्रीभगवद्गीतामालामन्त्रस्य ३ श्रीभगवान् ४ वेदव्यासऋषिः ५ अनुष्टुप्छन्दः ६ श्रीकृष्णः७परमात्मा ८ देवता९॥ अ० यह नाम परमात्मा का है वास्ते मंगलाचरण के प्रथम इसको उच्चारण करते हैं १ इस २ श्रीभगवद्गीता मालामंत्र के ३ श्रीभगवान् वेदव्यासऋषि ५ सि० हैं और इस मालामंत्रका अनुष्टुप्छंद ६ सि० है और इस मंत्रके श्रीकृष्ण ७ परमात्मा ८ देवता ९ सि० हैं + मू० अशोच्यानन्वशोचस्त्वं प्रज्ञावादांश्चभाषसे १ इति २ बीजम् ३ अ० यह मंत्रहै अर्थ इसका आगे लिखाजावेगा १ यह २ बीज ३ सि० है इस मालामंत्र का॥ मू० सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकंशरणंव्रज १ इति २ शक्तिः ३ अ० यह २॥ मंत्र १॥ शक्तिः ३ सि० है इसकी + मू० अहंत्वां सर्वपापेभ्यो मोचयिष्यामिमाशुचः १ इति २ कीलकम् ३ अ० यह २॥ १॥ कीलक ३ सि० है इसका + मू० नैनंछिन्दन्ति शस्त्राणि नैनंदहतिपावकः इत्यंगुष्ठाभ्यांनमः १ अ० यह मंत्र पढ़कर दोनों हाथकी तर्जनी अंगुली से दोनों हाथके अंगूठोंका स्पर्श करते हैं अंगूठे के पास जो अंगुली

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

है उसका नाम तर्ज्जनी है १ ॥ मू० नचैनंक्लेदयंत्यापोनशोषयतिमारुतः इतितर्जनीभ्यांनमः १ अं० यह मंत्र पढ़कर दोनों अंगूठोंसे दोनों तर्जनी अंगुलियोंका स्पर्श करते हैं १ मू० अच्छेद्योयमदाह्योयमक्लेद्योशोष्यएवच इति मध्यमाभ्यांनमः १ अं० दोनों अंगूठों से दोनों मध्यमाका १ मू० नित्यःसर्वगतःस्थाणुरचलोयंसनातनःइत्यनामिकाभ्यांनमः १ अं० दोनों अनामिका का १ मू० पश्यमेपार्थरूपाणिशतशोथसहस्रशः इतिकनिष्ठिकाभ्यांनमः १ अं० दोनों कनिष्ठिका, मू० नानाविधानिदिव्यानि नानावर्णाकृतीनिच। इति करतलकरपृष्ठाभ्यांनमः १ अं० यह मंत्र पढ़कर प्रथम दाहने हाथके नीचे बायां हाथ रखते हैं फिर बायेंहाथ के नीचे दाहना हाथ रखते हैं यह सब विधि गुरुके बतलाने से अच्छी तरह आजाती है ॥ यहां तक करन्यासहुआ ॥ अब अंगन्यास के मंत्र लिखते हैं मू० नैनंछिन्दन्ति शस्त्राणीति हृदयायनमः १ अं० यह मंत्र पढ़कर पांचों अंगुलियों से हृदयका स्पर्श करते हैं १ मू० नचैनंक्लेदयंत्यापः इति शिरसे स्वाहा १ अं० शिर का १ मू० अच्छेद्योयमदाह्योयमिति शिखायै वषट् अं० ३ चोटी का १ मू० नित्यःसर्वगतःस्थाणुरिति कवचायहुम् १ अं० यह मंत्र पढ़कर दाहने हाथसे बायेंखवे का और वाम हाथ से दाहने खवे का स्पर्श करते हैं १ मू० पश्यमेपार्थरूपाणीतिनेत्रत्रयायवौषट् १ अं० दाहने हाथसे दोनों नेत्रों को छूते हैं १ मू० नानाविधानि दिव्यानीत्यस्त्रायफट् १ अं० यह मंत्र पढ़कर दाहने हाथ की तर्ज्जनी और मध्यमा दो अंगुली वाम हाथ की हथेलीपर मारते हैं १ यहां तक अंगन्यास हुआ मू० श्रीकृष्णप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः इति संकल्पः १ अं० यह संकल्प पढ़कर यह चिंतनकरे कि यह पाठ श्रीकृष्णचन्द्र महाराजजी के प्रसन्न होनेके लिये करताहूं १ मू० अथ ध्यानम् १ अं० संकल्पके पीछे श्रीकृष्णचंद्र महाराजजी का ध्यानकरना योग्य है ध्यान। कुरुक्षेत्रके अन्तर्गत ज्योतीश्वर तीर्थपर दोनों सेनाके बीचमें रथपर सवार इस स्वरूप से श्रीकृष्णचन्द्र भगवान् अर्जुन को ब्रह्मज्ञान सुना रहे हैं कि चरण कमलों के अंगूठों में सोनेके छल्ले पहरेहुये चरणों में कड़े सोने की पैंजनी चांदी

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

ये ॥ ज्ञानमुद्रायकृष्णाय गीतामृतदुहेनमः ॥ ३ ॥ कृष्णाय १ नमः २ प्र० पन्नपारिजाताय ३ तोत्रवेत्रैकपाणये ४ ज्ञानमुद्राय ५ गीतामृतदुहे ६ ॥ ३ ॥ अ० श्रीकृष्णचन्द्र महाराजजीको १ नमस्कार २ सि० है कैसे हैं श्रीमहाराज + भक्तों के लिये कल्पवृक्ष ३ सि० है पुनः + छड़ी एक हाथ में है जिनके ४ सि० + ज्ञानमुद्रा है जिनकी अर्थात् तर्जनी अंगुली से अंगूठा मिलायेहुये अर्जुनको समझाते हैं ५ गीतारूप अमृत दुहा है जिन्होंने ६ ॥ ३ ॥ मू० सर्वोपनिषदोगावो दोग्धा गोपालनन्दनः ॥ पार्थोवत्सःसुधीर्भोक्ता दुग्धंगीतामृतंमहत् ॥ ४ ॥ सर्वोपनिषदः १ गावः २ दोग्धा ३ गोपालनन्दनः ४ पार्थः ५ वत्सः ६ सुधीः ७ भोक्ता ८ दुग्धम् ९ गीतामृतम् १० महत् ११ ॥ ४ ॥ अ० सब उपनिषद् १ गौ २ अर्थात् गौकी सदृश हैं २ दुहनेवाले ३ श्रीकृष्णचन्द्र महाराजजी ४ अर्जुन ५ बच्छा ६ सुन्दर बुद्धिवाला ७ पीनेवाला ८ दूध ९ गीतारूप अमृत १० सि० कैसा है यह + बड़ा ११ तात्पर्य श्रीकृष्णचन्द्र महाराजजी ने सब उपनिषदों का सार सारअर्थ अर्जुन के निमित्त करके शुद्धान्तःकरणवालों के लिये कहाहै गीताजी का अर्थ जानकर फिर सन्देह नहीं रहता इसवास्ते महत् विशेषण है और फिर शरीर धारण नहीं करता गीतापाठी इसवास्ते अमृत विशेषणहै ॥ ४ ॥ मू० वसुदेवसुतंदेवं कंसचाणूरमर्दनम् ॥ देवकीपरमानन्दंकृष्णंवंदे जगद्गुरुम् ५ ॥ कृष्णम् १ वन्दे २ जगद्गुरुम् ३ वसुदेवसुतम् ४ देवम् ५ कंसचाणूरमर्दनम् ६ देवकीपरमानन्दम् ७ ॥ ५ ॥ अ० श्रीकृष्णचन्द्र महाराजजीको १ नमस्कार करताहूं मैं २ सि० कैसे हैं श्रीमहाराज + जगत् के गुरु ३ वसुदेवजी के पुत्र ४ ज्ञानस्वरूप अथवा दीप्तिमान् मूर्त्तिवाले ५ कंस चाणूरके मारनेवाले ६ देवकीजीको परमानन्द के देनेवाले ७ श्लोकमें श्लोक अवस्थाका ध्यान है ॥ ५ ॥ मू० भीष्मद्रोणतटा जयद्रथजला गान्धारनीलोत्पला शल्यग्राहवतीकृपेणवहिनी कर्णेनवेलाकुला ॥ अश्वत्थामविकर्णघोरमकरा दुर्योधनावर्त्तिनी सोत्तीर्णा खलु पाण्डवैः कुरुनदी कैवर्त्तके केशवे ॥ ६ ॥ केशवे १ कैवर्त्तके २ खलु ३ पाण्डवैः ४ सा ५ कुरुनदी ६ उत्तीर्णा ७ भीष्मद्रोणतटा ८ जयद्रथजला ९ गांधारनीलोत्पला १० शल्यग्राहवती ११ कृपेण १२ वहिनी १३ कर्णेन १४ वेलाकुला १५ अश्वत्थामविकर्णघोरमकरा १६ दुर्योधनावर्त्तिनी १७ ॥ ६ ॥ अ० श्रीकृष्णचन्द्र महाराजजी १ मल्लाहहुये सन्ते २

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

अर्थात् श्रीकृष्णचन्द्र मल्लाह होनेसेही १ । २ निश्चय ३ पाण्डवन ने ४ हो ५ कुरुनदी ६ उतरी ७ अर्थात् पाण्डवन ने कुरुवंशी दुर्योधनादि को जीता ७ सि० कैसीहै वह नदी + भीष्म और द्रोणाचार्य्य किनारे हैं जिसके ८ जयद्रथ है जल जिसमें ९ गांधारीके पुत्र नीले कमल हैं जिसमें १० शल्यग्राह है जिसमें ११ कृपाचार्य करके १२ वहनेवाली १३ कर्ण करके १४ वेल व्याप्त होरही है जिस में १५ अश्वत्थामा और विकर्ण ग्रोरमकर हैं जिसमें १६ दुर्योधन चक्र है जिसमें १७ तात्पर्य्य श्रीकृष्णचन्द्र महाराजजी पाण्डवन के सहाय करनेवाले थे तब पाण्डवनने कौरवन को जीता ॥ ६ ॥ मू० पाराशर्यवचःसरोजममलं गीतार्थगन्धोत्कटं नानाख्यानककेसरं हरिकथासम्बोधनाबोधितम् । लोके सज्जनषट्पदैरहरहः पेपीयमानं मुदा भूयाद्भारतपङ्कजं कलिमलप्रध्वंसि नः श्रेयसे ॥ ७ ॥ भारतपङ्कजम् १ नः २ श्रेयसे ३ भूयात् ४ कलिमलप्रध्वंसि ५ पाराशर्यवचःसरोजम् ६ अमलं ७ गीतार्थगन्धोत्कटं ८ नाना ९ आख्यानककेसरम् १० हरिकथासम्बोधनाबोधितम् ११ लोके १२ सज्जनषट्पदैः १३ अहरहः १४ मुदा १५ पेपीयमानम् १६ ॥ ७ ॥ अ० भारतरूप कमल १ हमारे २ कल्याण के अर्थ ३ हो ४ अर्थात् हमारा भलाकरो २ ३ । ४ सि० कैसाहै सो भारतकमल + कलियुग के पापोंका नाश करनेवाला ५ व्यासजीके वचनरूप सरमें जमाहै ६ सि० पुनः + निर्मल ७ गीताका जो अर्थ सोई उत्कट तीव्र गन्धहै जिसमें ८ नाना भांति भांतिकी तरह तरहकी ९ कथा के सरहैं जिसमें १० हरिकथा सम्बोधनों करके जाग रहाहै ११ अर्थात् श्रीकृष्णचंद्र महाराजकी कथा का जो ज्ञान समझना उस करके खिलाहुआ है १२ जगत् में १२ सज्जनरूप भ्रमर १३ आनन्दपूर्वक १४ दिनदिन प्रति नित्य १५ सि० उस कमलके रसको + पीते हैं १६ तात्पर्य जिस महाभारत में भगवत्सम्बन्धी कथाहै और जिसके बीचमें श्रीभगवद्गीता विराजमान है जिसको श्रेष्ठ लोग पढ़ते सुनते हैं आनन्दसहित ऐसा निर्दोष महाभारत हमारा भलाकरो ॥ ७ ॥ मू० मूकं करोति वाचालं पंगुं लंघयते गिरिम् । यत्कृपातमहं वन्दे परमानन्दमाधवम् ॥ ८ ॥ अहम् १ तम् २ परमानन्दमाधवम् ३ वन्दे ४ यत्कृपा ५ मूकम् ६ वाचा ७ अलम् ८ करोति ९ पंगुम् १० गिरिम् ११ लंघयते १२ ॥ ८ ॥ अ० मैं १ तिन २ परमानन्दस्वरूप लक्ष्मीजी के पतिको ३ नमस्कार कर-

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

तारूं ४ जिनकी कृपा ५ गूंगेको६वाणी करके ७ पूर्ण ८ करदेयहै ९ अर्थात् जिन की कृपासे गूंगा तरह तरहके शब्द बोलने लगता है.९ सि० और + पंगु १० पहाड़ ११ उल्लंघजाता १२ अर्थात् जिनकी कृपा लँगड़े को पर्वत उल्लंघन करा देती है ॥१२॥ ८ ॥ मू० यंब्रह्मावरुणेन्द्ररुद्रमरुतःस्तुन्वन्तिदिव्यैःस्तवैर्वेदैःसाङ्गपदक्रमोपनिषदैर्गायन्तियंसामगाः। ध्यानावस्थिततद्गतेनमनसापश्यन्तियंयोगिनो यस्यान्तंनविदुःसुरासुरगणादेवायतस्मैनमः ॥९॥ ब्रह्मावरुणेन्द्ररुद्रमरुतः १ दिव्यैः २ स्तवैः ३ यम् ४ स्तुन्वन्ति ५ सामगाः ६ साङ्गपदक्रमोपनिषदैः ७ वेदैः ८ यम् ९ गायन्ति १० योगिनः ११ ध्यानावस्थिततद्गतेन १२ मनसा १३ यम् १४ पश्यन्ति १५ सुरासुरगणाः १६ यस्य १७ अन्तं १८ न १९ विदुः २० तस्मै २१ देवाय २२ नमः २३ ॥९॥ अ० ब्रह्मा वरुण इन्द्र रुद्र मरुत् देवता १ दिव्य २ स्तोत्रों करके ३ जिसकी ४ स्तुति करते हैं ५ सामवेदके गानेवाले ६ अङ्ग और पदक्रम के सहित जो उपनिषद् हैं तिन उपनिषदों के ७ सहित वेदों करके ८ जिनको ९ गाते हैं १० योगी ११ ध्यानमें मनको ठहरायकर तद्गत १२ मन करके १३ अर्थात् परमेश्वरमें मन प्राप्त करके अर्थात् लगाकर १३ जिनको १४ देखतेहैं १५ देवता और असुरोंके गण १६ जिनके १७ अन्तको १८ नहीं १९ जानते हैं २० तिन २१ देवताके अर्थ२२ नमस्कार २३ सि० है जिस देवता को नमस्कारहै सो एकहै बहुवचन यहां और आगे पीछे भी आदरार्थ जानना योग्यहै ९ ॥ मू० इतिध्यानम् १ अ० यह ध्यान समाप्त हुआ १ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

प्रथमअध्यायप्रारम्भ ॥

धृतराष्ट्रउवाच॥ धर्मक्षेत्रेकुरुक्षेत्रेसमवेतायुयुत्सवः ॥ मामकाःपाण्डवाश्चैवकिमकुर्वतसंजय ॥ १ ॥

धृतराष्ट्र १ उवाच २ अ० धृतराष्ट्र १ बोलताभया २ अर्थात् राजा धृतराष्ट्र संजयसे यह बोला १ । २ संजय १ मामकाः २ च ३ पाण्डवाः ४ एव ५ धर्मक्षेत्रे ६ कुरुक्षेत्रे ७ समवेताः ८ युयुत्सवः ९ किम् १० अकुर्वत ११ ॥ १ ॥ अ० हे संजय! १ मेरे पुत्रादि दुर्योधनादि २ और ३ पांडु के पुत्रादि पांडु युधिष्ठिरादि ४ पू० ५ पादपूर्णार्थ यह एव पद है ५ धर्मभूमि ६ कुरुक्षेत्रमें ७ इकट्ठे होकर ८ युद्धकी इच्छावाले ९ क्या १० करतेभये ११ अर्थात् लड़ाईहुई वा एकता होगई ॥ १० ॥ ११ तात्पर्य्य राजा धृतराष्ट्र नेत्रहीन था इस वास्ते लड़ाई में नहीं गयाथा संजय राजाका सारथी राजा के पास रहा उसको व्यासजीने यह वरदान दे दियाथा कि जो व्यवस्था कुरुक्षेत्र में होगी उसको तुम इसीजगह बैठे हुये साक्षात् देखोगे जो जो व्यवस्था कुरुक्षेत्र में हुई वह सब संजयने राजा धृतराष्ट्र से कही इस हेतु से गीता में राजा धृतराष्ट्र और संजय का भी संवाद है ये दोनों हस्तिनापुर में रहे अर्थात् श्रीकृष्णार्जुन के संवाद को संजय ने धृतराष्ट्रसे निरूपण किया है ॥ १ ॥

संजयउवाच ॥ दृष्ट्वातुपाण्डवानीकं व्यूढंदुर्योधनस्तदा ॥ आचार्यमुपसंगम्यराजावचनमब्रवीत् ॥ २ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

संजय१ उवाच २ संजय १ धृतराष्ट्रसे बोला २ मू० तदा १ राजा २ दुर्योधनः ३ व्यूढम् ४ पाण्डवानीकम् ५ दृष्ट्वा ६ तु ७ आचार्य्यम् ८ उपसंगम्य ९ वचनम् १० अब्रवीत् ११॥ २॥ अ० सि० जिसकाल में दोनों सेना सजकर युद्धके लिये आमने सामने खड़ी हुई + तिस काल में १ राजा २ दुर्योधन ३ सि० चक्र कमलमकारादि + रचीहुई ४ पाण्डवनकी सेनाको ५ देखकर ६ फिर ७ गुरु के ८ पास जाकर ९ सिं० यह + वचन १० बोला ११ सि० कि जो आगे नव श्लोकों में अर्थ है + टी० द्रोणाचार्य्य शस्त्रविद्या के गुरु हैं ८ तात्पर्य्य दुर्योधन पांडवन की सेनाको भलेप्रकार सजीहुई देखकर मन में डरा और यह जाना कि जहां यह रचना है तो फिर ये कैसे जीतेजावेंगे जो हमारे गुरु इससे सिवाय रचनारचें तब भलाई की बात है इस वास्ते राजा गुरु के पास जाकर बोला ॥ २ ॥

पश्यैतांपाण्डुपुत्राणामाचार्यमहतींचमूम् ॥ व्यूढांद्रुपदपुत्रेणतवशिष्येणधीमता ॥ ३ ॥

आचार्य्य १ पांडुपुत्राणाम् २ एताम् ३ महतीम् ४ चमूम् ५ पश्य ६ धीमता ७ तव ८ शिष्येण ९ द्रुपदपुत्रेण १० व्यूढाम् ११ ॥ ३ ॥ अ० हे गुरो! १ पांडवनकी २ इस ३ बड़ी ४ सेनाको ५ देखो ६ बुद्धिमान् ७ आप के ८ शिष्य ९ द्रुपद के पुत्रने १० रची है ११ तात्पर्य्य आपका शिष्य होकर आपका सामना करता है यह देखिये ॥ ३ ॥ उ० और इस सेना में जो शूरवीर हैं उनको भी देख लीजिये क्योंकि यथायोग्य जोड़ी के साथ लड़ना चाहिये ॥

अत्रशूरामहेष्वासा भीमार्जुनसमायुधि ॥ युयुधानोविराटश्च द्रुपदश्चमहारथः ॥ ४ ॥

अत्र १ शूराः २ महेष्वासाः ३ युधि ४ भीमार्जुनसमाः ५ युयुधानः ६ विराटः ७ च ८ द्रुपदः ९ च १० महारथः ११ ॥ ४ ॥ अ० इसमें अर्थात् इस सेनामें १ सि० जो + शूर २ सि० हैं + बड़े बड़े धनुषहैं जिनके ३ युद्धमें ४ भीम अर्जुनकी बराबर ५ सि० नाम उनके यहहैं + युयुधान ६ और विराट ७, ८ और द्रुपद ९, १० सि० महारथः यह सबका विशेषण है कैसे हैं ये + महारथः ११ टी० असंख्यात शस्त्रधारियों से जो युद्ध करे और अस्त्र शस्त्र विद्यामें चतुर हो उसको अतिरथ कहते हैं और दश सहस्र से जो अकेला युद्ध करे उसको महारथ कहते हैं और जो एकसे एक लड़े उसको रथी कहते हैं, इससे कमको अर्द्धरथी कहते हैं ११॥४॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

धृष्टकेतुश्चेकितानः काशिराजश्चवीर्य्यवान् ॥
पुरुजित्कुन्तिभोजश्चशैब्यश्चनरपुंगवः ॥ ५ ॥

धृष्टकेतुः १ चेकितानः २ काशिराजः ३ च ४ वीर्य्यवान् ५ पुरुजित् ६ कुन्तिभोजः ७ च ८ शैब्यः ९ च १० नरपुंगवः ११ ॥ ५ ॥ अ० धृष्टकेतु १ चेकितान २ और काशिका राजा ३, ४ सि० कैसे हैं ये + बलवान् ५ सि० यह सब का विशेषण हैं + पुरुजित् ६ कुन्तिभोज ७, ८ और शैब्य ९, १० सि० कैसे हैं ये + पुरुषों में उत्तम ११ सि० यह तीनोंका विशेषण है ॥ ५ ॥

युधामन्युश्चविक्रान्त उत्तमौजाश्चवीर्य्यवान् ॥
सौभद्रोद्रौपदेयाश्च सर्वएवमहारथाः ॥ ६ ॥

युधामन्युः १ च २ विक्रान्तः ३ उत्तमौजाः ४ च ५ वीर्य्यवान् ६ सौभद्रः ७ द्रौपदेयाः ८ च ९ सर्वे १० एव ११ महारथाः १२ ॥ ६ ॥ अ० युधामन्यु १ पु० सि० कैसा है यह + तेजस्वी सुन्दर ३ और उत्तमौजा ४, ५ बलवान् ६ अभिमन्यु ७ और द्रौपदी के पांचोपुत्र ८, ९ सि० ये + सब १० ही ११ महारथ १२ सि० हैं ॥ ६ ॥

अस्माकन्तुविशिष्टाये तान्निबोधद्विजोत्तम ॥
नायकाममसैन्यस्य संज्ञार्थन्तान्ब्रवीमिते ॥ ७ ॥

द्विजोत्तम १ अस्माकम् २ ये ३ विशिष्टाः ४ मम ५ सैन्यस्य ६ नायकाः ७ तान् ८ तु ९ निबोध १० ते ११ संज्ञार्थम् १२ तान् १३ ब्रवीमि १४ ॥ ७ ॥ अ० हे ब्राह्मणों में उत्तम! १ हमारी २ सि० सेनामें + जो ३ श्रेष्ठ ४ सि० हैं और + मेरी ५ सेनाके ६ सि० जो सरदार अग्रणी ७ तिनको ८ भी ९ देखिये १० आप से ११ भलेप्रकार जान लेने के लिये १२ तिनको १३ अर्थात् तिनके नाम कहता हूं मैं सि० अगले श्लोक में १४ तात्पर्य्य युद्ध से प्रथमही भलेप्रकार इनको समझ लेना चाहिये वास्ते युद्ध करने के ॥ ७ ॥

भवान्भीष्मश्चकर्णश्च कृपश्चसमितिंजयः ॥
अश्वत्थामाविकर्णश्च सौमदत्तिस्तथैवच ॥ ८ ॥

भवान् १ भीष्मः २ च ३ कर्णः ४ च ५ कृपः ६ च ७ समितिंजयः ८ अश्वत्थामा ९ विकर्णः १० च ११ सौमदत्तिः १२ तथा १३ एव १४ च १५ ॥ ८ ॥ अ०

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

शङ्ख २ और ३ नगारे ४ और ५ ढोल आनक गोमुख ६ एक वेर ७ हीं ८ सि० राजा दुर्य्योधन की सेना में + सब तरफ़से बजते भये ९ सो १० शब्द १२ उस समय बड़ा ११ होता भया १३ तात्पर्य जिस समय प्रथम भीष्मजीने शङ्ख बजाया पीछे उससे नाना प्रकारके बाजे बजने लगे + टी० यह बाजोंके नाम हैं ६ ॥ १३ ॥

ततः श्वेतैर्हयैर्युक्तेमहतिस्यन्दनेस्थितौ ॥ माधवः पाण्डवश्चैव दिव्यौ शङ्खौ प्रदध्मतुः ॥ १४ ॥

ततः १ माधवः २ पाण्डवः ३ च ४ एव ५ दिव्यौ ६ शंखौ ७ प्रदध्मतुः ८ महति ९ स्यन्दने १० स्थितौ ११ श्वेतैः १२ हयैः १३ युक्ते १४ ॥ १४ ॥ अ० उ० जब राजा दुर्योधन की सेना में शंखादि बाजे बजे पीछे उसके १ सि० राजा युधिष्ठिर की सेना में प्रथम + श्रीकृष्णचन्द्र महाराज २ और अर्जुन ३।४ भी ५ दिव्य अलौकिक ६ शंखोंको ७ बजाते भये ८ सि० कैसे हैं अर्जुन और श्रीमहाराज कि एक + बड़े ९ रथमें १० सवारहैं ११ सि० कैसा है वह रथ + श्वेत १२ घोड़ों करके १३ युक्त १४ सि० है अर्थात् श्वेत घोड़े उस रथमें जुड़े हुये हैं ॥ १४ ॥

पाञ्चजन्यंहृषीकेशो देवदत्तं धनञ्जयः॥पौण्ड्रं दध्मौ महाशङ्खं भीमकर्मा वृकोदरः ॥ १५ ॥

हृषीकेशः १ पाञ्चजन्यम् २ धनञ्जयः ३ देवदत्तम् ४ वृकोदरः ५ भीष्मकर्मा ६ पौण्ड्रम् ७ महाशंखम् ८ दध्मौ ९ ॥ १५ ॥ अ० उ० जिन शंखोंको माधवादि ने बजाया उनके नाम कहते हैं + इन्द्रियों के स्वामी श्रीकृष्णचन्द्र महाराज १ पाञ्चजन्य नामवाले २ सि० शंख को बजाते भये + अर्जुन ३ देवदत्त नामा ४ सि० शंखको बजातेभये + भीम ५ भयङ्कर कर्म्म हैं जिसका ६ सि० सो + पौण्ड्र नाम है जिसका ७ सि० उस महाशंख को ८ बजाता भया ९ तात्पर्य्य श्रीमहाराज ने पाञ्चजन्य शंख बजाया अर्जुन ने देवदत्त शंख बजाया भीमने पौण्ड्र शंख बजाया ॥ १५ ॥

अनन्तविजयंराजा कुन्तीपुत्रोयुधिष्ठिरः ॥ नकुलःसहदेवश्चसुघोषमणिपुष्पकौ ॥ १६ ॥

कुन्तीपुत्रः १ राजा २ युधिष्ठिरः ३ अनन्तविजयम् ४ नकुलः ५ च ६ सहदेवः ७ सुघोषमणिपुष्पकौ ८ ॥ १६ ॥ अ० कुन्तीकेपुत्र १ राजा २ युधिष्ठिर ३ अनन्तविजयनामा ४ सि० शंखको बजातेभये नकुल ५ और ६ सहदेव ७ सुघोष

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

और मणिपुष्पक शंखको॰८ सि॰ बजातेभये + राजा ने अनन्तविजय शंख बजाया नकुल ने सुघोष शंख बजाया सहदेवने मणिपुष्पक शंख बजाया ॥:१६॥

काश्यश्चपरमेष्वासः शिखण्डीचमहारथः ॥ धृष्टद्युम्नोविराटश्च सात्यकिश्चापराजितः ॥ १७ ॥

काश्यः १ च २ परमेष्वासः ३ शिखण्डी ४ च ५ महारथः ६ धृष्टद्युम्नः ७ विराटः ८ च ९ सात्यकिः १० च ११ अपराजितः १२॥ १७॥ अ॰ काशीका राजा १ पू॰ २ श्रेष्ठ है धनुष जिसका ३ और शिखण्डी ४। ५ महारथ ६ धृष्टद्युम्न ७ और विराट ८। ९ और सात्यकी १०। ११ सि॰ कैसे हैं यह तीनों + अपराजित १२ सि॰ हैं टी॰ न जीतसके दूसरा जिसको उसे अपराजित कहते हैं १२ तात्पर्य्य ये सब पृथक् २ अपना २ शंख बजाते भये इस श्लोकका अन्वय अगले श्लोक के साथ है ॥ १७ ॥

द्रुपदोद्रौपदेयाश्च सर्वशःपृथिवीपते ॥ सौभद्रश्चमहाबाहुः शंखान्दध्मुःपृथक्पृथक् ॥ १८ ॥

पृथिवीपते १ द्रुपदः २ द्रौपदेयाः ३ च ४ सौभद्रः ५ च ६ महाबाहुः ७ सर्वशः ८ पृथक् ९ पृथक् १० शंखान् ११ दध्मुः १२ ॥ १८॥ अ॰ उ॰ संजय धृतराष्ट्र से कहता है + हे राजन्! १ द्रुपद २ और द्रौपदी के पांचों पुत्र ३। ४ और अभिमन्यु ५। ६ बड़ी हैं भुजा जिसकी ७ सि॰ ये सब और जो पीछे कहे + सब तरफ से ८ पृथक् पृथक् ९। १० सि॰ अपने अपने + शंखों को ११ बजाते भये १२ ॥ १८ ॥

सघोषोधार्त्तराष्ट्राणां हृदयानिव्यदारयत् ॥ नभश्चपृथिवींचैव तुमुलोव्यनुनादयन् ॥ १९ ॥

सः १ घोषः २ धार्त्तराष्ट्राणाम् ३ हृदयानि ४ व्यदारयत् ५ नभः ६ च ७ पृथिवीं ८ च ९ एव १० तुमुलः ११ व्यनुनादयन् १२ ॥ १९॥ अ॰ सो १ घोष २ दुर्योधनादि के हृदय को ३ फाड़ता भया ४ अर्थात् दुर्योधनादि उस शब्द को सुनकर डरे मारे डरके उनका हृदय कम्पनेलगा मानो फटनेलगा ५ आकाश ६ और ७ पृथ्वीको व्याप्त करके अर्थात् आकाश पृथ्वी ८ में व्याप्त होकर + पू॰ + ९। १० बहुत ११ शब्दपर शब्द होता हुआ १२ सि॰ दुर्योधनादि के

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

हृदय को फाड़ताभया + तात्पर्य पृथ्वी से लेकर आकाशपर्यन्त वह शब्द व्याप्त होगया ॥ १९ ॥

अथव्यवस्थितान्दृष्ट्वा धार्त्तराष्ट्रान्कपिध्वजः ॥ प्रवृत्तेशस्त्रसम्पातेधनुरुद्यम्यपाण्डवः ॥ २० ॥

अथ १ कपिध्वजः २ धार्त्तराष्ट्राणाम् ३ व्यवस्थितान् ४ दृष्ट्वा ५ शस्त्रसम्पाते ६ प्रवृत्ते ७ पाण्डवः ८ धनुः ९ उद्यम्य १० ॥ २० ॥ महीपते १ तदा २ हृषीकेशम् ३ इदम् ४ वाक्यम् ५ आह ६ अर्जुनउवाच अच्युत ७ मे ८ रथम् ९ उभयोः १० सेनयोः ११ मध्ये १२ स्थापय १३ ॥ २१॥ अ० उ० बीसवें श्लोकका इक्कीसवें श्लोकके साथ सम्बन्ध है + शंखादि का शब्द सुनकर जो व्यवस्था दुर्योधनादि की हुई सो तो कही और वोही शब्दसुनकर अर्जुन ने जो किया सो कहता है संजय धृतराष्ट्र से + जब दोनों तरफ़ बाजा बजने लगा + पीछे उसके अर्जुन २ दुर्योधनादि को ३ भलेप्रकार खड़ेहुये ४ देखकर ५ शस्त्रों का चलना ६ प्रवृत्त हुआ चाहता था अर्थात् हथियार चलाही चाहतेथे उस समय ७ अर्जुन ८ धनुष्को ९ उठाकर १० अर्थात् तीर कमान दुरुस्त करिकै सँवारिकै १० टी० हनुमान् जी अर्जुन की ध्वजा में रहते थे इस व्युत्पत्ति से अर्जुन का नाम कपिध्वज है २ ॥ २० ॥ हे राजन् धृतराष्ट्र ! १ सि० जिस कालमें हथियार चलने वाले थे + तिस कालमें २ श्रीकृष्णचन्द्र महाराजने ३ यह ४ वाक्य ५ बोला ६ अर्जुन बोला + हे अच्युत ! ७ मेरे ८ रथको ९ दोनों १० सेना के ११ बीचमें १२ खड़ा करो १३ टी० भक्तिका प्रताप देखना चाहिये कि भक्त भगवान्पर आज्ञा करते हैं और जो भक्त चाहते हैं वैसाही श्रीभगवान् करते हैं १३ ॥ २० । २१ ॥

हृषीकेशंतदावाक्यमिदमाहमहीपते ॥ अर्जुनउवाच॥सेनयोरुभयोर्मध्येरथंस्थापयमेऽच्युत ॥ २१॥

इस श्लोकका अन्वय और अर्थ ऊपर बीसवें मन्त्र के नीचे लिखागया ॥

यावदेतान्निरीक्षेहंयोद्धुकामानवस्थितान् ॥ कैर्मयासहयोद्धव्यमस्मिन्रणसमुद्यमे ॥ २२ ॥

एतान् १ योद्धुकामान् २ अवस्थितान् ३ यावत् ४ अहम् ५ निरीक्षे ६ अस्मिन् ७ रणसमुद्यमे ८ मया ९ कैःसह ११ योद्धव्यम् १२ ॥ २२ ॥ उ० कब तक बड़ा रथ खड़ा किया जावे यह शङ्का करके कहता है अर्जुन कि + मैं

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

४ जो युद्धकी कामना वाले खड़ेहुये हैं इनको १ । २ । ३ जब तक ४ मैं ५ देखूं ६ अर्थात् यह मैं देखा चाहता हूं कि ६ इसरणके प्रारंभ समय ७ । ८ मुझको ९ किनके १० साथ ११ युद्ध करना योग्यहै १२ तात्पर्य्य अर्जुन का तमाशा देखने में नहीं है १२ ॥ २२ ॥

योत्स्यमानानवेक्षेयेहंयएतेऽत्रसमागताः ॥ धार्तराष्ट्रस्यदुर्बुद्धेर्युद्धेप्रियचिकीर्षवः ॥ २३ ॥

योत्स्यमानान् १ अहम् २ अवेक्षे ३ ये ५ एते ४ अत्र ६ युद्धे ७ समागताः ८ दुर्बुद्धेः ९ धार्तराष्ट्रस्य १० प्रियचिकीर्षवः ११॥२३॥ अ० सि० इन + युद्ध करनेवालोंको १ मैं २ देखूं ३ सि० तेकि + ये ४ जो ५ इस युद्धमें ६।७ आये हैं ८ सि० कैसे हैं ये + दुर्बुद्धि दुर्योधन की ९ । १० जय चाहते हैं ११ ॥ २३ ॥

संजयउवाच ॥ एवमुक्तोहृषीकेशोगुडाकेशेन भारत ॥ सेनयोरुभयोर्मध्ये स्थापयित्वारथोत्तमम्॥ २४ ॥ भीष्मद्रोणप्रमुखतः सर्वेषांचमहीक्षिताम् ॥ उवाचपार्थपश्यैतान्समवेतान्कुरूनिति ॥ २५ ॥

भारत १ गुडाकेशेन २ एवम् ३ उक्तः ४ हृषीकेशः ५ उभयोः ६ सेनयोः ७ मध्ये ८ भीष्मद्रोणप्रमुखतः ९ सर्वेषाम् १० च ११ महीक्षिताम् १२ रथोत्तमम् १३ स्थापयित्वा १४ इति १५ उवाच १६ पार्थ १७ एतान् १८ समवेतान् १९ कुरून् २० पश्य २१ ॥ २४ ॥ २५ ॥ अ० सि० इन दोनों श्लोकों की अन्वय एक है + संजय धृतराष्ट्र से कहता है + हे राजन्! १ अर्जुन करके २ इस प्रकार ३ कहे हुये ४ श्रीभगवान् ५ अर्थात् अर्जुन ने श्रीभगवान् से जब यह कहा कि मेरा रथ दोनों सेनाके बीचमें खड़ा कीजिये यह सुनकर श्रीभगवान् ५ दोनों सेनाके ६।७ बीचमें ८ भीष्म और द्रोणाचार्य्यके सामने ९ और सब राजोंके १० । ११ । १२ सि० सामने + उत्तम रथको १३ खड़ा करके १४ यह १५ बोले १६ हे अर्जुन! १७ इन १८ मिलेहुये १९ कौरवों को २० देख २१ तात्पर्य्य ये सब योद्धा मृत्युज्ञ हैं इनको तू देख ॥ २४ । २५ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

नहीं ३ चाहताहूं मैं ४ राज्य और सुखको ५ । ६ भी ७ नहीं ८ । ९ सि० चाहताहूं मैं + हे भगवन्। १० राज्य करके ११ क्या १२ भोगों करके १३ जीवने करके १४ हमको १५ क्या १६ तात्पर्य न कुछ राज्य करने में आनन्द है केवल परमानन्दस्वरूप आत्माके यथार्थ जानने मेंही परमानन्द है ऐसी समझवाले को विवेकी कहते हैं ॥ ३२ ॥

एषामर्थेकांक्षितन्नो राज्यंभोगाःसुखानिच ॥ त इमेवस्थितायुद्धेप्राणांस्त्यक्त्वाधनानिच ॥ ३३ ॥

नः १ एषाम् २ अर्थे ३ राज्यम् ४ भोगाः ५ सुखानि ६ च ७ कांक्षितम् ८ ते ९ इमे १० युद्धे ११ प्राणान् १२ धनानि १३ च १४ त्यक्त्वा १५ अवस्थिताः १६ ॥ ३३ ॥ अ० हमको १ जिनके २ वास्ते ३ राज्य ४ भोग ५ सुख की ६ इच्छा है ७ अर्थात् जिनके वास्ते राज्य भोग सुख हम चाहते हैं ७ वे ८ सि० ही + ये १० युद्धमें ११ प्राणों को १२ और धनको १३ । १४ त्यागकर १५ अर्थात् प्राण और धनकी आशा त्याग कर वा प्राण और धन त्यागने के लिये आखड़े हैं १६ ॥ ३३ ॥

आचार्याःपितरःपुत्रास्तथैवचपितामहाः ॥ मातुलाःश्वशुराःपौत्राःश्यालाःसम्बन्धिनस्तथा ॥ ३४ ॥

आचार्याः १ पितरः २ पुत्राः ३ तथा ४ एव ५ च ६ पितामहाः ७ मातुलाः ८ श्वशुराः ९ पौत्राः १० श्यालाः ११ तथा १२ सम्बन्धिनः १३ ॥ अ० उ० वे ये हैं गुरु १ चाचाआदि २ भतीजेआदि ३ पू० ४ । ५ । ६ पितामह ७ मामा ८ श्वशुर ९ पौत्र १० साले ११ सि० जैसे ये हैं + तैसेही १२ सि० और + सम्बन्धी १३ सि० हैं ॥ ३४ ॥

एतान्नहंतुमिच्छामि घ्नतोपिमधुसूदन ॥ अपि त्रैलोक्यराजस्य हेतोःकिंनुमहीकृते ॥ ३५ ॥

घ्नतः २ अपि ३ एतान् १ न ५ हन्तुम् ४ इच्छामि ६ मधुसूदन ७ त्रैलोक्यराज्यस्य ८ हेतोः ९ अपि १० किम् ११ नु १२ महीकृते १३ ॥ ३५ ॥ अ० इन मारनेवालों को १ । २ भी ३ नहीं ५ मारने की ४ इच्छा करता हूं मैं ६ अर्थात् मैं यह जानता हूं कि ये दुर्योधनादि हमको मारेंगे तो भी इनके मारने की हमको

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

इच्छा नहीं हे कृष्णचन्द्र! ७ त्रैलोक्यराज्यके ८ हेतुसे ९ भी १० अर्थात् जो इन के मारने में मुझको तीनों लोकोंका राज्य मिले तौ भी इनको नहीं मारूंगा क्यों ११ फिर १२ पृथिवी की प्राप्तिके लिये १३ सि० मारूं ॥ ३५ ॥

निहत्यधार्त्तराष्ट्रान्नः काप्रीतिःस्याज्जनार्दन ॥
पापमेवाश्रयेदस्मान्हत्वैतानाततायिनः ॥ ३६ ॥

जनार्दन १ धार्तराष्ट्रान् २ निहत्य ३ नः ४ का ५ प्रीतिः ६ स्यात् ७ एतान् ८ आततायिनः ९ हत्वा १० अस्मात् ११ पापम् १२ एव १३ आश्रयेत् १४ ॥ ३६ ॥ अ० हे जनार्दन! १ दुर्योधनादि को २ मारकर ३ हमको ४ क्या ५ सुख ६ होगा ७ अर्थात् किंचिन्मात्र भी सुख न होगा ७ सि० प्रत्युत + इन आततायियों को ८। ९ मारकर १० हमको ११ पापही १२। १३ आश्रय है १४ अर्थात् उलटा हमको पापही लगेगा १४ टी० अग्निका देनेवाला विष खिलानेवाला शस्त्र हाथ में लेकर वास्ते मारने के जो आवे धनका हरनेवाला खेत मकानादिका हरनेवाला स्त्रीका हरनेवाला ये छः आततायी कहलाते हैं दुर्योधनादि में ये सब दोषथे नीतिशास्त्र में लिखाहै कि जो आततायी सामने आजावे तो समर्थवान् विना विचार आततायी को मारडाले मारनेवाले को दोष नहीं परन्तु इस वाक्यसे विशेष वाक्य धर्मशास्त्रका यहहै कि सदोषको भी नहीं मारना प्रत्युत वाणी से भी उसको दुःख न देना न मनमें उसके बुरे करनेका संकल्प करना यही आशय अर्जुनकाहै ९ ॥ ३६ ॥

तस्मान्नार्हावयंहन्तुं धार्त्तराष्ट्रान्स्वबान्धवान् ॥
स्वजनंहिकथंहत्वासुखिनःस्याममाधव ॥ ३७ ॥

तस्मात् १ स्वबान्धवान् २ धार्त्तराष्ट्रान् ३ हन्तुम् ४ वयम् ५ न ६ अर्हाः ७ माधव ८ स्वजनम् ९ हि १० हत्वा ११ कथम् १२ सुखिनः १३ स्याम १४॥ ३७ ॥ अ० उ० किसी जीवमात्रको भी मारना वे योग्यहै और यह तो दुर्योधनादि हमारे सम्बन्धी हैं + तिस कारण से १ अपने सम्बन्धी दुर्योधनादि के २। ३ मारनेको ४ हम ५ नहीं योग्यहैं ६। अर्थात् इस योग्य हम नहीं कि अपनेही सम्बन्धियों को मारें ७ हे कृष्णचन्द्र! ८ अपने सम्बन्धियों ९ ही को १० मारकर ११ किसप्रकार १२ सुखी १३ होंगे १४ अर्थात् अपने सम्बन्धियों को मारकर हमको किसी प्रकार भी सुख न होगी १५ ॥ ३७ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

यद्यप्येतेनपश्यन्तिलोभोपहतचेतसः॥ कुलक्षय कृतंदोषं मित्रद्रोहेचपातकम् ॥ ३८ ॥ कथंनज्ञेय मस्माभिः पापादस्मान्निवर्त्तितुम् ॥ कुलक्षयकृतं दोषंप्रपश्यद्भिर्जनार्दन ॥ ३९ ॥

यद्यपि १ एते २ कुलक्षयकृतम् ३ दोषम् ४ मित्रद्रोहे ५ च ६ पातकम् ७ न ८ पश्यन्ति ९ लोभोपहतचेतसः १० ॥ ३८॥ जनार्दन १ कुलक्षयकृतम् २ दोषम् ३ प्रपश्यद्भिः ४ अस्माभिः ५ अस्मात् ६ पापात् ७ निवर्तितुम् ८ कथम् ९ न १० ज्ञेयम् ११ ॥ ३९ ॥ अ० उ० जिस पापका तू विचार करताहै यह ज्ञान दुर्योधनादिकोभी है वा नहीं यह शंकाकरके कहताहै + यद्यपि १ ये २ सि० दुर्योधनादि + कुलके क्षय करने में नाश करने में जो दोषहै उसको ३ । ४ और मित्रके द्रोहमें जो पातकहै उसको ५ । ६ । ७ नहीं ८ देखते हैं ९ सि० क्योंकि + लोभ करके मैला होगयाहै अन्तःकरण जिनका १० तात्पर्य दुर्योधनादिका अन्तःकरण लोभ करके मैला होगयाहै इस हेतुसे वे इन दोनों पातकों को नहीं समझते हैं सो वे यद्यपि नहीं समझते हैं तो मत समझो ॥ ३८ ॥ सि० परन्तु + हे कृष्णचन्द्र ! १ कुलक्षयकृत दोषके २ । ३ देखनेवाले हमने ४ । ५ इस पाप से ६ । ७ निवृत्त होनेको ८ किस प्रकार ९ नहीं १० जानना योग्यहै ११ तात्पर्य कुलके नाश करने में और मित्रके द्रोहमें जो दोषहै उसको हम आपकी कृपासे ज्ञानचक्षु करके देखते समझते हैं हे भगवन् ! देख समझकर भी इस पापसे हम क्यों न बचें अर्थात् इस पापसे निवृत्त होना चाहिये यह हमको जानना योग्यहै ॥ ३९ ॥

कुलक्षयेप्रणश्यन्तिकुलधर्म्माःसनातनाः ॥ धर्म्मेनष्टेकुलंकृत्स्नमधर्म्मोभिभवत्युत ॥ ४० ॥

कुलक्षये १ सनातनाः २ कुलधर्माः ३ प्रणश्यन्ति ४ धर्मे ५ नष्टे ६ कृत्स्नम् ७ कुलम् ८ अधर्म्मः ९ अभिभवति १० उत ११ ॥ ४० ॥ अ० कुलके नाश होने में १ सनातन कुलके धर्म्म २ । ३ नाश होजाते हैं ४ धर्म्म नाश होने में ५ । ६ समस्त कुल ७ । ८ अधर्म्मी ९ होजाताहै १० पू० ११ ॥ ४० ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

अधर्म्माभिभवात्कृष्ण प्रदुष्यन्तिकुलस्त्रियः॥ स्त्रीषुदुष्टासुवार्ष्णेयजायतेवर्णसंकरः॥ ४१॥

कृष्ण १ अधर्म्माभिभवात् २ कुलस्त्रियः ३ प्रदुष्यन्ति ४ वार्ष्णेय ५ दुष्टासु ६ स्त्रीषु ७ वर्णसंकरः ८ जायते ९॥४१॥ अ० हे कृष्णचन्द्र! १ अधर्मके बढ़ने से २ कुलकीस्त्री ३ भ्रष्ट होजाती हैं ४ हे भगवन्! ५ दुष्टस्त्रियों के विषय ६। ७ वर्णसंकर ८ उत्पन्न होता है ९ टी० वृष्णिवंश में जो उत्पन्नहो उसको वार्ष्णेय कहते हैं यह नाम श्रीकृष्ण भगवान् का है ५॥ ४१॥

संकरोनरकायैवकुलघ्नानांकुलस्यच॥ पतन्ति पितरोह्येषांलुप्तपिंडोदकक्रियाः॥ ४२॥

कुलघ्नानाम् १ कुलस्य २ च ४ संकरः ३ नरकाय ५ एव ६ एषाम् ७ पितरः ८ हि ९ पतन्ति १० लुप्तपिण्डोदकक्रियाः ११॥ ४२॥ कुलनाश करने वालों के १ कुलका २ वर्णसंकर ३ भी ४ नरकके वास्ते ५ ही ६ सि० है + और + इनके ७ अर्थात् कुलघ्नोंके ७ पितर ८ भी ९ पतित होजाते हैं १० अर्थात् स्वर्गसे वेभी नरक में गिरपड़ते हैं १० सि० क्योंकि + लोप होगई है पिण्ड और जलकी क्रिया जिनकी ११ अर्थात् न कोई उनका जलदाता रहताहै पिण्डका देनेवाला वर्णसङ्कर आपभी नरक में जाता है और जिस कुलमें उत्पन्न होता है वह कुल भी नरक में जाता है ११॥ ४२॥

दोषैरेतैःकुलघ्नानां वर्णसंकरकारकैः॥ उत्साद्यन्तेजातिधर्म्माः कुलधर्म्माश्चशाश्वताः॥ ४३॥

वर्णसङ्करकारकैः १ एतैः २ दोषैः ३ कुलघ्नानाम् ४ शाश्वताः ५ जातिधर्म्माः ६ कुलधर्म्माः ७ च ८ उत्साद्यन्ते ९॥ ४३॥ अ० वर्णसङ्कर करनेवाले इन दोषों ने १। २। ३ अर्थात् कुलका नाश करना मित्रों से कपट करनाआदि जो दोष हैं इन दोषों ने ३ कुलघ्नों के ४ सनातन ५ कुलधर्म ६ और जातिधर्म ७। ८ लोप किये हैं ९ तात्पर्य यही दोष जातिधर्म और कुलधर्मों का लोप करते हैं ९॥ ४३॥

उत्सन्नकुलधर्म्माणां मनुष्याणांजनार्दन॥ नरकेनियतंवासो भवतीत्यनुशुश्रुम॥ ४४॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

जनार्दन १ उत्सन्नकुलधर्म्माणाम् २ मनुष्याणाम् ३ नरके ४ नियतम् ५ वासः ६ भवति ७ इति ८ अनुशुश्रुम ९ ॥४४॥ अ० हे जनार्दन! १ लोप हो-जाते हैं कुल के धर्म्म जिनके सि० ऐसे + ऐसे मनुष्यों को ३ नरक में ४ सदा ५ वास ६ होता है ७ यह ८ पीछे सुनते रहे हैं हम ९ सि० पुराणादि में ॥ ४४ ॥

अहोबतमहत्पापं कर्तुंव्यवसितावयम् ॥ यद्राज्य सुखलोभेन हंतुंस्वजनमुद्यताः ॥ ४५ ॥

अहोक्त १ वयम् २ महत्पापम् ३ कर्तुम् ४ व्यवसिताः ५ यत् ६ राज्यसुख-लोभेन ७ स्वजनम् ८ हन्तुम् ९ उद्यताः १० ॥ ४५ ॥ अ० उ० सन्ताप करनेसे भी पाप दूर होजाता है जो आगे को पाप न करने का नियम करै यह समझकर अर्ज्जुन सन्ताप करता है अर्ज्जुन ने अपने सम्बन्धियों के साथ युद्ध करनेका जो मनोराज्य किया इसको भी पाप समझा + बड़े कष्ट की बात है + ऐसी जगह अहोबत बोला करते हैं अर्ज्जुन कहते हैं कि अहोबत १ हम २ बड़ा पाप करने को ३ । ४ निश्चय हुये अर्थात् हमने बड़े पाप करने का निश्चयकिया ५ जो ६ राज्य सुखका लोभ करके ७ अपने सम्बन्धियों के मारनेको ८।९ उद्यतहुये १० तात्पर्य अपने सम्बन्धियों के मारने के लिये हमने यत्न किया १० ॥ ४५ ॥

यदिमामप्रतीकारमशस्त्रंशस्त्रपाणयः ॥ धार्त्तरा ष्ट्रारणेहन्युस्तन्मेक्षेमतरंभवेत् ॥ ४६ ॥

शस्त्रपाणयः १ धार्त्तराष्ट्राः २ यदि ३ माम् ४ अप्रतीकारम् ५ अशस्त्रम् ६ रणे ७ हन्युः ८ तत् ९ मे १० क्षेमतरम् ११ भवेत् १२ ॥ ४६ ॥ अ० उ० प्राण-धारी को प्राण से भी श्रेष्ठ परमधर्म अहिंसा है यही समझकर अर्ज्जुन कहता है + दुर्योधनादि २ शस्त्र है हाथ में जिनके १ जो ३ मुझ अप्रतीकार अशस्त्र को ४ । ५ । ६ । रण में ७ मारें ८ तो ९ मेरा १० बहुत भला ११ हो १२ टी० जो अपने साथ बुराई करे उसके साथ बुराई न करे उसको अप्रतीकार कहतेहैं ५ धनुषआदि शस्त्र अर्ज्जुन ने उस समय हाथ में से रखदिये थे इस हेतु से अर्ज्जुन ने अपने आपको अशस्त्र कहा ६ । ४६ ॥

संजयउवाच ॥ एवमुक्त्वार्जुनःसंख्ये रथोपस्थ

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

उपाविशत् ॥ विसृज्यसशरंचापं शोकसंविग्न मानसः ॥ ४७ ॥

अ० संजयः १ उवाच २ अर्जुनः ३ संख्ये ४ एवम् ५ उक्त्वा ६ सशरम् ७ चापम् ८ विसृज्य ९ रथोपस्थे १० उपाविशत् ११ शोकसंविग्नमानसः १२ ॥ ४७ ॥ अ० संजय धृतराष्ट्र से कहता है १ । २ सि० हे राजन्! + अर्जुन ३ रण में ४ इस प्रकार ५ कहकर ६ सि० जो पीछे कहा ५ । ६ और + सहित शर के ७ धनुष को ८ विसर्जन करके ९ अर्थात् कमान का चिल्ला उतार और तीर तरकस में रख कर ९ रण के पिछले भाग १० में बैठगया ११ शोक में डूबगया है मन जिसका १२ तात्पर्य अर्जुन को उस समय शोक मोह हुआ ॥ ४७ ॥

इति श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सुब्रह्मविद्यायांयोगशास्त्रेश्रीकृष्णार्जुनसंवादेऽर्जुनविषादोनामप्रथमोऽध्यायः १ ॥

द्वितीयअध्यायकाप्रारम्भहुआ ॥

संजयउवाच ॥ तंतथाकृपयाविष्टमश्रुपूर्णाकुलेक्षणम् ॥ विषीदन्तमिदंवाक्यमुवाचमधुसूदनः ॥ १ ॥

मधुसूदनः १ तं २ इदम् ३ वाक्यम् ४ उवाच ५ तथा ६ कृपया ७ आविष्टम् ८ अश्रुपूर्णाकुलेक्षणम् ९ विषीदन्तम् १० ॥ १ ॥ उ० संजय धृतराष्ट्र से कहता है कि हे राजन्! + अ० श्रीभगवान् १ तिस २ सि० अर्जुन से + यह ३ वाक्य ४ बोलते भये ५ सि० कैसा है वह अर्जुन + तिस प्रकार ६ कृपाकरके ७ युक्त है ८ अर्थात् जो गति अर्जुन की पिछले अध्याय में कही और + आंसू करके पूर्ण और व्याकुल होरहे हैं नेत्र जिसके ९ अर्थात् अर्जुन के नेत्रों में आंसू भरगये और + विषाद को प्राप्त होरहा है १० ॥ १ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ कुतस्त्वाकश्मलमिदंविषमे समुपस्थितम् ॥ अनार्य्यजुष्टमस्वर्ग्यमकीर्तिकरमर्जुन ॥ २ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

अर्जुन १ त्वा २ इदम् ३ कश्मलम् ४ विषमे ५ कुतः ६ समुपस्थितम् ७ अनार्यजुष्टम् ८ अस्वर्ग्यम् ९ अकीर्तिकरम् १० ॥ २ ॥ अ० हे अर्जुन ! १ तुमको २ यह ३ कायरपना ४ रण में ५ कहांसे ६ प्राप्तहुआ ७ सि० कैसाहै यह कायरपना नहीं है श्रेष्ठ जो जन उन करके सेवन करने योग्य है ८ अर्थात् तूतो उत्तम श्रेष्ठ है यह तेरेयोग्य नहीं अश्रेष्ठों के योग्य है फिर कैसाहै यह कायरपना कि + स्वर्गको प्राप्त करनेवाला नहीं ९ सि० प्रत्युत + अयश करनेवाला है १० ॥ २ ॥

क्लैब्यंमास्मगमःपार्थ नैतत्त्वय्युपपद्यते ॥ क्षुद्रंहृदयदौर्बल्यंत्यक्त्वोत्तिष्ठपरंतप ॥ ३ ॥

पार्थ १ क्लैब्यं २ मास्मगमः ३ एतत् ४ त्वयि ५ न ६ उपपद्यते ७ परन्तप ८ क्षुद्रं ९ हृदयदौर्बल्यं १० त्यक्त्वा ११ उत्तिष्ठ १२ ॥ ३ ॥ अ० हे अर्जुन ! १ नपुंसकपने को २ मत प्राप्त हो ३ यह ४ तुझ में ५ नहीं ६ शोभा पाता है ७ हे परन्तप अर्जुन ! ८ नीचताको ९ और हृदय की दुर्बलता को १० त्याग करके ११ सि० युद्ध के लिये + खड़ा हो १२ ॥ ३ ॥

अर्जुनउवाच ॥ कथंभीष्ममहंसंख्ये द्रोणंचमधुसूदन ॥ इषुभिःप्रतियोत्स्यामिपूजार्हावरिसूदन ॥ ४ ॥

मधुसूदन १ संख्ये २ द्रोणं ३ च ३ भीष्मम् ४ प्रति ५ इषुभिः ६ कथं ७ योत्स्यामि ८ अरिसूदन ९ पूजार्हौ १० ॥ ४ ॥ अ० उ० नपुंसकपने से मैं युद्ध नहीं करता हूं यह न समझिये किन्तु मुझको युद्ध करने में अन्याय प्रतीत होता है यह प्रकट करता है अर्जुन + हे मधुसूदन १ रण में २ द्रोणाचार्य्य ३ और ३ भीष्मपितामह के ४ प्रति ५ अर्थात् द्रोणाचार्य्य और भीष्मजी के साथ + बाणों करके ६ कैसे ७ युद्ध करूं ८ हे वैरियोंके मारनेवाले श्रीकृष्णचन्द्र ! ९ सि० भीष्म और द्रोणाचार्य्य दोनों + पूजा करने के योग्य हैं १० तात्पर्य जिनपर फूल चढ़ने योग्य हैं उनके साथ लड़ना यह वाणी से कहना भी अयोग्य है फिर तीरोंसे उनके साथ कैसे लड़ना चाहिये इत्यभिप्रायः ॥ ४ ॥

गुरूनहत्वा हि महानुभावाञ्छ्रेयोभोक्तुंभैक्ष्यमपीहलोके ॥ हत्वार्थकामांस्तुगुरूनिहैवभुंजीयभोगान्रुधिरप्रदिग्धान् ॥ ५ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

महानुभावान् १ गुरून् २ अहत्वा ३ हि ४ भैक्ष्यं ५ अपि ६ भोक्तुं ७ श्रेयः ८ इह ९ लोके १० अर्थकामान् ११ गुरून् १२ हत्वा १३ तु १४ इह १५ एव १६ रुधिरप्रदिग्धान् १७ भोगान् १८ भुंजीय १९ ॥ ५ ॥ अ० बड़ा प्रभाव है जिनका १ सि० ऐसे गुरुको २ न मारकरके ३ ही ४ भिक्षाका अन्न ५ भी ६ भोगना ७ श्रेष्ठ है इस लोक में ९ । १० अर्थात् यही बात श्रेष्ठ है कि गुरुको कभी न मारना गुरु के न मारने से भीख मांगकर खाना श्रेष्ठ है और + अर्थ की कामना वाले ११ गुरु को १२ मार करके १३ तो १४ इसकाल में १५ ही १६ रुधिर रक्त के सनेहुये भोगों को १७ । १८ हम भोगेंगे १९ तात्पर्य वे भोग हम को नरक प्राप्तकरेंगे १९ टी० अर्थकामान् यह भोगोंका भी विशेषण होसक्ताहै ५ ॥

नचैतद्विद्मः कतरन्नोगरीयो यद्वाजयेमयदिवानो जयेयुः ॥ यानेवहत्वानजिजीविषामस्तेवस्थिताः प्रमुखेधार्त्तराष्ट्राः ॥ ६ ॥

नः १ कतरत् २ गरीयः ३ एतत् ४ न ५ च ६ विद्मः ७ यद्वा ८ जयेम ९ यदि १० वा ११ नः १२ जयेयुः १३ यान् १४ हत्वा १५ न १६ जिजीविषामः १७ ते १८ एव १९ धार्त्तराष्ट्राः २० प्रमुखे २१ अवस्थिताः २२ ॥ ६ ॥ अ० उ० पीछे बहुत जगह और इस अध्याय में भी इसी पिछले श्लोक में अर्जुनको विपर्ययस्पष्ट प्रतीत होताहै और इस छठे श्लोकमें संशय और इससे अगले आठवें श्लोक में अज्ञान स्पष्ट प्रतीत होता है अज्ञान संशय विपर्यय येतीनों ब्रह्मज्ञानसे जातेहैं ब्रह्मविद्या श्रवण करनेसे अज्ञान मनन करनेसे संशय निदिध्यासन करनेसे विपर्ययका नाश होता है + अर्जुन कहता है हे भगवन्! + हमको १ सि० भिक्षाका अन्न श्रेष्ठ है वा गुरु आदिको मारकर राज्य भोगना श्रेष्ठ है इन दोनों में + क्या २ श्रेष्ठ है ३ यह ४ नहीं ५ । ६ जानते हैं हम ७ सि० और जो इनके साथ हम लड़ें भी तो भी हमको यह संशय है कि + यद्वा ८ सि० उनको + हम जीतेंगे ९ यदि वा १० ११ हमको १२ वे जीतेंगे १३ सि० और जो हम उनको जीतभी लेंगे तौभी वह हमारी जीत किसी काम की नहीं क्योंकि + जिनको १४ मार करके १५ नहीं १६ जीना चाहते हैं हम १७ वे १८ ही १९ दुर्योधनादि २० सम्मुख २१ सि० मरने को + खड़े हैं २२ ॥ ६ ॥

कार्पण्यदोषोपहतस्वभावः पृच्छामित्वांधर्मसंमू

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

ष्टचेताः ॥ यच्छ्रेयःस्यान्निश्चितंब्रूहितन्मेशिष्यस्ते हंशाधिमांत्वांप्रपन्नम् ॥ ७ ॥

कार्पण्यदोषोपहतस्वभावः १ धर्मसंमूढचेताः २ त्वाम् ३ पृच्छामि ४ मे ५ यत् ६ निश्चितम् ७ श्रेयः ८ स्याद् ९ तत् १० ब्रूहि ११ अहम् १२ ते १३ शिष्यः १४ त्वाम् १५ प्रपन्नम् १६ माम् १७ शाधि १८ ॥ ७ ॥ अ० उ० अर्जुनको जब अत्यन्त शोक सन्ताप हुआ और कर्त्तव्याकर्तव्य का विचार भी जातारहा तब फिर धीर्य करके मनको सावधान किया और यह विचारकिया कि वेदोंमें महात्माओंके मुख से मैंने यह सुनाहै कि शोकके समुद्रको आत्मा का जाननेवाला तरताहै धर्म धर्म कर्म पुत्रादि करके मोक्ष नहीं होता है जीव + तरतिशोकमाऽऽत्मवित् + नकर्मणा नप्रजया न धनेन न त्यागेनैकेन अमृतत्वमानशुः ॥ इन श्रुतियोंका अर्थ बेसन्देह सत्य है क्योंकि धर्म कर्म मैं सब जानताहूं करताहूं धर्मका अवतार साक्षात् मेरेभाई हैं वेदोक्त कर्म्मकाण्डके जानने अनुष्ठान करने में मेरे किञ्चित् सन्देह नहीं और भेद उपासना परमेश्वरकी भक्तिका फल साक्षात् श्रीकृष्णचन्द्र महाराज मेरेस्वामी सखा भाई मेरेपास हैं तो भी यह मुझको शोक है इसी हेतुसे स्पष्ट यह प्रतीतहोता है कि शोक आत्मा के ज्ञानसेही नाशहोता है वही मुझको नहीं यह पूर्वोक्त विचार कर अर्जुन ब्रह्मविद्या श्रवण करने के लिये प्रथम ब्रह्मविद्या में अपना अधिकार प्रकट करताहै दो श्लोकोंमें अर्थात् ब्रह्मविद्या के अधिकारों का लक्षण कहता है + दीनतारूप दोषकरके दूषित होगयाहै स्वभाव जिसका १ अर्थात् जो आत्माको नहीं जानता है उसको कृपण कहतेहैं कृपणता कृपणपना दीनता इन सब पदोंका एक ही अर्थ है ॥ योवाएतदक्षरमविदित्वागार्ग्यस्माल्लोकात्प्रैतिसकृपणः ॥ यह बृहदारण्य उपनिषद् श्रुति है तात्पर्यार्थ इसका यह है कि जो विना आत्मज्ञानके मरजाता है वह कृपण दीन है इस पदमें अर्जुनका तात्पर्य यही है कि मैं भी अबतक कृपण अज्ञानी हूं ५ सि० और + ब्रह्म में सम्मूढ है चित्त जिसका २ सि० सो मैं + आपसे बूझता हूं ४ मुझको ५ जो ६ निश्चितश्रेय ७ । ८ हो ९ भी १० कहो ११ सि० शिष्य वा पुत्र से सिवाय और + किसी से ब्रह्मज्ञान नहीं कहना यह शङ्का करके कहता है कि + मैं १२ आपका १३ शिष्य १४ सि० हूं वाणी करके + अनन्यगुरुभक्त को गुरुसे ज्ञान सुनाना योग्य है यह शङ्काकरके कहता है कि + आपकी शरणागत १५ । १६ सि० हूं मैं आपही मेरे रक्षाकरनेवाले हैं सब प्रकार मुझको आपकाही आश्रय है आप + मुझको १७ उपदेश कीजिये १८ टी०

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

जो धारण कियाजावे उसको धर्म कहते हैं धारयतीति धर्म्मः इस व्युत्पत्तिसे धर्म भी एक ब्रह्मका नामहै वेदोक्त धर्म्म को तो अर्जुन भले प्रकार जानताथा उस धर्म्म में अपने को मूढ़ क्यों कहता २ एक अनित्य श्रेय होताहै जैसे ब्राह्मणादि आशीर्वाद दिया करते हैं तुम्हारा श्रेय कल्याण भलाहो ऐसे श्रेय को मैं नहीं बूझताहूं किन्तु जो निश्चय सदा बनारहै तात्पर्य मेरा मोक्ष सेहै परमश्रेय मोक्षको ही कहते हैं जिसको दुःखों की निवृत्ति और परमानन्द की प्राप्ति नित्य कहते हैं उसका साधन मुख्य साक्षात् मुझ से कहो यह मेरा तात्पर्य है ७। ८॥ ७॥

नहिप्रपश्यामिममापनुद्याद्यच्छोकमुच्छोषण मिन्द्रियाणाम् ॥ अवाप्यभूमावसपत्नमृद्धंराज्यंसु राणामपिचाधिपत्यम् ॥ ८ ॥

भूमौ १ असपत्नम् २ ऋद्धम् ३ राज्यम् ४ च ५ सुराणाम् ६ आधिपत्यम् ७ अपि ८ अवाप्य ९ इन्द्रियाणाम् १० उच्छोषणम् ११ यत् १२ शोकम् १३ मम १४ अपनुद्यात् १५ न १६ हि १७ प्रपश्यामि १८॥ ८॥ अ० उ० वेदोंमें यह कथाहै कि नारदजी ने सनकादिकन से यह प्रश्नकिया कि महाराज मुझको सब विद्या सांगोपांग आती हैं और जैसा उनमें कहाहै वैसा मैं अनुष्ठान करताहूं और ब्रह्मलोक के पदार्थों पर्यन्त सब पदार्थ मुझको प्राप्तहैं परन्तु मेरा शोक नहीं गया सनकादि महाराजने उत्तर दिया कि आत्मविद्या तुमने नहीं पढ़ीहोगी नारदजीने कहा कि यह तो मैंने नामभी नहीं सुना नहीं तो मैं अवश्य पढ़ता सनकादि ने नारदजी से यह कहा कि उसी विद्या से शोकका नाश होताहै फिर नारदजीने ब्रह्मविद्या सनकादिकन से ब्रह्मजिज्ञासा करके श्रवण करी तब उनका शोक नाशहुआ यही विचार करके अर्जुन कहता है इस मन्त्रमें + पृथ्वीमें १ सि० तो + शत्रुरहित पदार्थों के भरेहुये राज्यको २। ३। ४ सि० प्राप्तहोकर + और ५ देवतोंके ६ आधिपत्य को ७ भी ८ प्राप्तहोकर ९ सि० परलोक में + अर्थात् देवतों का अधिपति स्वामी इन्द्र ब्रह्मा विष्णु शिवादि होकर ९ इन्द्रियों का १० सुखाने वाला सन्ताप करने वाला ११ जो १२ शोक १३ मेरा १४ दूरहो नाशहो १५ सि० यह बात विना ब्रह्मज्ञानके + नहीं देखताहूं मैं १८ सि० क्योंकि नारदजी से वैष्णव महात्मा ने वर्षों अंगोंके सहित वेद और सब विद्या शास्त्र पढ़े वर्षों अनुष्ठान किये भेद भक्तिकारी ब्रह्माजीके साक्षात् पुत्र विष्णुभगवान् के परमप्यारे जब उनकाही विना ब्रह्मविद्या शोकनाश न हुआ तो फिर मेरा कैसेहोगा इस

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

श्लोक से साफ़ प्रतीत होताहै कि शोक आत्मज्ञानसेही नाश होताहै सिवाय आत्मज्ञान से और कोई कर्म उपासना योगादि साक्षात् मुख्य उपाय नहीं भेदवादी उपासक जो यह कहते हैं कि केवल मूर्त्तिमान् विष्णु शिव राम कृष्णादि देवतों के दर्शन करने से शोक दूर होजाता है विचार करना चाहिये कि जैसा दर्शन अर्जुन को था ऐसा तो इस समय भेदवादियों को स्वप्नमें भी होना कठिन है अर्जुनका तो शोक मोह विना ब्रह्मविद्याके गयाही नहीं औरोंका विना ब्रह्मज्ञानके कैसे नाशहोगा देवतोंका दर्शनादि अन्तःकरण की शुद्धिमें हेतु है फिर ज्ञानद्वारा मोक्षका हेतुहै ॥ ८ ॥

संजयउवाच ॥ एवमुक्त्वाहृषीकेशं गुडाकेशः परंतपः ॥ नयोत्स्यइतिगोविन्दमुक्त्वातूष्णींबभूवह ॥ ९ ॥

संजयः १ उवाच २ परंतपः ३ गुडाकेशः ४ हृषीकेशं ५ एवं६ उक्त्वा ७ नयोत्स्ये ९ इति १० गोविन्दम् ११ उक्त्वा १२ तूष्णीं१३बभूव १४ ह १५ ॥ ९ ॥ अ० संजय धृतराष्ट्रसे कहताहै १।२ सि० कि हे राजन्! + परंतप३अर्जुन४श्रीकृष्णचन्द्रसे ५ इसप्रकार ६ कहकर ७ सि० कि जैसे पीछेकहा + और अभी + नहीं ८ युद्ध करूंगा ९ यह १०. गोविन्दजीसे ११ कहकर १२ चुप १३ होगया १४ पू० १५ टी० निद्राअर्जुनके वशमेंथी इस हेतुसे गुडाकेश अर्जुनका नामहै १४ इन्द्रियों के स्वामी हैं श्रीकृष्णचन्द्र महाराज इसहेतु से हृषीकेश श्रीमहाराज का नामहै ५ तत्त्वमस्यादि वेदोंके महावाक्यों करकेही श्रीकृष्णचन्द्र महाराजकी प्राप्तिहोती है इस व्युत्पत्ति से श्रीमहाराज का नाम गोविन्दहै ११ तात्पर्य अर्जुनका यह है कि युद्ध से प्रथम ब्रह्मज्ञान मुझको उपदेश करदीजिये क्योंकि जो यह पूर्वोक्त अज्ञान संशय विपर्यय मेरा बनारहा और मैं मारागया तो मैं कृपण दीनहीरहा मेरीपरमगति न होगी विचार करना चाहिये कि अर्जुन कैसे संकोच असावकाशके समय ब्रह्मज्ञान श्रवण करने के लिये कैसी श्रीमहाराजसे प्रार्थना करताहै मैं आपका चेलाहूं आपकी शरणागत हूं मुझको उपदेश कीजिये राज्यादि मुझको नहीं चाहनेहैं अब इस समय लाला मुंशी साहूकारादि कहते हैं कि साहब शास्त्रोंके सुनने का किसको सावकाशहै यहां मरनेका भी सावकाश नहीं ऐसे कामियों के पास जब यमदूत आवेंगे तब कामकी गति उनको प्रतीत होगी यमदूतों से भी यही कहना चाहिये

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

कि अजी हमको मरनेका सावकीश कहांहै तुमको सूझता नहीं हम अपने कामसे लगेहुये हैं जैसे गृहस्थ अतिथि अभ्यागतों से कहते हैं ॥ ९ ॥

तमुवाचहृषीकेशःप्रहसन्निवभारत ॥ सेनयोरुभयोर्मध्येविषीदन्तमिदंवचः ॥ १० ॥

भारत १ उभयोः २ सेनयोः ३ मध्ये ४ विषीदन्तम् ५ तम् ६ प्रहसन् ७ इव ८ हृषीकेशः ९ इदम् १० वचः ११ उवाच १२ ॥ १० ॥ अ० उ० जब अर्जुन चुप होगया पीछे क्या हुआ इस अपेक्षा में संजय कहता है कि + हे राजन्! १ दोनों सेनाके २। ३ मध्यमें ४ अतिदुःखित तिसको ५। ६ उपहास करतेहुये ५ जैसे ६ अर्थात् जैसे किसी का उपहास करे हैं ऐसे ६ श्रीभगवान् ७ अतिदुःखित तिसके प्रति ८। ९ अर्थात् अर्जुन से ९ यह १० वचन ११ बोले १२ सि० जो आगे समाप्तिपर्यन्त कहना है टी० विना ब्रह्मज्ञान के बड़े २ लोगों का उपहास होता है अर्जुन का उपहास श्रीमहाराजने किया तौ इसमें क्या आश्चर्य है ५।६॥ इतिहास ॥ एक समय बड़े २ ब्रह्मज्ञानी और भेदवादी भक्त भी बहुत श्रीरामचन्द्रजी महाराज के पास बैठे थे। हनुमान् जी सेवा में थे श्रीमहाराजने अपनी सेवा भक्ति का माहात्म्य प्रकट करने के लिये हनुमान् जी से यह बूझा कि तुम कौनहो हनुमान्जीने शोचा कि जो यह कहताहूं कि आपका सेवक दास हूं तो यह सब ब्रह्मज्ञानी मुझको अज्ञानी समझकर मेरा उपहास करेंगे और यह समझेंगे कि इनकी सेवा भक्ति कैसी है जो अबतक आत्मज्ञान न हुआ और जो मैं ब्रह्महूं यह कहताहूं तो यह सब भक्त यह समझेंगे कि इनकी कैसी यह भक्तिहै और श्रीमहाराजमें कैसा यह भाव है कि जो अपनेही को ब्रह्म कहते हैं फिर तात्पर्य श्रीमहाराज का समझकर यह बोले हनुमान्जी कि देहदृष्टि करके तो आपका दास हूं और जीवबुद्धि करके आपका अंश हूं और वास्तव जो आपहैं शुद्ध सच्चिदानंद स्वरूप ब्रह्म सोई मैं हूं ॥

देहंदृष्ट्वातुदासोहंजीवबुद्ध्यात्वदंशकः ॥ वस्तुतस्तुतदेवाहमितिमेनिश्चितामतिः ॥

यह सुनकर सब प्रसन्नहुये समस्त श्रीभगवद्गीताका सारार्थ यहीहै समस्तगीता शास्त्रमें इसी का विस्तारार्थ उपाय और उपेय अंग अंगीवत् कर्मनिष्ठा और ज्ञाननिष्ठा का निरूपण है ॥ १० ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

श्रीभगवानुवाच ॥ अशोच्यानन्वशोचस्त्वंप्रज्ञावादांश्चभाषसे ॥ गतासूनगतासूंश्चनानुशोचंतिपण्डिताः ॥ ११ ॥

श्रीभगवान् १ उवाच २ त्वम् १ अशोच्यान् २ अन्वशोचः ३ प्रज्ञावादान् ४ च ५ भाषसे ६ पण्डितीः ७ गतासून् ८ अगतासून् ९ च १० न ११ अनुशोचन्ति १२ ॥ ११ ॥ अ० उ० परमकृपा की खानि श्रीभगवान् अर्जुनको ब्रह्मज्ञान सुनाते हैं समस्त गीताशास्त्र में केवल एक ज्ञाननिष्ठा काही निरूपण है अष्टांगयोग सांख्ययोग भेदभक्तियोग कर्मयोगादिका जो किसी जगह प्रसंग है वह ज्ञाननिष्ठा का अंगही श्रीमहाराज ने कहा है और जैसे श्रीरामायण में रामचरित्रों से सिवाय और भी अनेक कथा हैं परन्तु मुख्य श्रीरामजीके चरित्रहैं इसीप्रकार इस श्रीभगवद्गीता उपनिषद् ब्रह्मविद्या योगशास्त्र में ज्ञाननिष्ठाका निरूपण है उसीको मैं आनन्दगिरि नामवाला श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य श्रीस्वामी मलूकगिरिजी महाराजका अनुचर शिष्य सेवक दास श्रीमहाराज अपने स्वामी गुरुदेवके चरण कमलोंका पूजनेवाला श्रीमहाराजकी कृपा से निरूपण करताहूं श्रीभगवान् अर्जुन से कहते हैं कि हे अर्जुन! + १ । २ तू नहीं शोच करने के योग्य जो हैं तिनके निमित्त २ सि० तौ + शोच करता है ३ और पण्डितों केसे शब्दों को ४।५ बोलता है ६ अर्थात् पण्डितों कीसी बातें कहता है राजसुख भोगों करके हमको क्या है इत्यादि ६ पण्डित ७ जो ८ मरेहुओं का ९। १० नहीं ११ शोच करतेहैं १२ टी० भीष्म द्रोणादि के निमित्त व्यवहारमें भी शोच करना बेयोग्यहै क्योंकि सदाचारी हैं मरकर सद्गतिको प्राप्त होंगे और परमार्थमेंभी शोच करना न चाहिये क्योंकि नित्य अविनाशी हैं अर्थात् न वाच्यार्थ में शोच बनता है न लक्ष्यार्थ में २ उन के विना हम कैसे जीवेंगे इनको कैसेसुखहोगा ९ सि० यह सब अज्ञानका धर्महै विद्वानों को यह नहीं होता इस हेतु से प्रतीत होताहै कि तू ज्ञानी पण्डित नहीं दोचार बात पण्डितों कीसी सीखकर बोलता है अहिंसा परमधर्म्महै इत्यादि + इतिहास ॥ एक पुरुषके दो लड़के जवान बहुत गुणवान् ब्याहेहुये दैवयोगसे एकहीदिन एक ही काल में मरगये नगर के लोग उसको समझानेलगे पण्डितों ने अनेक श्लोक उसको त्याग ज्ञान वैराग्य के सुनाये और इस मन्त्रका उत्तरार्द्ध भी सुनाया वह पुरुष सुनतेही इस आधे श्लोक को प्रसन्नमुख होकर उत्तर दिशा को चला

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

पण्डितोंने बूझा कहाँ जातेहो उसने उत्तरदिया कि मैंने दुःखरूप गृहस्थाश्रम का संन्यास किया विद्वत्संन्यासी होकर विचरूंगा पण्डितों ने कहा कि अभी तुम्हारी तरुण अवस्था है और तुम्हारे घरमें तीन तरुण स्त्री एक तुम्हारी दो तुम्हारे लड़कों की और मा बाप तुम्हारे वृद्ध विद्यमान हैं दोनों लड़के तुम्हारे घर में मरे पड़ेहैं यह समय संन्यास का है किंचित् तुमको मरे जीवतोंका शोच नहीं उसने उत्तर दिया कि जो श्लोक तुमने पढ़ा उसका अर्थ विचारकर तुमको भी तो अनुष्ठान करना योग्यहै नहीं तो ॥ पर उपदेश कुशल बहुतेरे । जे आचरहिं ते नर न घनेरे ॥ विना अनुष्ठान के पण्डिताई किसी कामकी है मरे जीवतों का शोच उसीको है जिसने यह मंत्र कहाहै मेरा शोच करना निष्फल है और यह वेद की आज्ञा है कि जिस समय वैराग्यहो उसी समय संन्यासकरे ॥ यदहरेवविरज्येत तदहरेवप्रव्रजेत् यह कहकर उसी समय विरक्त होगया विचारना चाहिये किगीता का सुनना इसको कहते हैं जिस श्लोक का उत्तरार्द्ध सुनकर यह पुरुष कृतार्थ हुआ इसका अर्थ सबही जानते हैं कहते हैं सुनते हैं परन्तु कहना जानना सुनना सब निष्फल है क्योंकि रोटीके जानने कहने सुनने से पेट किसी का नहीं भरता है खानेसेही पेट भरता है यही आशय गीताके अर्थ का है ऐसा पुरुष कोई होगा कि सत्य सन्तोष त्याग वैराग्य भक्ति शम दमादिका अर्थ और फल न जानता होगा परन्तु सुन समझकर अनुष्ठान नहीं करते हैं इसी हेतुसे भटकते रहते हैं भगवत्वाक्य में विश्वास करके अनुष्ठान करनेके लिये कमर बांधनी चाहिये और शोचना योग्य है देखो तो श्रीमहाराज अपने मुखारविन्द से यह कहते हैं कि मरे जीवतों का शोच नहीं करना यह बात भले की है वा नहीं शोच करने में क्या बुराई है न शोच करनेमें क्या भलाई है और शोच वास्तव है या भ्रान्ति है यह मुझमें कबसे है इसका क्या स्वरूप है क्या अधिष्ठान है जीवगत है वा अन्तःकरणगत है एकरस रहता है वा घटता बढ़ता रहता है किस बातसे बढ़ताहै किस साधन से घटता है क्या इसकी समूल निवृत्तिका उपाय है ऐसा विचार करके समस्त गीताके अर्थका अनुष्ठान करना योग्यहै जब गीता का अर्थ जानना सुनना कहना सफल है ॥ ११ ॥

नत्वेवाहंजातुनासं नत्वंनेमेजनाधिपाः ॥ नचैव नभविष्यामः सर्वेवयमतःपरम् ॥ १२ ॥

जातु १ अहम् २ न ३ आसम् ४ न ५ तु ६ एव ७, त्वम् ८ न ९ इमे १०

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

धनाधिपाः ११ न १२ अतः १३ परम् १४ वयम् १५ सर्वे १६ न १७ भविष्यामः १८ न १९ च २० एव २१ ॥ १२ ॥ अ० उ० आत्मा नित्यहै इसहेतु से शोच करना न चाहिये आत्माको अद्वैत नित्य सिद्ध करतेहुये शोच न करने में हेतु कहते हैं + पीछे क्या कभी १ मैं २ नहीं ३ होता भया ४ सि० यह + नहीं ५ पू० ६ । ७ अर्थात् पीछे मैं था ७ सि० और + तू ८ सि० क्या पीछे + नहीं ९ सि० था यह नहीं अर्थात् तू भी पीछे था और + ये १० राजा ११ सि० क्या पीछे + नहीं १२ सि० थे यह नहीं अर्थात् यह भी पीछे थे तू और ये सब राजा वर्त्तमान में विद्यमानही हैं और + इस से १३ पीछे १४ अर्थात् इस स्थूल शरीर त्याग से पीछे १४ हम १५ सब १६ सि०, क्या + नहीं १७ होंगे १८ सि० यह + नहीं १९ पू० २० । २१ अर्थात् तू और मैं और ये राजा अवश्य आगे को भी होंगे क्योंकि सच्चिदानन्दरूप आत्मा एक नित्य है + तात्पर्य तू और ये राजा और मैं सब वास्तव एकही त्रिकालाबाध्य हैं त्वम् पदार्थ को सत्पदार्थ के साथ लक्ष्यार्थ शुद्ध सच्चिदानन्दस्वरूप में एकता जाननी योग्य है इस मंत्रमें जीवोंको नानात्व जो प्रतीत होताहै यह औपाधिक भेदहै वास्तव जीव एकहीहै अथवा समस्त श्लोक का अन्वय करके सर्वे वयम् इन दोनोंपदों को हेतु करदेना अर्थात् जीव एकही है कुतः कि यतः सर्वे वयम् अर्थात् तू और मैं और ये राजा क्या आगे न होंगे यह नहीं अवश्य होंगे कुतः कि यतः सर्वेवयम् बहुवचन आदर के लिये है अर्थात् सब जीव आत्माही है ॥ १२ ॥

देहिनोऽस्मिन्यथादेहे कौमारंयौवनंजरा ॥ तथा देहान्तरप्राप्तिर्धीरस्तत्रनमुह्यति ॥ १३ ॥

देहिनः १ यथा २ अस्मिन् ३ देहे ४ कौमारम् ५ यौवनम् ६ जरा ७ तथा ८ देहान्तरप्राप्तिः ९ धीरः १० तत्र ११ न १२ मुह्यति १३ ॥ १३ ॥ अ० उ० आप अपने को जो नित्य कहतेहो यह तो सत्य है परन्तु जीव नित्य कैसे होसक्ताहै प्रत्यक्ष जन्मलेता है मरताहै यह शङ्काकरके श्रीमहाराज कहते हैं + जीवको १ जैसे २ सि० स्थूल + इस देहमें ३ । ४ कौमार ५ यौवन ६ जरा ७ सि० अवस्था होतीहैं + तैसेही ८ दूसरी देहकी प्राप्ति ९ सि० होजातीहै + धीरजवाला १० तहां ११ अर्थात् देहोंकी उत्पत्ति नाशमें ११ नहीं १२ मोहको प्राप्तहोता है १३ अर्थात् जीवको मरा जन्मवान् नहीं मानताहै १२ तात्पर्य जैसे जीव स्थूल शरीरमें प्रथम बालक कहा जाताहै फिर उसीको जवान कहते हैं फिर उसीको बूढ़ाकहते हैं जीव तीनों अवस्था

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

में वास्तव एकहीरस रहताहै तैसेही दूसरी देहमें एकरस रहताहै मरना उत्पन्नहोना देहोंका धर्महै जीव सदा एकरस नित्य है यथा अहम् और जैसे मुसाफिर एकसरायमें छोड़कर दूसरी सराय में बसकर अपने को मरा जन्मा नहीं मानता तैसेही जीव मुसाफिर की तरह और शरीर सराय की तरहहै यह समझकर शरीर छूटने का कुछ शोच करना न चाहिये आगे बहुत शरीर मिलेंगे सराय की तरह आत्मा असंख्यात वर्षोंका मुसाफिर है नये शरीरमें जाकर पिछलेकी गति दुःख सुखादि भूल जाताहै और दूसरी अवस्थामें जैसे जीव अन्यजातु नहीं होजाता अपनेको वही मानता है जो बालक अवस्था में मानता था तैसेही दूसरे शरीरमें भी वही एकरस सच्चिदानन्द आत्माका समझना चाहिये सदाचारी पुण्यात्मा पुरुषतो देहके छूटने से आनन्दको प्राप्तहोते हैं क्योंकि इस देहके पीछे सुन्दर दिव्य देह की प्राप्ति होगी बुरा मकान छूटकर जो अच्छा मन्दिर मिले तो उसके निमित्त क्या शोक करना चाहिये ॥ १३ ॥

मात्रास्पर्शास्तुकौंतेय शीतोष्णसुखदुःखदाः ॥
आगमापायिनोनित्यास्तांतितिक्षस्वभारत ॥ १४ ॥

कौंतेय १ मात्रास्पर्शाः २ तु ३ शीतोष्णसुखदुःखदाः ४ आगमापायिनः ५ अनित्याः ६ भारत ७ तान् ८ तितिक्षस्व ९ ॥ १४ ॥ अ० उ० न जानिये दूसरा देह कैसा मिलेगा शीतोष्णादि का उसमें आराम होगा वा नहीं इस हेतुसे वर्तमान इष्ट पदार्थों के वियोग में दुःख प्रतीत होताहै इस देहके छूटतेही सब इष्ट पदार्थों का वियोग होजायगा यह शङ्का करके श्रीमहाराज यह मंत्र कहते हैं कि + हे अर्जुन ! १ इन्द्रियों की वृत्तियों का शब्दादि विषयोंके साथ जो सम्बन्धहै इसको मात्रास्पर्शाः कहतेहैं २ अर्थात् देखना भोजनादि ये सब २ शीत उष्ण सुखदुःखके देनेवाले ३ सि० हैं किसीकाल में शीत किसीकाल में गरमी कभी ये अनुकूल कभी प्रतिकूल इस हेतुसे कभी सुख कभी दुःख बनाही रहताहै + कैसे हैं ये भोजनादि पदार्थ कि दिनरात्रिवत् + आने जानेवाले ५ सि० हैं इसी हेतुसे सब पदार्थ + अनित्य ६ हे अर्जुन! ७ तिनको ८ अर्थात् जाग्रत् अवस्था के भोगोंको ८ सि० स्वप्न पदार्थवत् समझकर + सहन कर ९ अर्थात् तिनके निमित्त वृथा हर्ष विषाद मत कर हर्ष विषाद के वश मतहो ९ तात्पर्य इष्ट पदार्थोंका संयोग वियोगादि झूठी भ्रान्ति है वास्तव आत्माका न किसी के साथ सम्बन्ध है न वियोग है सिवाय आत्माके और कोई पदार्थ सुखदायी नहीं सो नित्य प्राप्तहै सिवाय इसके विषाद

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

कर जो सहन करताहै उसको दुःख कम होताहै नहीं तो सहना सबकोही पड़ता है अनित्य पदार्थोंमेंतो वथा हर्षकरना क्या शोक करना कितने कालकेलिये क्योंकि क्षण पीछे हर्ष क्षण पीछे शोक होताही रहता है इनको अनित्य समझकर इनके वश नहीं होना यही इनका सहना है इष्ट पदार्थ के लियेतो यत्न नहीं करना और उसके वियोगमें कुछ दुःख नहीं मानना और अनिष्ट पदार्थोंमें उद्वेग नहीं करना वर्त्तमान में जैसाहो वही हर्ष शोकरहित भोगना यही एक अनुष्ठान बहुतहै ॥ १४ ॥

यंहिनव्यथयन्त्येतेपुरुषंपुरुषर्षभ ॥ समदुःखसुखंधीरंसोमृतत्वायकल्पते ॥ १५ ॥

पुरुषर्षभ १ एते २ यम् ३ पुरुषम् ४ न ५ व्यथयन्ति ६ समदुःखसुखम् ७ धीरम् ८ सः ९ हि १० अमृतत्वाय ११ कल्पते १२ ॥ १५ ॥ अ० उ० प्रयत्नकरके दुःख दूर करदेना चाहिये और सुख सम्पादन करना चाहिये शीतोष्णादिको क्यों सहना यह शङ्का करके श्रीभगवान्का इस मन्त्र में आशय यह है कि प्रयत्न करने से उनका सहना हज़ार जगह श्रेष्ठतमहै क्योंकि सहने का बड़ा फलहै सो हमने सुना सिवाय इसके यह नियम नहीं कि प्रयत्न करनेसे अवश्यही दुःख शीतोष्णादि दूरहोजावें प्रत्युत प्रयत्न करना दूने दुःख का हेतु है क्योंकि एक तो प्रथम दुःख था दूसरे यत्नमें महादुःख हुआ और जब वह कार्य्यसिद्ध न हुआ तब और भी महादुःख हुआ सहनेसे प्रयत्न करने में क्लेशही क्लेश है इस हेतुसे सहनही श्रेष्ठतमहै सोई सुन + हे अर्जुन! १ ये २ सि० मात्रास्पर्श शीतोष्णादि + जिस पुरुष को ३। ४ नहीं ५ विषाद के वश करतेहैं ६ सि० कैसाहै वह पुरुष + समानहैं सुख दुःख जिसके ७ सि० और बुद्धिमान् + धीर ८ सि० है जो + सो ९ ही १० मुक्तिके वास्ते ११ योग्य है वा समर्थ है १२ अर्थात् जो मानापमानादि को प्रारब्धकर्म का भोग समझकर सहता है निवृत्ति प्राप्तिके लिये यत्न नहीं करता है सोई मुक्तिके योग्यहै वही मुक्तहोगा + तात्पर्य दुःखादिमें आत्मा की कुछ भी क्षति नहीं समझता है इसमें हेतु यह है कि विचारवान् है विचारवान् ब्रह्मनिष्ठ ज्ञानीही अपमानादिको सहसक्ताहै और वही मोक्षका अधिकारी है इसवास्ते ज्ञानसम्पादन करना योग्य है ॥ १५ ॥

नासतोविद्यतेभावो नाभावोविद्यतेसतः ॥ उभयोरपिदृष्टोन्तस्त्वनयोस्तत्त्वदर्शिभिः ॥ १६ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

असतः १ भावः २ नु ३ विद्यते ४ सतः ५ अभावः ६ न ७ विद्यते ८ अपि ९ तु १० अनयोः ११ उभयोः १२ अन्तः १३ तत्त्वदर्शिभिः १४ दृष्टः १५ ॥ १६ ॥ अ० उ० परमार्थ दृष्टि करके तो शीतोष्णादि पदार्थ वास्तव तीनोंकालमें नहीं नित्य अखण्ड पूर्ण आत्माही है उसका अभाव नहीं होता और शीतोष्णादिपदार्थों का भाव नहीं होता यह विचारकर विद्वानों को शीतोष्णादि बाधा नहीं करते जो कोई यह कहे कि शीतोष्णादि का सहना अत्यन्त कठिन है वह कैसे सहा जावै कदाचित् अत्यन्त सहने में आत्माका नाश न होजाय उसके उत्तर में यह कहते हैं + असत् की १ सत्ता २ नहीं ३ है ४ सत् की ५ असत्ता ६ नहीं ७ है ८ सि० यह नहीं समझना कि इनका निर्णय किसीने नहीं कियाहै + अपि तु ९ । १० इन दोनोंका ११ । १२ अन्त १३ तत्त्वदर्शी गुरुओंने १४ देखा है १५ अर्थात् ब्रह्मज्ञानियों ने इन दोनों सत् असत्का तत्त्व यही निर्णय किया है कि सत्स्वरूप आत्मा निर्लेप असंस्पर्श पदार्थ है और असत्स्वरूप शीतोष्णादि की आत्मामें गन्धमात्र भी नहीं सोई वेदों ने भी यह कहा है मंत्र ॥ ननिरोधोनचोत्पत्तिर्नबद्धोनचसाधकः। नमुमुक्षुर्नवैमुक्तइत्येषापरमार्थता ॥ तात्पर्य इस मंत्र का यही है कि सिवाय आत्माके कभी कुछ हुआ ही नहीं फिर निवृत्ति किसकी करनी चाहिये और जो किसीको सिवाय आत्मा के कुछ प्रतीत होताहै वह भ्रांतिहै क्योंकि भलेप्रकार कोई भी किसी पदार्थका करामलकवत् निःसंशय निश्चय नहीं करते हैं कोई कुछ कहता है कोई कुछ कहताहै सबका सम्मत न होनेसेही स्पष्ट प्रतीत होता है कि वास्तव सिवाय आनन्दस्वरूप आत्मा के और कुछ नहीं सिवाय इसके इस बातको ऐसे समझो कि जैसे दश महल्लों का नाम एक नगर है बीस हवेलियोंका नाम एक महल्लाहै मृत्तिका पाषाण काष्ठादि का नाम हवेली है पृथ्वीके परमाणुओं का जो संघातहै उसको मृत्तिका काष्ठादि कहते हैं ऐसे विचार करते करते परमाणु एक पदार्थ सिद्धहोता है परमाणु उसको कहते हैं जो किनका नेत्रका तो विषय नहीं परन्तु अनुमान द्वारा ऐसे निश्चय करते हैं कि मकानमें पृथ्वी के किनके उड़ते नहीं दीखपड़ते झरोखे की चांदनी में दीख पड़ते हैं इसहेतु से प्रतीतहोताहै कि और भी इससे सूक्ष्महोंगे सूक्ष्मसे भी सूक्ष्म किनके को परमाणु कहते हैं जब यह जीव अनुमान में चतुर होजाताहै तब इसको प्रत्यक्षानुमान शाब्दादि प्रमाणोंसे आत्माका भाव और जगत् का अभाव साक्षात् प्रतीत होने लगता है यह विचार बहुत सूक्ष्म है

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

अवश्य इसका मनन करना योग्य है जैसे पीछे विचार करते करते सर्व पदार्थों का अभाव होगया सब कल्पित प्रतीत होनेलगे एक परमाणु रहगया जब भले प्रकार बुद्धि निर्मल होजातीहै तब वहभी कल्पित प्रतीत होने लगताहै फिर उस का अत्यन्ताभाव होजाताहै इसवास्ते जबतक यह विषय समझमें न आवे तबतक अन्तःकरण की शुद्धिका उपाय कर्म उपासना करै ॥ १६ ॥

अविनाशितुतद्विद्धियेनसर्वमिदंततम् ॥ विनाशमव्ययस्यास्यनकश्चित्कर्तुमर्हति ॥ १७ ॥

येन १ इदम् २ सर्वम् ३ ततम् ४ तत् ५ तु ६ अविनाशि ७ विद्धि ८ अस्य ९ अव्ययस्य १० विनाशम् ११ कर्तुम् १२ कश्चित् १३ न १४ अर्हति १५ ॥ १७॥ अ० उ० सामान्य करके तो आत्माको नित्य प्रतिपादन किया अब फिर विशेष करके दूसरे प्रकारसे आत्माको नित्य प्रतिपादन करते हैं जैसे पिछले श्लोक में आत्माको सत् शब्द करके निरूपणकिया तैसेही इस मंत्रमें अविनाशी शब्द करके निरूपण करते हैं आत्मा अतिसूक्ष्म पदार्थ है इसवास्ते श्रीमहाराज उस को अनेक शब्दों करके वर्णन करते हैं पुनरुक्ति समझनी न चाहिये इस प्रकरणमें बहुत जगह तो अर्थमें पुनरुक्ति प्रतीत होतीहै जैसे सत् नित्य अविनाशी इन शब्दों का एकही अर्थ है और बहुत जगह एक वही शब्द लिखाहै यह वारंवार अनेक युक्तियों के साथ उपदेश वास्ते जल्द समझने के है पुनरुक्तिदोष नहीं+जिस करके १ अर्थात् सत् स्वरूप आत्मा करके परमानन्दस्वरूप आत्मा से १ यह २ सब ३ सि० जगत्+व्याप्त ४ सि० है होरहाहै+तिसको ५ अर्थात् आत्मा को ५ ही ६ अविनाशी ७ जान तू ८ इसका अर्थात् अविनाशी निर्विकार का ९ । १० नाश करने को ११ । १२ कोई १३ नहीं १४ योग्य है वा नहीं समर्थ है १५ अर्थात् ऐसा कोई समर्थ नहीं कि जो आत्माका नाश करै वा कमकरै १५ तात्पर्य यह जगत् आत्मा करके व्याप्तहै इसको ऐसे समझना चाहिये कि आत्मा सच्चिदानन्द स्वरूपहै विचार करो जगत् में ऐसा कोई भी बुरा भला पदार्थ नहीं कि जिसमें कुछ आनन्द न हो आनन्द करके यह जगत् पूर्ण है और आनन्द करके ही इसकी स्थितिहै वही आनन्द अविनाशी है साक्षात् स्वयंप्रकाश है तीनों अवस्था में इस हेतुसे प्रत्यक्ष ज्ञानस्वरूप है ॥ १७ ॥

अन्तवन्तइमेदेहा नित्यस्योक्ताःशरीरिणः ॥ अनाशिनोऽप्रमेयस्यतस्माद्युध्यस्वभारत ॥ १८ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

इमे १ देहाः २ अन्तवन्तः ३ उक्ताः ४ शरीरिणः ५ नित्यस्य ६ अनाशिनः ७ अप्रमेयस्य ८ तस्मात् ९ युध्यस्व १० भारत ११ ॥ १८॥ अ० उ० सत् पदार्थ आत्माको तो नित्य सिद्ध किया अब असत् पदार्थ देहादि अनात्माको अनित्य सिद्ध करते हैं अर्थात् असत् पदार्थों का अभाव कहते हैं + ये १ सि० आविद्यक भौतिक कल्पित देह २ अन्तवाले ३ अर्थात् अनित्य कहे हैं ४ देहधारी जीवके ५ अर्थात् अध्यारोप में आत्माको देही शरीरी कहते हैं और विवर्त्तवाद में उसको नित्य कहते हैं वास्तव वह अनिर्वचनीय है और देहोंका भाव वास्तव है नहीं देहों को अनित्य कहना जीव को नित्य कहना यह सब विवर्त्तवाद है + सि० कैसा है वह आत्मा कि + सदा एक रूप है ६ अर्थात् सदा उसका एक सच्चिदानन्द निर्विकार नित्यमुक्तरूप है इसी हेतुसे सो + अविनाशी है ७ सि० जो ऐसाहै तो सबको सत्त्वादिपदार्थोंवत् समझ में क्यों नहीं आता है यह शंका करके कहते हैं किसी आत्मा + अप्रमेयहै ८ अर्थात् बुद्ध्यादि का विषय नहीं क्योंकि बुद्धिका आदिहै इसी हेतुसे बुद्धिसे परे श्रेष्ठहै बुद्धिका साक्षी है यही उसकी पहचान है जैसे कोई यह कहे कि मेरी आंख मुझको दिखाओ उत्तर उसका यहीहै कि जिस करके तू सबको देखताहै वही तेरी आंखहै ऐसेही जिस करके बुद्धिका भी ज्ञानहै वह ज्ञानस्वरूप स्वयं सिद्ध है और जो अब भी इतने विशेषणों से आत्माका स्वरूप तेरी समझ में न आयाहो क्योंकि आत्मा अतिसूक्ष्म है जब कि आत्मा अतिसूक्ष्म है + तिस कारण से ९ अर्थात् इसी वास्ते ९ युद्धकर तू १० हे अर्जुन! ११ सि० यह मैं तुझसे कहताहूं + तात्पर्य स्वधर्मका अनुष्ठान करने से अन्तःकरण शुद्धद्वारा आत्मा का स्वरूप समझ में आजाताहै चर्चा चतुराईका वहां कुछ काम नहीं अथवा जब कि आत्मा नित्यहै न उसका नाशहै न उसको दुःख सुखादि का सम्बन्धहै तिस कारणसे हे अर्जुन! स्वधर्म मत त्याग सुख दुःखादि का सहनकर + नित्यस्य अनाशिनः अप्रमेयस्य ये तीनों शरीरिणः के विशेषण हैं अर्थात् सदा एकरस अविनाशी अप्रमेय देहधारी जीवके शरीर अन्तवाले कहे हैं अविनाशीका जो देहों के साथ आविद्यक सम्बंध है इस हेतुसे देह प्रवाहरूप करके नित्य प्रतीत होते हैं वास्तव नित्य अनित्य हैं नहीं ॥ १८ ॥

यएनंवेत्तिहन्तारं यश्चैनंमन्यतेहतम् ॥ उभौ तौनविजानीतो नायंहन्तिनहन्यते ॥ १९ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

यः १ एनम् २ हन्तारम् ३ वेत्ति ४ यः ५ च ६ एनम् ७ हतम् ८ मन्यते ९ तौ १० उभौ ११ न १२ विजानीतः १३ अयम् १४ न १५ हन्ति १६ न १७ हन्यते १८ ॥ १९ ॥ अ०उ० भीष्मादि के मरने में जो शोक करता था अर्जुन कि ये मरेंगे वह तो श्रीमहाराज ने दूरकिया परन्तु अर्जुन को अपने निमित्तभी यह शोक है कि भीष्मादि के मारने में मुझको पापहोगा इसको भी दूर करते हैं अर्थात् श्रीमहाराज अर्जुनसे यह कहते हैं कि जैसे मारना हननरूप क्रियामें कर्मको अर्थात् भीष्मादि को नित्य निर्विकार अविनाशी समझा तैसेही कर्त्ताको अर्थात् अपने को अकर्त्ता समझ तात्पर्य्य किसी क्रियामें भी आत्मा कर्त्ता कर्म्म नहीं यह कहते हैं अब श्रीमहाराज + जो १ इस को २ अर्थात् आत्मा को २ सि० हनन क्रियामें + मारनेवाला ३ अर्थात् कर्त्ता ३ जानता है ४ और जो ५ । ६ इस आत्मा को ७ मराहुआ ८ अर्थात् कर्म्म मानता है ९ वे १० दोनों ११ नहीं १२ जानते १६ यह १३ आत्मा १४ न १५ मारताहै सि० किसी को + १६ न १७ मारता है १८ तात्पर्य्य जो आत्मा को किसी क्रियामें भी कर्त्ता कर्म जानते हैं वे पाप पुण्यके भागी होतेहैं तू तो आत्मा को अक्रिय अकर्त्ता जानकर युद्धकर तुझ को पाप न होगा आत्मा न कर्त्ता है न कर्म्म है ॥ १९ ॥

न जायते म्रियते वा कदाचिन्नायंभूत्वाभविता वानभूयः ॥ अजोनित्यःशाश्वतोयंपुराणो नहन्यतेहन्यमानेशरीरे ॥ २० ॥

अयम् १ कदाचित् २ न ३ जायते ४ न ५ म्रियते ६ वा ७ भूत्वा ८ भूयः ९ अभविता १० वा ११ न १२ अयम् १३ अजः १४ नित्यः १५ शाश्वतः १६ पुराणः १७ शरीरे १८ हन्यमाने १९ न २० हन्यते २१ ॥ २० ॥ अ०उ० उत्पन्न होना व्यवहारिक सत्ताको प्राप्तहोना बढ़ना और का और रूपहोजाना घटनेलगना नाश होजाना ये छह धर्म्म देहके हैं आत्मा के नहीं सोई इस श्लोक में कहते हैं + यह १ आत्मा १ कभी २ न ३ जन्मताहै ४ न ५ मरताहै ६ और ७ होकर ८ फिर ९ न रहे १० वह ११ सि० ऐसा भी यह आत्मा + नहीं १२ अर्थात् जिनका जन्म होताहै वे अवश्य मरते हैं आत्माका न जन्म है न नाश है क्योंकि सादिपदार्थों का नाश होताहै आत्मा अनादि है परन्तु छह अनादि पदार्थों में अविद्यादि पदार्थ भी अनादि कहे जाते हैं उनका ज्ञानकालमें नाश सुना

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

जाताहै अर्थात् अविद्या पदार्थोंका भी जन्म नहीं क्योंकि वे अनादि हैं परन्तु हो-कर अर्थात् हुये फिर नहीं रहते हैं ऐसाभी वह आत्मा नहीं यह अर्थ है नवें पद से लेकर बारहवें पदतक १२ सि० फिर कैसाहै+यह १३ आत्मा १३ जन्मरहित १४ एकरस १५ नित्य १६ सनातन १७ सि० है+शरीर के मारेजाने में १८ १९ नहीं २० माराजाता है २१ अर्थात् शरीरका नाशहोता है २१ ॥ २० ॥

वेदाविनाशिनंनित्यं यएनमजमव्ययम् ॥ कथं सपुरुषःपार्थ कंघातयतिहन्तिकम् ॥ २१ ॥

यः १ एनम् २ अविनाशिनम् ३ नित्यम् ४ अजम् ५ अव्ययम् ६ वेद ७ पार्थ ८ सः ९ पुरुषः १० कम् ११ कथम् १२ हन्ति १३ कम् १४ घातयति १५ ॥ २१ ॥ अ० उ० ज्ञानदृष्टि करके सब क्रियामें आत्मा प्रेरक भी निर्विकारहै इस हेतुसे मैंतेरा प्रेरक भी असंगहूं मेरे निमित्त भी तुझको किसी प्रकारका शोच करना न चाहिये अर्थात् यहभी मतसमझ कि श्रीभगवान् मुझको हिंसामें प्रेरते हैं कभी ऐसा न हो कि इस पापके यही भागीहों इस श्लोक में यह कहते हैं+जो १ इस २ आत्माको २ अविनाशी ३ नित्य ४ अज ५ निर्विकार ६ जानता है ७ हे अर्जुन! ८ सो ९ पुरुष १० किसको ११ किसप्रकार १२ मारताहै १३ अर्थात् आत्मा किसीको किसी प्रकार नहीं मारताहै १३ सि० और+किसको १४ सि० किस प्रकार+मरवाताहै १५ अर्थात् किसीको किसी प्रकार भी नहीं मरवाता है आत्मा किसी क्रिया में कर्त्ताका प्रेरक नहीं तात्पर्य श्रीमहाराजने जैसे अपनेको निर्विकार अकर्त्ता असङ्ग निरूपण किया वैसेही जीवको भी निर्विकार कहा इस कहने से स्पष्ट जीव ब्रह्मकी एकता सिद्धहै इस प्रकरणका यही सिद्धान्तहै ॥ २१ ॥

वासांसिजीर्णानियथाविहाय नवानिगृह्णातिनरोपराणि ॥ तथाशरीराणिविहायजीर्णान्यन्यानिसंयातिनवानिदेही ॥ २२ ॥

यथा १ नरः २ जीर्णानि ३ वासांसि ४ विहाय ५ अपराणि ६ नवानि ७ गृह्णाति ८ तथा ९ जीर्णानि १० शरीराणि ११ विहाय १२ अन्यानि १३ नवानि १४ संयाति १५ देही १६ ॥ २२ ॥ अ० उ० आत्माको तो अविनाशी निर्विकार समझा मैंने आत्माके निमित्त तो मुझको अब किसी प्रकारका शोच नहीं अर्थात्

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

आत्मा किसी क्रियामें न कर्त्ता है न प्रेरक न कर्म्म है आत्मा के नाशकरने में या कर्म करने में न कोई साधनहै परन्तु आत्माका शरीर से जो वियोग होताहै इसके निमित्त तो शोच करना चाहिये यह शङ्का करके कहते हैं+जैसे १ मनुष्य २ जीर्ण ३ वस्त्रोंको ४ त्याग करके ५ और ६ नये ७ सि० वस्त्रोंको+ग्रहणकरता है ८ तैसेही ९ जीर्ण १० शरीरों को ११ त्याग करके १२ और १३ नये १४ सि० शरीरको+प्राप्त होताहै १५ आत्मा जीव १६ सि० न जानिये दूसरा शरीर कैसा मिलै पहले से अच्छा न मिलै इसके निमित्त भी शोच करना न चाहिये क्योंकि धर्मात्मा पुरुषों को वेसन्देह उत्तम शरीर मिलते हैं पापियोंको यह शोच करना चाहिये धर्मात्मा पुरुषोंको पुण्यकी तारतम्यतासे देवतों के शरीर मिलते हैं पापात्मा नरकमें जाते हैं उनको नारकी शरीर मिलते हैं मिलेहुये कर्म्म करनेवालों को मनुष्यों के शरीर मिलते हैं ज्ञानी महापुरुष मुक्त होते हैं तात्पर्य विना ब्रह्मज्ञान के सबको दूसरा शरीर मिलताहै चौदहवें अध्याय में विशेष निरूपण करेंगे इस प्रसंग को गरुड़पुराणादिकी प्रक्रिया भी इसी सिद्धान्तसे मिल जाती है श्रोत्रीय ब्रह्मनिष्ठों के मुखसे श्रवण करने से ॥ २२ ॥

नैनंछिन्दन्तिशस्त्राणिनैनन्दहतिपावकः ॥ नचैनं क्लेदयन्त्यापो नशोषयतिमारुतः ॥ २३ ॥

एनम् १ शस्त्राणि २ न ३ छिन्दन्ति ४ पावकः ५ एनम् ६ न ७ दहति ८ आपः ९ एनम् १० न ११ च १२ क्लेदयन्ति १३ मारुतः १४ न १५ शोषयति १६ ॥ २३ ॥ अ० उ० पीछे कहा था कि आत्मा किसी प्रकार भी नहीं मारा जाताहै अर्थात् आत्मा किसी साधन करके साध्य सिद्ध होनेके योग्य नहीं उसी को अब स्फुट कहते हैं+इस आत्माको १ शस्त्र २ नहीं ३ छेदन करते हैं ४ अग्नि ५ इसको ६ नहीं ७ जलाती है ८ जल ९ इसको १० नहीं ११ । १२ गलाता है १३ पवन १४ नहीं १५ सुखाता है १६ तात्पर्य अन्य और भी किसी साधन करके साध्य नहीं आत्मा स्वयं सिद्ध निर्विकारहै निरवयव होने से क्रिया सावयव हैं इसी हेतुसे आत्मा अक्रिय है ॥ २३ ॥

अच्छेद्योयमदाह्योयमक्लेद्योशोष्यएवच ॥ नित्यःसर्वगतःस्थाणुरचलोयंसनातनः ॥ २४ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

अयम् १ अच्छेद्यः २ अदाह्यः ३ अक्लेद्यः ४ अशोष्यः ५ एव ६ च ७ नित्यः ८ सर्वगतः ९ स्थाणुः १० अचलः ११ सनातनः १२ अयम् १३ ॥ २४, ॥ अ० उ० शस्त्रादि साधनों करके आत्मा इस हेतुसे साध्य नहीं कि आत्मा निर्विकारादि विशेषणों करके विशेषित है यह कहते हैं डेढ़ श्लोक में + यह १ आत्मा १ नहीं है छेदन करनेके योग्य २ नहीं है जलाने के योग्य ३ नहीं है गलानेके योग्य ४ नहीं है सुखाने के योग्य ५ अर्थात् आत्मा न छिद सक्ता है न जल सक्ता है न गल सक्ता है + सि० क्योंकि + नित्य ८ सब जगह व्याप्त ९ स्थाणुवत् स्थिर १० निश्चल ११ सनातन १२ सि० है + यह १३ सि० आत्मा यहां पदों में पुनरुक्ति प्रतीत होती है इसका उत्तर प्रथमही हम लिख आये हैं ॥ २४ ॥

अव्यक्तोयमचिन्त्योयमविकार्योयमुच्यते ॥ तस्मादेवंविदित्वैनं नानुशोचितुमर्हसि ॥ २५ ॥

अयम् १ अव्यक्तः २ अयम् ३ अचिंत्यः ४ अयम् ५ अविकार्यः ६ उच्यते ७ तस्मात् ८ एवम् ९ एनम् १० विदित्वा ११ अनुशोचितुम् १२ न १३ अर्हसि १४ ॥ २५ ॥ अ० यह आत्मा १ अव्यक्त २ मूर्तिरहित ३ सि० है + यह आत्मा ३ अचिंत्य ४ सि० है अर्थात् चिंतन करने में नहीं आता है अन्तःकरण का विषय नहीं + यह आत्मा ५ अविकारी ६ कहा है ७ सि० इस क्रिया का नित्यादि सब पदोंकेसाथ सम्बन्धहै + जब कि यह आत्मा ऐसाहै + तिसकारण से ८ इस प्रकार ९ इस आत्माको १० जानकर ११ पीछे शोच करने को १२ नहीं १३ योग्य है तू १४ तात्पर्य जो लक्षण आत्मा का पीछे निरूपण किया उसको जान समझकर शोक नहीं रहता है ॥ २५ ॥

अथचैनंनित्यजातं नित्यंवामन्यसेमृतम् ॥ तथापित्वंमहाबाहो नैवंशोचितुमर्हसि ॥ २६ ॥

अथ १ च २ एनम् ३ नित्यजातम् ४ मन्यसे ५ वा ६ नित्यम् ७ मृतम् ८ महाबाहो ९ तथा १० अपि ११ एवम् १२ न १३ शोचितुम् १४ त्वम् १५ अर्हसि १६ ॥ २६ ॥ अ० उ० जो कदाचित् देहीके साथ आत्मा का जन्म मरण तू समझताहो तो भी शोच करना न चाहिये यह कहते हैं + और जो १ । २ सि० कदाचित् + इस आत्मा को ३ नित्यजात ४ मानता है ५ अर्थात् जीव का देहों के साथ सदा जन्म होताहै ५ वा ६ सदा ७ मारताहै ८ सि० देहों के साथ

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

+हे अर्जुन ! ९ तो भी १०।११ सि० जैसे अगले श्लोक में कहताहूं इस प्रकार १२ नहीं १३ शोच करने को १४ तू १५ योग्य है १६ ॥ २६ ॥

जातस्यहिध्रुवोमृत्युर्ध्रुवंजन्ममृतस्यच ॥ तस्मा दपरिहार्य्येर्थे नत्वंशोचितुमर्हसि ॥ २७ ॥

हि १ जातस्य २ मृत्युः ३ ध्रुवः ४ मृतस्य ५ च ६ जन्म ७ ध्रुवम् ८ तस्मात् ९ अपरिहार्य्ये १० अर्थे ११ त्वम् १२ शोचितुम् १३ न १४ अर्हसि १५ ॥ २७ ॥ + अ० जब कि १ जन्मवाले का २ मरण ३ निश्चय ४ सि० है अर्थात् जो उत्पन्न हुआहै वह अवश्य मरेगा इसमें प्रमाण प्रत्यक्ष व्यवहार है + और जो मरेहुये का ५।६ जन्म ७ निश्चय ८ सि० है अर्थात् जो मरता है उसका जन्म अवश्य होताहै क्योंकि कर्ता होकर मरा है अपने कियेहुये कर्मोंका भोग करने के लिये अवश्य जन्म लेगा विना भोग वा विना ज्ञान कर्मों का कभी नाश नहीं होताहै + तिस कारण से ९ अवश्यभावि काम में १० । ११ तू १२ शोच करने को १३ नहीं १४ योग्यहै १५ टी० जो काम अवश्य होनेवाला है जिसका कुछ इलाज यत्न परिहार प्रतीकार नहीं उसमें क्या शोच करना चाहिये जो होनी है वह अवश्यहोगी और जो न होनी है वह कभी न होगी + यदभाविन्नतद्भा विभाविचेन्नतदन्यथा ॥ अवश्यंभाविभावानां प्रतीकारोभवेद्यदि ॥ तदादुःखैर्नलिम्पेरन्नलरामयुधिष्ठिराः ॥

जो भावि का प्रतीकार होता तो राजा नल राम युधिष्ठिरादि को क्यों दुःख होता १० । ११ तात्पर्य भीष्मादि का इन देहों से एक दिन अवश्य वियोगहोना है तू क्यों शोच करताहै वियोग अवश्य भाविहै और राज्यधनादि के निमित्तभी शोच मतकर क्योंकि क्या तो भीष्मादि धनको छोड़कर मर जावेंगे अथवा पहिले धनही उनको छोड़ देगा इस हेतुसे तू मत शोचकर ॥ २७ ॥

अव्यक्तादीनिभूतानि व्यक्तमध्यानिभारत ॥ अव्यक्तनिधनान्येवतत्रकापरिदेवना ॥ २८ ॥

भारत १ भूतानि २ अव्यक्तादीनि ३ व्यक्तमध्यानि ४ अव्यक्तनिधनानि ५ एव ६ तत्र ७ का ८ परिदेवना ९ ॥ २८ ॥ अ० उ० जैसे सीपी में चांदी रस्सी

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

में सर्पकी भ्रांति है इसीप्रकार यह जगत् प्रतीत होताहै फिर क्यों शोच करताहै यह कहते हैं + हे अर्जुन! १ सि० पृथिवी आदि अपने कार्य अन्तःकरणादि शरीर पुत्रादिके सहित ये सब पंच + भूत २ सि० ऐसे हैं कि + अव्यक्त अदर्शन अनुपलब्धि आदिहै जिनका अर्थात् आदिमें ये भूत अदर्शनरूप थे इनका दर्शनमात्र भी नहीं था ३ सि० और + व्यक्त है मध्य जिनका ४ अर्थात् उत्पत्ति से पीछे नाश से पहले बीचमें प्रतीत होते हैं शुक्ति में रजतवत् ४ सि० और अव्यक्तही है मरण जिनका ५ अर्थात् इनका जो अदर्शन है वही इनका मरण है नाशहुये पीछे भी ये नहीं दीखते हैं यह अभिप्रायहै ५ निश्चय निस्सन्देह यह जगत् अविद्या भ्रांतिसे प्रतीत होताहै वास्तव नहीं ६ तहां ७ अर्थात् ऐसे पदार्थों के निमित्त जिनकी गति पीछे कही ७ क्या ८ शोक प्रलाप विलाप ९ सि० करना चाहिये भ्रान्ति के सर्प का काटा हुआ कोई नहीं मरताहै जो आदि अन्तमें नहीं वही वर्तमानमें भी नहीं श्रुति यही कहे है ॥ आदावन्तेच यन्नास्ति वर्त्तमानेऽपितत्तथा। तात्पर्य्य यह संसार स्वप्नवत् है इस संसारमें ये भीष्मादि और यह सब सेना और इनके साथ युद्ध करना राज्य भोगना ये सब स्वप्नके पदार्थ हैं इनके निमित्त वृथा विलाप मतकर + शोकनिमित्तस्य प्रलापस्य नावकाशोऽस्तीत्यर्थः कः शोकनिमित्तो विलापः प्रतिबुद्धस्य स्वप्नदृष्टबन्धुषु इव शोको न युज्यते इत्यर्थः॥२८॥

आश्चर्य्यवत्पश्यतिकश्चिदेनमाश्चर्य्यवद्वदति तथैवचान्यः ॥ आश्चर्य्यवच्चैनमन्यःशृणोति श्रुत्वाप्येनंवेदनचैवकश्चित् ॥ २९ ॥

कश्चित् १ एनम् २ आश्चर्यवत् ३ पश्यति ४ तथा ५ एव ६ च ७ अन्यः ८ आश्चर्यवत् ९ वदति १० अन्यः ११ एनम् १२ आश्चर्य्यवत् १३ च १४ शृणोति १५ कश्चित् १६ श्रुत्वा १७ अपि १८ एनम् १९ न २० च २१ एव २२ वेद २३ ॥ २९ ॥ अ० उ० आत्मा का जानना एक आश्चर्य्य अलौकिक अद्भुत बात है आत्माके जानने में बहुत प्रयत्न करना चाहिये + कोई १ इस आत्मा को २ सि० शमदमादिसाधनसम्पन्न हुआ ज्ञानचक्षु करके असंख्यात पुरुषों में जो देखताहै सो + आश्चर्यवत् ३ देखता है ४ अर्थात् लौकिक पदार्थों की तरह आत्माका देखना नहीं बन सक्ताहै + और तैसेही ५ । ६ । ७ अन्य और कोई एक महात्मा ८ आश्चर्य्यवत् ९ कहता है १० सि० आत्माको अन्य और कोई

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

महात्मा ११ इस आत्मा को १२ आश्चर्यवत् १३ ही १४ सुनताहै १५ कोई १६ सि० साधनरहित पुरुष तत्त्वमसि अहम्ब्रह्मास्मि इत्यादि महावाक्यों को सुनकर १७ भी १८ इस आत्माको १९ नहीं २० । २१ भी २२ जानताहै २३ तात्पर्य त्रिलोक वा चौदहोलोक वा चौदह से भी सिवाय जिस के मत में कोई और ऊंचा वैकुंठादि लोक हो उनमें जितने नाम रूपवाले इन्द्रिय अन्तःकरणका विषय जितने पदार्थ हैं उन सब पदार्थों को लौकिक कहते हैं पुरुष आत्मा को लौकिक पदार्थवत् सुना चाहताहै वा देखा चाहताहै वा कहा चाहताहै यह कभी नहीं होसक्ता क्योंकि आत्मा लौकिक पदार्थवत् नहीं अलौकिक आश्चर्यवत् है जो इन्द्रिय अन्तःकरण का विषय तो है नहीं और सुनाजावे कहाजावे देखाजावे जानाजावे अनुभव कियाजावे करामलकवत् यही आश्चर्य है ॥ २९ ॥

देहीनित्यमवध्योयन्देहेसर्वस्यभारत ॥ तस्मात्सर्वाणिभूतानि नत्वंशोचितुमर्हसि ॥ ३० ॥

भारत १ अयम् २ देही ३ सर्वस्य ४ देहे ५ नित्यम् ६ अवध्यः ७ तस्मात् ८ सर्वाणि ९ भूतानि १० त्वम् ११ शोचितुम् १२ न १३ अर्हसि १४ ॥ ३० ॥ अ० उ० ग्यारहवें श्लोक से आत्मा और अनात्मा का जो विवेक निरूपण करते हुये चले आते हैं इस प्रकरण को अब समाप्त करते हैं + हे अर्जुन! १ यह २ सि० शुद्ध सच्चिदानन्द + आत्मा ३ सबके ४ देहमें ५ सि० ब्रह्माजी से लेकर चींटी पर्यन्त + नित्य ६ अवध्य ७ सि० है अर्थात् इसका वध नहीं होसक्ता मर नहीं सक्ता तात्पर्य किसी क्रिया का विषय नहीं अविकारी अक्रियहै + तिस कारणसे ८ सब भूतों को ९ । १० अर्थात् कर्त्ता कर्म्मादि रूप भूतों के निमित्त १० तू ११ शोच करनेको १२ नहीं १३ योग्यहै १४ तात्पर्य मरे जीवतों के निमित्त तू शोचमतकर जो पण्डितोंकीसी बातें करता है तो फिर सच्चाही पण्डित होनाचाहिये पण्डित ब्रह्मज्ञानी का नाम है सो होना चाहिये इत्यभिप्रायः ॥ ३० ॥

स्वधर्म्ममपिचावेक्ष्य नविकम्पितुमर्हसि ॥ धर्म्याद्धियुद्धाच्छ्रेयोन्यत्क्षत्रियस्यनविद्यते ॥ ३१ ॥

स्वधर्म्मम् १ अपि २ च ३ अवेक्ष्य ४ विकम्पितुम् ५ न ६ अर्हसि ७ हि ८ धर्म्यात् ९ युद्धात् १० अन्यत् ११ श्रेयः १२ क्षत्रियस्य १३ न १४ विद्यते ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

३१ ॥ अ० उ० लौकिक रीति से अब श्रीमहाराज अर्जुनको समझाते हैं आठ श्लोकों में अर्जुनने पीछे कहा था कि महाराज अपने सम्बन्धियोंको युद्धमें मरा हुआ समझ कर मेरा शरीर कम्पता है उस वाक्य का स्मरण करके श्रीमहाराज कहते हैं कि प्रथम तो विचारदृष्टि करके तुझको घबराना न चाहिये सिवाय इसके अपने धर्म्मका स्मरण करके भी तुझको घबराना योग्य नहीं क्योंकि परमार्थदृष्टि करके तो कम्पन का सावकाश है ही नहीं + और अपने धर्म्म को भी १ । २ । ३ देखकर ४ कम्पा करनेको ५ नहीं योग्य है तू ६ । ७ सि० और यह जो तूने पीछे कहा कि रणमें अपने सम्बन्धियोंको मारकर अपना भला नहीं देखताहूं यह मत समझ + क्योंकि ८ धर्म्मयुक्तयुद्धसे ९ । १० सि० सिवाय पृथक् + अन्यत् ११ सि० भिक्षाटनादि में + क्षत्रिय का १२ कल्याण भला १३ नहीं है १४ । १५ सि० इन आठों श्लोकों में इकतीसवें से अड़तीसवें तक प्रकरण का अर्थ तो वही है जो अक्षरार्थ है परंतु तात्पर्य इनआठों श्लोकों का परमार्थ भी है उसको ऐसे समझो कि क्षत्रिय अर्जुनकी जगह तो मुमुक्षु वा ज्ञानी और युद्धकी जगह अन्तःकरण इन्द्रियादि का विरोध + श्रीमहाराज विद्वानोंको समझातेहैं कि विचारदृष्टि करके भी शरीरादिकों का निरोध करना चाहिये घबराना योग्य नहीं और अपने धर्म्मको भी देखकर इन्द्रियादिकोंका विषयोंसे निरोध करना योग्य है क्योंकि शास्त्र का तात्पर्य बहिर्मुखता में नहीं और जो पुरुष ज्ञाननिष्ठ नहीं पूर्व मीमांसा वा उपासना को इष्टधर्म्म समझताहै तौ भी अन्तःकरणादि के निरोधरूप धर्म्म से पृथक् अन्यत् बहिर्मुख होना आदि उनका भला करने वाला नहीं ॥ ३१ ॥

यदृच्छयाचोपपन्नं स्वर्गद्वारमपावृतम् ॥ सुखिनः क्षत्रियाःपार्थ लभंतेयुद्धमीदृशम् ॥ ३२ ॥

पार्थ १ ईदृशम् २ युद्धम् ३ सुखिनः ४ क्षत्रियाः ५ लभन्ते ६ अपावृतम् ७ स्वर्गद्वारम् ८ यदृच्छया ९ च १० उपपन्नम् ११ ॥ ३२ ॥ अ० उ० आनन्दका मार्ग अपने आप तुझको प्राप्त हुआहै तू तो बड़ा भागीहै शोच क्यों करता है + हे अर्जुन ! १ ऐसे युद्धको २ । ३ सुखी क्षत्रिय ४ । ५ अर्थात् स्वर्गादिजन्य सुखके भोगनेवाले ५ प्राप्तहोतेहैं ६ अर्थात् ऐसा युद्ध भाग्यवान् क्षत्रियोंको प्राप्त होताहै ६ सि० कैसा है यह युद्ध कि + खुला स्वर्गका दरवाजाहै ७ । ८ और यदृच्छा करके ९ । १० प्राप्त हुआ है ११ अर्थात् विना बुलाये विना प्रार्थना इच्छाकिये

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

अपनेआप प्राप्तहुआ है ११ सि० परमार्थ यह है कि यह मनुष्यशरीर सुरदुर्लभ बड़े भाग्यसे अपने आप ईश्वरकी कृपा करके प्राप्त हुआहै इस में अन्तःकरणादिकों का निरोध करना कैसाहै कि खुलाहुआ मोक्षद्वार है परमानन्द जीवन्मुक्तिके भोगने वाले महात्मा संघातका निरोध करतेहैं इस शरीर के प्राप्त होने का फल शब्दादि भोग नहीं और परलोक के भोग भी अनित्य होने से दुःख देने वाले हैं इस शरीर से मोक्षमार्ग में ही प्रयत्न करना योग्यहै ॥ ३२ ॥

अथचेत्त्वमिमंधर्म्यं संग्रामंनकरिष्यसि ॥ यतः स्वधर्म्मंकीर्त्तिंचहित्वापापमवाप्स्यसि ॥ ३३ ॥

अथ १ चेत् २ त्वम् ३ इमम् ४ धर्म्यम् ५ संग्रामम् ६ न ७ करिष्यसि ८ ततः ९ स्वधर्मम् १० कीर्त्तिम् ११ च १२ हित्वा १३ पापं १४ अवाप्स्यसि १५॥ ३३ ॥ अ० उ० व्यतिरेक मुखकरिके पक्षान्तर यह कहतेहैं कि जो तू युद्ध न करेगा तो तेरी बड़ी क्षति होगी + और १ जो २ तू ३ इस ४ धर्म्मयुक्त संग्राम को ४ । ५ । ६ न करेगा ७ । ८ सि० तौ + तिस कारण से ९ अपने धर्म्मको १० और कीर्त्ति को ११ । १२ त्यागकर १३ पाप को १४ प्राप्त होगा १५ सि० परमार्थ यहहै कि जो इन्द्रियादिकों का निरोध रूप अपने धर्म्म को न करोगे तौ तुम्हारा धर्म्म जाता रहने से तुम्हारी कीर्त्ति भी नाश होजायगी ऐसा पाप करने से नरक को प्राप्त होगे तात्पर्य्य धर्म्मात्मा वही हैं जिनका संघात निरोध है और जिनका यश सज्जनों में होवे वेही सुयशवाले हैं नहीं तो अपने अपने पेशे जाती में कोई न कोई एक प्रधान कहलाताहै ॥ ३३ ॥

अकीर्त्तिंचापिभूतानि कथयिष्यंतितेऽव्ययाम् ॥ संभावितस्यचाकीर्त्तिर्मरणादतिरिच्यते ॥ ३४ ॥

भूतानि १ ते २ अकीर्त्तिम् ३ च ४ कथयिष्यन्ति ५ अव्ययाम् ६ सम्भावितस्य ७ च ८ अकीर्त्तिः ९ मरणात् १० अपि ११ अतिरिच्यते १२ ॥ ३४ ॥ अ० उ० यह नहीं समझना कि अकीर्त्ति होनेसे मेरी क्या क्षति होगी दो चार वर्ष कहकर सब चुप होजावेंगे अपितु तेरी अकीर्त्ति सदा बनी रहेगी यह कहते हैं + छोटे बड़े सब स्त्री पुरुष प्राणीमात्र १ तेरी २ अकीर्त्ति को ३ भी ४ कहेंगे ५ सि० और तुझको नरक भी होगा + कैसी है वह अकीर्त्ति कि + सदा बनी रहेगी यह तात्पर्य है ६ सि० फिर इससे मेरी क्या क्षति होगी यह शंका करके कहते हैं

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

कि अकीर्त्ति सब के वास्तेही बुरी हैं + और प्रतिष्ठावाले पुरुष की ७। ८ अ० कीर्ति ९ सि० तो + मरने से १० भी ११ सिवाय है १२ सि० परमार्थ यह है कि जिस कीर्त्ति के वास्ते तुम दिन रात प्रयत्न करते हो यह चाहते हो कि हमारा नाम बना रहे सो परमधर्म्म जो संघात का निरोध करना इसके न करने से सदा जीते जी और मरकर दूसरे जन्ममें इस प्रकार सदा अकीर्त्ति बनी रहेगी जीते जी तो लोगोंकी निन्दा सहनी पड़ेगी और मरकर यमराज के सामने दुर्दशा होवेगी वह क्लेश मरने से भी अधिक है ॥ ३४ ॥

भयाद्रणादुपरतंमंस्यन्तेत्वांमहारथाः ॥ येषांच त्वंबहुमतोभूत्वायास्यसिलाघवम् ॥ ३५ ॥

महारथः १ त्वाम् २ भयात् ३ रणात् ४ उपरतम् ५ मंस्यन्ते ६ येषाम् ७ च ८ त्वम् ९ बहुमतः १० भूत्वा ११ लाघवम् १२ यास्यसि १३ ॥ ३५ ॥ अ० उ० लोग यह नहीं समझेंगे कि अर्जुन युद्धमें हिंसा पाप समझकर उपराम हुआ है यह नहीं समझेंगे तो फिर क्या समझेंगे यह शंका करके श्रीमहाराज यह कहते हैं + शूरवीर दुर्योधनादि १ तुझ को २ सि० मरने के + भय से ३ रण से ४ हटाहुआ ५ मानेंगे ६ अर्थात् यह समझेंगे कि मरने का भय करके अर्ज्जुन रणमें से भागगया हटगया सि० जो वे ऐसीही समझेंगे तो मेरी इसमें क्या क्षति होगी यह शंका करके श्रीमहाराज यह कहते हैं + जिनको ७ अर्थात् दुर्योधनादि को ७ और ८ सि० सिवाय उनके अन्य बहुत पुरुषों को + तू ९ बड़ा १० सि० कहलाता है दुर्योधनादि तुझको बहुत गुणवाला मानते हैं ऐसा + होकर ११ छुटाई को १२ प्राप्त होगा १३ अर्थात् वेही दुर्योधनादि कि जो तुझको बहुत गुण वाला शूरवीर मानते हैं तुझको कातर नपुंसक मूर्ख बतावेंगे यह तेरी क्षति होगी जिनके बीच में तू बहुगुणवाला माना जाता है उनकेही बीच में छुटाई को प्राप्त होगा १३ परमार्थ यह है कि जितेन्द्रिय महात्मा महापुरुष अजितेन्द्रिय बहिर्मुखों को ऐसा समझेंगे कि शरीर इन्द्रिय प्राण अन्तःकरण का निरोध करना तो कठिन समझ रक्खा है रोचक वाक्यों का आश्रय लेकर भोग भोगे हैं धन्य समझ और धन्य साधन किंचित्मात्र भी शास्त्र का तात्पर्य न समझा अग्निको अग्नि से बुझाते हैं अन्तःकरणादि के निरोध को बखेड़ा बताते हैं महात्मा लोग ऐसे पुरुषों को आलसी, प्रमादी, विषयी, बहिर्मुख मानते हैं ज्ञान भक्ति कर्म का आश्रय लेकर जो बहिर्मुख अजितेन्द्रिय होंगे तो नीचता को प्राप्त होजावेंगे ॥ ३५ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

अवाच्यवादांश्चबहून्वदिष्यन्तितवाहिताः ॥
निन्दन्तस्तवसामर्थ्यंततोदुःखतरंनुकिम् ॥ ३६ ॥

तव १ सामर्थ्यम् २ निन्दन्तः ३ तव ४ अहिताः ५ बहून् ६ अवाच्यवादान् ७ च ८ वदिष्यन्ति ९ ततः १० दुःखतरम् १० किम् ११ नु १२ ॥ ३६ ॥ अ० उ० तुझको छोटा भी समझेंगे और + तेरे १ पराक्रम की निन्दा करते हुये २।३। तेरे ४ वैरी ५ सि० तेरे निमित्त + बहुत अवाच्य वचनोंको ६।७ भी ८ अर्थात् न कहनेके योग्य जो वचन तिनको भी ८ कहेंगे ९ सि० इससे मेरी क्या क्षति होगी यह शंका करके कहते हैं + तिससे १० अर्थात् समर्थ होकर दुर्वाक्य सुनने से सिवाय और १० विशेष दुःख ११ क्या १२ सि० होगा + यह शब्द वितर्क में बोला जाताहै जैसे कोई किसी को ताना धिक्कार देकर बोले कि और इसको कर्म्मसे सिवाय क्या होगा ऐसेही अर्जुन को ताना देकर श्रीमहाराज कहते हैं कि दुर्वाक्य सहने से सिवाय और क्या दुःख होगा यह इस नु शब्द का तात्पर्य्यार्थ है १३ परमार्थ यह है कि संसार में जो अजितेन्द्रिय बहिर्मुख हैं और दैवयोग से उनको धन प्राप्त होगया है वा राज्यादि अधिकार मिलगयाहै उनको कोई बुरा न कहै उनके अवगुण समझकर चुप रहै यह नहीं समझना किंतु वेद वेदान्त पातंजलि शास्त्र उनकी निन्दा करते हैं सिवाय उनके सज्जन साधुलोग निःस्पृही सब उनको बुरा समझतेहैं प्रसङ्गसे कह भी देते हैं और जो गृहस्थलोग मुखपर नहीं कहते तो पीछे बुरा कहते हैं विचारो इससे सिवाय उन निभागों को और विशेष दुःख क्या होगा और उनके सिवाय और कौन बुराहै जिनकी वेद शास्त्र महात्मा बुराई करैं ॥ ३६ ॥

हतोवाप्राप्स्यसिस्वर्गंजित्वावाभोक्ष्यसेमहीम् ॥
तस्मादुत्तिष्ठकौन्तेययुद्धायकृतनिश्चयः ॥ ३७ ॥

हतः १ वा २ स्वर्गम् ३ प्राप्स्यसि ४ वा ५ जित्वा ६ महीम् ७ भोक्ष्यसे ८ कौन्तेय ९ तस्मात् १० उत्तिष्ठ ११ युद्धाय १२ कृतनिश्चयः १३ अ० उ० पीछे अर्जुन ने कहाथा कि न जानिये मुझको जीतेंगे वा मैं इनको जीतूंगा उस वाक्यका स्मरण करके श्रीमहाराज यह कहते हैं कि तेरा दोनों प्रकार भलाहोगा + सि० युद्ध में + जो मरगया १।२ सि० तू तो मरकर स्वर्गको ३ प्राप्त होगा ४ और ५

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

सि० जो जीतगया तो + जीतकर ६ पृथिवी को ७ भोगेगा ८ अर्थात् राज्य करेगा ८ हे अर्जुन! ९ तिस कारण से १० उठखड़ा हो ११ अर्थात् दोनों प्रकार अपनी भलाई समझकर युद्धकर ११ सि० कैसा है तू + युद्धके लिये १२ किया है निश्चय जिसने १३ अर्थात् युद्ध करने का निश्चयकरके तो तू यहां आया है अब क्यों कायरपन करता है तात्पर्य + पहलेही अर्जुन ने युद्ध करने का निश्चय करिलिया है कुछ श्रीमहाराज का तात्पर्य्य युद्ध कराने में नहीं तू युद्धकर खड़ाहो यह प्रासंगिक लौकिक रीतिहै अभिप्राय श्रीमहाराजका परमार्थ में हीहै + परमार्थ यहहै कि श्रीमहाराज भक्तोंसे कहते हैं जो तुम शरीर इन्द्रिय प्राण अन्तःकरण का निरोध करते करते मरगये इस परमधर्म्म में तो बड़े २ लोक को प्राप्त होगे और जो अन्तःकरणादि को तुमने जीतलिया वशमें करलिया तो ज्ञानद्वारा जीवतेही जीवन्मुक्ति का आनन्द भोगोगे ऐसा विचारकर सावधान होके इन्द्रियादिकों का निरोध करो दोनों पक्ष में आनन्द है नरशरीर दुर्लभ है ॥ नरतन पाय विषय मन देहीं। पलटि सुधाते शठ विष लेहीं ॥ ३७ ॥

सुखदुःखेसमेकृत्वालाभालाभौजयाजयौ ॥ ततोयुद्धाययुज्यस्वनैवंपापमवाप्स्यसि ॥ ३८ ॥

सुखदुःखे १ समे २ कृत्वा ३ लाभालाभौ ४ जयाजयौ ५ ततः ६ युद्धाय ७ युज्यस्व ८ एवम् ९ पापम् १० न ११ अवाप्स्यसि १२ ॥ ३८ ॥ अ० उ० पीछे अर्जुन ने कहा था कि युद्ध करने में मुझे पाप होगा उस वाक्य का स्मरण करके श्रीमहाराज यह कहते हैं + सुखदुःख को १ समान २ करके ३ अर्थात् इन दोनों को फलमें बराबर समझकर लाभ अलाभको ४ जय अजयको ५ सि० भी समान समझकर + पीछे उसके ६ युद्धकेवास्ते ७ चेष्टा कर ८ अर्थात् युद्ध कर ८ इसप्रकार ९ पापको १० नहीं ११ प्राप्तहोगा तू १२ तात्पर्य सुख दुःख का कारण लाभ अलाभ है लाभालाभका कारण जय अजय है इन सब में रागद्वेष रहित होकर युद्धकर कभी पाप न होगा + परमार्थ यह है कि अन्तःकरणादि के निरोध काल में सुख दुःखको इष्ट अनिष्ट की प्राप्ति को बराबर समझना चाहिये हर्ष शोक न करना प्रथम अन्तःकरणादि के निरोधकाल में विघ्न दुःख अपमानादि बहुत होते हैं और फिर सुख सन्मानादि भी बहुत होतेहैं दोनों में हर्ष शोक त्याग करके अन्तःकरण का निरोध करताहीरहे इस प्रकार बन्धनको नहीं प्राप्त

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

होंगे और जो दुःख सुख विघ्न सन्मानादि के झगड़े में आगये वा स्वर्गादि फल में फँस गये तो फिर बन्धन से छूटना कठिन है तात्पर्य अन्तःकरणादि का निरोध निष्काम होकर करना योग्य है इस प्रकार बहिरङ्ग कर्मों के त्याग में पाप न होगा ॥ ३८ ॥

एषातेभिहितासांख्येबुद्धिर्योगेत्विमांशृणु ॥ बुद्धयायुक्तोययापार्थकर्मबन्धंप्रहास्यसि ॥ ३९ ॥

एषा १ सांख्ये २ बुद्धिः ३ ते ४ अभिहिता ५ योगे ६ तु ७ इमाम् ८ शृणु ९ पार्थ १० यया ११ बुद्धया १२ युक्तः १३ कर्म्मबन्धम् १४ प्रहास्यसि १५ ॥ ३९ ॥ अ० उ० ग्यारहवें श्लोक से लेकर तीस के श्लोक तक बीस श्लोकों में अर्जुन का शोक मोह दूर करने के लिये ब्रह्मज्ञान उपदेश किया फिर आठ श्लोकों में लौकिक न्याय करके अर्जुन को समझाया अब उस लौकिक न्यायको समाप्त करके ज्ञाननिष्ठा में अर्जुन को तत्पर करनेके लिये ज्ञाननिष्ठा का जो साधन भगवद्भक्ति आदि निष्कामकर्म्म योग उसको फल के सहित निरूपण करतेहैं + हे अर्जुन ! ग्यारहवें श्लोकसे लेकर तीसवें श्लोक तक बीस श्लोकों में जो तुझको ज्ञान उपदेश किया + यह १ आत्मा तत्त्व के विषय २ ज्ञान ३ तेरे अर्थ ४ तुझसे कहा ५ सि० मैंने अर्थात् यह तो मैंने ब्रह्मज्ञान उपदेश किया परन्तु यह अत्यन्त सूक्ष्म अलौकिक आश्चर्य पदार्थ है जो तेरी समझ में न आया हो तो इसकी प्राप्ति और समझके लिये इसका साधन भगवद्भक्ति आदि निष्काम कर्म + योग विषय ६ भी ७ सि० ज्ञानमें अब कहता हूं + इसको ८ सुन तू ९ हे अर्जुन ! १० सि० यह वह ज्ञान तुझको सुनाता हूं + कि जिस ज्ञान करके ११ । १२ युक्त १३ सि० हुआ तू अर्थात् जिस ज्ञान का अनुष्ठान करके अन्तःकरण शुद्धिद्वारा + कर्म्मरूप बन्धन को अर्थात् धर्म्माधर्म्मरूप बन्धन को १४ भलेप्रकार त्याग देगा १५ अर्थात् बन्धन से छूट जायगा मुक्तहो जायगा १५ ॥ ३९ ॥

नेहाभिक्रमनाशोस्तिप्रत्यवायोनविद्यते ॥ स्वल्पमप्यस्यधर्म्मस्यत्रायतेमहतोभयात् ॥ ४० ॥

इह १ अभिक्रमनाशः २ न ३ अस्ति ४ प्रत्यवायः ५ न ६ विद्यते ७ अस्य ८

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

धर्म्मस्य ९ स्वल्पम् १० अपि ११ महतः १२ भयात् १३ त्रायते १४ ॥ ४० ॥
अ० उ० जैसे खेती आदि में फलपर्यन्त अनेक विघ्न होते हैं ऐसेही इस भगवत् आराधनादि निष्काम कर्मयोगमें भी होंगे तो फिर अन्तःकरण शुद्धिद्वारा ज्ञान की प्राप्ति कठिन प्रतीत होतीहै तात्पर्य फलकी प्राप्तिपर्यन्त निर्विघ्न समाप्त होना निष्काम कर्म्मयोग का कठिन प्रतीत होता है यह शंका करके कहते हैं + निष्काम कर्म्मयोग में १ सि० किसी प्रकारका बीचमें विघ्न भी हो जावे तौभी + प्रारम्भ का नाश २ नहीं है ३ । ४ सि० जैसे किसी ने माघमास में प्रातःकाल स्नान करनेका प्रारम्भ किया और दो चार दिनके पीछे उस महीनेके बीच में कुछ विघ्न होगया कि जिस करके वह निष्काम पुरुष महीना भर स्नान न कर सका तो उस थोड़ेही काल में स्नान करने का अर्थात् प्रारम्भमात्र का भी नाश नहीं होताहै तात्पर्य वह सकाम कर्म्मवत् और खेती आदि कर्म्मवत् निष्फल नहीं जाता है एक न एक दिन अवश्यही निष्काम पुरुष को निष्काम कर्म्मयोगके फिर सम्मुख करके अन्तःकरणशुद्धिद्वारा ज्ञाननिष्ठा करके मोक्ष करेगा + द्वितीय शंका यह है कि जैसे मन्त्रका जप वा पाठ विधिवत् न होसके तो उसमें उलटा पाप होता है अथवा रोग दूर करनेके लिये औषध खाते हैं जो कदाचित् वैद्यकी समझ में रोग न आवे तो उलटा औषध खाने सेही प्राणी मरजाता है यह निष्काम कर्म्म भी ऐसाही होगा क्योंकि प्रथम तो धर्म्म कर्म्म भक्ति आदिका स्वरूप यथार्थही जानना कठिन है सब पण्डित आचार्य्यों का एक सिद्धान्त नहीं और जो किसी एक मतमें निश्चय भी किया तो उस कर्म्मका अनुष्ठान विधिवत् होना कठिनहै और जो दूसरे के वाक्य में विश्वास करके अनुष्ठान किया और बतलानेवालेने बुद्धि के भ्रम से वा मत मतान्तर की खैंचसे यथार्थ न बतलाया तो फल देना तो पृथक् रहा उलटा पाप लगने से डर लगताहै यह शंका करके श्रीमहाराज कहते हैं कि ये दोष सकाम कर्म्मयोगमें हैं निष्काम कर्म्मयोग में + प्रत्यवाय पाप ५ नहीं है ६ । ७ इस धर्म्मका ८ । ९ थोड़ा १० भी ११ सि० अनुष्ठान किया हुआ प्रारम्भमात्रभी + बड़े भयसे १२ । १३ अर्थात् दुःख आलय संसारसे १३ रक्षा करताहै १४ तात्पर्य भगवत् आराधनादि निष्काम कर्म्मयोग थोड़ा भी अपनी शक्ति के अनुसार किया हुआ अन्तःकरण शुद्धिद्वारा ज्ञाननिष्ठा की प्राप्ति करके जन्म मरण दुःखरूप संसार से छुड़ाकर पूर्ण ब्रह्म परमानन्दस्वरूप आत्मा को प्राप्त करताहै पिछले पूर्वपक्ष में कहेहुये दोष सब सकाम कर्म्मों में हैं निष्काम कर्म और सकाम कर्म्मों का बड़ा भेद है ॥ ४० ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

व्यवसायात्मिकाबुद्धिरेकेहकुरुनन्दन ॥ बहुशा खाह्यनन्ताश्चबुद्धयोव्यवसायिनाम् ॥ ४१ ॥

कुरुनन्दन १ इह २ व्यवसायात्मिका ३ बुद्धिः ४ एका ५ अव्यवसायिनाम् ६ बुद्धयः ७ अनन्ताः ८ च ९ बहुशाखाः १० हि ११ ॥ ४१ ॥ अ० उ० जब कि निष्काम कर्मयोगका यह अद्भुत माहात्म्य आप कहते हो तो सब लोग इसीका अनुष्ठान क्यों नहीं करते मूर्त्तिमान् परमेश्वरका दर्शन वैकुण्ठ स्वर्गादि फल क्यों चाहते हैं यह शंका करके श्रीमहाराज कहते हैं यह + हे अर्ज्जुन! १ इस मोक्षमार्ग में २ सि० मुमुक्षु अन्तर्मुख व्यवसायी पुरुषों के विषय + निश्चय स्वरूप वाली ३ अर्थात् निश्चय करने वाली आत्माकी ३ बुद्धि ४ अर्थात् ज्ञान ४ एक ५ सि० ही है तात्पर्य इस अर्थमें जिस शुद्धिका निश्चय है अर्थात् निश्चल है जो बुद्धि इस अर्थ में कि निष्काम भगवत् आराधनादि कर्म्मयोग करके अन्तःकरण की शुद्धि होती है तब शुद्धान्तःकरण होय निस्सन्देह परात्पर परमानन्द पूर्णब्रह्म आत्माको कि जिसको परमगति कहते हैं प्राप्त होताहै जीव इसका नाम व्यवसायात्मिका बुद्धि है सो यह मोक्षमार्ग में एकही है अर्थात् इस एक ज्ञानके सिवाय और दूसरा कोई ६ ज्ञान मोक्षका हेतु नहीं और जिनके यह निश्चय नहीं उनको + अव्यवसायी वहिर्मुख प्रमाणजनित विवेकबुद्धिरहित कहते हैं उनके ६ ज्ञान ७ अनन्त ८ और ९ बहुत शाखाभेद वाले १० भी ११ सि० हैं तात्पर्य वैदिक मार्ग तो सनातन से एकही चला आता है कि जो पूर्व निरूपण किया स्मार्तमत से उसका विरोध नहीं और कल्पितमत अनन्त हैं और एक एक में भी नानाभेद हैं जिस वास्ते नये मत लोगों ने कल्पित किये हैं श्रौत स्मार्त्तमार्ग सनातन को छोड़ दियाहै इसका हेतु तैंतालीस के श्लोक में श्रीमहाराज कहेंगे ॥ ४१ ॥

यामिमांपुष्पितांवाचंप्रवदन्तिविपश्चितः ॥ वेदवादरताःपार्थ नान्यदस्तीतिवादिनः ॥ ४२ ॥

याम् १ वाचम् २ पुष्पिताम् ३ प्रवदन्ति ४ इमाम् ५ पार्थ ६ वेदवादरताः ७ अविपश्चितः ८ न ९ अस्ति १० अन्यत् ११ इति १२ वादिनः १३ ॥ ४२ ॥ अ० उ० प्रमाणजनित विवेकबुद्धिरहित वाहिर्मुख अव्यवसायी जिनको आप क-

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

हते हैं वे क्या विना प्रमाणके कर्म्म उपासना करतेहैं यह शंका करके श्रीमहाराज कहते हैं यह कि उनके प्रमाणों को सुन + सि० वेदोंका सिद्धान्त तात्पर्य जानने वाले महात्मा व्यवसायिनः + जिस वाणी को १।२ पुष्पिता ३ कहते हैं ४ तात्पर्य जैसे किसी वृक्षमें फूल तो बहुत सुन्दर दीखे परन्तु फल उसमें नहीं लगताहै वा लगताहै तो कडुवा ऐसेही वेदों में रोचक वाक्य हैं अर्थात् अर्थवाद वाली श्रुतिहैं सुनने में तो वे बहुत प्रिय प्रतीत होती हैं फल उनका कुछ नहीं अर्थात् जो फल उसका अव्यवसायी कहतेहैं वह फल उस श्रुतिका नहीं जैसे व्रत तीर्थादिका माहात्म्य अर्थवादहै तात्पर्य उनका अन्तःकरणकी शुद्धि और चित्त की एकाग्रतामें है स्वर्ग वैकुण्ठ पुत्रादिमें नहीं ऐसी ऐसी वाणीको कि जिसको वेद पुष्पिता कहते हैं + हे अर्जुन ! इसको ५ सि० ही अव्यवसायिनःमोक्षका साधन सिद्धान्त कहते हैं + कैसे हैं वे अव्यवसायिनः + ६ वेदवादमें है प्रीति जिनकी ७ अर्थात् वेदोंमें अर्थवाद रोचक वाक्य हैं वे उनको प्रिय लगते हैं और वास्ते चर्चा करने के अपनी पण्डिताई दिखाने के लिये उन अर्थवादोंको कंठकर लेतेहैं ऐसे + ६ अविवेकी मन्दमति बहिर्मुख ८ सि० फिर कैसे हैं ये लोग कि आप अज्ञानी बने तो बने ब्रह्मज्ञानको भी खण्डन करतेहुये ब्रह्मज्ञानियों को अज्ञानी बतातेहैं तात्पर्य वे यह कहते हैं कि जो हमारा मतहै अर्थात् भेद सिद्धान्तहै इससे सिवाय + नहीं ९ है १० अन्यत् ११ सि० और कोई मत सिद्धान्त अद्वैत ब्रह्मज्ञान ज्ञाननिष्ठा संन्यास जो हम कहते हैं यही सिद्धान्त है । यह १२ कहने का स्वभावहै जिनका १३ तात्पर्य वेदान्तमें दोष निकालने यही बकनेका स्वभाव है जिनका और भी इनके विशेषण अगले श्लोकमें हैं ॥ ४२ ॥

कामात्मानःस्वर्गपराजन्मकर्मफलप्रदाम् ॥ क्रियाविशेषबहुलांभोगैश्वर्यगतिंप्रति ॥ ४३ ॥

कामात्मानः १ स्वर्गपराः २ जन्मकर्मफलप्रदाम् ३ भोगैश्वर्यगतिम् ४ प्रति ५ क्रियाविशेषबहुलाम् ६ ॥ ४३ ॥ अ० उ० ऐसा अनर्थ वे क्यों करते हैं इस अपेक्षामें श्रीमहाराज यह कहते हैं कि वे + कम भी विषयी बहिर्मुख १ सि० हैं फिर कैसे हैं कि + स्वर्गही है परा पुरुषार्थ अवधि जिनके २ सि० इस विशेषणसे स्पष्ट यह प्रतीत होताहै कि यज्ञ दान व्रत तीर्थ भगवत् आराधनादि जो करते हैं ये तो कैवल्य मोक्षके लिये नहीं करते किन्तु भोगों के लिये करते हैं + स्वर्गपद तो उपलक्षणहै अर्थात् वैकुण्ठ गोलोकादि सावयवलोक सब आगये + पिछले श्लोक

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

में जो कहाथा कि वे इस पुष्पिता वाणीको सिद्धान्त कहते हैं उस वाणीके विशेषण और भी सुन + कैसी है वह वाणी + जन्म कर्म फलकी देनेवाली ३ सि० है अर्थात् उस वाणीके अनुसार जो कर्म कियाजाताहै उस कर्म्मका यही फल है कि वारंवार संसार में जन्महोना जन्मही उस कर्मका फल है + फिर कैसी है + भोग ऐश्वर्य की प्राप्तिके प्रति ४। ५ सि० तात्पर्य भोग ऐश्वर्य की प्राप्तिके लिये साधन है वह वाणी + उस वाणीके अनुसार अनुष्ठान करने से भोग ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है + फिर कैसी है वह वाणी + क्रियाविशेष बहुतहैं जिस में ६ सि० अर्थात् उस वाणी में नानाप्रकार की क्रियाहैं और एक एक क्रियाका अन्त नहीं प्रतीत होताहै क्योंकि अनन्त बहुतहैं हे अर्जुन! उन अव्यवसायियों के ऐसे ऐसे वाक्यों का प्रमाण है ऐसी ऐसी वाणी बकतेहुये संसार में भ्रमते रहते हैं ऐसे पुरुषों के साक्षात् मोक्षकी साधनरूप व्यवसायात्मिका बुद्धि नहीं उत्पन्न होती है अगले श्लोक के साथ इसका अन्वयहै ॥ ४३ ॥

भोगैश्वर्यप्रसक्तानांतयापहृतचेतसाम् ॥ व्यवसायात्मिकाबुद्धिःसमाधौनविधीयते ॥ ४४ ॥

भोगैश्वर्यप्रसक्तानाम् १ तया २ अपहृतचेतसाम् ३ समाधौ ४ व्यवसायात्मिका ५ बुद्धिः ६ न ७ विधीयते ८ ॥ ४४ ॥ अ० उ० भेदवादी सदा ब्रह्मज्ञान से विमुख रहकर संसारमें भ्रमते हैं यह कहते हैं श्रीमहाराज + भोग ऐश्वर्य में जो आसक्त हैं १ सि० और + तिस करके २ अर्थात् उस पुष्पिता वाणी करके २ हरा गयाहै चित्त जिनका ३ अर्थात् उस पुष्पिता वाणी करके उनकी विवेक बुद्धि आच्छादित होगई ढकगई है उनके ३ अन्तःकरण में ४ व्यवसायात्मिकाबुद्धिः ५। ६ नहीं ७ उत्पन्न होती है ८ वा नहीं स्थिर होती ८ तात्पर्य उनका चित्त शान्त नहीं होता क्योंकि सदा इस लोक परलोक के विषयों में तत्पर रहते हैं + टी० जो समाधान किया जावे उसको भी समाधि कहते हैं इस व्युत्पत्ति से यहां समाधिका अर्थ अन्तःकरण है ॥ ४४ ॥

त्रैगुण्यविषयावेदानिस्त्रैगुण्योभवार्जुन ॥ निर्द्वन्द्वोनित्यसत्त्वस्थोनिर्योगक्षेमआत्मवान् ॥ ४५ ॥

त्रैगुण्यविषयाः १ वेदाः २ अर्जुन ३ निस्त्रैगुण्यः ४ भव ५ निर्द्वन्द्वः ६ नित्यसत्त्वस्थः ७ निर्योगक्षेमः ८ आत्मवान् ९ ॥ ४५ ॥ अ० उ० जब कि वेदोंही में

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

पुष्पिता वाणी रोचक निष्फल वाक्य है तो उन वाक्यों के कहनेवाले का और उन वाक्यों के अनुसार अनुष्ठान करनेवाले का क्या दोष है यह शङ्का करके श्री महाराज कहते हैं कि क्या वेदों में केवल पुष्पिता वाणीही है साक्षात् मोक्ष का साधन वैसा उसमें नहीं अर्थात् वेदों में रोचक वाक्य भी हैं और साक्षात् मोक्ष के साधन मंत्र भी हैं मंत्रयुत मारण उच्चाटनादि मंत्र बहुतहैं परन्तु मुमुक्षुको सिवाय साक्षात् मोक्ष साधने के और वाक्योंसे कुछ काम नहीं इस गीताशास्त्रमें ब्रह्मविद्या साक्षात् मोक्षका साधन निरूपण करताहूं मैं समस्त वेद वाक्योंसे यहां कुछ प्रयोजन नहीं जो उनका प्रमाण दिया जावे मुमुक्षुका प्रयोजन केवल मोक्षके साधनों से है सोई सुन + सतोगुणी रजोगुणी तमोगुणी कामनावाले पुरुषोंका विषय १ सि० भी है + वेद २ अर्थात् जैसे को तैसा फलके देनेवाले भी हैं और साक्षात् मोक्ष का साधन भी हैं वेद २ हे अर्जुन ! ३ सि० परन्तु तुझको तो मैं ब्रह्मविद्या साक्षात् मोक्षका साधन सुनाताहूं इस समय तू तो + गुणातीत निष्काम ४ हो ५ सि० रोचक वाक्यों की तरफ़ दृष्टि मतकर गुणातीत होनेके साधन यह हैं द्वन्द्वरहित ६ सि० हो अर्थात् प्रारब्धवशात् जो सुखदुःख इष्टानिष्टादि प्राप्त हों सबको सहनकर सुखदुःखादिकी प्राप्तिमें हर्षविषादके वश मतहो निर्द्वन्द्व होने में हेतु यह साधन है कि + नित्यसत्त्व जो आत्मा उसमें स्थित ७ सि० हो अर्थात् आत्मनिष्ठ हो अथवा सदा सत्त्वगुण में दीर्घकाल स्थिति होसक्ती है इसीवास्ते यह कहते हैं कि + योग क्षेमरहित ८ सि० हो अर्थात् जो पदार्थ लौकिक प्राप्त नहीं उसकी प्राप्ति का तो उपाय मतकर और जो प्राप्त है उसकी रक्षामें प्रयत्न मतकर + पूर्वोक्त साधनों का हेतु यह साधन है कि + अप्रमत्त ९ सि० हो अर्थात् प्रमादी प्रमत्त मतहो सदा चैतन्य अनालस्य रहना योग्यहै विषयोंसे विमुख होकर आत्मा के सम्मुख होना चाहिये पूर्वोक्त साधन जिसके नहीं उससे मोक्षमार्गमें प्रयत्नहोना कठिनहै ॥४५॥

यावानर्थउदपाने सर्वतःसंप्लुतोदके ॥ तावान् सर्वेषुवेदेषु ब्राह्मणस्यविजानतः ॥ ४६ ॥

यावान् १ अर्थः २ उदपाने ३ सर्वतः ४ संप्लुतोदके ५ तावान् ६ सर्वेषु ७ वेदेषु ८ विजानतः ९ ब्राह्मणस्य १० ॥ ४६ ॥ अ० उ० इस लोक परलोक के सुन्दर भोगों से हटाकर निष्काम गुणातीत होना आप कहते हो इसमें क्या आनन्दहै यह तो रूखी सूखी शिक्षा प्रतीत होतीहै सुन्दर कर्म्म उपासना करके स्वर्ग वैकुण्ठादि में जाकर आनन्द भोगना योग्यहै यह शङ्का करके श्रीमहाराज कहते

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

हैं कि + सि० जैसे + जितना १ प्रयोजन २ उदपानमें ३ सि० जगह जगह यत्र कुत्र भ्रमने से सिद्ध होताहै अर्थात् जलपान किया जावे जिसमें उसको उदपान कहते हैं कूप सर सरितादिकों का नाम उदपानहै कूपादि के जलोंमें स्नान तिरना नावका चलना इत्यादि प्रयोजन एक जगह सिद्ध नहीं होसक्ता जहां तहां भ्रमने से सिद्ध होताहै वहं + समस्त ४ समुद्रमें ५ सि० एक जगहही सिद्ध होजाता है तात्पर्य जैसे समुद्र में सब प्रयोजन उदपानों का सिद्ध होजाताहै तैसेही जितना + सब वेदों में ६ । ७ सि० जो फल है अर्थात् समस्त वेदोक्त कर्म्म उपासना योगादि के अनुष्ठान करनेसे जो फल आनन्द जगह २ स्वर्ग वैकुण्ठादि में भ्रमने से परिच्छिन्न आनन्द प्राप्त होताहै + उतनाही ८ अर्थात् वह सब फल प्रत्युत उससे भी विशेष पूर्ण निरतिशयानन्द फल ८ परमार्थ तत्त्वके जाननेवाले परमहंस ब्रह्मविज्ञानी ब्राह्मण को ९ । १० सि० प्राप्त होताहै तात्पर्य स्वर्ग वैकुण्ठादि साधन हैं आनन्द के मुख्य फल परमानन्दहैं सोई गुणातीत निष्काम ब्रह्मज्ञानी का स्वरूप है पूर्ण परमानन्द विद्वानों कोही प्राप्त होताहै सिवाय ब्रह्मविदोंके औरों को पूर्ण परमानन्द नहीं प्राप्त होताहै जैसे कूपादि जलों से सब प्रयोजन नहीं सिद्ध होता है इस हेतुसे गुणातीत निष्काम ब्रह्मनिष्ठ होनाही सबसे श्रेष्ठहै ॥ ४६ ॥

कर्मण्येवाधिकारस्ते माफलेषुकदाचन ॥ माकर्मफलहेतुर्भूर्मातेसंगोस्त्वकर्मणि ॥ ४७ ॥

ते १ अधिकारः २ कर्म्मणि ३ एव ४ मा ५ फलेषु ६ कदाचन ७ कर्म्मफलहेतुः ८ मा ९ भूः १० ते ११ अकर्मणि १२ संगः १३ मा १४ अस्तु १५ ॥ ४७ ॥ अ० उ० जो ब्रह्मज्ञानी को सब फलकी प्राप्ति होती है तो ब्रह्मज्ञान कही अनुष्ठान करके इसलोक परलोकके सब भोगोंको भोगना योग्य है अल्पफलदायक कर्म्म उपासना योगादिका अनुष्ठान करना कुछ आवश्यक नहीं प्रयोजन तो हमारा फलसे है सो ज्ञाननिष्ठासे ही प्राप्त होजायगा यह शंका करके श्रीमहाराज कहते हैं कि + तेरा १ अधिकार २ सि० तो + कर्म में ३ ही ४ सि० है और + नहीं है ५ फलमें ६ कभी ७ सि० तेरा अधिकार अर्थात् साधन अवस्था वा सिद्ध अवस्थामें किसी अवस्थामें भी तेरा अधिकार स्वर्ग वैकुण्ठादि फल भोगों में नहीं क्योंकि तू मुमुक्षु है तूने परमश्रेय का साधन मुझसे बूझाहै हे अर्जुन! मुमुक्षु का अधिकार अन्तःकरणकी शुद्धि के लिये कर्मों में तो है परन्तु स्वर्ग

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

वैकुण्ठादि के भोगों में अधिकार नहीं क्योंकि प्रथम तो वे अनित्यादि दोषोंकरके दूषित हैं और मोक्ष में प्रतिबन्ध हैं इस हेतुसे + कर्मों के फल में हेतु ८ मत ९ हो १० अर्थात् मन में कर्मों के फलकी तृष्णा मतरख कि जिससे कर्मों के फल की प्राप्तिका हेतु तुझको होनापड़े तात्पर्य कर्मों के फलकी प्राप्ति में हेतु तृष्णा है उसको त्याग और १० तेरा ११ अकर्म में १२ संग प्रीति निष्ठा १३ मत १४ हो अर्थात् जब तक अन्तःकरण शुद्ध होवे तब तक कर्म में तेरी निष्ठा रहे यह उपदेश भी है और आशीर्वाद भी है वास्ते निर्विघ्नता के ॥ ४७ ॥

योगस्थःकुरुकर्माणि संगंत्यक्त्वाधनंजय ॥ सिद्ध्यसिद्ध्योःसमोभूत्वा समत्वंयोगउच्यते ॥ ४८ ॥

धनंजय १ योगस्थः २ संगं ३ त्यक्त्वा ४ सिद्ध्यसिद्ध्योः ५ समः ६ भूत्वा ७ कर्माणि ८ कुरु ९ समत्वम् ११ योगः १० उच्यते १२ ॥ ४८ ॥ अ० उ० कर्म करनेकी विधि कहते हैं + हे अर्जुन! १ योग में स्थित हुआ २ सि० कर्मों में और कर्मों के फलमें + आसक्ति को ३ त्याग करके ४ सि० और कर्मों की + सिद्धि असिद्धि में ५ समहोकर ६ । ७ कर्मों को ८ कर ९ योग १० समता को ११ कहते हैं १२ तात्पर्य समता में स्थित होकर कर्मकर ॥ ४८ ॥

दूरेणह्यवरंकर्म बुद्धियोगाद्धनंजय ॥ बुद्धौशरणमन्विच्छ कृपणाःफलहेतवः ॥ ४९ ॥

धनंजय १ बुद्धियोगात् २ कर्म ३ दूरेण ४ हि ५ अवरम् ६ बुद्धौ ७ शरणम् ८ अन्विच्छ ९ फलहेतवः १० कृपणाः ११ ॥ ४९ ॥ अ० हे धनंजय! १ ज्ञानयोग से २ कर्म ३ अत्यन्त ४ । ५ निकृष्ट ६ सि० हैं अर्थात् श्रेष्ठ नहीं इस वास्ते ज्ञान में ७ रक्षाकरनेवाले की ८ प्रार्थनाकर ९ तात्पर्य अभयप्राप्तिका जो कारण परमार्थज्ञान उसकी प्रार्थना जिज्ञासाकर उसकी शरणहो परमार्थ ज्ञानका आश्रय ले + कामनावाले फलको तृष्णावाले १० दीन अज्ञानी ११ सि० होते हैं तात्पर्य कर्मों से अन्तःकरण शुद्ध करके ज्ञाननिष्ठ होनाचाहिये स्वर्गादिकी इच्छा नहीं रखनी ॥ ४९ ॥

बुद्धियुक्तोजहातीहउभेसुकृतदुष्कृते ॥ तस्माद्योगायुज्यस्व योगःकर्मसुकौशलम् ॥ ५० ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

बुद्धियुक्तः १ इह २ सुकृतदुष्कृते ३ उभे ४ जहाति ५ तस्मात् ६ योगाय ७ युज्यस्व ८ योगः ९ कर्मसु १० कौशलम् ११ ॥ ५० ॥ अ० ज्ञानयुक्त १ जातेही २ पुण्य पाप दोनों को ३ । ४ त्याग देताहै ५ तिस कारण से ६ ज्ञानयोग के वास्ते ७ प्रयत्नकर ८ ज्ञानयोग ९ कर्मों में १० चतुरता ११ सि० है तात्पर्य कर्म करने में चतुरता क्या है कि बंधनरूप कर्मों में से ज्ञानको प्राप्त होजाना अर्थात् कर्म करके अकर्म होजाना यही कर्म करने में चतुरताहै नहीं तो जो कर्म्म करने से इसी जन्म में ब्रह्मज्ञान न हुआ तो कर्मों का करना निष्फल हुआ ॥ ५० ॥

कर्मजंबुद्धियुक्ताहिफलंत्यक्त्वामनीषिणः ॥ जन्मबन्धविनिर्मुक्ताःपदंगच्छन्त्यनामयम् ॥ ५१ ॥

बुद्धियुक्ताः १ हि २ मनीषिणः ३ कर्मजम् ४ फलम् ५ त्यक्त्वा ६ जन्मबन्धविनिर्मुक्ताः ७ अनामयम् ८ पदम् ९ गच्छन्ति १० ॥ ५१ ॥ अ० ज्ञानयुक्त १ ही २ पण्डित ३ कर्मजम् ४ फल को ५ त्याग करके ६ जन्मरूप बन्धन से छूटेहुये ७ समस्त उपद्रवरहित पदको ८ । ९ प्राप्तहोते हैं १० तात्पर्य कर्मों से उत्पन्न होते हैं प्राप्तहोते हैं जो स्वर्ग वैकुण्ठादि फलविशेष उनको त्याग करके ज्ञानीही पण्डित मोक्ष होते हैं कर्म्मी उपासक योगी पण्डित अपने कियेहुये कर्म्मों के फलको प्राप्त होते हैं मोक्षको नहीं प्राप्त होते ॥ ५१ ॥

यदातेमोहकलिलंबुद्धिर्व्यतितरिष्यति ॥ तदागन्तासिनिर्वेदंश्रोतव्यस्यश्रुतस्यच ॥ ५२ ॥

यदा १ ते २ बुद्धिः ३ मोहकलिलम् ४ व्यतितरिष्यति ५ तदा ६ श्रोतव्यस्य ७ श्रुतस्य ८ च ९ निर्वेदम् १० गन्तासि ११ ॥ ५२ ॥ अ० उ० यह कर्म्म करते २ मैं किस काल में ब्रह्मज्ञानका अधिकारी हूंगा और मेरा चित्त शान्तहोकर आत्मा में कब आत्माकार होगा इस अपेक्षा में श्रीमहाराज अर्जुन के प्रति २ श्लोकों में यह कहते हैं + जिसकाल में १ तेरी २ बुद्धि ३ मोहरूपी कीचको ४ भलेप्रकार तरेगी ५ तात्पर्य देहादि पदार्थों में जो तेरी आत्मबुद्धि है देहादि पदार्थों को जो तू अपना आपा समझता है वा उनमें ममता करनी वा उनके साथ आत्मा की एकता करनी वा तादात्म्य अध्यास करना इसीको मोहरूप कीच कहते हैं यह अविवेक तेरा जब दूरहोगा + तिस कालमें ६ श्रुत और श्रोतव्यके ७ । ८ । ९ वैराग्य को १० प्राप्तहोगा तू ११ अर्थात् पीछे जो जो सुना हुआहै और आगे को जो जो

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

सुनने के योग्य समझ रक्खा है इन सबसे तुझको वैराग्य होजायगा न कुछ सुनने की इच्छा करेगा और न पिछले सुने में कुछ संशय रहेगा इसप्रकार शुभाशुभ कर्मों से उपराम होकर जब फिर ब्रह्मज्ञानको प्राप्तहोगा + उक्तंच + ग्रन्थमभ्यस्यमेधावी विचार्यचपुनःपुनः। पलालमिवधान्यार्थी त्यजेद्ग्रन्थमशेषतः॥ अर्थ इसका यहहै कि मुमुक्षु प्रथम ग्रन्थोंका भलेप्रकार अभ्यास करके वारंवार विचारकरै फिर अपने स्वरूपको प्राप्तहोकर ग्रन्थोंको त्याग देताहै जैसे धानकी इच्छावाला पयालको त्याग देताहै धान ग्रहण करलेताहै श्रुत श्रोतव्य से वैराग्य होना इसीको कहते हैं॥ ५२॥

श्रुतिविप्रतिपन्नातेयदास्थास्यतिनिश्चला॥ समाधावचलाबुद्धिस्तदायोगमवाप्स्यसि॥ ५३॥

यदा १ ते २ बुद्धिः ३ समाधौ ४ निश्चला ५ अचला ६ स्थास्यति ७ तदा ८ योगम् ९ अवाप्स्यसि १० श्रुतिविप्रतिपन्ना ११॥ ५३॥ अ० सि० और जिस कालमें १ तेरी २ बुद्धि ३ आत्मामें ४ विक्षेपरहित ५ विकलारहित ६ स्थित होगी ७ तिसकालमें ८ समाधियोग को ९ प्राप्तहोगा तू १० सि० अबतक कैसी है वह तेरी बुद्धि कि अनेक शास्त्र पुराण इतिहासादि और श्रुति स्मृति आदिकों का + श्रवण करने से विक्षेपको प्राप्तहै ११ तात्पर्य जबतक पूर्वापर वाक्योंका अविरोध समन्वय नहीं समझेगा तबतक चित्तकी शान्ति कभी न होगी और न वेदशास्त्र में अवश्य श्रद्धा विश्वास करके आत्मनिष्ठ होना योग्यहै रोचक वाक्यों में नहीं अटकना यही इस प्रकरणका अभिप्रायहै॥ ५३॥

अर्जुनउवाच॥ स्थितप्रज्ञस्यकाभाषा समाधिस्थस्यकेशव॥ स्थितधीःकिंप्रभाषेत किमासीतव्रजेतकिम्॥ ५४॥

केशव १ समाधिस्थस्य २ स्थितप्रज्ञस्य ३ का ४ भाषा ५ स्थितधीः ६ किम् ७ प्रभाषेत ८ किम् ९ आसीत १० किम् ११ व्रजेत १२॥ ५४॥ अ०उ० ब्रह्मज्ञानी के लक्षण जानने की इच्छा करके अर्जुन श्रीभगवान् से प्रश्न करताहै + हे केशव! १ सि० स्वभावसेही जो निर्विकल्प समाधि में स्थितहै २ सि० और अहं ब्रह्मास्मि इस महावाक्यार्थ में दृढ़ + स्थित है बुद्धि जिसकी तिसकी ३ क्या ४ भाषा ५ सि० है अर्थात् और लोग उसको कैसा कहते हैं कहाजावे अन्य करके

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

स्वरूप आत्मा में और इसी साधन से मुमुक्षु की होजायगी इन्द्रियों के निरोध में विद्वान् को अनायास दुःख नहीं होता है इस बात को दृष्टान्त से स्पष्ट करते हैं श्रीमहाराज+कछुवा ११ सि० अपने हाथ पांव+अङ्गोंको १२ जैसे १३ सि० स्वाभाविक सङ्कोच करलेताहै इसीप्रकार विद्वान् स्वाभाविक विषयोंसे इन्द्रियोंको निरोध कर लेताहै ॥ ५८ ॥

विषयाविनिवर्त्तन्ते निराहारस्यदेहिनः ॥ रसवर्जंरसोप्यस्यपरंदृष्ट्वानिवर्त्तते ॥ ५९ ॥

निराहारस्य १ देहिनः २ विषयाः ३ विनिवर्त्तन्ते ४ रसवर्जम् ५ अस्य ६ परम् ७ दृष्ट्वा ८ रसः ९ अपि १० निवर्त्तते ११ ॥ ५९ ॥ अ० उ० इन्द्रियों का विषयों में प्रवर्त्तन होना यह लक्षण जो ब्रह्मज्ञानी का श्रीमहाराज कहते हैं इसमें तो अतिव्याप्ति दोष आता है क्योंकि ऐसे तो निराहारी रोगी भी होते हैं यह शङ्का करके श्रीमहाराज कहते हैं कि+निराहारी जीवके १ । २ सि० भी+विषय ३ निवृत्त होजाते हैं ४ सि० यह तो सत्य है परन्तु+रसवर्जित ५ सि निवृत्त होते हैं अर्थात् विषयों से राग उसका नहीं दूर होता है तात्पर्य्य विषयों में उसकी तृष्णा और सूक्ष्म कामना बनी रहती है और+इस ब्रह्मज्ञानी का ६ पूर्ण ब्रह्म सच्चिदानन्द आत्मा को ७ देख करके ८ अर्थात् आनन्दस्वरूप आत्मा को प्राप्त होकर ज्ञानी का+रस ९ भी १० निवृत्त होजाता है ११ सि० इस प्रकार समझने से पूर्वोक्त लक्षण में अतिव्याप्ति दोष नहीं ॥ ५९ ॥

यततोह्यपिकौन्तेयपुरुषस्यविपश्चितः ॥ इन्द्रियाणिप्रमाथीनिहरन्तिप्रसभंमनः ॥ ६० ॥

कौन्तेय १ यततः २ हि ३ विपश्चितः ४ पुरुषस्य ५ अपि ६ इन्द्रियाणि ७ प्रमाथीनि ८ प्रसभम् ९ मनः १० हरन्ति ११ ॥ ६० ॥ अ० उ० विना इन्द्रियों के संयम कियेहुये ज्ञान होना दुर्लभ है इस वास्ते साधन अवस्था में तो इन्द्रियों के निरोध करने में अत्यन्त प्रयत्न करना योग्य है यह कहते हैं दो श्लोकों में+हे अर्जुन! १ सि० मोक्षमें+प्रयत्न करनेवाले की २ सि० इन्द्रिय+भी ३ सि० और+विद्वान् विवेकी पुरुष की ४ । ५ भी ६ इन्द्रिय ७ प्रमथन स्वभाव वाली क्षोभ करने वाली ८ बल करके ९ मनको १० हरलेती हैं ११ अर्थात् जबरदस्ती से मनको विषयों में विक्षिप्त करदेती हैं जब कि विद्वान् की इन्द्रिय भी

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

विद्वान् के मनको विषयों में विक्षिप्त करदेती हैं तो फिर मुमुक्षु साधक को तो साधन अवस्थामें भलेप्रकार चैतन्य रहकर प्रयत्न करना योग्यहै ॥इतिहास॥ एक समय व्यासजी जैमिनि अपने शिष्य को यही श्लोक सुनारहे थे जैमिनि जीने कहा कि आपका कहना तो सब सत्य है परन्तु यह नहीं होसक्ता कि जो इन्द्रिय विद्वान् के मनको भी विषयों में विक्षिप्त कर देवें अविद्वान् के मनको विक्षिप्तकर सक्तीहैं व्यासजी ने बहुत उनको समझाया परन्तु व्यासजी के इस वाक्यमें उन को विश्वास न आया व्यासजीने कहा कि इस श्लोक की अर्थ फिर किसीकाल में तुमको समझावेंगे यह कहकर चलदिये उसी दिन दोघड़ीदिन रहे ऐसी माया रची कि दश ग्यारह स्त्री तरुण माया की रचकर और आपभी एक सुन्दर स्वरूप स्त्री का बनकर जैमिनि की कुटीके सामने जाकर हँसी चोहल खेल विहार का प्रारम्भ करदिया जिस कालमें बारीक वस्त्र उन स्त्रियों का पवन से जो उड़ा और गेंद उछालते हुये जो हाथ उन स्त्रियों ने ऊपरको किये उस काल में उदर जंघा स्तनादि अङ्ग उन स्त्रियोंके जैमिनिजी को दीखगये फिर उसी कालमें ऐसा बादल होगया जैसा भादों में होताहै अन्धेरा होगया मन्द मन्द बरसने लगा पवन चलने लगी वे सब स्त्री माया की तो लोप होगई व्यासजी का जो स्वरूप स्त्रीका बना हुआ था वही एक रहगया सो वह स्त्री जैमिनिजी के पासगई और कहा कि महाराज मेरेसंग की सहेली न जानिये कहां गई मैं अकेली रहगई अब रात्रि को कहां जाऊं आप आज्ञा करो तो रातभर एक मकानमें मैंभी पड़ी रहूंगी प्रथम तो जैमिनिजीने उसको रात्रिके समय अपने पास रखनें से बहुत मने किया फिर उसकी दीन बोली सुनकर कुछ दया आगई उस स्त्री से यह कहा कि इस दूसरे मकान में जाकर भीतरसे संकल लगाले यहां एक भूत रात्रि के समय आया करता है मेरीसी बोली बोलेगा उसके कहने से किवाड़ मत खोलियो नहीं तो वह भूत तुझको खाजायगा व्यासजीने मनमें कहा कि विद्वान् होने में तो इसके सन्देह नहीं यत्न तो बड़ा किया है। जैमिनिजी का वह वाक्य सुन कर मकान के भीतर जाकर भीतरसे संकल लगाली उस स्त्रीने जो व्यासजी का स्वरूप था फिर निज स्वरूप होकर ध्यानमें बैठगये जैमिनिजी जब ध्यान करने बैठे तब वह स्त्री याद आई बारंबार मनको निरोध करैं मन शान्तहो नहीं जैमिनिजी ध्यान जप छोड़कर उठे उस मन्दिरके द्वारपर जाकर कहा कि हे प्रिये! मैं जैमिनिहूं तुझसे बचने के लिये झूलकी झूंठी कथा तुझको सुनादी थी अब तू बेसन्देह कपाट खोलदे तेरे बिना मुझको निद्रा नहीं आतीहै इसी प्रकार प्रा

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

चेष्टा करते करते हारगये मारे काम और विरह के कोठे पर जाकर छत उखाड़ कर भीतर कूदपड़े व्यासजीने एक थप्पड़ जैमिनिजीके मुखपर मारकर कहा कि तू विद्वान् वा अविद्वान् जैमिनिजी लज्जाको प्राप्त हुये व्यासजीने कहा कि तुम्हारी विद्वत्ता साधुता में सन्देह नहीं जो चाहिये था वही तुमने किया कदाचित् इस प्रकार विद्वान् धोखा खाकर अनर्थ कर बैठे उसको कभी प्रत्यवाय पातक नहीं + थोड़े दिन हुये ऐसीही एक व्यवस्था दक्षिणदेश में हुई उसको भी सुनो दैवयोग से एक स्त्री भूली हुई रात्रिके समय किसी महात्मा की कुटीपर चली आई महात्मा ने इसीप्रकार भूतकी कथा सुनाकर दूसरे मकान में सुलादी रात्रि के समय थोड़ी रातरहे वे महात्मा भी छत उखाड़कर कूदे सो उनके शरीरमें एक लकड़ी घुसगई उससे बड़ाभारी घाव होगया वह स्त्री इनको पहचानकर घबराई पछताई हुई कहने लगी कि मुझसे बड़ा अपराध हुआ जो किवाड़ न खोले महात्माने उसको समझा दिया और यह कहा कि तू शोच मतकर और जो मैं मरजाऊं तो यह लिखाहुआ मेरा लोगों को दिखा देना यह कह उसी समय महात्माने अपने रक्त से वह सब व्यवस्था संस्कृत श्लोकों में लिखदी नाम उस व्यवस्था का रक्तगीता लिखकर परमधाम को प्राप्त हुये सो वह रक्तगीता प्रसिद्ध है संसार से उपराम करनेवाली है तात्पर्य सारार्थ उसका यहीहै कि जो इस श्लोक का अर्थ है ॥ ६० ॥

तानिसर्वाणिसंयम्ययुक्तआसीतमत्परः ॥ वशे हियस्येन्द्रियाणितस्यप्रज्ञाप्रतिष्ठिता ॥ ६१ ॥

तानि १ सर्वाणि २ संयम्य ३ युक्तः ४ मत्परः ५ आसीत ६ यस्य ७ इंद्रियाणि ८ वशे ९ तस्य १० हि ११ प्रज्ञा १२ प्रतिष्ठिता १३ ॥ ६१ ॥ अ० उ० जब कि इन्द्रिय यह अनर्थ करती हैं इसीवास्ते + तिन सब इन्द्रियों को १। २सि० विषयों से + रोककरके ३ सावधान हुआ ४ मुझ सच्चिदानन्दपरायण ५ सि० हुआ अर्थात् मैं सच्चिदानन्दस्वरूप अद्वैत हूं सिवाय मुझ सच्चिदानन्द पूर्ण ब्रह्मके और कुछ पदार्थ तीनों कालमें नहीं इस ध्यान में तत्परहुआ + बैठताहै ६ जिसकी ७ इन्द्रिय ८ वशमें ९ सि० हैं आत्माके + तिसकी १० ही ११ बुद्धि १२ निश्चल १३ सि० है सच्चिदानन्द स्वरूप पूर्णब्रह्म में वह ज्ञानी कैसे बैठताहै इस प्रश्नका उत्तर इस मन्त्रमें कहा तात्पर्य्य ज्ञानी सब इन्द्रियों को निरोध करके आत्मा में मग्न हुआ बैठा रहता है ॥ ६१ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

ध्यायतोविषयान्पुंसःसंगस्तेषूपजायते ॥ संगात्संजायतेकामःकामात्क्रोधोभिजायते ॥ ६२ ॥ क्रोधाद्भवतिसंमोहःसंमोहात्स्मृतिविभ्रमः ॥ स्मृतिभ्रंशाद्बुद्धिनाशोबुद्धिनाशात्प्रणश्यति ॥ ६३ ॥

विषयान् १ ध्यायतः २ पुंसः ३ तेषु ४ संगः ५ उपजायते ६ संगात् ७ कामः ८ संजायते ९ कामात् १० क्रोधः ११ अभिजायते १२॥६२॥ क्रोधात् १ संमोहः २ भवति ३ संमोहात् ४ स्मृतिविभ्रमः ५ स्मृतिभ्रंशात् ६ बुद्धिनाशः ७ बुद्धिनाशात् ८ प्रणश्यति ९ ॥ ६३ ॥ अ० उ० इन्द्रियों के निरोधन करने में जो अर्थ होता है उसको तो निरूपण किया अब अन्तःकरण के निरोधन करने में जो अनर्थ होता है सो कहते हैं दो श्लोकों में + सि० गुण बुद्धिकरके + विषयों का ध्यान करने से १।२ पुरुषका ३ तिनमें ४ अर्थात् स्त्री शब्दादि विषयों में ४ आसक्ति ५ होजाती है ६ आसक्ति होजाने से ७ सि० फिर अधिक + कामना ८ होजाती है ९ कामनासे १० क्रोध ११ सि० उत्पन्न होआता है ॥ ६२ ॥ क्रोधसे १ अविवेक २ होजाता है ३ अर्थात् मुझको यह करना योग्य है वा नहीं इस विचारका अभाव होजाताहै + अविवेक होनेसे ४ स्मृतिका विभ्रम ५ सि० होजाता है अर्थात् जो कुछ शास्त्र आचार्य्योंसे सुन रक्खाथा उस अर्थ की स्मृतिका अभाव होजाता है उस समय कुछ नहीं स्मरण होताहै सिवाय उस विषयके कि जिसका चिन्तन करनेसे जिस विषयमें चित्त आसक्त होगया है फिर + स्मृतिका अभाव होजाने से ६ वा विचल जानेसे वा भ्रंश होजानेसे ६ बुद्धिका नाश ७ सि० होजाता है अर्थात् समझकर फिरभी चैतन्य होजावे यह बुद्धि नहीं रहती है + बुद्धि का नाशहोनेसे ८ नाश होजाता है ९ सि० वही पुरुष जिसका विषयों में चिन्तन करने से सूक्ष्म संग होगया था अर्थात् वह पुरुष मोक्षमार्ग से भ्रष्ट होता है उस तरफ से तो मानो मरगया ऐसे आदमी को मुरदे की बराबर समझना चाहिये कि जो सच्चिदानन्द स्वरूप से विमुखहोकर विषयोंके सम्मुख है वह जीता हुआ ही मुरदा है क्योंकि परमपुरुषार्थ जो मोक्षहै उसके योग्य नहीं तात्पर्य्य सब अनर्थोंकी और पाप दुःखोंकी मूल मनोराज्यहै क्योंकि प्रथम स्त्री शब्दादि पदार्थों में गुण समझकर अर्थात् स्त्रीआदिको किसी एक अंश में सुख देनेवाला समझकर जो पुरुष उन विषयोंका मन में ध्यान करता रहता है फिर चिन्तन करते

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

करते पदार्थों में सूक्ष्म आसक्ति होकर अधिक कामना होजाती है फिर उसकी प्राप्ति के प्रयत्नों में नानाप्रकार के उपद्रवहोजाते हैं, उपाधि बढ़ते बढ़ते पशुवत् मनुष्य होजाताहै इन दोनों श्लोकोंका अर्थ आनन्दामृतवर्षिणी के नवें अध्याय में और भी स्पष्ट लिखा है ॥ ६३ ॥

रागद्वेषवियुक्तैस्तुविषयानिन्द्रियैश्चरन् ॥ आत्मवश्यैर्विधेयात्माप्रसादमधिगच्छति ॥ ६४ ॥

विधेयात्मा १ इन्द्रियैः २ विषयान् ३ चरन् ४ तु ५ प्रसादम् ६ अधिगच्छति ७ रागद्वेषवियुक्तैः ८ आत्मवश्यैः ९ ॥६४॥ अ०उ० श्रोत्रादि इन्द्रियों करके शब्दादि विषयों को न भोगता हो ऐसा तो कोई भी ब्रह्मज्ञानी भगवत्भक्त उपासक योगी कर्मी इत्यादिक नहीं दीखताहै और इन्द्रियों के असंयम आप अनर्थ कहते हो तो फिर ब्रह्मज्ञानी और अज्ञानी पुरुषों में क्या भेद हुआ यह शङ्काकरके श्री महाराज दो श्लोकोंमें ज्ञानीके भोगनेकी रीति फलके सहित निरूपण करते हैं + विवेकी ब्रह्मज्ञानी आत्मउपासक १ इन्द्रियों करके २ विषयों को ३ भोगताहुआ४ भी ५ निजानन्द को ६ प्राप्त होता है ७ सि० कैसी हैं वे इन्द्रिय कि जिन करके विषयोंको भोगता हुआ मोक्ष होजाताहै + रागद्वेषरहित ८ सि० हैं अर्थात् भोग समय ज्ञानी का विषयों में रागद्वेष नहीं एक तो ज्ञानी और अज्ञानी में यह भेद है और दूसरे ज्ञानी की इन्द्रिय + मनके वशमें हैं ९ टी० आठवां और नवां ये दोनों पद इन्द्रिय इस दूसरे पद के विशेषण हैं ८। ९ ॥ ६४ ॥

प्रसादेसर्वदुःखानांहानिरस्योपजायते ॥ प्रसन्नचेतसोह्याशुबुद्धिःपर्य्यवतिष्ठते ॥ ६५ ॥

प्रसादे १ अस्य २ सर्वदुःखानाम् ३ हानिः ४ उपजायते ५ प्रसन्नचेतसः ६ हि ७ बुद्धिः ८ आशु ९ पर्य्यवतिष्ठते १० ॥ ६५ ॥ अ० उ० निजानन्द को प्राप्त होने से क्या होता है इस अपेक्षा में श्रीमहाराज यह कहते हैं + निजानन्द को प्राप्त होने से १ इसके २ अर्थात् परमहंस ज्ञानी महापुरुष के २ दुःखों की ३ हानि ४ होजाती है ५ अर्थात् आध्यात्मिकादि सब दुःख नाश होजाते हैं ५ सि० और + निजानन्द को प्राप्त हुआहै अन्तःकरण जिसका अर्थात् आत्मा में स्थित हुआ है चित्त जिसका उसकी ६ ही ७ बुद्धि ८ शीघ्र जल्दी ९ निश्चल होती है १० सि० उसी आत्मा में + टी० प्रसाद प्रसन्नता सुख आनन्द आत्मा इन

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

शब्दोंका एकही अर्थहै इस जगह विषयानन्दकी प्रसन्नतासे तात्पर्य्यार्थ नहीं १।६५

नास्तिबुद्धिरयुक्तस्यनचायुक्तस्यभावना ॥ नचा भावयतःशान्तिरशान्तस्यकुतःसुखम् ॥ ६६ ॥

अयुक्तस्य १ बुद्धिः २ न ३ अस्ति ४ अयुक्तस्य ५ भावना ६ न ७ च ८ अभावयतः ९ शान्तिः १० न ११ च १२ अशान्तस्य १३ सुखम् १४ कुतः १५॥ ६६ ॥ अ० उ० यतिः अन्तर्मुख ज्ञानी को जो आनन्द पीछे निरूपण किया वह अयतिः वहिर्मुख अज्ञानी को नहीं होता है यह कहते हैं श्रीमहाराज इस मंत्र में + सि० प्रथम तो + अयतिः के १ बुद्धि २ सि० ही + नहीं ३ है ४ अर्थात् प्रथम तो आत्मा की निश्चय करनेवाली व्यवसायात्मिका बुद्धि वहिर्मुख अज्ञानी के नहीं उदय होती है इसी हेतु से अज्ञानी को ५ आत्माका ध्यान ६ नहीं ७ अर्थात् जब कि वह आत्माको जानताही नहीं तो फिर आत्मा का ध्यान वह कैसे करे इसी हेतु से वह आत्मध्यानरहित है और ८ ध्यानरहित को ९ शान्ति १० नहीं ११ फिर १२ विक्षिप्त चित्तवाले को १३ सुख १४ कहां से १५ अर्थात् किस प्रकार होसक्ताहै तात्पर्य्य विना ब्रह्मज्ञानके परमानन्दकी प्राप्ति नहीं॥६६॥

इन्द्रियाणांहिचरतांयन्मनोनुविधीयते ॥ तदस्य हरतिप्रज्ञांवायुर्नावमिवाम्भसि ॥ ६७ ॥

चरताम् १ इन्द्रियाणाम् २ यत् ३ मनः ४ हि ५ अनुविधीयते ६ तत् ७ अस्य ८ प्रज्ञाम् ९ हरति १० अम्भसि ११ वायुः १२ नावम् १३ इव १४ ॥ ६७ ॥ अ० उ० अयुक्त पुरुषकी बुद्धिः आत्मा में निश्चल क्यों नहीं होती इस अपेक्षामें श्री महाराज यह कहते हैं सि० अज्ञानी की इन्द्रियोंका विषयों के साथ जिससमय सम्बन्ध है अर्थात् श्रोत्र इन्द्रिय जब शब्दको सुनता है नेत्र जिस समय रूपको देखता है इसी प्रकार सब इन्द्रियों को समझ लेना उस सम्बन्ध समय + विषयसंबन्धी १ इन्द्रियोंके २ सि० साथ + जो ३ मन ४ भी ५ सि० कभी एकही इन्द्रियके साथ भी उसी विषयमें प्रवृत्त होजावे ६ अर्थात् जिस रूपादि विषयमें चक्षुआदि इंद्रिय प्रवृत्त होरहीहों उसकाल में जो मन भी उसी विषयमें उस इन्द्रियके साथ प्रवृत्त होजावे तो + सो ७ सि० इन्द्रिय कि जिसका साथी मन हुआहै वोही इन्द्रिय + इस अज्ञानी की ८ बुद्धि को ९ हर लेती है १० अर्थात् विषयों में विक्षिप्तकर देती है १० सि० इसमें दृष्टान्त यहहै कि + जलमें ११ पवन १२ नावको १३

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

जैसे १४ सि० उलट पुलट करता झकोले देता है + और जिससमय नाव को मल्लाह सँभालता है इसीप्रकार ज्ञानी मनको सावधान करते हैं अज्ञानी की सामर्थ्य नहीं तात्पर्य जब कि यह व्यवस्था है कि एक इन्द्रियके साथ मन लगाहुआ अनर्थ करता है तो फिर क्या कहना है जो सब इन्द्रियों के साथ मिलकर मन अनर्थ करावे मृग हस्ती पतंग मच्छी भ्रमर ये पांचों शब्द स्पर्श रूप रस गंध विषयों में से क्रमसे एक एक विषय के मारे हुये मरते हैं अज्ञानी जीव मनुष्यके तो पांचों प्रबल हो रही हैं इस कारण से अज्ञानी की बुद्धि आत्मा में निश्चल नहीं होती है इत्यभिप्रायः ॥ ६७ ॥

तस्माद्यस्यमहाबाहोनिगृहीतानिसर्वशः ॥ इन्द्रियाणींद्रियार्थेभ्यस्तस्यप्रज्ञाप्रतिष्ठिता ॥ ६८ ॥

महाबाहो १ यस्य २ इन्द्रियाणि ३ इन्द्रियार्थेभ्यः ४ सर्वशः ५ निगृहीतानि ६ तस्मात् ७ तस्य ८ प्रज्ञा ९ प्रतिष्ठिता १० ॥ ६८ ॥ अ० उ० शरीर प्राणइन्द्रिय अन्तःकरण का जो निरोध संयम वश करना है यही मोक्ष का अन्तरंग साधन है और यही मुक्त पुरुषों का लक्षणहै स्थितप्रज्ञके प्रकरण में पीछे जितने मन्त्र कहे और आगे जो और मन्त्र कहने रहे हैं सबका तात्पर्य्य यही है सोई श्रीमहाराज सबका तात्पर्य्य इस मन्त्र में कहते हैं + हे अर्जुन ! १ जिसकी २ इन्द्रिय ३ शब्दादि विषयोंसे ४ सबप्रकार करके ५ निरोधहै ६ जिस कारणसे ७ तिसकी ८ अर्थात् परमहंस विद्वान् ब्रह्मज्ञानी की ८ बुद्धि ९ निश्चल १० सि० है परमानन्द स्वरूप में वा ज्ञानी की बुद्धि श्रेष्ठ सर्व्वोत्कृष्टहै यह जानना योग्यहै और साधक पक्षमें जिज्ञासु मुमुक्षु की बुद्धि निश्चल होजाती है ब्रह्ममें इन्द्रियादिकों का निरोध करने से इत्यभिप्रायः ॥ ६८ ॥

यानिशासर्वभूतानांतस्यांजागर्त्तिसंयमी ॥ यस्यांजाग्रतिभूतानिसानिशापश्यतोमुनेः ॥ ६९ ॥

सर्वभूतानाम् १ या २ निशा ३ तस्याम् ४ संयमी ५ जागर्ति ६ यस्याम् ७ भूतानि ८ जाग्रति ९ सा १० निशा ११ पश्यतः १२ मुनेः १३ ॥ ६९ ॥ अ० उ० सब प्रकार करके इंद्रियों का निरोध होना अर्थात् नैष्कर्म्य होना यह पूर्वोक्तलक्षण तो असंभावित प्रतीत होताहै यह शंका करके श्रीमहाराज यह मंत्र कहते हैं तात्पर्य इस मंत्रका यह है कि ज्ञाननिष्ठा जो ज्ञानी की है वहां क्रिया कारककी

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

सम्बन्धमात्र भी नहीं निष्क्रिय ब्रह्मज्ञानी को कोई ज्ञानीही जान सक्ता कर्मनिष्ठ पुरुष नैष्कर्म्य ज्ञाननिष्ठा को क्या जानें क्योंकि कर्मनिष्ठा और ज्ञाननिष्ठाका दिनरात्रिवत् अन्तर है इस हेतु से अज्ञानी जीव कर्मनिष्ठों को यह असम्भवित लक्षण प्रतीत होताहै सोई दिखाते हैं इस मंत्रमें + सब भूतों की १ अर्थात् अज्ञानी जीव कर्मनिष्ठों की १ जो २ सि० रात्रिवत् ज्ञाननिष्ठा + रात्रि ३ सि० है + तिसमें ४ अर्थात् ज्ञाननिष्ठा में ४ अज्ञानी सर्वकर्मसंन्यासी ५ जागता है ६ तात्पर्य ज्ञाननिष्ठा अज्ञानी कर्मनिष्ठों के लिये रात्रिवत् है क्योंकि ज्ञाननिष्ठा की व्यवस्था अज्ञानी नहीं जानते हैं और न उनका उसमें कुछ व्यापार होता है और वही ज्ञाननिष्ठा ज्ञानियों के दिनवत् है क्योंकि ज्ञानी उसमेंही विचरते हैं और + जिसमें ७ अर्थात् कर्मनिष्ठामें ७ अज्ञानी कर्मनिष्ठ प्राणी ८ जागते हैं ९ अर्थात् जिस कर्मनिष्ठा में कर्मनिष्ठ व्यापार करते हैं कर्मों का अनुष्ठान करते हैं + सो १० अर्थात् कर्मनिष्ठा १० सि० रात्रिवत् + रात्रि ११ सि० है किसके आत्मतत्त्व को + देखतेहुये ज्ञानी संन्यासी के १२। १३ तात्पर्य ज्ञानी का कर्मनिष्ठा में किंचित् लेशमात्रभी व्यापार नहीं इस हेतुसे कर्मनिष्ठा विद्वान् की रात्रिहै इस मंत्रमें समुच्चय का भी खण्डन स्पष्ट प्रतीत होता है॥ ६९॥

आपूर्यमाणमचलप्रतिष्ठं समुद्रमापः प्रविशन्ति यद्वत्॥ तद्वत्कामा यं प्रविशन्ति सर्वे स शान्तिमाप्नोति न कामकामी॥ ७०॥

यद्वत् १ आपः २ समुद्रम् ३ प्रविशन्ति ४ आपूर्यमाणम् ५ अचलप्रतिष्ठम् ६ तद्वत् ७ सर्वे ८ कामाः ९ यम् १० प्रविशन्ति ११ सः १२ शान्तिम् १३ आप्नोति १४ कामकामी १५ न १६ ॥ ७० ॥ अ० उ० ऐसे कर्मसंन्यासी कि जिन के कर्मनिष्ठा रात्रिवत् है उनके शरीरका निर्वाह कैसे होताहै इस अपेक्षा में यह मंत्र भी कहते हैं और चौंसठवें मंत्रमें इस शंका का उत्तर अन्यप्रकार से दे भी चुके हैं इस मंत्रका तात्पर्य यह है कि विना इच्छा कियेहुये संसारके तुच्छ पदार्थ प्राप्त होजावें तो कितनी बातहै प्रत्युत सब सिद्धि ऋद्धि महात्माके सामने हाथ जोड़े खड़ी रहती हैं सदा यह इच्छा रखती हैं कि जिनके वास्ते परमेश्वरने हम को रचाहै कभी कृपा करके वेभी तो हमको सफल करें दृष्टान्तके सहित इसबात को कहते हैं श्रीमहाराज इस मंत्र में + जैसे १ सि० विना बुलाये नदी सरो-

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

आदि के + जल २ समुद्र में ३ प्रवेश होते हैं ४ सि० कैसा है वह समुद्र + सब तरफसे भराहुआ पूर्ण है ५ सि० और + अचल है प्रतिष्ठा मर्याद जिसकी ६ सि० यह तो दृष्टान्त है + तैसेही ७ सब ८ भोग ९ सि० प्रारब्धके प्रेरेहुये + जिसको १० अर्थात् निष्काम ज्ञानीको १० प्राप्त होते हैं ११ सि० कैसा है + सो १२ सि० ज्ञानी + शान्तिको १३ प्राप्त है १४ भोगोंकी कामनावाला १५ नहीं १६ अथवा जो भोगों की कामनावाला है सो शान्ति ब्रह्मानन्द को नहीं प्राप्त होताहै ॥ ७० ॥

विहायकामान्यःसर्वान् पुमांश्चरतिनिःस्पृहः ॥
निर्ममोनिरहङ्कारः सशान्तिमधिगच्छति ॥ ७१ ॥

यः १ पुमान् २ सर्वान् ३ कामान् ४ विहाय ५ निःस्पृहः ६ निर्ममः ७ निरहङ्कारः ८ चरति ९ सः १० शान्तिम् ११ अधिगच्छति १२ ॥ ७१ ॥

अ० उ० चतुर्थ आश्रम संन्यासपूर्वक ज्ञाननिष्ठा सेही मोक्षको प्राप्त होता है पुरुष गृहस्थी कर्मनिष्ठ मोक्ष के भागी नहीं शुभकर्म्म करने से शुभ लोकों को प्राप्त होते हैं यह नियमविधि है और जो कदाचित् कोई कहे कि कर्मनिष्ठ गृहस्थ भी विना संन्यास कियेहुये मोक्ष होजाते हैं तो चतुर्थ आश्रमका माहात्म्य वृथाही वेदों में प्रतिपादन कियाहै क्या कामहै शीतोष्णादि सहने का क्यों संन्यास करना चाहिये और जनकादिकी कथा का तात्पर्य परार्थ में है स्वार्थ में नहीं अर्जुन ने बूझा था ज्ञानी कैसे चलता फिरता है इस चौथे प्रश्नका उत्तर इस मंत्रमें कहतेहुये चतुर्थ आश्रम संन्यासपूर्वक ज्ञाननिष्ठा का माहात्म्य और लक्षण निरूपण करते हैं श्रीमहाराज + जो १ पुरुष २ सब भोगोंको ३।४ त्याग करके ५ इच्छारहित ६ ममतारहित ७ अहङ्काररहित ८ विचरताहै ९ सो १० शान्ति को ११ अर्थात् मोक्षको ११ प्राप्त होताहै १२ अर्थात् जिसमें ये लक्षण नहीं वह मोक्षकी आशा न रक्खे यह नियमविधि है तात्पर्य कोई ज्ञानरहित त्यागी ऐसे होते हैं कि उनको त्यागने के पीछे फिर उस त्यागेहुये पदार्थ की इच्छाही आती है ज्ञानी देहादिक पदार्थों के रहनेकी भी इच्छा नहीं रखते पीछे त्यागने के त्यागेहुये पदार्थ की इच्छा तो क्यों करनेलगे हैं इस वास्ते निःस्पृहः विशेषण है और कोई ऐसे होते हैं कि उनके पास त्यागने के पीछे आपही आप पदार्थ विना इच्छा प्राप्त होते हैं परन्तु उनमें उनकी ममता होजाती है और ज्ञानी के पास जो विना इच्छा पदार्थ प्राप्त होते हैं उनमें ज्ञानी की ममता नहीं होती है इस वास्ते

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

निर्ममः ज्ञानीका विशेषणहै और कोई ऐसे त्यागी होते हैं कि न तो उनकी इच्छा होती है और जो पराई इच्छासे पदार्थ आजावे उसमें ममता भी नहीं होती परंतु इन तीनों बातों का अहङ्कार बना रहताहै ज्ञानी के अहङ्कार भी नहीं होता यह ज्ञानी का लक्षण है इसको ज्ञाननिष्ठा कहते हैं॥ ७१ ॥

एषाब्राह्मीस्थितिःपार्थनैनांप्राप्यविमुह्यति॥ स्थित्वास्यामन्तकालेपि ब्रह्मनिर्वाणमृच्छति॥ ७२ ॥

पार्थ १ एषा २ ब्राह्मीस्थितिः ३ एनाम् ४ प्राप्य ५ न ६ विमुह्यति ७ अन्तकाले ८ अपि ९ अस्याम् १० स्थित्वा ११ निर्वाणम् १२ ब्रह्म १३ ऋच्छति १४॥ ७२॥ अ० उ० ज्ञाननिष्ठा की महिमा वर्णन करतेहुये इस स्थितप्रज्ञ के प्रकरणको समाप्त करते हैं श्रीभगवान् + हे अर्जुन! १ यह २ सि० जो पूर्वोक्त सर्वकर्मसंन्यासपूर्वक + ब्रह्मज्ञाननिष्ठा में स्थितिः ३ सि० है + इसको ४ प्राप्त होकर ५ सि० कोई संन्यासी + नहीं ६ मोहको प्राप्त होताहै ७ सि० ब्रह्मचर्य्य आश्रम सेही जो संन्यास आश्रम ग्रहण करके ज्ञाननिष्ठा में स्थित रहते हैं वे महात्मा मोक्षको प्राप्त होवें तो इसमें क्या कहना है + अन्तकालमें ८ भी ९ अर्थात् अवस्था के चौथे भागमें भी ९ इसमें १० अर्थात् ब्रह्मनिष्ठा में चतुर्थाश्रम संन्यासपूर्वक + स्थित होकर ११ निर्वाण ब्रह्मको १२। १३ अर्थात् समस्त अनर्थों की निवृत्ति और परमानन्दकी प्राप्ति है लक्षण जिस मोक्षका उसको + प्राप्त होता है १४ ॥ ७२ ॥

इति श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सुब्रह्मविद्यायांयोगशास्त्रेश्रीकृष्णार्जुन संवादेसांख्ययोगोनाम द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

तीसरे अध्यायका प्रारम्भ हुआ ॥

अर्जुनउवाच ॥ ज्यायसीचेत्कर्मणस्ते मताबुद्धिर्जनार्दन॥ तत्किंकर्मणिघोरेमांनियोजयसिकेशव १

केशव १ चेत् २ कर्मणः ३ बुद्धिः ४ ज्यायसी ५ ते ६ मता ७ जनार्दन ८

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

नदादि के + जल २ समुद्र में ३ प्रवेश होते हैं ४ सि० कैसा है वह समुद्र + सब तरफसे भराहुआ पूर्ण है ५ सि० और + अचल है प्रतिष्ठा मर्याद जिसकी ६ सि० यह तो दृष्टान्त है + तैसेही ७ सब ८ भोग ९ सि० प्रारब्धके प्रेरेहुये + जिसको १० अर्थात् निष्काम ज्ञानीको १० प्राप्त होते हैं ११ सि० कैसा है + सो १२ सि० ज्ञानी + शान्तिको १३ प्राप्त है १४ भोगोंकी कामनावाला १५ नहीं १६ अथवा जो भोगों की कामनावाला है सो शान्ति ब्रह्मानन्द को नहीं प्राप्त होताहै ॥ ७० ॥

विहायकामान्यःसर्वान् पुमांश्चरतिनिःस्पृहः ॥
निर्ममोनिरहङ्कारः सशान्तिमधिगच्छति ॥ ७१ ॥

यः १ पुमान् २ सर्वान् ३ कामान् ४ विहाय ५ निःस्पृहः ६ निर्म्ममः ७ निरहङ्कारः ८ चरति ९ सः १० शान्तिम् ११ अधिगच्छति १२ ॥ ७१ ॥

अ० उ० चतुर्थ आश्रम संन्यासपूर्वक ज्ञाननिष्ठा सेही मोक्षको प्राप्त होता है पुरुष गृहस्थी कर्मनिष्ठ मोक्ष के भागी नहीं शुभकर्म्म करने से शुभ लोकों को प्राप्त होते हैं यह नियमविधि है और जो कदाचित् कोई कहे कि कर्मनिष्ठ गृहस्थ भी विना संन्यास कियेहुये मोक्ष होजाते हैं तो चतुर्थ आश्रमका माहात्म्य वृथाही वेदों में प्रतिपादन कियाहै क्या कामहै शीतोष्णादि सहने का क्यों संन्यास करना चाहिये और जनकादिकी कथा का तात्पर्य परार्थ में है स्वार्थ में नहीं अर्जुन ने बूझाया ज्ञानी कैसे चलता फिरता है इस चौथे प्रश्नका उत्तर इस मंत्रमें कहतेहुये चतुर्थ आश्रम संन्यासपूर्वक ज्ञाननिष्ठा का माहात्म्य और लक्षण निरूपण करते हैं श्रीमहाराज + जो १ पुरुष २ सब भोगोंको ३।४ त्याग करके ५ इच्छारहित ६ ममतारहित ७ अहङ्काररहित ८ विचरताहै ९ सो १० शान्ति को ११ अर्थात् मोक्षको ११ प्राप्त होताहै १२ अर्थात् जिसमें ये लक्षण नहीं वह मोक्षकी आशा न रक्खे यह नियमविधि है तात्पर्य कोई ज्ञानरहित त्यागी ऐसे होते हैं कि उनको त्यागने के पीछे फिर उस त्यागेहुये पदार्थ की इच्छाही आती है ज्ञानी देहादिक पदार्थों के रहनेकी भी इच्छा नहीं रखते पीछे त्यागने के त्यागेहुये पदार्थ की इच्छा तो क्यों करनेलगे हैं इस वास्ते निःस्पृहः विशेषण है और कोई ऐसे होते हैं कि उनके पास त्यागने के पीछे आपही आप पदार्थ विना इच्छा प्राप्त होते हैं परन्तु उनमें उनकी ममता होजाती है और ज्ञानी के पास जो विना इच्छा पदार्थ प्राप्त होते हैं उनमें ज्ञानी की ममता नहीं होती है इस वास्ते

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

निर्ममः ज्ञानीका विशेषणहै और कोई ऐसे त्यागी होते हैं कि न तो उनकी इच्छा होती है और जो पराई इच्छासे प्रदार्थ आजावे उसमें ममता भी नहीं होती परंतु इन तीनों बातों का अहङ्कार बना रहताहै ज्ञानी के अहङ्कार भी नहीं होता यह ज्ञानी का लक्षण है इसको ज्ञान निष्ठा कहते हैं ॥ ७१ ॥

एषाब्राह्मीस्थितिःपार्थनैनांप्राप्यविमुह्यति। स्थित्वास्यामन्तकालेपि ब्रह्मनिर्वाणमृच्छति ॥ ७२ ॥

पार्थ १ एषा २ ब्राह्मीस्थितिः ३ एनाम् ४ प्राप्य ५ न ६ विमुह्यति ७ अन्तकाले ८ अपि ९ अस्याम् १० स्थित्वा ११ निर्वाणम् १२ ब्रह्म १३ ऋच्छति १४ ॥ ७२ ॥ अ० उ० ज्ञाननिष्ठा की महिमा वर्णन करतेहुये इस स्थितप्रज्ञ के प्रकरणको समाप्त करते हैं श्रीभगवान् + हे अर्जुन ! १ यह २ सि० जो पूर्वोक्त सर्वकर्मसंन्यासपूर्वक + ब्रह्मज्ञाननिष्ठा में स्थितिः ३ सि० है + इसको ४ प्राप्त होकर ५ सि० कोई संन्यासी + नहीं ६ मोहको प्राप्त होताहै ७ सि० ब्रह्मचर्य्य आश्रम सेही जो संन्यास आश्रम ग्रहण करके ज्ञाननिष्ठा में स्थित रहते हैं वे महात्मा मोक्षको प्राप्त होवें तो इसमें क्या कहना है + अन्तकालमें ८ भी ९ अर्थात् अवस्था के चौथे भागमें भी ९ इसमें १० अर्थात् ब्रह्मनिष्ठा में चतुर्थाश्रम संन्यासपूर्वक + स्थित होकर ११ निर्वाण ब्रह्मको १२। १३ अर्थात् समस्त अनर्थों की निवृत्ति और परमानन्दकी प्राप्ति है लक्षण जिस मोक्षका उसको + प्राप्त होता है १४ ॥ ७२ ॥

इति श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सुब्रह्मविद्यायांयोगशास्त्रेश्रीकृष्णार्जुन संवादेसांख्ययोगोनाम द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

तीसरे अध्यायका प्रारम्भ हुआ ॥

अर्जुनउवाच ॥ ज्यायसीचेत्कर्मणस्ते मताबुद्धिर्जनार्दन॥ तत्किंकर्मणिघोरेमांनियोजयसिकेशव १

केशव १ चेत् २ कर्मणः ३ बुद्धिः ४ ज्यायसी ५ ते ६ मता ७ जनार्दन ८

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

तद् ९ माम् १० घोरे ११ कर्मणि १२ किम् १३ नियोजयसि १४ ॥१॥ अ० उ० अर्ज्जुन ने समझा कि श्रीभगवान् को ज्ञाननिष्ठा सम्मतहै क्योंकि द्वितीय अध्याय में ज्ञाननिष्ठाकी बहुत प्रशंसाकरी और यह भी कहा कि चतुर्थ आश्रम संन्यासपूर्वक ज्ञाननिष्ठाही मोक्षका हेतु है जो श्रीमहाराज को ज्ञाननिष्ठा श्रेष्ठ प्रियहै तो मुझको क्यों लगाते हैं यह विचारकर अर्ज्जुन कहता है+ हे केशव! १ जो २ कर्म से ३ ज्ञान ४ श्रेष्ठ ५ आपको ६ सम्मत ७ सि० है + हे जनार्दन! ८ तो ९ मुझको १० हिंसात्मक ११ कर्ममें १२ क्यों १३ प्रेरते हो १४ अर्थात् जब कि आप ज्ञाननिष्ठाकोही मोक्षकी हेतु समझते हो तो फिर मुझसे यह क्यों कहते हो कि तू तो कर्मही कर तेरा तो कर्ममेंही अधिकार है ॥ १ ॥

व्यामिश्रेणैववाक्येन बुद्धिंमोहयसीवमे ॥ तदेकं वदनिश्चित्य येनश्रेयोहमाप्नुयाम् ॥ २ ॥

व्यामिश्रेण १ इव २ वाक्येन ३ मे ४ बुद्धिम् ५ मोहयसि ६ इव ७ तद् ८ एकम् ९ निश्चित्य १० वद ११ येन १२ अहम् १३ श्रेयः १४ आप्नुयाम् १५ ॥ २ ॥ अ० उ० किसी जगह तो श्रीमहाराज ज्ञानकी महिमा कहते हैं और किसी जगह कर्मकी इस मिलेहुये वाक्यमें स्पष्ट नहीं प्रतीत होता कि इन दोनोंमें श्रेष्ठ क्या है यह विचार कर अब अर्ज्जुन यह कहता है+ मिलेहुयेवत् वाक्य करके १ २। ३ मेरी ४ बुद्धि को ५ मानों भ्रांति करतेही ६। ७ अर्थात् मुझको ऐसे प्रतीत होता है कि मानों जैसे कोई मिलेहुये वाक्यकरके मोहको प्राप्त करता है वास्तव न आप मुझको मोह करते हो और न आपका वाक्य मिलाहुआ न सन्देहजनकहै क्योंकि आप परमकरुणा दया कृपाकी खानि हैं हे करुणाकर! मेरे इस अज्ञान दूर करनेके लिये इन दोनों ज्ञाननिष्ठा कर्मनिष्ठा में एक जो श्रेष्ठहो+ तिस एक को ८। ९ निश्चय करके १० कहो आप ११ जिस करके १२ अर्थात् ज्ञान करके वा कर्म करके १२ मैं १३ कल्याण को १४ प्राप्तहूं १५ ॥ २ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ लोकेस्मिन्द्विविधानिष्ठापुरा प्रोक्तामयानघ ॥ ज्ञानयोगेनसांख्यानांकर्मयोगेन योगिनाम् ॥ ३ ॥

अनघ १ अस्मिन्२ लोके ३ द्विविधा ४ निष्ठा ५ मया ६ पुरा ७ प्रोक्ता ८ सां

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

ख्यानाम् ९ ज्ञानयोगेन १० योगिनाम् ११ कर्मयोगेन १२॥३॥ अ० उ० इस मंत्रमें तात्पर्य्य श्रीमहाराजका यहहै कि हे अर्जुन! जो मैंने स्वतन्त्र पृथक्पृथक् दोनिष्ठा स्वतन्त्र दो पुरुषोंके निमित्त कही हों तो यह तेरा प्रश्न बनसक्ताहै कि कर्मनिष्ठा और ज्ञाननिष्ठामेंसे एकश्रेष्ठ मुझसे कहो और जबकि मैंने एक निष्ठाकोही दोप्रकार की एकपुरुषके निमित्त अधिकार भेद से उत्तरोत्तर कही है और एकपुरुषकोही अधिकार भेदसे दो प्रकारका अधिकारी कहाहै तो इस हेतुसे यह प्रश्न तुम्हारा बे योगहै क्योंकि स्वतन्त्र एकनिष्ठा से कल्याण नहीं होसक्ता और न दोनोंके सम समुच्चयसे होसक्ताहै क्रमसमुच्चयसे कल्याण होताहै यह मैंने पीछे कहा है मिला हुआ वाक्य नहीं कहा फिरभी अब भलेप्रकार स्पष्ट कहताहूं सावधान होकर सुन + अर्जुन १ इस जनके विषये २ । ३ अर्थात् मुमुक्षु दोनों निष्ठाका अधिकारी एकही पुरुषहै इस एक पुरुषके निमित्त + दो हैं प्रकार जिसके ४ सि० ऐसी एक + निष्ठा ५ मैंने ६ पहले ७ अर्थात् द्वितीयअध्यायमें ब्रा वेदों में + कही है ८ सि० वे दोप्रकार यह हैं + विरक्त संन्यासी परमहंस शुद्धान्तःकरण वालोंको ९ ज्ञानयोग करके १० अर्थात् विरक्तों के लिये ज्ञाननिष्ठा कही है और ज्ञानकी प्रथम भूमिकावाले + कर्मयोगियों को ११ कर्म्मयोग करके १२ अर्थात् मलिन अन्तःकरणवालों को कर्मनिष्ठा कही है। क्योंकि कर्म करने से ही अन्तःकरण शुद्धहोकर ज्ञान होताहै तात्पर्य्य दोनों निष्ठाका केवल एक ब्रह्मनिष्ठाही में है जबतक अन्तःकरण शुद्ध होकर उपरति वैराग्य न होवे तबतक कर्म करना योग्य है और जब अन्तःकरण शुद्ध होकर वैराग्यादिकका आविर्भाव होजावे तब कर्म्मोंका संन्यास करके ज्ञाननिष्ठ होजावे + टी० लोकस्तु भुवनेजने इत्यमरः श्रीधरजीने भी यही अर्थ कियाहै ॥ ३ ॥

नकर्मणामनारम्भान्नैष्कर्म्यंपुरुषोऽश्नुते ॥ नच संन्यसनादेवसिद्धिंसमधिगच्छति ॥ ४ ॥

कर्मणाम् १ अनारम्भात् २ पुरुषः ३ नैष्कर्म्यम् ४ न ५ अश्नुते ६ संन्यसनात् ७ एव ८ सिद्धिम् ९ च १० न ११ समधिगच्छति १२ ॥ ४ ॥ अ० उ० दोनिष्ठा आप कहतेहो एकमें तो कर्मोंका अनुष्ठान करना पड़ता है और एकमें कर्म्म नहीं करने पड़ते मेरीजानमें पहलेही से वह एक निष्ठा श्रेष्ठहै कि जिसमें कर्म करना न पड़े यह शङ्काकरके कहते हैं + सि० विना अन्तःकरण शुद्धहुये + कर्मोंके १ अनारम्भसे २ अर्थात् कर्मोंके न करने से २ मनुष्य ३ ज्ञाननिष्ठा

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

को ४ नहीं ५ प्राप्त होताहै ६ सि० विना ज्ञान हुये + मोक्षको ९ भी १० नहीं ११ प्राप्त होताहै १२ अथवा विना अन्तःकरण शुद्धहुये केवल चतुर्थाश्रम संन्यास ग्रहण करने से ज्ञान वा मोक्षको नहीं प्राप्त होता है कोईभी + तात्पर्य विना अन्तःकरण शुद्धहुये जो कर्म त्याग देताहै उसको न इसलोकमें सुख न परलोकमें और उसको न स्वर्ग न मोक्ष न ज्ञान प्राप्त होता है इस वास्ते जबतक अन्तःकरण भलेप्रकार शुद्ध न हो तबतक भगवत् आराधनादि कर्म्मों का अनुष्ठान करतारहै फिर ज्ञाननिष्ठाका अधिकारी होजायगा ॥ ४ ॥

नहिकश्चित्क्षणमपिजातुतिष्ठत्यकर्मकृत् ॥ कार्यतेह्यवशःकर्मसर्वैःप्रकृतिजैर्गुणैः ॥ ५ ॥

जातु १ कश्चित् २ हि ३ क्षणम् ४ अपि ५ अकर्मकृत् ६ न ७ तिष्ठति ८ हि ९ सर्वैः १० प्रकृतिजैः ११ गुणैः १२ अवशः १३ कर्म १४ कार्यते १५ ॥ ५ ॥ अ० उ० अन्तरङ्ग कर्मों को अज्ञानी नहीं त्यागसक्ता है ज्ञानीही उनके त्यागने में समर्थ है क्योंकि उनका त्याग स्वरूप से नहीं होसक्ता विचारदृष्टि करके उनमें आसक्त न होना उनको मिथ्या कल्पित मायिक अनात्मधर्म्म समझना यही उनका त्यागहै यह अज्ञानी से नहीं होसक्ता सोई कहते हैं + कभी १ कोई २ भी ३ अर्थात् ब्रह्मज्ञानरहित कोई अज्ञानी + पलमात्र ४ भी ५ अकर्मकृत् ६ नहीं ७ ठहरता है ८ अर्थात् अज्ञानी कर्म्म न करताहुआ अक्रिय हुआ पल भर भी किसी कालमें नहीं रहता तात्पर्य सदा कुछ न कुछ करताही रहताहै + क्योंकि ९ सब १० अर्थात् अज्ञानी प्राणीमात्र १० प्रकृति से उत्पत्ति हैं जिनकी तिन सत्त्व रज तम गुण करके ११ । १२ सि० प्रेराहुआ + अवश हुआ १३ अर्थात् परतन्त्र हुआ गुणों के वशहुआ अज्ञानी जीव + कर्म १४ करता है १५ तात्पर्य अज्ञानी जीवसे सत्त्वादि गुण बल करके कर्म करवाते हैं माया करके प्रेरित परवश हुआ कर्म करता यह मायाकी प्रबलता ज्ञानसे ही दूर होतीहै ॥ ५ ॥

कर्मेन्द्रियाणिसंयम्ययआस्तेमनसास्मरन् ॥ इन्द्रियार्थान्विमूढात्मामिथ्याचारःसउच्यते ॥ ६ ॥

कर्मेन्द्रियाणि १ संयम्य २ मनसा ३ इन्द्रियार्थान् ४ स्मरन् ५ यः ६ आस्ते ७ सः ८ विमूढात्मा ९ मिथ्याचारः १० उच्यते ११ ॥ ६ ॥ अ० उ० मलिन अन्तःकरणवाला जो कर्म त्याग देताहै श्रीभगवान् उसकी बुराई करते हैं + कर्म

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

न्द्रियोंको १ रोक करके २ सि० और + मनसे ३ शब्दादि विषयोंको ४ स्मरण करताहुआ ५ जो ६ बैठाहै ७ अर्थात् कर्मोंका अनुष्ठान नहीं करता + सो ८ मलिन अन्तःकरणवाला ९ सि० कर्म्मत्यागी + मिथ्याचारी १० कहा है ११ अर्थात् ऐसे त्यागी को दम्भी कपटी कहते हैं और झूंठा है मौन आसनादि आचार जिसका ॥ ६ ॥

यस्त्विन्द्रियाणिमनसानियम्यारभतेऽर्जुन ॥ कर्मेन्द्रियैःकर्मयोगमशक्तःसविशिष्यते ॥ ७ ॥

यः १ तु २ इन्द्रियाणि ३ मनसा ४ नियम्य ५ अर्जुन ६ कर्मेन्द्रियैः ७ कर्मयोगम् ८ अशक्तः ९ आरभते १० सः ११ विशिष्यते १२ ॥ ७ ॥ अ० उ० मलिन अन्तःकरणवाले कर्मत्यागी से कर्म करनेवाला श्रेष्ठ है यह कहते हैं + सि० मलिन मतवाला तो कपटी है + और जो १ । २ ज्ञानेन्द्रियों को ३ मन करके ४ सि० विषयों से + रोककर ५ हे अर्जुन! ६ कर्म इन्द्रियों करके ७ कर्मयोग को ८ अशक्तहुआ ९ करता है १० सो ११ विशेष है, १२ सि० पूर्वोक्त से + तात्पर्य फलकी इच्छासे जो रहितहै और कर्मों में जो अशक्त है सो अन्तःकरण शुद्धिद्वारा ब्रह्मज्ञान को प्राप्त होकर मोक्षहोगा इस हेतुसे विशेष है ॥ ७ ॥

नियतंकुरुकर्मत्वंकर्मज्यायोह्यकर्मणः ॥ शरीरयात्रापिचतेनप्रसिद्ध्येदकर्मणः ॥ ८ ॥

हि १ अकर्मणः २ कर्म ३ ज्यायः ४ नियतम् ५ कर्म ६ त्वम् ७ कुरु ८ ते ९ अकर्मणः १० देहयात्रा ११ अपि १२ च १३ न १४ प्रसिद्ध्येत् १५ ॥ ८ ॥ अ०उ०जब कि १ न करनेसे २ कर्म ३ श्रेष्ठ ४ सि० है इस हेतुसे + वेदोक्त ५ निष्कामकर्म को ६ तू ७ कर ८ सि० नहीं तो + तुझ अकर्मीको ९ । १० देहयात्रा ११ भी १२ और १३ सि० मोक्ष भी + नहीं १४ सिद्ध होगी १५ टी० कर्मों का अनुष्ठान न करने से करना श्रेष्ठ है २ । ३ जो तू अपना स्वधर्म कर्म युद्ध न करेगा तो तुझको भोजन वस्त्रादि भी देहकी रक्षा के लिये नहीं मिलेंगे और विना अन्तःकरण शुद्ध हुये तुझको ज्ञानका अभाव होने से तू मुक्तभी नहीं होगा इत्यभिप्रायः ९ । १० ॥ ८ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

यज्ञार्थात्कर्मणोन्यत्रलोकोयंकर्मबन्धनः ॥ तदर्थंकर्म्मकौन्तेयमुक्तसंगःसमाचर ॥ ९ ॥

यज्ञार्थात् १ कर्मणः २ अन्यत्र ३ कर्मबन्धनः ४ अयम् ५ लोकः ६ कौन्तेय ७ मुक्तसंगः ८ तदर्थम् ९ कर्म्म १० समाचर ११ ॥ ९ ॥ अ० उ० इसलोक वा परलोक के पदार्थों की कामना करके जो कर्म्म किया जाता है वह बन्ध का हेतु है यह कहते हैं + सि० यज्ञोवैविष्णुः ॥ यह श्रुति है यज्ञनाम विष्णु का है विष्णु सच्चिदानन्द व्यापककी कहते हैं तात्पर्यार्थ यज्ञ शब्दका तत् त्वम् पदों के लक्ष्यार्थ में है + यज्ञ नारायणार्थ १ कर्म से २ पृथक् ३ सि० जो और सकाम कर्म हैं तिन + कर्म करके बन्धनको प्राप्त होताहै ४ यह ५ जीव ६ हे अर्जुन! ७ सि० तू तो + निष्काम असंग हुआ ८ परमेश्वरार्थ ९ कर्म १० कर ११ अर्थात् पूर्णब्रह्म सच्चिदानन्दस्वरूप जो आत्मा है उसकी प्राप्ति के लिये तात्पर्य्य अज्ञानकी निवृत्ति के लिये कर्म्मोंका अनुष्ठानकर अज्ञानकी जो निवृत्ति है यही आत्माकी प्राप्ति है ॥ ९ ॥

सहयज्ञाःप्रजाःसृष्ट्वापुरोवाचप्रजापतिः ॥ अनेन प्रसविष्यध्वमेषवोस्त्विष्टकामधुक् ॥ १० ॥

प्रजापतिः १ सहयज्ञः २ प्रजाः ३ सृष्ट्वा ४ पुरा ५ उवाच ६ अनेन ७ प्रसविष्यध्वम् ८ एष ९ वः १० कामधुक् ११ अस्तु १२ ॥ १० ॥ अ० उ० सर्वथा न करने से सकाम कर्म करना श्रेष्ठहै अब यह कहते हैं चार श्लोकों में ब्रह्माजी का वाक्य इसमें प्रमाण है + ब्रह्माजी १ सहित यज्ञों के प्रजाको २ । ३ रचकर ४ अर्थात् यज्ञ और प्रजाको रचकर + पहले ५ सि० प्रजा से यज्ञ + बोले सि० कि हे कर्मनिष्ठावाली प्रजा! + इस करके ७ अर्थात् कर्मयज्ञ करके ७ उत्तरोत्तर बढ़ोगे तुम ८ यह यज्ञ ९ तुमको १० कामधुक् ११ हो १२ अर्थात् वाञ्छित फल देनेवालीहो यह मेरा आशीर्वादहै ॥ १० ॥

देवान्भावयतानेन तेदेवाभावयन्तुवः ॥ परस्परं भावयन्तःश्रेयःपरमवाप्स्यथ ॥ ११ ॥

अनेन १ देवान् २ भावयता ३ ते ४ देवाः ५ वः ६ भावयन्तु ७ परस्परम् ८ भावयन्तः ९ परम् १० श्रेयः ११ अवाप्स्यथ १२ ॥ ११ ॥ अ० उ० बढ़नेका

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

प्रकार निरूपण करते हैं + इस यज्ञ करके १ देवताओं को बढ़ावो २ तुम ३ तात्पर्य देवता यज्ञ करने से बढ़ते हैं उनका भोजन यज्ञही है और यज्ञका भाग पाने वाले ४ वे देवता ५ तुमको ६ बढ़ावेंगे ७ सि० इसप्रकार + परस्पर आपसमें ८ बढ़ते हुये ९ सि० तुम और देवता + परमकल्याण को १० । ११ अर्थात् स्वर्गजन्य सुखको ११ प्राप्त होगे १२ टी० यज्ञ करने से देवता तुम को वाञ्छित फल देंगे ७॥ ११॥

इष्टान्भोगान्हिवोदेवा दास्यन्तेयज्ञभाविताः ॥
तैर्दत्तानप्रदायैभ्योयोभुंक्तेस्तेनएवसः ॥ १२ ॥

यज्ञभाविताः १ देवाः २ वः ३ इष्टान् ४ भोगान् ५ हि ६ दास्यन्ते ७ तैः ८ दत्तान् ९ एभ्यः १० अप्रदाय ११ यः १२ भुंक्ते १३ सः १४ स्तेनः १५ एव १६ ॥ १२ ॥ अ० यज्ञ करके बढ़ेहुये वा प्रसन्नहुये १ देवता २ तुमको ३ सि० स्त्री पुत्र अन्न वस्त्रादि + प्यारे ४ भोगोंको ५ हि ६ देंगे ७ तात्पर्य देवता मोक्ष नहीं देसक्ते हैं मोक्षकी प्राप्ति तो सर्वकर्म्मसंन्यासपूर्वक ज्ञाननिष्ठासेही होती है + तिन करके ८ दियेहुओं को ९ अर्थात् देवताओं के दिये भोगोंको + इनके अर्थ १० तात्पर्य उन्हीं देवतों के अर्थ + न देकर अर्थात् साधुको भोजन करना इत्यादि पांच यज्ञ न करके १२ भोजन करता है १३ सो १४ चोर १५ सि० है + निश्चय १६ तात्पर्य नित्य विना पंचयज्ञ किये भोग भोगना अनर्थका हेतुहै ॥ १२ ॥

यज्ञशिष्टाशिनःसन्तो मुच्यन्तेसर्वकिल्बिषैः ॥
भुंजतेतेत्वघंपापा येपचन्त्यात्मकारणात् ॥ १३ ॥

यज्ञशिष्टाशिनः १ सन्तः २ सर्वकिल्बिषैः ३ मुच्यन्ते ४ ये ५ तु ६ आत्मकारणात् ७ पचन्ति ८ ते ९ पापाः १० अघम् ११ भुंजते १२ ॥ १३ ॥ अ० उ० गृहस्थोंको नित्य नियमकरके पांच यज्ञ करने योग्यहैं जो करते हैं उनकी स्तुति करते हैं श्रीमहाराज और जो नहीं करते उनकी निन्दा करते हैं + यज्ञ में का बचाहुआ अन्न भोजन करतेहुये १ । २ सब पापोंसे ३ छूटजाते हैं ४ और जो ५ । ६ आत्मा के वास्ते ७ अर्थात् केवल अपनाही और अपने कुटुम्बका पेट भरने के वास्तेही + पाक करते हैं पचति यह क्रिया उपलक्षणमात्र है तात्पर्य जो केवल कुटुम्ब के लिये रसोई मन्दिरादि बनाते हैं वस्त्रादिकोंका भोग भोगते हैं

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

साधु परमेश्वरका उन पदार्थों में नाममात्र भी नहीं वे ९ पापी १० पापको ११ भोजन करते हैं १२ सि० कण्डनीपेषणीचुल्ली उदकुम्भीचमार्जनी ॥ पंचसूनागृहस्थस्य ताभिःस्वर्गन्नविन्दति + अ० ओखली चक्की चूल्हा जल रखनेकी जगह बुहारी जिसको सोहरनी सोहनी भी कहते हैं इन पांचमें दिनप्रति अनेक हत्या पांच प्रकारसे होती रहती हैं इस हेतुसेही गृहस्थोंका अन्तःकरण मलिन रहताहै और स्वर्ग नहीं मिलताहै + स्वाध्यायोब्रह्मयज्ञश्च पितृयज्ञस्तुतर्पणम् ॥ होमोदेव बलिर्यज्ञो नृयज्ञोतिथिपूजनम् + अ० वेद शास्त्रादिका पढ़ना वा पाठ करना इसको ब्रह्मयज्ञ कहते हैं तर्पण को पितृयज्ञ कहते हैं हवन करना और बलिवैश्वकर्म्म करना इन दोनों को देवयज्ञ कहते हैं अतिथि अभ्यागतोंका पूजन करके उनको भोजन कराना वस्त्रादि देने इसको नरयज्ञ कहते हैं तात्पर्य पठन पाठन पाठ तर्पण होम बलिवैश्वकर्म्म विरक्त साधुओं को भोजन कराना इन पांच यज्ञ करने से नित्यकी नित्य पांचों हत्या दूरहोती हैं जो नहीं करते उनकी बढ़ती रहती हैं॥१३॥

अन्नाद्भवन्तिभूतानि पर्जन्यादन्नसम्भवः ॥ यज्ञाद्भवतिपर्जन्यो यज्ञःकर्मसमुद्भवः ॥ १४ ॥

अन्नात् १ भूतानि २ भवंति ३ पर्जन्यात् ४ अन्नसंभवः ५ यज्ञात् ६ पर्जन्यः ७ भवति ८ यज्ञः ९ कर्मसमुद्भवः १० ॥ १४॥ अ० कर्म्म करने से ही वृष्टि द्वारा अन्नादि पदार्थों की प्राप्ति होती है इस हेतुसे भी कर्म करना योग्य है यह कहते हैं तीन श्लोकों में अन्नसे १ मनुष्य प्राणी २ होते हैं ३ अर्थात् अन्नका परिणाम शुक्र शोणित स्त्री पुरुष का जो वीर्य ये दोनों मिलकर मनुष्यादि प्राणी उत्पन्न होते हैं वर्षा से ४ अन्न होता है ५ यज्ञसे ६ वर्षा ७ होती है ८ यज्ञ ९ कर्म्म से होता है १० सि० ऋत्विक् और यजमान का जो व्यापारहै वही कर्म्म है उससे यज्ञ सिद्ध होता है ॥ १४ ॥

कर्मब्रह्मोद्भवंविद्धि ब्रह्माक्षरसमुद्भवम् ॥ तस्मात् सर्वगतंब्रह्म नित्यंयज्ञेप्रतिष्ठितम् ॥ १५ ॥

कर्म १ ब्रह्मोद्भवम् २ विद्धि ३ ब्रह्म ४ अक्षरसमुद्भवम् ५ ब्रह्म ६ सर्वगतम् ७ तस्मात् ८ यज्ञे ९ नित्यम् १० प्रतिष्ठितम् ११ ॥ १५ ॥ अ० कर्म को १ वेद से उत्पन्न हुआ २ जान तू ३ वेद को ४ मायोपहित ब्रह्म उत्पन्नहुआ ५ सि० जान

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

माया मिथ्या हैं ब्रह्म ६ पूर्ण है ७ तिस कारण से ८ यज्ञमें ९ नित्य १० स्थित है ११ सि० भूतादि पदार्थ जितने पीछे कहे सबका कारण मायोपहित ब्रह्महै सो पूर्ण है तिसकारण से यज्ञमें भी स्थितहै तात्पर्य यद्यपि ब्रह्म पूर्णहै परन्तु उस की प्राप्ति निष्काम कर्म करने से अन्तःकरण शुद्धिद्वारा ब्रह्मज्ञान होकर होती है इस वास्ते यज्ञमें ब्रह्म नित्य स्थितहै यह कहा ॥ १५ ॥

एवंप्रवर्त्तितंचक्रं नानुवर्त्तयतीहयः ॥ अघायुरिन्द्रियारामो मोघंपार्थसजीवति ॥ १६ ॥

एवम् १ चक्रम् २ प्रवर्त्तितम् ३ यः ४ न ५ अनुवर्तयति ६ पार्थ ७ सः ८ इह ९ मोघम् १० जीवति ११ अघायुः १२ इन्द्रियारामः १३ ॥ १६ ॥ अ० उ० ईश्वर से वेद वेदसें कर्म कर्म से मेघ मेघसे अन्न अन्नसे प्राणी और प्राणी जब वेदोक्त कर्म करते हैं तब फिर मेघादि होते हैं फिर करते हैं फिर होते हैं+इसप्रकार १ चक्र २ सि० परमेश्वर ने लोगोंके पुरुषार्थ की सिद्धिकेलिये+प्रवृत्त किया है ३ जो ४ सि० कर्म का अधिकारी इसमें+नहीं ५ प्रवृत्त होता ६ अर्थात् कर्म्मों का अनुष्ठान नहीं करता हे अर्जुन! ७ सो ८ इस संसारमें ९ वृथा १० जीवताहै ११ सि० कैसाहै सो+पाप रूप अवस्थाहै उसकी १२ सि० और+इन्द्रियों करके विषयों में विहारहै जिसका १३ सि० सो पृथिवीपर भारहै आप डूबा और औरों को डुबाता है ॥ १६ ॥

यस्त्वात्मरतिरेवस्यादात्मतृप्तश्चमानवः ॥ आत्मन्येवचसंतुष्टस्तस्य कार्य्यंनविद्यते ॥ १७ ॥

यः १ तु २ मानवः ३ आत्मरतिः ४ एव ५ तृप्तः ६ च ७ आत्मनि ८ एव ९ च १० संतुष्टः ११ स्यात् १२ तस्य १३ कार्यम् १४ न १५ विद्यते १६ ॥ १७ ॥ अ० उ० अज्ञानियों को अन्तःकरण की शुद्धिके लिये निष्काम कर्म योग कहकर और सर्वथा न करनेसे सकाम करनाही अच्छाहै यह कहकर अब ज्ञानी को कर्म का अनुपयोग कहते हैं दो श्लोकों में अर्थात् ज्ञानी को कर्म करना कुछ आवश्यक नहीं सि० जो आत्मा को यथार्थ पूर्णानन्द ब्रह्मस्वरूप नहीं जानता है उसको तो अज्ञानकी निवृत्ति के लिये अवश्यही निष्काम कर्म करना योग्य है+और जो १ । २ मनुष्य ३ सि० ऐसा है कि+आत्माही में है प्रीति जिसकी ४ । ५ अर्थात् आत्मा से पृथक् पदार्थ में जिसकी प्रीति नहीं+और आत्माही में तृप्ति

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

है ६।७ अर्थात् इस लोक और परलोक के पदार्थों की प्राप्ति से तृप्ति नहीं जानता है + और आत्मामें ही ८। ९। १० संतुष्ट ११ है १२ अर्थात् आत्मासे पृथक् पदार्थ की न इच्छा रखताहै और न उसकी दृष्टि में आत्मा से सिवाय श्रेष्ठ पदार्थ है ऐसा जो विरक्त ज्ञानी संन्यासी है + तिसको १३ करने योग्य १४ सि० कुछ भी कर्म + नहीं १५ है १६ तात्पर्य जो कोई कदाचित् कर्मकाण्डी ब्राह्मणादिक यह कहैं संन्यासी से कि जैसे भिक्षाटनादि कर्म तुम करतेहो ऐसेही तीर्थयात्रा देवपूजादि कर्म्म करने में तुम्हारी क्या क्षति है उत्तर इसका प्रसिद्ध स्पष्टहै कि जिसकी जहां प्रीति होती है वह उस जगह तत्पर रहताहै इस हेतुसे ज्ञानी आत्मामें परायण रहते हैं उनको देवपूजादि कर्म करनेका सावकाशही नहीं और भिक्षाटनादि विद्वान्का गौण कर्म है बाल्य भोजनवत् और उसके बिना तो शरीर की स्थिति नहीं होसक्ती देवपूजादि कर्म के बिना विद्वान् की क्या क्षतिहोती है जो सुन्दर सच्चिदानन्द देवको छोड़ जड़ पाषाणादि देवताका आराधन करे तात्पर्य सिवाय आत्मनिष्ठाके विद्वान्को और कुछ कर्तव्य नहीं सो वह निष्ठा ज्ञानी की स्वाभाविक है कर्त्तव्य नहीं ज्ञानी शुद्ध स्वरूप सच्चिदानन्द नित्यमुक्त नित्य निर्विकार पूर्ण ब्रह्महै ब्रह्मविद् ब्रह्मैव भवति ॥ १७ ॥

नैवतस्यकृतेनार्थो नाकृतेनेहकश्चन ॥ नचास्य सर्वभूतेषुकश्चिदर्थव्यपाश्रयः ॥ १८ ॥

तस्य १ कृतेन २ एव ३ अर्थः ४ न ५ अकृतेन ६ इह ७ कश्चन ८ न ९ सर्वभूतेषु १० अस्य ११ कश्चिद् १२ अर्थव्यपाश्रयः १३ च १४ न १५ ॥ १८ ॥ अ० उ० वेद में लिखाहै कि जब ज्ञानमार्ग में देवता विघ्न करते हैं यह सत्य हैं परन्तु ज्ञान से पहिले विघ्न करते हैं ज्ञानमार्ग में प्रवृत्त नहीं होनेदेते मत मतान्तर के पण्डितोंकी बुद्धि में बैठकर और राजादि के मनमें स्थित होकर प्राणीको कर्मों में प्रेरते हैं और अनेक नानाविघ्न करते हैं और ज्ञानहुये पीछे तो वेही देवता ज्ञानी को अपना आत्मा जानते हैं चाहते हैं आत्माकी बराबर यह भी तो वेदमें ही लिखाहै श्रीभगवान् भी सातवें अध्याय में कहेंगे (ज्ञानी त्वात्मैव मेमतम्) तात्पर्य कोई यह शंका करे कि देवताओं का भय करके वा कुछ देवतों से आशा करके तो ज्ञानी को कर्म्म करना योग्यहै इस शंकाके दूर करने के लिये यह मंत्र कहते हैं श्रीमहाराज, जब कि ज्ञानी देवताओं को भी जीत चुका फिर अब उसको कर्म्म करने और न करनेसे क्या प्रयोजन है यह कहते हैं इत्य-

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

भिप्रायः तिसको १ अर्थात् ज्ञानी को २ सि० कर्म करने करके २ भी ३ सि० किसी से इस लोक वा परलोक में कुछ + प्रयोजन ४ नहीं ५ सि० और + न करने करके ६ सि० भी + इस लोक में ७ कुछ ८ सि० उस ज्ञानी को पाप प्रायश्चित्त + नहीं ९ सि० होता और ब्रह्मा जी से लेकर चींटी पर्यंत + सब भूतों में १० इसका ११ अर्थात् ज्ञानी का ११ कोई १२ अर्थ में आसरा १३ भी १४ नहीं १५ तात्पर्य्य देवता मनुष्यादि से ज्ञानी को व्यवहार में वा परमार्थ में कुछ प्रयोजन नहीं क्योंकि ज्ञानीके शरीर का निर्वाह तो प्रारब्धवशात् हुये चला जाता है उसको कोई अधिक न्यून नहीं करसक्ता और न उसके स्वरूपको कोई अधिक न्यून करसक्ता फिर कर्म्म करने में क्या तो उसकी क्षति और क्या उसको लाभ १८॥

तस्मादसक्तःसततंकार्य्यंकर्मसमाचर ॥ असक्तोह्याचरन्कर्मपरमाप्नोतिपूरुषः ॥ १९ ॥

तस्मात् १ सततम् २ असक्तः ३ कार्यम् ४ कर्म्म ५ समाचर ६ असक्तः ७ पुरुषः ८ हि ९ कर्म्म १० आचरन् ११ परम् १२ आप्नोति १३ ॥ १९॥ अ० उ० विरक्त ज्ञानी कोही कर्म्मका अनुपयोग है अज्ञानी वा गृहस्थ ज्ञानीको मैं नहीं कहता हूं हे अर्ज्जुन! तिसकारण से १ निरन्तर २ असंगहुआ ३ करने के योग ४ कर्मको ५ करतू ६ असक्त ७ पुरुष ८ ही ९ कर्मको १० करताहुआ ११ सि० अन्तःकरण शुद्धिद्वारा ज्ञानीहोकर + मोक्षको १२ प्राप्तहोताहै १३॥१९॥

कर्मणैवहिसंसिद्धिमास्थिताजनकादयः ॥ लोकसंग्रहमेवापिसम्पश्यन्कर्तुमर्हसि ॥ २० ॥

जनकादयः १ कर्म्मणा २ हि ३ एव ४ संसिद्धिम् ५ आस्थिताः ६ लोकसंग्रहम् ७ अपि ८ सम्पश्यन् ९ कर्तुम् १० अर्हसि ११ एव १२ ॥ २०॥अ०उ० सदासे कर्म्म करकेही बड़े बड़े महात्मा मुमुक्षु अन्तःकरण शुद्धिद्वारा ज्ञान को प्राप्तहुये हैं यह कहते हैं जनकादि १ कर्म करके २ ही ३ निश्चय ४ सि० अन्तःकरण शुद्धिद्वारा ज्ञानको ५ प्राप्तहुये हैं ६ सि० और जो कदाचित् तू यह मानताहो कि मैं तो पहलेही ज्ञानी हूं फिर अब कर्म क्यों करूं उत्तर इसका यह है कि लोकसंग्रहको ७ ही ८ देखता हुआ ९ अर्थात् यह विचारकर कि अज्ञानी जन भी महात्माकी देखा देखी आचरण करते हैं ज्ञानियोंके छोड़ देनेसे अज्ञानी भी कर्म

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

छोड़कर कुमार्ग में प्रवृत्तहोंगे उनसे करानेके लिये कर्म करना योग्यहै इस प्रयोजनको स्मरण करताहुआ + कर्म करनेको १० योग्य है तू ११ निश्चय १२ तात्पर्य श्रीभगवान्का यहहै कि हे अर्जुन! जो तू अज्ञानी है तब तो अन्तःकरण की शुद्धि के लिये कर्मकर और जो तू ज्ञानी है तो लोकसंग्रह के लिये कर्मकर गृहस्थाश्रमकी शोभा कर्मसेही है इसीवास्ते जनकादि करते रहे सर्वथा कर्म को अनुपयोग मैंने विरक्त संन्यासियों के वास्ते कहा है॥ २०॥

यद्यदाचरतिश्रेष्ठस्तत्तदेवेतरोजनः॥ सयत्प्रमाणंकुरुतेलोकस्तदनुवर्तते॥ २१॥

श्रेष्ठः १ यद् २ यद् ३ आचरति ४ तत् ५ तत् ६ एव ७ इतरः ८ जनः ९ सः १० यत् ११ प्रमाणम् १२ कुरुते १३ लोकः १४ तद् १५ अनुवर्त्तते १६॥ २१॥ अ० उ० अनजान बड़ोंकी देखा देखी जो जो कर्म पाप वा पुण्य करते हैं उन कर्मों के भागी होते हैं ये लोग कौन कि धनवाले और हुकुमवाले और पण्डित और जाति में जो प्रधान इत्यादि बड़े बड़े आदमी जो कहलाते हैं वे भागी होते हैं क्योंकि इनसेही बुरे भले कर्मोंका प्रचार जगत्में होताहै सोई कहते हैं इस मन्त्रमें श्रेष्ठ १ सि० पुरुष + जो २ जो ३ आचरण करताहै ४ सोही सो ५। ६। ७ अन्य जन ८। ९ सि० कर्म करता है + और सो १० सि० प्रतिष्ठित जन + जिसको ११ अर्थात् कर्मयोग को वा ज्ञानयोगको ११ प्रमाण १२ करता है १३ सि० अनजान + जन १४ तिसकेही अनुसार बर्तताहै १५। १६॥ २१॥

नमेपार्थास्तिकर्तव्यंत्रिषुलोकेषुकिंचन॥ नानवाप्तमवाप्तव्यंवर्तएवचकर्मणि॥ २२॥

पार्थ १ त्रिषु २ लोकेषु ३ मे ४ किंचन ५ कर्त्तव्यम् ६ न ७ अस्ति ८ अवाप्तव्यम् ९ अनवाप्तम् १० न ११ एव १२ च १३ कर्मणि १४ वर्ते १५॥२२॥ अ० उ० लोकसंग्रह के लिये ज्ञानी होकर किसीने कर्मकिया है इस अपेक्षा में श्रीमहाराज यह कहते हैं कि प्रथम तो मैं ही ऐसाहूं हे अर्जुन! १ तीनलोक में २। ३ मुझको ४ कुछ भी ५ कर्त्तव्य ६ नहीं ७ है ८ सि० और प्राप्त होने के योग्य ९ सि० वस्तु जो चाहिये वह मुझको सब क्या नहीं प्राप्तहै तोभी १२।१३ कर्म में १४ वर्तताहूं मैं १५ तात्पर्य मोक्षपर्यन्त मुझको सब पदार्थ प्राप्त हैं और मुझको न किसीका खटकाहै न मुझपर किसीकी आज्ञाहै तौभी मैं कर्म करताहूं

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

लोक संग्रहके लिये कर्म न करना यह केवल विरक्त साधुओं के वास्ते विधिहै ॥ २२ ॥

यदिह्यहंनवर्तेयंजातुकर्मण्यतन्द्रितः॥ममवर्त्मानुवर्तन्तेमनुष्याःपार्थसर्वशः ॥ २३ ॥

यदि १ जातु २ अतन्द्रितः ३ अहम् ४ हि ५ कर्मणि ६ न ७ वर्तेयम् ८ पार्थ ९ सर्वशः १० मनुष्याः ११ मम १२ वर्त्म १३ अनुवर्तन्ते १४ ॥ २३ ॥ अ० उ० आप अपनी इच्छासे कर्म करतेहो जो न करो तो क्याहो यह शङ्का करके कहते हैं जो १ कभी २ अनालस्य हुआ ३ अर्थात् आलस्यरहित होकर ३ मैं ४ ही ५ कर्म में ६ न ७ वर्तूं ८ अर्थात् जो मैंही कर्म न करूं तो हे अर्जुन! ९ सबप्रकार करके १० मनुष्य ११ मेरे १२ मार्गको १३ पीछे वर्तेंगे १४ अर्थात् सबलोग कर्म छोड़देंगे जिस रस्ते मैं चलूंगा उसी रस्ते सब चलेंगे ॥ २३ ॥

उत्सीदेयुरिमेलोका न कुर्य्यांकर्मचेदहम् ॥ संकरस्यचकर्त्तास्यामुपहन्यामिमाःप्रजाः ॥ २४ ॥

चेद् १ अहम् २ कर्म ३ न ४ कुर्याम् ५ इमे ६ लोकाः ७ उत्सीदेयुः ८ संकरस्य ९ च १० कर्त्ता ११ स्याम् १२ इमाः १३ प्रजाः १४ उपहन्याम् १५ ॥ २४ ॥ अ० उ० जो मनुष्य आपके देखादेखी कर्म छोड़देंगे तो उसमें आपने क्या किया और आपकी क्या क्षति है यह शङ्का करके कहते हैं जो १ मैं २ कर्म ३ न ४ करूं ५ सि० तो ये ६ सि० अज्ञानी जीव ७ सि० मेरे देखा देखी कर्म न करने से भ्रष्ट होजावें ८ अर्थात् वर्णसंकर होजावें इसहेतु से मैंनेही प्रजाको भ्रष्टकिया और वर्णसंकरका ९ भी १० कर्त्ता ११ सि० मैंही + हुआ १२ सि० मेरा अवतार वास्ते धर्म की रक्षाके था मैंने धर्मकी रक्षा क्याकरी उलटा मनुष्योंको वर्णसंकर किया और इसी हेतुसे इस प्रजाको १३ । १४ भ्रष्ट करनेवाला मैं हुआ १५ अर्थात् उलटा प्रजाका अन्तःकरण मैला करनेवाला मैं हुआ मैंनेही यह प्रजा मैलीकरी इत्यर्थः ॥ २४ ॥

सक्ताःकर्मण्यविद्वांसोयथाकुर्वन्तिभारत ॥ कुर्याद्विद्वांस्तथासक्तश्चिकीर्षुर्लोकसंग्रहम् ॥ २५ ॥

भारत १ यथा २ अविद्वांसः ३ कर्मणि ४ सक्ताः ५ कुर्वन्ति ६ तथा ७ विद्वान् ८ असक्तः ९ कुर्याद् १० लोकसंग्रहम् ११ चिकीर्षुः १२ ॥ २५ ॥ अ० उ० अज्ञानी

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

जीवोंपर कृपाकरके लोकसंग्रह के लिये गृहस्थ ज्ञानी होकर भी कर्मकरे यह कहते हैं हे अर्जुन! १ जैसे २ अज्ञानी ३ कर्म में ४ सक्तहुय ५ सि० कर्म करते हैं तैसे ७ ज्ञानी ८ असक्तहुआ ९ करे १० सि० कैसाहै वह ज्ञानी लोगोंकी रक्षा ११ करने की इच्छावाला १२ सि० है वह ज्ञानी यह समझताहै कि ये कर्म और लोगों के भले के वास्ते मैं करताहूं ॥ २५ ॥

नबुद्धिभेदंजनयेदज्ञानांकर्मसंगिनाम् ॥ जोषयेत्सर्वकर्माणिविद्वान्युक्तःसमाचरन् ॥ २६ ॥

अज्ञानाम् १ कर्मसंगिनाम् २ बुद्धिभेदम् ३ न ४ जनयेत् ५ विद्वान् ६ युक्तः ७ सर्वकर्माणि ८ समाचरन् ९ जोषयेत् १० ॥ २६ ॥ अ० उ० अज्ञानियोंपर जब कृपाकरनीही ठहरी तो फिर उनको कर्म में क्यों प्रवृत्त करना चाहिये उनको भी ब्रह्मतत्त्वका उपदेश करना योग्यहै यह शंकाकरके श्रीभगवान् कहते हैं कि कर्मसंगी अज्ञानियों को कभी भूलकर भी ब्रह्मज्ञान सिखाना न चाहिये ब्रह्मज्ञानके अधिकारी औरही मुमुक्षु शुद्धान्तःकरणवाले हैं पुत्र स्त्री धनमें जो आसक्त हैं वे नहीं अज्ञानी कर्मसंगियों की १ । २ बुद्धिकाभेद ३ न ४ उत्पन्नकरे ५ विद्वान् ६ सावधानहुआ ७ सि० अपने स्वरूप में + सबकर्मोंको ८ करताहुआ ९ सि० अज्ञानियोंको कर्ममें + प्रेरे १० अर्थात् आपभी करे और उनसे भी करावै तात्पर्य कर्मों में पुत्रादि पदार्थों में देहादि में जो आसक्त हैं उनकी बुद्धिको ज्ञानी कर्मों में से न हटावे अर्थात् उनसे यह न कहै कि आत्मा अकर्त्ता अद्वैत अभोक्ता स्वतंत्र शुद्ध सच्चिदानन्द निर्विकारहै तुम कर्म क्यों करतेहो कर्म तो जड़हैं इसप्रकार उनकी बुद्धिका भेद न करे क्योंकि उनका रागद्वेषादि सहित अन्तःकरण होने से उनको आत्माका ज्ञान न होगा और कर्म छोड़देने से उनको इसलोक में सुख न होगा न परलोकमें न उनके अन्तःकरणमें से तम रज काम क्रोधादि दूर होंगे इस हेतु से अज्ञानी जन कर्म न करने से उभय भ्रष्ट होजावेंगे ॥ २६ ॥

प्रकृतेःक्रियमाणानिगुणैःकर्माणिसर्वशः ॥ अहङ्कारविमूढात्माकर्त्ताहमितिमन्यते ॥ २७ ॥

सर्वशः १ कर्माणि २ प्रकृतेः ३ गुणैः ४ क्रियमाणानि ५ अहङ्कारविमूढात्मा ६ इति ७ मन्यते ८ अहम् ९ कर्ता १० ॥ २७ ॥ अ० उ० अज्ञानी कर्मों में मन से आसक्त होजाता है यह कहते हैं सब प्रकार करके १ कर्म २ प्रकृति के ३ गुणों

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

करके ४ कियेजाते हैं ५ अर्थात् गुणही करताहै अहङ्कार करके विमूढहै अन्तः-करण जिसका ६ सि० वह यह ७ मानताहै ८ सि० कि मैं ९ करता १० सि० हूं इसी हेतु से कर्मों में आसक्त होजाताहै टी० अहङ्कार करके अर्थात् इन्द्रियादिकों में आत्मा का अध्यास करके अर्थात् मैं देखताहूं खाताहूं समझताहूं इसप्रकार इन्द्रियादिकों के साथ आत्मा की एकता करके भ्रान्ति को प्राप्तहुई है बुद्धि जिसकी वह यह मानता है कि मैं करताहूं ॥ २७ ॥

तत्त्ववित्तुमहाबाहो गुणकर्मविभागयोः ॥ गुणा गुणेषुवर्त्तन्तइतिमत्वानसज्जते ॥ २८ ॥

महाबाहो १, गुणकर्मविभागयोः २ तत्त्ववित् ३ तु ४ इति ५ मत्वा ६ न ७ सज्जते ८ गुणाः ९ गुणेषु १० वर्तन्ते ११ ॥ २८ ॥ अ० उ० ज्ञानी कर्मोंमें मनसे नहीं आसक्त होताहै यह कहते हैं हे अर्जुन! १ गुण और कर्मों के विभाग का २ तत्त्व जाननेवाला ३ तो ४ यह ५ मानकर ६ नहीं ७ आसक्त होताहै ८ सि० कर्मों में क्या मानताहै वह इस अपेक्षा में कहते हैं कि इन्द्रिय ९ विषयों में + वर्तती हैं ११ सि० आत्मा निर्विकार शुद्ध है ज्ञानी यह मानता है १० टी० मैं गुणात्मक नहीं हूं अर्थात् गुणरूप मैं नहीं इस प्रकार तो गुणों से आत्मा को पृथक् समझता है और ये कर्म मेरे नहीं इस प्रकार कर्मों से आत्मा को पृथक् समझता है २ ॥ २८ ॥

प्रकृतेर्गुणसंमूढाः सज्जन्तेगुणकर्मसु ॥ तान्कृत्स्नविदोमन्दान्कृत्स्नविन्नविचालयेत् ॥ २९ ॥

प्रकृतेः १ गुणसंमूढाः २ गुणकर्मसु ३ सज्जन्ते ४ तान् ५ अकृत्स्नविदः ६ मन्दान् ७ कृत्स्नवित् ८ न ९ विचालयेत् १० ॥ २९ ॥ अ० उ० कर्मरागी मन्दमति हैं इस हेतु से भी उनको ब्रह्मज्ञान उपदेश नहीं करना यह कहते हैं प्रकृति के १ सि० सत्त्वादि + गुणों करके भ्रान्तहुये २ गुणों के कर्मोंमें ३ आसक्त हैं ४ सि० जो + तिन अल्पज्ञ मन्दमति पुरुषों को ५ । ६ । ७ सर्वज्ञ ज्ञानी ८ न ९ विचाले १० सि० कर्त्ता से अर्थात् उनको ब्रह्मतत्त्व उपदेश नहीं करना वे ब्रह्मज्ञान के अभी अधिकारी नहीं जब वे आप जिज्ञासा करें तब उनको उपदेश करना योग्य है + इत्यभिप्रायः ॥ २९ ॥

मयिसर्वाणिकर्माणि संन्यस्याध्यात्मचेतसा ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

निराशीर्निर्ममोभूत्वा युद्ध्यस्वविगतज्वरः ॥ ३० ॥

मयि १ अध्यात्मचेतसा २ सर्वाणि ३ कर्माणि ४ संन्यस्य ५ निराशीः ६ निर्ममः ७ विगतज्वरः ८ भूत्वा ९ युद्ध्यस्व १० ॥ ३० ॥ अ० उ० मुमुक्षुको जिस प्रकार कर्म करना चाहिये सो कहते हैं + मुझ सर्वज्ञादिगुणविशिष्ट सर्वात्मामें १ विवेकबुद्धि करके २ अर्थात् अन्तर्य्यामी के आधीन हुआ यह कर्म करताहूं मैं यह कर्म परमेश्वरार्थ है मुझको फल की इच्छा नहीं इस बुद्धि करके सर्व कर्मों को ३ । ४ अर्थात् सब कर्मों के फलको + परमेश्वर में अर्पण करके ५ आशारहित ६ ममतारहित ७ सन्तापरहित ८ होकर ९ युद्ध कर १० सि० क्षत्रियों का युद्धही स्वधर्म कर्म है सो इसप्रकार कर जैसे ऊपर कहा टी० कर्म करने के समय किसी प्रकार फलकी इच्छा आशा नहीं रखनी ६ कर्मों के फलमें ममता रहित इसवास्ते होना चाहिये कि उनका फल परमेश्वर को अर्पण होचुका अथवा पदार्थ में ममता नहीं बनसक्ती है ७ कर्म करने के समय धीरज उत्साह चाहिये ८ ॥ ३० ॥

येमेमतमिदंनित्यमनुतिष्ठन्तिमानवाः ॥ श्रद्धावन्तोऽनसूयन्तोमुच्यन्तेतेपिकर्मभिः ॥ ३१ ॥

ये १ श्रद्धावन्तः २ अनसूयन्तः ३ मानवाः ४ मे ५ इदम् ६ मतम् ७ नित्यम् ८ अनुतिष्ठन्ति ९ ते १० अपि ११ कर्मभिः १२ मुच्यन्ते १३ ॥ ३१ ॥ अ० उ० प्रमाणों के सहित मैंने यह उपदेश कियाहै इसके अनुष्ठान करने में बड़ागुणहै यह कहते हैं श्रीमहाराज जो १ श्रद्धावाले २ असूयारहित ३ मनुष्य ४ सि० मैंने जो पीछे उपदेश किया + मेरे ५ इस ६ मतको ७ नित्य ८ अनुष्ठान करेंगे अर्थात् जबतक भलेप्रकार अन्तःकरण में से राग द्वेषादि दूर न होवें तबतक जो कर्म मेरी आज्ञा से करेंगे ९ वे कर्माधिकारी कर्मसंगी १० भी ११ कर्मों करके १२ अर्थात् कर्मों से छूटजावेंगे १३ अर्थात् कर्म करने से उनका अन्तःकरण शुद्ध होजायगा फिर वे अपने आप कर्मों को त्यागकर ज्ञाननिष्ठ होजावेंगे टी० जो श्रीमहाराज कहते हैं सो सत्य है वे संदेह भगवत् आराधनादि कर्मोंका अनुष्ठान करने से अन्तःकरण शुद्धहोकर ज्ञानद्वारा मुक्तिहोती है इसको श्रद्धा कहते हैं २ गुणों में दोष निकालना उसको असूया कहते हैं भगवत् के उपदेश में यह दोष नहीं निकालते हैं कि परमेश्वर फलका तो त्याग करवाते हैं और कर्म करने को कहते हैं ऐसे दोष रहित पुरुषोंको अनसूयन्तः कहते हैं ३ ॥ ३१ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

ये त्वेतदभ्यसूयन्तो नानुतिष्ठन्तिमेमतम् ॥ सर्व ज्ञानविमूढांस्तान्विद्धिनष्टानचेतसः ॥ ३२ ॥

ये १ तु २ मे ३ एतत् ४ मतम् ५ न ६ अनुतिष्ठन्ति ७ अभ्यसूयन्तः ८ तान् ९ अचेतसः १० नष्टान् ११ सर्वज्ञानविमूढान् १२ विद्धि १३ ॥ ३२ ॥ अ० उ० गुण में जो दोष की कल्पना करते हैं वे महानीच हैं सोई कहते हैं जो मेरे मतका अनुष्ठान करते हैं वेतो विद्वान् हैं + और जो १ । २ मेरे ३ इस मतको ४।५ नहीं अनुष्ठान करते हैं ७ सि० प्रत्युत + असूया करते हैं ८ तिन अल्पज्ञ मुर्दों को ९ । १०।११ सब ज्ञानके विषय मूढ़ हैं १२ सि० यह + जान तू १३ टी० मोक्षमार्ग में मुर्दे की तुल्य हैं इसवास्ते उनको नष्ट कहा ३१ कर्म से अन्तःकरण शुद्ध होता है तमोगुण दूरहोता है उपासना से चित्त एकाग्र होता है रजोगुण दूरहोता है यही कर्मउपासना अष्टाङ्गयोगादिका परमप्रयोजनहै फिर ज्ञानसे मोक्ष होता है यह मेरा मत है इससे पृथक् जो किसी का पंथमत सम्प्रदायहै उन सबको सर्वरूप ब्रह्मज्ञानके विषय मूर्ख जान तू १२ । १३ गुणों में जो अपगुणों की कल्पना करते हैं उनको अभ्यसूयन्तः कहते हैं कल्पना ऐसे करते हैं कि जो शुभ उपदेश करैं उनको वाक्यवादी कहते हैं जो मौन रहैं उनको पाखण्डी मूर्ख अभिमानी कहते हैं जो संतोष से बैठारहे उसको आलसी बतावैं जो उद्यम करै उसको लोभी कहैं तात्पर्य मैंने बहुत यह विचार किया है कि कोई ऐसा गुण विद्वानोंका नहीं कि जिसको दुष्टोंने दूषित न कियाहो अक्षरोंका अर्थ फेरकर अनर्थ करैं तो फिर इसमें क्या आश्चर्य है ॥ ३२ ॥

सदृशंचेष्टसेस्वस्याः प्रकृतेर्ज्ञानवानपि ॥ प्रकृतिं यान्तिभूतानि निग्रहःकिंकरिष्यति ॥ ३३ ॥

भूतानि १ प्रकृतिम् २ यान्ति ३ स्वस्याः ४ प्रकृतेः ५ सदृशम् ६ ज्ञानवान् ७ अपि ८ चेष्टसे ९ निग्रहः १० किम् ११ करिष्यति १२ ॥ ३३ ॥ अ० उ० सबही मनुष्य प्रथम कर्म्मोंका अनुष्ठान करके अन्तःकरण शुद्ध करके ज्ञाननिष्ठ क्यों नहीं होते हैं कि जिससे पूर्ण परमानन्द नित्य निर्विकारकी प्राप्ति होती है इससीधे रस्ते पर प्राणी क्यों नहीं चलते हैं नानाप्रकारके अर्थोंकी कल्पनाकरके आपकी आज्ञा को क्यों नहीं मानते हैं इस अपेक्षा में श्रीमहाराज यह कहते हैं कि सब प्राणी १ सि० अपनी २ प्रकृतिको ३ प्राप्त होरहे हैं ४ अपनी प्रकृतिके ५ सदृश ६ ज्ञान-

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

वान् ७ भी ८ चेष्टा करताहै ९ सि० जो अज्ञानीजीव अपने स्वभाव के अनुसार वर्ते तो इसमें क्या कहना है फिर मेरा वा किसीका + निग्रह १० क्या ११ करैंगे १२ तात्पर्य पूर्व कर्मोंके संस्कारों से जो स्वभाव जीवों का होरहा है रजोगुणी वा तमोगुणी वा सत्त्वगुणी उसी स्वभाव को सब प्राप्त होरहे हैं वैसेही वैसे कर्म्म करते हैं जो पुरुष अपने स्वभावके अनुसार कुमार्ग में प्राप्त होरहा है उस को किसीका उपदेश क्या फलदेगा क्योंकि स्वभाव बलवान् है इस हेतु से मेरा उपदेश भी नहीं मानते हैं ॥ ३३ ॥

इन्द्रियस्येन्द्रियस्यार्थे रागद्वेषौव्यवस्थितौ ॥
तयोर्नवशमागच्छेत्तौह्यस्यपरिपन्थिनौ ॥ ३४ ॥

इन्द्रियस्य १ इन्द्रियस्य २ अर्थे ३ रागद्वेषौ ४ व्यवस्थितौ ५ तयोः ६ वशम् ७ न ८ आगच्छेत् ९ तौ १० हि ११ अस्य १२ परिपन्थिनौ १३ ॥ ३४ ॥ अ० उ० जब कि आप स्वभाव को ही बलवान् कहतेहो तो वेदादिकों की विधि निषेध वृथाही है यह शंका करके कहते हैं इन्द्रिय इन्द्रिय की १ । २ सि० अर्थात् सब इन्द्रियोंका अपने अपने + अर्थ में ३ अर्थात् शब्दादि पदार्थों में ३ रागद्वेष ४ स्थित हैं ५ अर्थात् सब इन्द्रियोंके विषय में राग भी है द्वेष भी है तिनके ६ अर्थात् रागद्वेष वश को ७ नहीं ८ प्राप्तहो है अर्थात् रागद्वेष के वश में न होजावे क्योंकि वे १० ही ११ अर्थात् रागद्वेषही ११ इसके १२ अर्थात् मुमुक्षु के मोक्षमार्ग में चोर हैं १३ सि० लूटनेवाले हैं तात्पर्य्य सब इन्द्रियों के अनुकूल पदार्थ में तो राग है और प्रतिकूल में द्वेष है यह बात ज्ञानी के भी होतीहै और अज्ञानी के भी यहांतक तो स्वभाव बलवान् है और रागद्वेष के वश होजाना यह अज्ञानी का काम है वश में न होना यह ज्ञानी का कामहै जैसे निर्म्मल गम्भीर जल में एक मणि पड़ी है उसको देखकर ज्ञानी का भी मन चला और अज्ञानी का भी यहांतक तो स्वभाव की प्रबलता है क्योंकि रजोगुण के प्रभाव से मणिमें दोनों का राग होगया तृष्णा इच्छा उत्पन्न होगई परन्तु ज्ञानी ने तो यह समझा कि जल बहुत है जो मैं इसमें कूदा तो डूब जाऊंगा अज्ञानी को यह समझ न थी कि बहुत जल में डूबजाते हैं वह रजोगुण के वश से तृष्णा रागादि का दबायाहुआ कूदकर डूब गया इस जगह ज्ञानी अज्ञानी शब्दों का तात्पर्य्य समझवाले वे समझवाले में है ब्रह्मज्ञानी का प्रसंग नहीं इसी प्रकार स्त्रियादि पदार्थों में सबका रागद्वेष है परन्तु जिन्होंने शास्त्र गुरुद्वारा यह निश्चय कर रक्खा है कि कांचन

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

कान्तादि पदार्थ मोक्षमार्ग के वैरी हैं वे तो रागादि हुये सन्तेभी प्रवृत्त नहीं होते और जिन्होंने शास्त्र नहीं श्रवण किया वे धोखा धक्के खाते हैं इस हेतु से शास्त्रकी विधि निषेध स्वभाव से बलवान् है शास्त्र का श्रवण करना तात्पर्य्य अनुष्ठान करने से है नहीं तो दिन में हजारों श्रवण करते हैं रात्रि को भूलकर फिर वोही खोटा काम करते हैं तात्पर्य्य यह है कि पदार्थ में रागद्वेष होना यह तो स्वभाव की प्रबलता है शास्त्रदृष्टि करके उसमें प्रवृत्त होना वा न होना यह शास्त्र करता है शीतादि के सहनेमें प्रवृत्ति स्त्रीआदि पदार्थों से निवृत्ति शास्त्र करताहै॥ ३४॥

श्रेयान्स्वधर्मोविगुणः परधर्मात्स्वनुष्ठितात्॥
स्वधर्मेनिधनंश्रेयः परधर्मोभयावहः॥ ३५॥

स्वनुष्ठितात् १ परधर्मात् २ स्वधर्मः ३ विगुणः ४ श्रेयान् ५ स्वधर्मे ६ निधनम् ७ श्रेयः ८ परधर्मः ९ भयावहः १०॥ ३५॥ अ० उ० जब कि स्वभाव के वशहोकर मनुष्य डूबता है इस वास्ते स्वभावको जीतना योग्यहै वेदोक्त कर्मोंका अनुष्ठान करने से स्वभाव जीता जाता है सोई कहते हैं सद्गुणों करके युक्त पराये धर्म से १। २ अपना धर्म ३ किसी गुणकरके रहित ४ सि० भी + श्रेष्ठ ५ सि० है + अपने धर्म में ६ मरना ७ श्रेष्ठ ८ सि० है + परायाधर्म ९ भय को प्राप्त करनेवाला है १० तात्पर्य्य जो अपना निवृत्तिधर्म है का प्रवृत्ति वही श्रेष्ठहै निवृत्तिधर्मवाले को तो प्रवृत्तिधर्म का अनुष्ठान करना न चाहिये और प्रवृत्तिधर्म वाले को निवृत्तिधर्म का अनुष्ठान करना चाहिये जो जो अपने वर्ण आश्रमका धर्म है वही वर्तना योग्य है अपने धर्म का अनुष्ठान करने से स्वभाव जीता जाता है अथवा अपना धर्म्म जो सच्चिदानन्दरूप निर्विकार विगुण भी है अर्थात् सत्त्व रज तम गुण उसमें नहीं वह निर्गुण भी है तौ भी गुणोंवाले परधर्म्म से अर्थात् सत्त्वादि गुणों के धर्म इन्द्रिय शब्दादि विषयों से श्रेष्ठहै इन्द्रियादिकोंका जो धर्म है वह आत्मा का धर्म नहीं परधर्म्म कहलाता है उस परधर्म्म में करना अर्थात् कर्ता होकर इन्द्रियादिकोंके साथ मिलकर जो देहका त्याग करनाहै वह संसार को प्राप्त करनेवाला है भयनाम संसारकाही है और अपने धर्म में मरना अर्थात् ज्ञाननिष्ठा ब्रह्माकारवृत्ति स्वरूप में जो देहका त्यागहै वह श्रेष्ठ है क्योंकि मुक्ति का हेतु है यहां श्रुति प्रमाण है काश्याम्मरणान्मुक्तिः। काशः ब्रह्मतत्त्वप्रकाशः यस्यामवस्थायांसाकाशी॥ काशी उस अवस्था का नामहै कि जिसमें ब्रह्मतत्त्व का प्रकाश होता है उस काशी में मरने से मुक्ति होती है॥ ३५॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

अर्जुनउवाच ॥ अथकेनप्रयुक्तोयंपापंचरतिपूरुषः॥ अनिच्छन्नपिवार्ष्णेयबलादिवनियोजितः ॥ ३६ ॥

अथ १ वार्ष्णेय २ अनिच्छन् ३ अपि ४ अयम् ५ पूरुषः ६ केन ७ प्रयुक्तः ८ पापम् ९ चरति १० बलात् ११ इव १२ नियोजितः १३ ॥ ३६ ॥ अ० उ० श्रीभगवान् कहते हैं कि रागद्वेष के वश नहीं होना पाप नहीं करना अर्थात् परधर्म का अनुष्ठान नहीं करना अपनेही धर्मका करना वेदोक्त मार्ग पर चलना यह सब सत्य कहते हैं परन्तु जीव तो परतन्त्र प्रतीत होता है जो स्वतन्त्र हो तो सब कुछ कर सक्ता है कोई ऐसा प्रबल प्रतीत होताहै कि जीवसे बल करके जबरदस्ती पाप कराते है यह विचार करके अर्जुन श्रीमहाराज से प्रश्न करता है कि हे महाराज! वह कौन है जिसके वश होकर जीव पाप करताहै अथ यह शब्द प्रश्नमें आता है १ हे कृष्णचन्द्र! २ नहीं इच्छा करताहुआ ३ भी ४ यह ५ जीव ६ किस करके ७ प्रेरा हुआ ८ पाप को ९ करता है १० सि० ऐसे प्रतीत होता है कि किसी ने + बल से ११ जैसे १२ सि० पाप में + जोड़ दिया है १३ सि० जैसे बैलको जबरदस्ती गाड़ीमें जोड़ देते हैं प्रतीत होताहै कि ऐसेही जीवसे कोई जबरदस्ती पाप करावेहै तात्पर्य पाप करनेमें क्या हेतुहै यह अर्जुनका प्रश्नहै ॥ ३६ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ कामएषःक्रोधएषरजोगुणसमुद्भवः ॥ महाशनोमहापाप्मा विद्ध्येनमिह वैरिणम् ॥ ३७ ॥

एषः १ कामः २ एषः ३ क्रोधः ४ रजोगुणसमुद्भवः ५ महाशनः ६ महापाप्मा ७ एनम् ८ इह ९ वैरिणम् १० विद्धि ११ ॥ ३७ ॥ अ० उ० श्रीभगवान् कहते हैं कि हे अर्जुन! तुमने जो बूझा कि पाप करनेमें क्या हेतु है सो सुन यह! काम २ सि० और यह ३ क्रोध ४ सि० दोनों यही पाप करने में हेतु हैं यही जबरदस्ती जीव से पाप कराते हैं इस लोक परलोक के पदार्थों की जो कामना है + यही पापकी जड़ है यही काम क्रोधाकार होजाता है कैसा है यह काम रजोगुण से उत्पत्ति है जिसकी ५ अर्थात् कामकी भी जड़ रजोगुण है इस विशेषण का यह तात्पर्य है कि रजोगुण के जीतने से काम भी जीता जाता है और काम के जीतने से क्रोध जीता जाताहै सतोगुण बढ़ाने से रजोगुण कम होताहै फिर कैसा है वह काम बड़ा भोजनहै जिसका ६ अर्थात् कितनाही भोग भोगो कभी इच्छा

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

पूर्ण न होवै प्रत्युत दूनी आग लगे इस हेतु से वह काम महापापी ७ सि० है काम करकेही यह जीव पाप करताहै और सदा यह पापी पाप करताहै + इस को ८ अर्थात् कामको ८ मोक्ष मार्गमें ९ वैरी १० जान तू ११ तात्पर्य्य कामना को वैरी विष से भी सिवाय समझकर इसलोक परलोक की कामना त्याग करना यही मोक्ष का हेतु है ॥ ३७ ॥

धूमेनाव्रियतेवह्निर्यथादर्शोमलेनच ॥ यथोल्वे नावृतोगर्भस्तथातेनेदमावृतम् ॥ ३८ ॥

यथा १ धूमेन २ वह्निः ३ आव्रियते ४ यथा ५ च ६ आदर्शः ७ मलेन ८ उल्वेन ९ गर्भः १० आवृतः ११ तथा १२ तेन १३ इदम् १४ आवृतम् १५ ॥ ३८ ॥ अ० उ० कामका वैरीपना यह है जैसे १ धूमकरके २ अग्नि ३ ढकी है ४ और जैसे ५ ६ शीशा ७ मलकरके ८ सि० मैला होरहा है और जैसे + जेर करके ९ गर्भ १० ढका रहताहै ११ तैसेही १२ तिस करके १३ अर्थात् काम करके १३ यह १४ अर्थात् विवेक ज्ञान आत्मा १४ ढकाहुआ है १५ तात्पर्य जैसे धूमादिने अग्नि आदि को ढककर रक्खा है तैसेही कामने विचार विवेक ज्ञान को ढक रक्खा है ये तीन दृष्टान्त उत्तम मध्यम कनिष्ठ अधिकारियों के वास्ते हैं जेर के भीतर जो बच्चा होता है उसका नाम गर्भ है बच्चे के ऊपर से जेर दूर करने में थोड़ाही यत्न चाहता है यह दृष्टान्त उत्तम के वास्ते है, बीच का मध्यमके वास्ते शेष कनिष्ठके वास्ते है ॥ ३८ ॥

आवृतंज्ञानमेतेनज्ञानिनोनित्यवैरिणा ॥ काम रूपेणकौन्तेयदुष्पूरेणानलेनच ॥ ३९ ॥

कौन्तेय १ एतेन २ कामरूपेण ३ ज्ञानम् ४ आवृतम् ५ ज्ञानिनः ६ नित्यवैरिणा ७ दुष्पूरेण ८ अनलेन ९ च १० ॥ ३९ ॥ अ० हे अर्जुन ! १ इस कामरूप ने २। ३ ज्ञान ४ ढक रक्खा है ५ सि० अर्थात् इसलोक परलोक के पदार्थों की कामना ज्ञान नहीं होने देता है कैसा है यह काम कि अज्ञानियों को तो भोगों के प्रयत्न करने में और भोगों के नाश करने में यह काम वैरीसा प्रतीत होताहै और ज्ञानी को तो भोग समय भी वैरी प्रतीत होता है इस हेतु से + ज्ञानी का ६ नित्य वैरी है ७ सि० ज्ञानी यह समझता है कि इन भोगों नेही परमानन्दस्वरूप परमात्मा से विमुख कर रक्खाहै इस वास्ते सब काम में ज्ञानी को भोग वैरी प्रतीत

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

होते हैं फिर कैसा है यह काम + भोगों करके कभी पूर्ण नहीं होता है ८ और अग्नि के सदृश स्वभाव है जिसका ९। १० सि० जैसे अग्निमें जितना घी और इन्धन डाला जावे उतनाही शिखाय प्रचण्ड होती है यह कामकी गति है जितनी प्राप्ति भोगोंकी होवे उतनीही तृष्णा और कामना बढ़तीजावे + सातवां आठवां नवां ये तीनों पद कामरूपेण इसपदके विशेषण हैं ॥ ३९ ॥

इन्द्रियाणिमनोबुद्धिरस्याधिष्ठानमुच्यते ॥ एतैर्विमोहयत्येषज्ञानमावृत्यदेहिनम् ॥ ४० ॥

अस्य १ अधिष्ठानम् २ इन्द्रियाणि ३ मनः ४ बुद्धिः ५ उच्यते ६ एषः ७ ज्ञानम् ८ आवृत्य ९ एतैः १० देहिनम् ११ विमोहयति १२ ॥ ४० ॥ अ० उ० कामके जीतने के वास्ते कामका अधिष्ठान बताते हैं अर्थात् काम जहां रहता है उन स्थानों को बताते हैं क्योंकि जबतक वैरीका घर न जानाजावे तबतक कैसे जीता जावे इसका १ अर्थात् कामका अधिष्ठान रहनेकी जगह २ इन्द्रिय ३ मन ४ बुद्धि ५ कहते हैं ६ अर्थात् महात्मा यह कहते हैं कि इन्द्रिय मन बुद्धि काम के रहने की जगह हैं कुतः कि प्रथम विषयों को देखा सुना फिर यह संकल्प विकल्प किया कि इस पदार्थ को भोगना योग्य है वा नहीं फिर यह निश्चय कर लिया कि अवश्य इस पदार्थ को प्राप्त करके भोगोगे सो यह ७ सि० काम + ज्ञानको ८ ढककर ९ इन करके १० अर्थात् इन्द्रियादि करके १० जीवको ११ भ्रांत करदेताहै १२ अर्थात् काम करके जीव अन्धासा होजाता है कामना के वश होकर बुरे भलेकी सुधि नहीं रहती है ॥ ४० ॥

तस्मात्त्वमिन्द्रियाण्यादौनियम्यभरतर्षभ ॥ पाप्मानंप्रजहिह्येनंज्ञानविज्ञाननाशनम् ॥ ४१ ॥

तस्मात् १ भरतर्षभ २ आदौ ३ इन्द्रियाणि ४ नियम्य ५ एनम् ६ पाप्मानम् ७ त्वम् ८ प्रजहि ९ हि १० ज्ञानविज्ञाननाशनम् ११ ॥ ४१ ॥ अ० उ० जब कि यह काम इन्द्रियादिकों में रहता है जिस कारणसे १ हे अर्जुन! २ सि० मोह होनेसे + प्रथम आदिमें ३ सि० हि इन्द्रियों को ४ रोककर ५ इस पापी को ६। ७ अर्थात् कामको ७ तू ८ मार त्याग दूरकर ९ क्योंकि १० सि० यही + ज्ञान विज्ञान का नाश करनेवाला है ११ टी० शास्त्र आचार्यों से जो सुन समझ रक्खाहै उसको इस जगह ज्ञान कहते हैं और विशेष युक्तियों करके जो

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

उसी ज्ञान को निश्चय किया है उसको इस जगह विज्ञान कहते हैं ब्रह्मज्ञान और अनुभव विज्ञान की नाम यहां ज्ञान विज्ञान नहीं क्योंकि उनको कोई नाश नहीं करसक्ता है तात्पर्य ज्ञानविज्ञानके पीछे कामादि का उदय विद्वान्के अन्तःकरण में होताही नहीं और जो अज्ञानी को प्रतीत होता हो तो उसका कामाभास समझना योग्य है रागोलिंगमबोधस्य सन्तु रागादयो बुधे। तात्पर्य रागाभास विद्वान् में रहै ज्ञान विज्ञानकी उससे कुछ क्षति नहीं रागादिक अज्ञानके चिह्न हैं रागादि ज्ञान विज्ञान को उदय और परिपाक नहीं होने देते हैं यह अभिप्रायहै आनन्दामृतवर्षिणी के तीसरे अध्याय में ज्ञान विज्ञान का लक्षण भलेप्रकार निरूपण कियाहै ११ जबतक इन्द्रिय और विषयका सम्बन्ध नहीं हुआहै उससे पहिले विचार करके इन्द्रियों का निरोध चाहिये, जब विषयका सम्बन्ध होजाता है तब फिर इन्द्रिय नहीं रुक सक्ती हैं और इन्द्रियोंके रोकनेसेही मन बुद्धिमें सेभी काम जाता रहताहै ॥ ४१ ॥

इन्द्रियाणिपराण्याहुरिन्द्रियेभ्यःपरम्मनः ॥ मनसस्तुपराबुद्धिर्योबुद्धेःपरतस्तुसः ॥ ४२ ॥

इन्द्रियाणि १ पराणि २ आहुः ३ इन्द्रियेभ्यः ४ मनः ५ परम् ६ बुद्धिः ७ मनसः ८ तु ९ परा १० यः ११ बुद्धेः १२ तु १३ परतः १४ सः १५ ॥ ४२ ॥ अ० उ० कुछ आश्रय भी चाहिये कि जिस करके इन्द्रियों को विषयों से रोका जावे कामको जीताजावे इस अपेक्षामें श्रीमहाराज आश्रय बताते हैं स्थूल देहसे इन्द्रियों को १ श्रेष्ठ २ कहते हैं ३ सि० विद्वान् क्योंकि सूक्ष्म हैं और प्रकाशक हैं + इन्द्रियोंसे ४ मनको ५ श्रेष्ठ ६ सि० कहते हैं क्योंकि इन्द्रियों का प्रेरक है और + बुद्धि ७ मन से ८ भी ९ श्रेष्ठ १० सि० है क्योंकि मन की मालिक है बुद्धि को मनीषा कहते हैं + जो ११ बुद्धिसे १२ भी १३ श्रेष्ठ १४ सि० है अर्थात् सबका जो परमप्रकाशक है + सो १५ सि० आश्रा रक्षक आत्माहै इसीको परमपुरुष उत्तमपुरुष पूर्णब्रह्म परमगति परमधाम राम कहते हैं इससे परे पृथक् श्रेष्ठ पदार्थ कुछ नहीं पुरुषान्नपरं किंचित्सा काष्ठा सा परागतिः। यह श्रुति है। सबकर परम प्रकाशक जोई। राम अनादि अवधगति सोई ॥ ४२ ॥

एवम्बुद्धेःपरम्बुध्वा संस्तभ्यात्मानमात्मना ॥ जहिशत्रुंमहाबाहो कामरूपंदुरासदम् ॥ ४३ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

महाबाहो १ एवम् २ बुद्धेः ३ परम् ४ बुध्वा ५ आत्मना ६ आत्मानम् ७ संस्तभ्य ८ कामरूपम् ९ शत्रुम् १० जहि ११ दुरासदम् १२॥४३॥ अ०उ० सि० आत्मा बुद्धि आदिकों का साक्षी प्रेरक और वास्तव अक्रिय निर्विकार बुद्धि आदि पदार्थों से विलक्षणहै + हे अर्ज्जुन! १ इसप्रकार २ बुद्धिसे ३ परमश्रेष्ठ ४ सि० परमानन्दस्वरूप परमात्मा को + जानकर ५ सि० और फिर उसी + बुद्धि से ६ मनको ७ सि० आत्मा में + निश्चल करके ८ कामरूप वैरी को ९। १० मार त्यागकर दूरकर ११ सि० कैसा है यह काम + दुःख करके प्राप्तिहै जिसकी १२ अर्थात् बड़े २ दुःखों करके कामभोग प्राप्त होते हैं ॥ ४३ ॥

इति श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सुब्रह्मविद्यायांयोगशास्त्रेश्रीकृष्णार्जुन संवादेकर्मयोगोनामतृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

चौथे अध्यायका प्रारम्भ हुआ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ इमंविवस्वतेयोगंप्रोक्तवानहमव्ययम् ॥ विवस्वान्मनवेप्राहमनुरिक्ष्वाकवेब्रवीत् ॥ १ ॥

इमम् १ अव्ययम् २ योगम् ३ विवस्वते ४ अहम् ५ प्रोक्तवान् ६ विवस्वान् ७ मनवे ८ प्राह ९ मनुः १० इक्ष्वाकवे ११ अब्रवीत् १२ ॥ १ ॥ अ० उ० पीछे दो अध्यायों में जो निरूपण किया कर्म्म संन्यासयोग अर्थात् ज्ञानयोग ज्ञाननिष्ठा और उसका साधन उपाय कर्मयोग इसी में सब वेदोंका अर्थ होगया प्रवृत्तिलक्षण और निवृत्ति यही दोप्रकारका धर्म्म समस्त वेदार्थ है सोई श्रीभगवान्ने गीतामें कहाहै ये दोनों धर्म्म अनादि हैं सोई श्रीभगवान् कहते हैं सि० और + इस फूल के बीच में पद से सिवाय अर्थ लिखतेहैं हम अब यहां से सि० यह संकेत नहीं लिखेंगे अकेले फूलके बनाने सेही सिवाय अर्थ की पहिंचान हो सक्तीहै + इस अव्ययोग को १। २। ३ प्रथम सृष्टि के आदि में आदित्य के अर्थ ४ मैं ५ कहता भया ६ अर्थात् यह ज्ञानयोग साधनसहित पहले मैंने आदित्य से कहा आदित्य ७ मनुके अर्थ ८ कहते भये ९ अर्थात् आदित्य ने मनु

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

से कहा + मनु १० इक्ष्वाकु के अर्थ ११ कहतेभये १२ अर्थात् मनु ने इक्ष्वाकु से कहा कर्मयोग और ज्ञानयोग को पृथक् पृथक् स्वतन्त्र मोक्षके साधन दो योग नहीं समझना किन्तु केवल एक ज्ञानयोगही मोक्षका साधन है कर्मयोग साधन उसका अंग है इसीवास्ते श्रीभगवान् ने योग शब्दके विषय एक वचन कहा द्विवचन वाला प्रयोग नहीं क्योंकि मोक्षमार्ग दो नहीं + इस ज्ञानयोग का अव्यय अविनाशी फल है इसवास्ते योगको भी अव्यय कहा नवें बारहवें पद में एकवचनका प्रयोगहै अर्थ में बहुवचन आदरार्थ है॥ १ ॥

एवम्परम्पराप्राप्तमिमंराजर्षयोविदुः ॥ सकालेनेहमहतायोगोनष्टःपरन्तप ॥ २ ॥

एवम् १ परम्पराप्राप्तम् २ इमम् ३ राजर्षयः ४ विदुः ५ परन्तप ६ महता ७ कालेन ८ इह ९ सः १० योगः ११ नष्टः १२ ॥ २ ॥ अ० उ० पिछले मंत्र में जैसे कहा इसप्रकार १ परम्परा से प्राप्तहै २ यह ज्ञानयोग + इसको ३ पहले से ही बड़े बड़े + राजर्षि ४ जानते हैं ५ तात्पर्य्य तूभी क्षत्रिय है, तुझको भी यह ज्ञानयोग उपाय समेत जानकर अनुष्ठान करना योग्यहै इस ज्ञानयोग का + हे अर्ज्जुन! ६ बहुत ७ कालकरके ८ बहुत कालसे ७।८ इस लोकमें ९ से १० योग ११ अर्थात् ज्ञानयोग ११ छिपगया है १२ तात्पर्य भेदवादियों का राज बल होजाने से और भेदवादी पंडितों के अनर्थ करने से यह ज्ञानयोग साक्षात् वेदोक्त मोक्ष का साधन लोप होगया है कुछ जाता नहीं रहा नष्ट नहीं हुआ क्योंकि उसका उपदेश करनेवाला अविनाशी अच्युत मैं विद्यमानहूं इसी हेतुसे वह ज्ञानयोग भी अव्यय नित्य है ॥ २ ॥

सएवायंमयातेऽद्ययोगःप्रोक्तःपुरातनः ॥ भक्तोऽसिमेसखाचेतिरहस्यंह्येतदुत्तमम् ॥ ३ ॥

सः १ एव २ पुरातनः ३ अयम् ४ योगः ५ मया ६ ते ७ अद्य ८ प्रोक्तः ९ मे १० भक्तः ११ सखा १२ च १३ असि १४ इति १५ हि १६ एतद् १७ उत्तमम् १८ रहस्यम् १९ ॥ ३ ॥ अ० उ० जो ज्ञान मैंने आदित्य से कहा सोई १।२ पहिला अनादि ३ यह ४ योग ५ मैंने ६ तेरे अर्थ ७ तुझसे ७ अब ८ कहा है ९ मेरा १० भक्त ११ और सखा १२।१३ है तू १४ यह १५ निश्चय १६ रख इसीवास्ते + यह १७ उत्तम १८ अर्थात् ज्ञानयोग मैंने तुझ से कहा

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

अथवा यह ज्ञानयोगही श्रेष्ठ निश्चित श्रेय है इसी वास्ते मैंने तुझसे कहा तूने द्वितीय अध्यायमें मुझसे कहाथा कि जो निश्चित श्रेयहो सो मुझसे कहो ॥ ३ ॥

अर्जुनउवाच ॥ अपरंभवतोजन्मपरंजन्मविवस्वतः ॥ कथमेतद्विजानीयांत्वमादौप्रोक्तवानिति ॥ ४ ॥

भवतः १ जन्म २ अपरम् ३ विवस्वतः ४ जन्म ५ परम् ६ एतद् ७ कथम् ८ विजानीयाम् ९ त्वम् १० आदौ ११ प्रोक्तवान् १२ इति १३ ॥ ४ ॥ अ० उ० श्रीभगवान्के कहनेको असम्भव मानताहुआ अर्जुन कहताहै कि हे महाराज ! + आपका १ जन्म २ पीछे ३ द्वापरके अन्तमें अब हुआ + आदित्यका ४ जन्म ५ पहले ६ सतयुगमें हुआ + यह ७ कैसे ८ जानूं मैं ९ आप १० सृष्टिके आदि में ११ आदित्य से + कहतेभये १२ अर्थात् पहले आपने आदित्य से किसप्रकार कहा + यह १३ मेरा प्रश्न है अर्जुनको इस प्रश्नसे स्पष्ट प्रतीत होताहै कि अर्जुन को ब्रह्मका ज्ञान नहीं क्योंकि पूर्णब्रह्म अनादि अज अमरको अबतक वसुदेवजी का पुत्रही समझता है ॥ ४ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ बहूनिमेव्यतीतानि जन्मानि तवचार्जुन ॥ तान्यहंवेदसर्वाणिनत्वंवेत्थपरन्तप ५ ॥

अर्जुन १ मे २ बहूनि ३ जन्मानि ४ व्यतीतानि ५ तव ६ च ७ तानि ८ सर्वाणि ९ अहम् १० वेद ११ परन्तप १२ त्वम् १३ न १४ वेत्थ १५ ॥ ५ ॥ अ० उ० अर्जुनके प्रश्नका अभिप्राय समझकर श्रीभगवान् कहते हैं + हे अर्जुन ! १ मेरे २ बहुत ३ जन्म ४ व्यतीतहुये हैं ५ और + तेरे ६ भी ७ तिन सबको ८ । ९ मैं १० जानताहूं ११ शुद्ध सत्त्वप्रधान मायोपहित होनेसे हे अर्जुन ! १२ तू १३ नहीं १४ जानताहै १५ मलिनसत्त्वप्रधान अविद्योपहित होनेसे तात्पर्य अनित्य को मैंने और रूपकरके उपदेश कियाहै पहले जन्ममें यह समझ तू ॥ ५ ॥

अजोपिसन्नव्ययात्मा भूतानामीश्वरोपिसन् ॥ प्रकृतिंस्वामधिष्ठाय सम्भवाम्यात्ममायया ॥ ६ ॥

अव्ययात्मा १ अजः २ अपि ३ सन् ४ भूतानाम् ५ ईश्वरः ६ अपि ७ सन् ८ स्वाम् ९ प्रकृतिम् १० अधिष्ठाय ११ आत्ममायया १२ सम्भवामि १३ ॥ ६ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

अ० उ० जब कि ईश्वर निर्विकार जन्मादि रहितहै उसका वारंवार जन्म कैसे हो-सक्ताहै यह शंका करके कहते हैं + निर्विकार है आत्मा जिसका अर्थात् मेरा १ सो मैं निर्विकार + जन्मरहित २ भी ३ हुआ ४ भूतोंका ५ ईश्वर ६ भी ७ हुआ ८ अपनी ९ मायाका १० आश्रयकरके ११ अपनी शक्ति सामर्थ्य करके १२ प्रकट होताहूं १३ टी० त्रिगुणात्मक त्रिगुणवाली शुद्धसत्त्वप्रधान मायाको अपने आधीन करके मायाके सम्बन्ध से मायोपहित होकर अवतार लेताहूं ९। १०। ११ ज्ञान बल वीर्य आदि अलौकिक अचिन्त्यशक्ति करके अपनी इच्छापूर्वक अवतार लेता हूं वास्तव जीववत् मैं देहधारी नहीं यद्यपि जन्मरहित निर्विकार ईश्वर भी मैंहूं तौ भी मायामात्र मेरे जन्महैं वास्तव मैं अजहूं ॥ ६ ॥

यदायदाहिधर्मस्य ग्लानिर्भवतिभारत ॥ अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानंसृजाम्यहम् ॥ ७ ॥

भारत १ यदा २ यदा ३ धर्मस्य ४ ग्लानिः ५ भवति ६ अधर्मस्य ७ अभ्युत्थानम् ८ तदा ९ हि १० आत्मानम् ११ सृजामि १२ अहम् १३ ॥ ७ ॥ अ० उ० किसकालमें आपका जन्म होताहैइस अपेक्षामें कहते हैं + हे अर्जुन! १ जिस जिस कालमें २। ३ धर्मकी ४ हानि ५ होती है ६ और + अधर्म की ७ अधिकता ८ होती है + तिस कालमें ९ हि १० आत्माको ११ प्रकट करताहूं १२ मैं १३ अवतार लेताहूं मैं १२। १३ टी० ज्ञानयोग की साधन के सहित जबकभी होती है तबहीं मैं अवतार लेताहूं मेरे अवतार दो प्रकारके हैं एक नित्य अवतार और दूसरा निमित्त अवतार ज्ञानी विरक्त महात्मा साधु मेरे नित्य अवतार हैं और रामकृष्णादि निमित्त अवतारहैं ४ मनुष्यों के कल्पित पाखण्ड पंथ संप्रदायों की जब वृद्धि होती है तबहीं नित्य वा निमित्त अवतार लेताहूं ॥ ७ ॥

परित्राणायसाधूनां विनाशायचदुष्कृताम् ॥ धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामियुगेयुगे ॥ ८ ॥

साधूनाम् १ परित्राणाय २ दुष्कृताम् ३ च ४ विनाशाय ५ धर्मसंस्थापनार्थाय ६ युगे युगे ७। ८ सम्भवामि ९ ॥ ८ ॥ अ० उ० आप अवतार क्यों लेतेहो इस अपेक्षामें कहते हैं + साधु महात्माओं की १ रक्षा सहाय के लिये २ और दुष्टोंके ३।४ नाश करने के वास्ते ५ इसप्रकार + धर्म के स्थिर करने के वास्ते ६ अथवा ज्ञानयोग को साधनों के सहित स्थिर करने के वास्ते युग युग में ७। ८

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

अर्थात् सत्ययुगादि हरएक युगमें जब जब दुष्टलोग साधु लोगों से वैर विरोध करते हैं तब मैं उसी कालमें + अवतार लेताहूं ९ तात्पर्य्य साधुजनों की रक्षा करनेसे धर्मकी रक्षा होती है धर्मके स्थिर रहनेसे अर्थ काम मोक्षकी प्राप्ति होती हैं दुष्टों को जो दण्ड देनाहै यह भी नारायण की उनपर कृपा है क्योंकि जैसे माता पिता जबतक बालक को ताड़ना नहीं करते तबतक वह नहीं सुधरता जैसे माता पिताकी ताड़ना निर्दयता करके नहीं ऐसेही महेश्वरकी ताड़ना दया करकेही होतीहै जो लोग वासनादिको त्यागकर केवल ब्रह्मपरायण हैं सिवाय परमेश्वर के और किसी राजा मित्र पुत्र धनादि का आश्रय नहीं रखते ऐसे साधु महात्माओं के वास्ते अवतार होता है॥ ८ ॥

जन्मकर्म्मचमेदिव्यमेवंयोवेत्तितत्त्वतः॥ त्यक्त्वा देहंपुनर्जन्म नैतिमामेतिसोर्जुन॥ ९॥

दिव्यम् १ मे २ जन्म ३ कर्म ४ च ५ एवं ६ यः ७ तत्त्वतः ८ वेत्ति ९ अर्ज्जुन १० सः ११ देहम् १२ त्यक्त्वा १३ पुनः १४ जन्म १५ न १६ एति १७ माम् १८ एति १९॥ ९॥ अ० उ० परमेश्वर के जन्म कर्मोंको जो यथार्थ जानता है वह परमपद मोक्षको प्राप्त होताहै सोई कहते हैं + मायामात्र अलौकिक १ मेरे २ जन्म ३ और कर्म को ४। ५ इस प्रकार अर्थात् जब धर्म्म का नाश होने लगताहै तब धर्म और धर्मप्रचारक साधुलोगोंकी रक्षा करनेके लिये और दुष्टोंके नाश करने के लिये अवतार लेताहूं इसप्रकार ६ जो ७ यथार्थ परमार्थदृष्टिसे ८ जानताहै ९ हे अर्ज्जुन! १० सो ११ देहको १२ त्यागकर १३ फिर १४ जन्मको १५ नहीं १६ प्राप्त होताहै १७ वह + मुझ शुद्ध सच्चिदानन्द स्वरूप आत्माको १८ प्राप्त होताहै १९ तात्पर्य वास्तव न परमेश्वरका जन्म होना बन सक्ताहै और न उनमें कर्मका करना बन सक्ताहै क्योंकि परमेश्वर निर्विकार है अध्यारोप में व्यवहारमात्र दृष्टि करके तत्त्वज्ञानकी प्राप्ति के लिये भगवत् के जन्म कर्म विद्वानों ने निरूपण किये हैं और जो सिद्धान्तमें भी यह कहते हैं कि भगवत्के जन्म कर्म वास्तव सत्य हैं ईश्वर अपनी अचिन्त्य शक्तियों करके अपने आधीन हुआ अपनी इच्छासेही जन्म लेता है और कर्म करता है औरोंके भले के लिये वह आप्तकाम है प्रथम तो इस अर्थ में यह शङ्का है कि ईश्वर नित्य निर्विकार न रहा ऐसा प्रतीत होताहै कि किसीकालमें प्रलयादि कालमें ईश्वर निर्विकार कहा जाता होगा सो ईश्वर अब तो विकारवान् स्पष्ट प्रतीत होता है

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

रक्षादि कर्म करने से और प्रलय समय में तो जीव भी निर्विकार होताहै इस प्रकार जीवको भी निर्विकार कहना चाहिये + दूसरी शंका यह है कि यह कौन नहीं जानता है कि ईश्वर के जन्म कर्म अपने वास्ते नहीं पराये के वास्ते हैं ईश्वर आप्तकाम अचिंत्यशक्तिमान् स्वतंत्र स्वाधीन है यह बात सब जानते हैं परन्तु केवल इतने जानने से कोई परमेश्वर को प्राप्त नहीं होता क्योंकि यह ज्ञान ऐसा है कि बालकों को भी है सबकाही मोक्ष होजाना चाहिये श्रीमहाराज के कहने से स्पष्ट प्रतीत होताहै कि भगवत् की प्राप्ति केवल ईश्वर के ज्ञान सेही होतीहै तात्पर्य जिस ज्ञानसे परमेश्वरकी प्राप्ति होती है वह ईश्वरका ज्ञान यहहै कि परमेश्वर को नित्य निर्विकार शुद्ध सच्चिदानन्द आत्मासे अभिन्न जानना योग्य है और जन्म कर्म परमेश्वर के वास्तव नहीं मायामात्र तत्त्वज्ञानकी प्राप्तिके लिये अध्यारोप में कहेजाते हैं यही तात्पर्य वेदोंका और विद्वानों का अनुभव है ॥ ९ ॥

वीतरागभयक्रोधा मन्मयामामुपाश्रिताः ॥ बहवोज्ञानतपसा पूतामद्भावमागताः ॥ १० ॥

ज्ञानतपसा १ पूताः २ माम् ३ उपाश्रिताः ४ मन्मयाः ५ वीतरागभयक्रोधाः ६ बहवः ७ मद्भावम् ८ आगताः ९ ॥ १० ॥ अ० उ० ब्रह्मज्ञानसे पृथक् किसी साधनकी भी अपेक्षा न रखकर केवल ब्रह्मज्ञानसेही असंख्यात जीव मुक्त होगये ब्रह्मज्ञान ही सनातन से मोक्षमार्ग है सोई कहते हैं + ज्ञानरूप तप करके १ अर्थात् ब्रह्मज्ञान करके १ पवित्रहुये २ मुझ शुद्ध सच्चिदानन्दस्वरूप आत्माको ३ आश्रय कियेहुये ४ अर्थात् केवल ज्ञाननिष्ठ हुये + ब्रह्मस्वरूपहुये ५ दूर होगये हैं राग भय क्रोध जिन के ६ ऐसे ब्रह्मज्ञानी + बहुत ७ मोक्षको ८ प्राप्तहुये ९ ॥ टी० तप नाम विचारका है, तपविमर्षणे, इति धातुपाठे द्रष्टव्यम् ब्रह्मज्ञान और ब्रह्मविचार ये दोनों एकही बातहै ज्ञान शब्द और तप शब्दका अर्थ एक करने से अभिप्राय यहहै कि ज्ञान स्वतन्त्र मोक्षका हेतुहै किसी और साधन की इच्छा नहीं रखता शास्त्र में जो यह सुनाजाता है कि तप करके ज्ञान होता है तात्पर्यार्थ इसका यहीहै कि ब्रह्मविचार करके ज्ञान होता है विचार का स्वरूप यह है ऐसे विचार करके कि वह ब्रह्म निर्गुण है वा सगुण है विकारवान् है वा निर्विकार है मुझसे भिन्नहै वा अभिन्न है साकार है वा निराकार है इस प्रकार मननकरने का नाम विचार है इस विचार से निराकार निर्गुण ब्रह्मस्वरूप आत्मा से अभिन्न जानकर पवित्र होकर ब्रह्मको प्राप्तहुये ज्ञानकी बराबर कोई साधन पवित्र नहीं

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

पवित्रसेही पवित्र होसक्ता है इस हेतुसे ज्ञानही मोक्षका हेतुहै पढ़ना सुनना साधनहै कर्म उपासना अन्य प्रकार है ॥ १० ॥

येयथामांप्रपद्यन्ते तांस्तथैवभजाम्यहम् ॥ मम वर्त्मानुवर्त्तन्ते मनुष्याःपार्थसर्वशः ॥ ११ ॥

ये १ माम् २ यथा ३ प्रपद्यन्ते ४ तान् ५ तथा ६ एव ७ भजामि ८ अहम् ९ पार्थ १० सर्वशः ११ मनुष्याः १२ मम १३ वर्त्म १४ अनुवर्तन्ते १५ ॥ ११ ॥ अ० उ० अष्टांगयोग-संख्या कर्म भेदभक्ति अभेदभक्ति ब्रह्मज्ञान पर्यन्त ये सब क्रमसे मोक्षमार्ग हैं परन्तु साक्षात् स्वतन्त्र मुक्ति ब्रह्मज्ञानियों को ही प्राप्त होती है और लोग पीछे क्रमसे ज्ञानद्वारा मुक्त होते हैं सोई कहते हैं + जो १ मुझ शुद्ध सच्चिदानन्द को २ जैसे ३ भजते हैं ४ तिनको ५ तैसेही ६।७ भजताहूं ८ मैं ९ अर्थात् जैसे फलकी मनमें भावना करके मेरी उपासना करते हैं उनको मैं वैसाही फल देताहूं अर्थात् जो मुक्ति चाहते हैं उनको मैं मुक्त करताहूं और जो वृन्दावनके वृक्ष गीदड़ बना चाहते हैं मुक्ति नहीं चाहते उनको मैं वही फल देताहूं परन्तु + हे अर्ज्जुन ! १० सब प्रकार के ११ मनुष्य १२ मेरे १३ ही मार्गमें १४ अर्थात् ज्ञानमार्ग में १४ पीछे वर्तते हैं १५ तब मुक्त होते हैं अर्थात् योग कर्म भक्ति तपआदि सब साधनोंका अनुष्ठान करके पीछे सब ज्ञाननिष्ठाका अनुष्ठान करते हैं तब मुक्त होते हैं ॥ ११ ॥

कांक्षन्तःकर्म्मणांसिद्धिं यजन्तइहदेवताः ॥ क्षिप्रंहिमानुषेलोके सिद्धिर्भवतिकर्मजा ॥ १२ ॥

कर्म्मणाम् १ सिद्धिम् २ कांक्षन्तः ३ इह ४ देवताः ५ यजन्ते ६ मानुषे ७ लोके ८ क्षिप्रम् ९ हि १० सिद्धिः ११ भवति १२ कर्मजा १३ ॥ १२ ॥ अ० उ० मोक्षके वास्ते जो सब भजन नहीं करते उसमें यह कारण है अर्थात् ज्ञानमें निष्ठा और श्रद्धा लोगोंको जिसवास्ते नहीं होती और जिस हेतुसे ज्ञानको थोथा और तुषों का कूटना कहते हैं वह हेतु यहहै कर्म्मों की सिद्धिको २ चाहनेवाले ३ अर्थात् शब्दादि भोग और स्त्री पुत्रादि के चाहनेवाले ३ इस लोकमें ४ साकार देवतों का ५ पूजन करते हैं ६ साक्षात् पूरणब्रह्म शुद्ध सच्चिदानन्द आत्मा की उपासना नहीं करते जिससे साक्षात् परमपद की प्राप्ति होती है मनुष्यलोक में ७।८ शीघ्र ९ ही १० सिद्धि ११ होती हैं १२ कर्मजा अर्थात् कर्म्मों से

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

उत्पत्ति है जिस सिद्धिकी १३ कर्मोंका फल मनुष्यलोकमेंही शीघ्र प्राप्त होजाता है स्त्रीपुत्र धनादि,+ तात्पर्य कर्मों के करने में धन पुत्रादि फलकी प्राप्ति शीघ्रही जाती है ज्ञानका फल परमपद तितिक्षा वैराग्य त्याग चाहता है अर्थात् परमपद की प्राप्ति शब्दादि भोगोंके त्यागनेसे होती है इस हेतुसे उनको ज्ञानमें निष्ठा नहीं होती और को थोथा भूसेका कूटना बताते हैं सिवाय इसके ब्रह्मज्ञान विना वियाके मूर्खोंकी समझमें भी नहीं आता उसका अनुष्ठान करना तो दूररहा तात्पर्य मूर्ख आलसी विषयी ज्ञानमें श्रद्धा नहीं रखते अनित्य पदार्थों में निष्ठा करके नित्य फलकोही प्राप्तहोते हैं और ज्ञाननिष्ठावाले परमपद मोक्षको प्राप्तहोते हैं ॥ १२॥

चातुर्वर्ण्यंमयासृष्टंगुणकर्मविभागशः ॥ तस्य कर्तारमपिमांविद्ध्यकर्त्तारमव्ययम् ॥ १३ ॥

गुणकर्मविभागशः १ चातुर्वर्ण्यम् २ मया ३ सृष्टम् ४ तस्य ५ कर्तारम् ६ अपि ७ माम् ८ विद्धि ९ अकर्त्तारम् १० अव्ययम् ११ ॥ १३ ॥ अ० उ० जो निष्काम् वेदोक्त अनुष्ठान करते हैं और जो सकाम भजन करते हैं ये चारों वर्ण आप के ही रचेहुये हैं इन चारों वर्ण में जो विषमता आपने करदी है इसी हेतु से कोई सकाम है कोई निष्काम है और इस दोष के कारण आपही हैं मनुष्यों का कुछ दोष नहीं यह शङ्का करके कहते हैं +सत्त्वादि गुणों के विभाग से कर्म्मों का विभाग करके १ ॥ टी० ॥ गुणविभागेन कर्मविभागः तेन इति समासः अर्थात् जिसमें जैसा गुण देखा उसी के अनुसार उसके कर्मों का विभाग कर दिया जैसे एक जीवको सतोगुण प्रधान देखा तो उसी सतोगुण के अनुसार शमदमादि उसके कर्मोंका विभाग करदिया और एक नाम ब्राह्मण उसका प्रसिद्ध करदिया इसीप्रकार + चारों वर्ण मैंने ३ रचेहैं ४ अध्यारोपमें मायामात्र तिनका ५ कर्ता ६ भी ७ मुझको ८ जान तू ९ और वास्तव परमार्थमें + अकर्ता १० निर्विकार ११ मुझको जान तू पीछे भी इसी अध्यायमें परमेश्वरको निर्विकार सिद्ध करचुके और आगे पञ्चमादि अध्यायों में भलेप्रकार सिद्ध कियाहै और चारोंवर्णों का भेद अठारहवें अध्याय में स्पष्ट लिखाहै ॥ १३ ॥

नमांकर्माणिलिम्पन्तिनमेकर्मफलेस्पृहा ॥ इति मांयोभिजानातिकर्मभिर्नसबध्यते ॥ १४ ॥

कर्माणि १ माम् २ न ३ लिम्पन्ति ४ न ५ मे ६ कर्मफले ७ स्पृहा ८ यः ९

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

माम् १० इति ११ अभिजानाति १२ सः १३ कर्मभिः १४ न १५ बध्यते १६॥ १४ ॥ अ० वास्तव अकर्ता होनेसेही + कर्म १ मुझको २ नहीं ३ स्पर्श करते ४ और + न ५ मुझको ६ कर्मों के फलमें ७ चाह ८ है + जो ९ मुझ सच्चिदानन्द स्वरूप आत्माको १० ऐसे ११ जानताहै १२ सो १३ कर्मों करके १४ नहीं १५ बन्धनको प्राप्तहोताहै १६ ॥ टी० + जैसे ईश्वर वास्तव अकर्ताहै ऐसेही जीवात्मा को समझना चाहिये नहीं तो ईश्वरको तो कोई भी विकारवान् नहीं जानता ईश्वर को अकर्ता निर्विकार जानने से जीव मोक्षको नहीं प्राप्तहोता आत्मा को वास्तव अकर्ता निर्विकार जानने से मोक्ष होताहै ॥ १४ ॥

एवंज्ञात्वाकृतंकर्मपूर्वैरपिमुमुक्षुभिः ॥ कुरुकर्म्मैवतस्मात्त्वंपूर्वैःपूर्वतरंकृतम् ॥ १५ ॥

एवम् १ ज्ञात्वा २ पूर्वैः ३ मुमुक्षुभिः ४ अपि ५ कर्म ६ कृतम् ७ पूर्वैः ८ पूर्वतरम् ९ कृतम् १० तस्मात् ११ त्वम् १२ एवं १३ कर्म १४ कुरु १५॥१५॥ अ० उ० अहंकारादिरहित होकर कियाहुआ कर्म बन्धका हेतु नहीं आत्मा वास्तव अकर्ता है + इसप्रकार १ जानकर २ पहले जनकादि मुक्तिको इच्छावालोंने ३ ४ भी ५ कर्म ६ कियाहै ७ अन्तःकरणकी शुद्धि के लिये कुछ अभी नया यह कर्म्मयोग तुझको मैं उपदेश नहीं करताहूं जब कि + जनकादि ने ८ पहले त्रेतादि युगों में ९ कियाहै १० तिस कारण से ११ तू १२ भी १३ कर्मको १४ कर १५ टी० पहलों ने अर्थात् प्रथम सत्यादि युगों में जो मुक्तिकी इच्छावाले हुये हैं उन्होंने भी कियाहै जो तुझको ब्रह्मज्ञानहै तो लोकसंग्रह के लिये कर्म्म कर और जो ज्ञान नहीं है तो अन्तःकरणकी शुद्धि के लिये कर्म्मकर यह तात्पर्य श्रीमहाराजका है ॥ १५ ॥

किंकर्म्मकिमकर्मेतिकवयोऽप्यत्रमोहिताः ॥ तत्तेकर्मप्रवक्ष्यामि यज्ज्ञात्वामोक्ष्यसेऽशुभात् ॥ १६ ॥

कर्म १ किम् २ अकर्म ३ किम् ४ इति ५ अत्र ६ कवयः ७ अपि ८ मोहिताः ९ तत् १० कर्म ११ ते १२ प्रवक्ष्यामि १३ यत् १४ ज्ञात्वा १५ अशुभात् १६ मोक्ष्यसे १७ ॥ १६ ॥ अ० उ० स्नान सन्ध्या पाठ पूजा जप साधुसेवा आदि कर्म कहलाते हैं जिसविधि से इनको पूर्व मीमांसावाले करते हैं उसी विधि से मैं भी करताहूं कर्म करने में और क्या विचित्रता विशेषताहै कि जो वारंवार

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

आप मुझसे कहतेहो कि, जैसे पहले लोग कर्म करते आये हैं उसप्रकार तू कर्मकर यह शङ्का करके श्रीमहाराज कहते हैं कि लोक प्रसिद्ध परम्परामात्र करके कर्म मुक्तिके हेतु नहीं विद्वान् ज्ञानी जैसे उपदेशकरें उसप्रकार कर्म करने मुक्तिके हेतुहैं कर्मका स्वरूप समझना कठिनहै मैं तुझको समझाऊंगा + कर्म १ क्या २है और अकर्म ३ क्या ४ है यह ५ जो बातहै + इसमें ६ कवि पण्डित ७ भी ८ भ्रान्त होगये हैं ९ तिस कर्मको १०। ११ तुझसे १२ कहूंगा मैं १३ जिसको १४जानकरके १५ संसार से १६ मोक्ष होजायगा तू १७ तात्पर्य क्या कर्म करना चाहिये और किस प्रकार करना चाहिये कौनसा कर्म न करना चाहिये इसबातके समझने में पण्डितभी सन्देह और विपर्यय को प्राप्त होजाते हैं दृष्टान्तसे इसबात को स्पष्ट करते हैं जैसे एक औषध गरमीको दूर करती है तबभी उसके खानेकी रीति तोल समय बुद्धिमान् वैद्यसे बूझनी योग्यहै क्योंकि बुद्धिमान् वैद्य देशकाल वस्तुका विचारकर कहेगा + प्रसिद्धहै कि एकही दवा किसी देशमें फल करतीहै किसी में नहीं वा दूसरे देशमें उलटा फल करदेती है + इसी प्रकार काल वस्तु में समझलेना दवाके साथ जलादि मिलजाने से और का फल और होजाता है इसीप्रकार कर्मों की व्यवस्थाहै शास्त्र में जो यह बारंबार उपदेश है कि गुरु किये विना सर्व धर्म कर्म निष्फलहैं यह सत्यहै क्योंकि देशकाल वस्तुका विचारकरना ऐसी २ बहुत बात केवल शास्त्रके पढ़ने सुननेसे नहीं मिलती हैं सद्गुरु महापुरुषों से एकान्तमें मिलती हैं और सत् पुरुषोंका यह नियमहै कि अपने अनन्यभक्त को बतातेहैं नहीं तो संसारमें यह कहानी सच्चीहै कि जैसे जिसका गाना वैसाही दूसरेका बजाना अर्थात् जैसे दुनियां के लोग चतुरहैं उन्होंसे सिवाय विद्वान्हैं १६॥

कर्मणोह्यपिबोद्धव्यं बोद्धव्यंचविकर्मणः ॥ अकर्मणश्चबोद्धव्यंगहनाकर्मणोगतिः ॥ १७॥

कर्मणः १ अपि २ बोद्धव्यम् ३ विकर्मणः४ च ५ बोद्धव्यम् ६ अकर्मणः ७ च ८ बोद्धव्यम् ९हि १० कर्मणः११ गतिः १२ गहना १३॥ १७॥ अ०उ०कर्म का स्वरूप यथार्थ जानकर कर्म करना चाहिये भेड़कैसी चाल अच्छी नहीं यह समझाते हैं श्रीमहाराज + कर्म का १ तत्त्व + भी २ जानना योग्य है ३ और विकर्मका ४। ५ तत्त्वभी + जानना योग्यहै ६ और अकर्मका ७। ८ तत्त्वभी + जानना योग्यहै ९ क्योंकि १० कर्म की ११ गति १२ गहना १३ अर्थात् कर्म अकर्म विकर्म तीनोंकी व्यवस्था गंभीर कठिन विषमहै ॥ टी० ॥ वेदोक्तं विधि

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

को कर्म्म कहते हैं १ वेदोक्त निषेध को विकर्म कहते हैं ४ कुछ न करनेको अकर्म कहते हैं ७ तात्पर्य भलेप्रकार समझकर कर्मोंको करना योग्यहै ॥ १७ ॥ -

कर्मण्यकर्मयःपश्येदकर्मणिचकर्मयः ॥ सबुद्धिमान्मनुष्येषु सयुक्तःकृत्स्नकर्मकृत् ॥ १८ ॥

यः१ कर्मणि २ अकर्म ३ पश्येत् ४ यः ५ च ६ अकर्मणि ७ कर्म ८ सः ९ मनुष्येषु १० बुद्धिमान् ११ सन् १२ कृत्स्नकर्मकृत् १३ युक्तः १४ ॥ १८ ॥ अ० उ० जिस कर्मको जानकर संसारसे मुक्तहोजायगा तू वह कर्म तुझसे कहूंगा मैं श्रीभगवान्ने पीछे यह प्रतिज्ञाकी थी सो अब कहते हैं + जो १ कर्म्म में २ अकर्म ३ देखताहै ४ और जो ५ । ६ अकर्म में ७ कर्म देखता है + सो ९ मनुष्यों में १० ज्ञानी ११ है क्योंकि + सो १२ समस्त कर्म करताहुआ १३ भी + युक्त १४ रहताहै अर्थात् समाहित सावधान रहताहै आत्माको अकर्ता जानता हुआ समाधिनिष्ठ रहताहै ॥ टी० ॥ शरीर प्राण इन्द्रिय अन्तःकरणके व्यापार कर्म में २ आत्माको कर्म रहित अकर्ता अकर्म ३ जो जानता है और अकर्मरूप-ब्रह्ममें संसार कर्मको कल्पित जो जानताहै सोई ज्ञानी है सोई समस्त कर्मों का करताहै सोई सावधानहै स्वरूपमें + अथवा निष्काम कर्ममें जो अकर्म देखताहै अन्तःकरण शुद्धिद्वारा और ज्ञानद्वारा मुक्तिका हेतु होनेसे और अकर्म में अर्थात् विना ज्ञान कर्म न करने में जो कर्म को अर्थात् संसारको देखताहै अन्तःकरण शुद्ध न होने से और ब्रह्मज्ञान न होने से कर्मोंका न करना संसार बन्धनका हेतु है ऐसे जो समझताहै सो मनुष्यों में चतुरहै सो समस्त कर्म करताहुआभी युक्त योगी है + तात्पर्य ज्ञान अवस्था में आत्माको अकर्ता समझना इसमें तो कुछ संदेहहै नहीं परन्तु अज्ञान अवस्था में भी आत्माको अकर्ता समझना योग्य है अर्थात् कर्मोंका अनुष्ठान करने के समयभी आत्मा अकर्ता निर्विकारहै यह समझना चाहिये और जब तक ज्ञान न हो तबतक निष्काम असंग होकर आसक्ति रहित कर्मोंका अनुष्ठान करना योग्यहै और ज्ञानकालमें ज्ञानीकी दृष्टि में कर्म्म अकर्म विकर्म सब सम हैं यह अभिप्राय है इस मंत्रका + और इसी अर्थ को अगले पांच श्लोकों में और दूसरे प्रकारकरके स्पष्ट निरूपण करेंगे ॥ १८ ॥

यस्यसर्वेसमारम्भाः कामसंकल्पवर्जिताः ॥ ज्ञानाग्निदग्धकर्माणं तमाहुःपण्डितंबुधाः ॥ १९ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

यस्य १ सर्वे २ समारंभाः ३ कामसंकल्पवर्जिताः ४ तम् ५ बुधाः ६ पण्डितम् ७ आहुः ८ ज्ञानाग्निदग्धकर्माणम् ९ ॥ १९ ॥ अ० जिसके १ समस्त २ कर्म ३ काम संकल्प करके वर्जित अर्थात् बिना कामना और संकल्पके ४ आभासमात्र होतेहैं अर्थात् ज्ञानी जो कर्म करताहै वह कर्म न कुछ दृढ़ इच्छाकरके करता है और न कुछ संकल्प करके किसी फल भोगकी कामना कल्पना करके करताहै स्वाभाविक जिसके सब कर्म होतेहैं + तिसको ५ विद्वान् ६ विद्वान् ७ कहते हैं ८ कैसाहै सो विद्वान् + ज्ञानरूप अग्निकरके भस्मकरदिये हैं कर्म जिसने ९ अर्थात् ज्ञानी के कर्म भी अकर्म हैं ॥ टी० ॥ जिनका प्रारम्भ कियाजावे तिनकोही कर्म्म कहते हैं ३ इच्छा और उस इच्छा का कारण संकल्प इन दोनों करके रहित विद्वान् के कर्म्म हैं इसी हेतुसे अकर्म्म हैं ४ ॥ १९ ॥

त्यक्त्वाकर्मफलासंगंनित्यतृप्तोनिराश्रयः ॥ कर्मण्यभिप्रवृत्तोऽपिनैवकिंचित्करोतिसः ॥ २० ॥

कर्मफलासङ्गम् १ त्यक्त्वा २ नित्यतृप्तः ३ निराश्रयः ४ सः ५ कर्मणि ६ अभिप्रवृत्तः ७ अपि ८ किंचित् ९ एव १० न ११ करोति १२ ॥ २० ॥ अ० उ० समस्त कर्मों का त्याग स्वरूप से होना असंभवहै उसमें आसक्ति और फल का त्याग करदेना यही अकर्म त्याग कहलाता है और इसप्रकार कर्म करनेवाले त्यागी संन्यासी कहलाते हैं सोई कहते हैं + कर्मोंमें और कर्मोंके फलमें आसक्ति को १ त्यागकरके २ नित्य स्वरूप करके तृप्त अर्थात् नित्य जो आत्मा है उस नित्य निजानन्द करके तृप्त ३ आश्रयरहित अर्थात् सिवाय आत्मानन्द के और किसी विषयका नहीं है आलम्बवत् आसरा जिसके ४ सो ५ कर्म में ६ सब तरफ से भलेप्रकार प्रवृत्त ७ भी ८ है अर्थात् दिन रात कर्मोंका कर्त्ता भी है ७ परन्तु + कुछ ९ भी १० नहीं ११ करता १२ ॥ टी० ॥ लोकवासनादि करके रहित ४ शरीर प्राण इन्द्रिय अन्तःकरण से यथायोग्य कर्मों को करताभी ७ आत्मा के साथ उन कर्मोंका लेशमात्र भी सम्बन्ध नहीं विद्वान् यह समझता है इसहेतु से ऐसे कर्म्मकर्त्ता महात्मा को ज्ञानी कहते हैं ॥ २० ॥

निराशीर्यतचित्तात्मा त्यक्तसर्वपरिग्रहः ॥ शारीरंकेवलंकर्म कुर्वन्नाप्नोतिकिल्बिषम् ॥ २१ ॥

निराशीः १ यतचित्तात्मा २ त्यक्तसर्वपरिग्रहः ३ केवलम् ४ शारीरम् ५

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

कर्म ६ कुर्वन् ७ किल्बिषम् ८ न ९ आप्नोति १० ॥ २१ ॥ अ० आशारहित १ जीताहै अन्तःकरण और शरीर जिसने २ त्यागदियाहै सर्व परिग्रह जिसने ३ सो + केवल ४ शरीर के निर्वाहमात्र ५ कर्मको ६ करताहुआ ७ पापको ८ नहीं ९ प्राप्तहोताहै १० ॥ टी० ॥ इसलोक परलोक के पदार्थों की कोई आशा नहीं है जिसके क्योंकि उसने इन्द्रियादि को वश करलिया देहयात्रा से सिवाय सब बखेड़ाहै फटापुरानी वस्त्र रूखासूखा अन्न इसके विना तो निर्वाह निर्विक्षेप होना कठिन है अन्न वस्त्रका ग्रहणभी विक्षेप दूर करने के लिये है क्योंकि जो शीतकाल में शीतनिवारण वस्त्र न हो वा अन्न न खावे तो अतिविक्षेप होताहै विचार नहीं होसक्ता देहयात्रामात्र अन्न वस्त्र विक्षेप के हेतु नहीं इससे सिवाय सब परिग्रह कहलाताहै वह त्यागदियाहै जिसने सो पदार्थों में इष्ट अनिष्ट बुद्धिरहित होकर केवल शरीरका निर्वाह करताहुआ कर्म अकर्म विकर्म करके बन्धनको नहीं प्राप्त होता वेदकी विधिका भी तात्पर्य निवृत्ति में है सो निवृत्ति विद्वान्का बाना है वेद का विधि निषेध भी प्रवृत्तों के वास्ते है निष्काम निवृत्त पुरुषोंपर किसी का विधि निषेध नहीं ॥ २१ ॥

यदृच्छालाभसन्तुष्टो द्वंद्वातीतोविमत्सरः॥ समः सिद्धावसिद्धौच कृत्वापिननिबध्यते ॥ २२ ॥

यदृच्छालाभसन्तुष्टः १ द्वंद्वातीतः २ विमत्सरः ३ सिद्धौ ४ असिद्धौ ५ च ६ समः ७ कृत्वा ८ अपि ९ न १० निबध्यते ११ ॥ २२ ॥ अ० विना इच्छाकिये विना संकल्प विना मांगे जो पदार्थ प्राप्तहो उसको यदृच्छालाभ कहते हैं यदृच्छा लाभ करके तृप्त १ द्वन्द्वरहित २ निर्वैर ३ कर्मों की + सिद्धि और असिद्धिमें ४। ५। ६ सम ७ जो है ऐसा महापुरुष कर्म विकर्म अकर्म + करके ८ भी ९ नहीं १० बन्धनको प्राप्तहोताहै ११ ॥ टी० ॥ हर्ष विषाद शीतोष्ण मानापमान सुख दुःखादि के जोड़ों को द्वन्द्व कहते हैं २ ॥ २२ ॥

गतसंगस्यमुक्तस्य ज्ञानावस्थितचेतसः ॥ यज्ञा याचरतःकर्मसमग्रंप्रविलीयते ॥ २३ ॥

गतसंगस्य १ मुक्तस्य २ ज्ञानावस्थितचेतसः ३ यज्ञाय ४ आचरतः ५ कर्म ६ समग्रम् ७ प्रविलीयते ८ ॥ २३ ॥ अ० दूर होगई है सब पदार्थों में आसक्ति जिसकी १ अर्थात् न इस लोक के पदार्थों में जिसका मन आसक्त है और न

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

परलोक के पदार्थों में १ धर्म अधर्म से + छूटाहुआ २ ब्रह्मज्ञानमेंही स्थित है चित्त जिसका ३ परमेश्वरार्थ वा लोकसंग्रह धर्मकी रक्षाके लिये ४ जो + कर्म ५ करताहै उसका ६ समस्त ७ कर्म अकर्म विकर्म ब्रह्म में + लय होजाता है ८ अर्थात् जिस महात्मा के ऊपर चारं विशेषण हैं उस विद्वान् के कर्म विकर्म सब नाश होजाते हैं तात्पर्य्य ऐसे महात्मा जीवन्मुक्त हैं ॥ २३ ॥

ब्रह्मार्पणंब्रह्महविर्ब्रह्माग्नौब्रह्मणाहुतम् ॥ ब्रह्मैव तेनगंतव्यंब्रह्मकर्मसमाधिना ॥ २४ ॥

अर्पणं १ ब्रह्म २ हविः ३ ब्रह्म ४ अग्नौ ५ ब्रह्मणा ६ हुतम् ७ ब्रह्म ८ तेन ९ ब्रह्म १० एव ११ गन्तव्यम् १२ ब्रह्मकर्मसमाधिना १३॥ २४ ॥ अ० उ० अठारहवें श्लोकमें तो ज्ञानीका लक्षण संक्षेप करके कहा और उन्नीस से लेकर तेईसवें श्लोकतक उसी अर्थको स्पष्ट करने केलिये विस्तारपूर्वक निरूपण किया अब यह कहते हैं कि जिस कारण से ज्ञानी कर्म करताहुआ भी ब्रह्मही को प्राप्त होताहै सो समझ यह है + अर्पण कियाजावे जिसकरके १ सो स्रुवादि पदार्थ करण + ब्रह्म २ ही है + घृतादि भी + ब्रह्म ४ ही है + अग्नि में ५ ब्रह्मने ६ अर्थात् कर्त्ताने ६ होम ७ जो कियाहै सोभी + ब्रह्म ८ ही है + तात्पर्य क्रिया कर्त्ता कर्म करण अधिकरण यह सब ब्रह्महै ऐसे जो समझताहै + तिसको ९ ब्रह्म १० ही ११ प्राप्त होने को योग्य है १२ अर्थात् उस को ब्रह्म प्राप्त होगा क्योंकि + ब्रह्मरूप कर्म में समाधान है चित्त जिसका १३ अर्थात् क्रिया कारकादि सब पदार्थों को ब्रह्मरूप जानता है इस कारण से वह ब्रह्मही को प्राप्त होगा नरक स्वर्गादि फल कर्म अकर्म विकर्मों के उस को स्पर्श नहीं करेंगे ॥ टी० ॥ करण १ कर्म ३ कर्त्ता ६ अधिकरण ५ क्रिया ७ अर्पणादि शब्दों में तात्पर्य्य है पाठक्रमसे अर्थक्रम बलवान् होता है कर्त्ता कर्म्म करण अधिकरणादि को कारक कहते हैं हवनादि को क्रियाकहते हैं क्रिया करणादि पदार्थ सब ब्रह्म है इस ज्ञान से जीव ब्रह्मको प्राप्त होता है इत्यभिप्रायः ॥ २४ ॥

दैवमेवाऽपरेयज्ञंयोगिनःपर्य्युपासते ॥ ब्रह्माग्नावपरेयज्ञंयज्ञेनैवोपजुह्वति ॥ २५ ॥

अपरे १ ब्रह्माग्नौ २ यज्ञम् ३ यज्ञेन ४ उपजुह्वति ५ अपरे ६ योगिनः ७ दैवम् ८ यज्ञम् ९ एव १० पर्य्युपासते ११ ॥ २५ ॥ अ० उ० सर्वत्र ब्रह्म दर्शन को यज्ञ का

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

रूपक बांधकर यज्ञरूप वर्णनकिया अब इस ज्ञानयज्ञकी स्तुति करने के लिये और ज्ञानयज्ञ की महिमा प्रसिद्ध करने के लिये ज्ञानयज्ञ के सहित बारह यज्ञ वर्णन करते हैं अर्थात् ग्यारह यज्ञ सिवाय ज्ञानयज्ञ के जो वर्णन करेंगे वे ज्ञानयज्ञ की प्राप्ति के उपाय हैं ज्ञानयज्ञ उपेय हैं साक्षात् मोक्ष के देने में ज्ञानयज्ञही समर्थ है सोई प्रथम कहते हैं इस मन्त्र में दो यज्ञों का निरूपण है पीठक्रमसे अर्थक्रम बलवान् होता है इस हेतुसे प्रथम ज्ञानयज्ञका अर्थ लिखते हैं + ब्रह्मज्ञानी महात्मा १ ब्रह्मरूप अग्नि में २ आत्मा को ३ ब्रह्मयज्ञ करके ४ अर्थात् ब्रह्मज्ञान करके ४ हवन करते हैं ५ तात्पर्य्य आत्माको शुद्ध सच्चिदानन्द पूर्ण निर्विकार ब्रह्म जो समझते हैं वे ज्ञानी हैं उनके ज्ञानको ज्ञानयज्ञ वर्णनकरते हैं एक ज्ञानयज्ञ तो निरूपण होचुका अब दूसरा निरूपण करते हैं + और एक ६ योगी ७ अर्थात् एक कर्मयोगी ७ दैव ८ यज्ञको ९ ही १० उपासना करते हैं ११ तात्पर्य्य साकार रामादि देवतोंका आराधन कियाहै जिस यज्ञमें उसको दैवयज्ञ कहते हैं साकार देवतों की उपासना का नाम दैवयज्ञहै + एक शब्दका यह तात्पर्य है कि भेदवादी रामादि देवतों को वास्तव मूर्त्तिमान् देवता समझते हैं नित्य निराकार निर्विकार नहीं समझते हैं नहीं तो ज्ञानी और उपासकों में भेद क्या हुआ और ज्ञानयज्ञसे दैवयज्ञ को पृथक् क्यों निरूपण करते श्रीमहाराज + रामादि देवतोंको ज्ञानी नित्य निराकार जानते हैं उपासक उनको वास्तव मूर्त्तिमान् समझते हैं मूर्त्तियोंको कल्पित मायिक नहीं समझते यही भेदहै उपासक और ज्ञानियों में ॥ २५ ॥

श्रोत्रादीनींद्रियाण्यन्ये संयमाग्निषुजुह्वति ॥
शब्दादीन्विषयानन्य इन्द्रियाग्निषुजुह्वति ॥ २६॥

अन्ये १ श्रोत्रादीनि २ इन्द्रियाणि ३ संयमाग्निषु ४ जुह्वति ५ अन्ये ६ शब्दादीन् ७ विषयान् ८ इन्द्रियाग्निषु ९ जुह्वति १० ॥ २६ ॥ अ० उ० इस मन्त्रमें दो यज्ञ निरूपण करेंगे + तीसरा यज्ञ कहते हैं + और एक १ श्रोत्रादि इन्द्रियों को २।३ संयमरूप अग्नि में ४ हवन करते हैं ५ तात्पर्य्य इन्द्रियों का संयम करना यही यज्ञ है कोई यही यज्ञ करते हैं अर्थात् इन्द्रियों को विषयों से निरोध करते हैं + चौथा यज्ञ यहहै जो अब कहते हैं कोई एक ६ शब्दादि ७ विषयों को ८ इन्द्रियरूप अग्नि में ९ हवनकरते हैं १० तात्पर्य वेदोक्त विषयों को भोगना भी यज्ञ है जैसे शास्त्र में भोजनआदि निरूपण किया है नियम करके जो उसी प्रकार वर्तते हैं वह यज्ञ है तात्पर्य इसका भी इन्द्रियों के दमन में ही है ॥ २६ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

सर्वाणीन्द्रियकर्माणिप्राणकर्माणिचापरे ॥ आत्मसंयमयोगाग्नौ जुह्वतिज्ञानदीपिते ॥ २७ ॥

अपरे १ सर्वाणि २ इन्द्रियकर्माणि ३ प्राणकर्माणि ४ च ५ आत्मसंयमयोगाग्नौ ६ जुह्वति ७ ज्ञानदीपिते ८ ॥ २७ ॥ अ० उ० पांचवां एक यज्ञ इस श्लोकमें निरूपण करेंगे+और कोई १ सब इन्द्रियोंके कर्मोंको २।३ और प्राण अपानादि के कर्मों को ४।५ आत्मसंयमयोगाग्नि में ६ हवन करते हैं ७ अर्थात् इन्द्रिय और प्राणादिकी गतिका जो आत्मामें संयम निरोध उपराम करना यही हुई योग रूप अग्नि उपराम शान्त करते हैं तात्पर्य आत्मध्यानमें स्थिर होकर प्राणादि की गतिको निरोध करते हैं कैसीहै वह आत्मसंयमयोगाग्नि+ज्ञान करके प्रज्वलित है तात्पर्य इन्द्रियों की वृत्तियों को रोककर और कर्मेन्द्रियों के और प्राण अपानादि के कर्मों को रोककर आत्मस्वरूप सच्चिदानन्द में जो तत्पर होना यह एक यज्ञ है इन्द्रिय प्राणादि के कर्म आनन्दामृतवर्षिणी के द्वितीय अध्याय में लिखे हैं ॥ २७ ॥

द्रव्ययज्ञास्तपोयज्ञायोगयज्ञास्तथाऽपरे ॥ स्वाध्यायज्ञानयज्ञाश्च यतयःसंशितव्रताः ॥ २८ ॥

द्रव्ययज्ञाः १ तपोयज्ञाः २ योगयज्ञाः ३ तथा ४ अपरे ५ स्वाध्यायज्ञानयज्ञाः ६ च ७ यतयः ८ संशितव्रताः ९ ॥ २८ ॥ अ० उ० पांचयज्ञ इस मन्त्रमें कहेंगे +तीर्थयात्रा साधुसेवादि शुभकर्मों में द्रव्यव्यय खर्च करना यही+द्रव्ययज्ञ है जिनके १ यह एक छठां यज्ञ हुआ व्रत नियम मौनादि को तप कहते हैं+ तपयज्ञ है जिनके २ यह एक सातवां यज्ञ हुआ+अष्टांगयोग यज्ञहै जिनके ३ यह एक आठवांयज्ञ हुआ और तैसेही ४ । ५ कोई ऐसे हैं कि स्वाध्याय यज्ञ और ज्ञानयज्ञ है जिनके ६ अर्थात् स्वाध्याययज्ञ है जिनके कोई ऐसे हैं और ज्ञानयज्ञ है जिनके कोई ऐसे हैं वेदशास्त्रों का पढ़ना पाठ करना इसको स्वाध्याय कहते हैं यह एक नवां यज्ञहै और वेदशास्त्र के अर्थ समझने को भी ज्ञानयज्ञ कहते हैं यह एक दशवां यज्ञहुआ प्रथम यज्ञका नामभी ज्ञानयज्ञहै उसका तात्पर्य ब्रह्मज्ञान में है कैसे हैं इस यज्ञके करनेवाले+यत्न शीलवाले ८ हैं अर्थात् यज्ञ करने में प्रयत्न करनेवाले हैं और+तीक्ष्ण व्रतहैं जिनके ९ अर्थात् जैसे तलवार

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

की धार पर चलना है यह बड़ा तीक्ष्ण काम है ऐसेही इनयज्ञोंका अनुष्ठान करना है ॥ २८ ॥

अपानेजुह्वतिप्राणंप्राणेऽपानंतथापरे ॥ प्राणापानगतीरुद्ध्वाप्राणायामपरायणाः ॥ २९ ॥

तथा १ अपरे २ अपाने ३ प्राणम् ४ प्राणे ५ अपानम् ६ जुह्वति ७ प्राणापानगतीः ८ रुद्ध्वा ९ प्राणायामपरायणाः १० ॥ २९ ॥ अ०उ० एक ग्यारहवां यज्ञ इसमंत्र में निरूपण करते हैं और कोई १ । २ अपान में ३ प्राण को ४ और +प्राणमें ५ अपानको ६ हवन ७ करते हैं वा लय करते हैं मिलाते हैं तात्पर्य प्राण और अपानकी गतिको एक करते हैं ७ प्राण और अपानकी गतिको ८ निरोध करके ९ प्राणायाम में परायण १० हैं यहभी एक यज्ञहै अर्थात् प्राणों का जो निरोध यही परम आश्रयहै जिनके ऐसेहैं कोई तात्पर्य प्राणकी गति रोकने से मन उसके साथही रुकता है इस वास्ते प्राणायाम में तत्पर रहतेहैं ॥ २९ ॥

अपरेनियताहाराः प्राणान्प्राणेषुजुह्वति ॥ सर्वेप्येतेयज्ञविदो यज्ञक्षपितकल्मषाः ॥ ३० ॥

अपरे १ नियताहाराः २ प्राणान् ३ प्राणेषु ४ जुह्वति ५ एते ६ सर्वे ७ अपि८ यज्ञविदः ९ यज्ञक्षपितकल्मषाः १० ॥ ३० ॥ अ०उ०आधे मंत्र में बारहवां एक यज्ञ निरूपण करते हैं फिर आधे मंत्र में सब यज्ञ करनेवालों का माहात्म्य कहते हैं +और कोई १ नियतआहारी २ थोड़ाभोजन करनेवाले २ प्राणों को ३ प्राणमें ४ ही लय करतेहैं ५ तात्पर्य भोजन का संकोच करनेसे प्राणकी गतिभी संकुचित होजाती है और प्राणकी गति कम होने से मनकी गतिका निरोध होताहै यह समझकर कोई एक आहार करने में संकोच करते हैं यह एक बारहवां यज्ञ है +ये ६ सब ७ ही ८ बारह +यज्ञों के जाननेवाले ९ अर्थात् यज्ञोंके करनेवाले +यज्ञों करके नाश करदियेहैं पाप जिन्होंने १० वे सब सनातन ब्रह्म को प्राप्त होंगे अगले मंत्रके साथ इस आधेमंत्रका अन्वयहै ब्रह्मज्ञानी साक्षात् प्राप्त होंगे और कर्मकाण्डी उपासक योगी ब्रह्मज्ञान द्वारा ब्रह्मको प्राप्त होंगे ॥ ३० ॥

यज्ञशिष्टामृतभुजोयान्तिब्रह्मसनातनम् ॥ नायंलोकोऽस्त्ययज्ञस्यकुतोऽन्यःकुरुसत्तम ॥ ३१ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

यज्ञशिष्टामृतभुजः १ सनातनम् २ ब्रह्म ३ यान्ति ४ कुरुसत्तम ५ अयज्ञस्य ६ अयम् ७ लोकः ८ न ९ अस्ति १० अन्यः ११ कुतः १२ ॥ ३१ ॥ अ० उ० आधे मन्त्र में यज्ञ करनेवालोंका माहात्म्य कहते हैं और आधेमंत्र में जो बारह यज्ञों में से एक भी यज्ञ नहीं करते हैं उनकी निन्दा करतेहैं श्रीमहाराज अर्थात् जो अयज्ञोंको फलहोगा सो कहते हैं + यज्ञशिष्टामृत के भोजन करने वाले १ सनातन २ ब्रह्म को ३ प्राप्त होते हैं ४ हे अर्जुन ! ५ नहीं यज्ञकरनेवालों को ६ जो यज्ञ नहीं करते हैं उसको ६ यह ७ लोक ८ भी + नहीं ९ है १० फिर + परलोक ११ तो + कहां से १२ होगा तात्पर्य जो एक भी यज्ञ नहीं करता है उसको जब कि इस लोकमेंही सुख नहीं तो परलोकमें कैसे होसक्ताहै न उसको इसलोकका सुख है न परलोक में मिलेगा वह पशुवत् संसार में उत्पन्नहुआ ॥ ३१ ॥

एवंबहुविधायज्ञावितताब्रह्मणोमुखे ॥ कर्मजान्विद्धितान्सर्वानेवंज्ञात्वाविमोक्ष्यसे ॥ ३२ ॥

एवम् १ ब्रह्मणः २ मुखे ३ बहुविधाः ४ यज्ञाः ५ विततः ६ तान् ७ सर्वान् ८ कर्मजान् ९ विद्धि १० एवम् ११ ज्ञात्वा १२ विमोक्ष्यसे १३ ॥ ३२ ॥ अ० उ० जिसप्रकार बारह यज्ञ पीछे कहे इसीप्रकार १ वेद के २ मुख में ३ अर्थात् वेदों में बहुतप्रकार के यज्ञ ४ । ५ विस्तार ६ अर्थात् बहुतप्रकार के यज्ञों का वेदों में विस्तार है + तिन सबका ७ । ८ अर्थात् उक्त अनुक्तोंको शरीर मन वाणी के + कर्मों से उत्पन्नहुआ ९ जान तू १० तात्पर्य्य आत्मस्वरूप से स्पर्श रहित जान + इस प्रकार ११ आत्मा को + जानकर १२ ज्ञाननिष्ठहुआ संसारसे + छूटजायगा तू १३ अर्थात् परमानन्दस्वरूप मुक्तिको प्राप्तहोगा ॥ टी० ॥ ये सब यज्ञ कायिक वाचिक मानस हैं आत्मा इनका विषय भी नहीं इत्यभिप्रायः ॥ ३२ ॥

श्रेयान्द्रव्यमयाद्यज्ञाज्ज्ञानयज्ञःपरंतप ॥ सर्वंकर्म्माखिलंपार्थज्ञानेपरिसमाप्यते ॥ ३३ ॥

परंतप १ द्रव्यमयात् २ यज्ञात् ३ ज्ञानयज्ञः ४ श्रेयान् ५ पार्थ ६ सर्वम् ७ कर्म्माखिलम् ८ ज्ञाने ९ परिसमाप्यते १० ॥ ३३ ॥ अ० उ० सब यज्ञों से ज्ञानयज्ञ श्रेष्ठहै अर्थात् कर्म भक्ति उपासना योगादिसे ब्रह्मज्ञान श्रेष्ठहै क्योंकि साक्षात् मुक्तिका हेतु है सोई कहते हैं + हे अर्जुन ! १ दैवादियज्ञों से २ । ३ ज्ञानयज्ञ ४

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

श्रेष्ठ ५ है जो सब यज्ञों से प्रथम निरूपण करी है + क्योंकि + हे अर्ज्जुन ! ६ सब कर्म फलसहित ७।८ ब्रह्मज्ञान में ९ समाप्त होते हैं १० अर्थात् ब्रह्मज्ञान से ही दुःखरूप कर्म्म नाशहोते हैं और कोई उपाय कर्म्मों की जड़का नाश करने वाला नहीं ॥ ३३ ॥

तद्विद्धिप्रणिपातेनपरिप्रश्नेनसेवया ॥ उपदेक्ष्यन्तितेज्ञानं ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिनः ॥ ३४ ॥

तद् १ विद्धि २ प्रणिपातेन ३ परिप्रश्नेन ४ सेवया ५ ज्ञानिनः ६ तत्त्वदर्शिनः ७ ते ८ ज्ञानम् ९ उपदेक्ष्यन्ति १० ॥ ३४ ॥ अ० उ० ज्ञान प्राप्त होने के मुख्य साधन कहते हैं ब्रह्मज्ञान प्राप्तिकी सम्प्रदाय पन्थ मार्ग यही है जो श्रीभगवान् इस श्लोक में कहते हैं जो ब्रह्मज्ञान साक्षात् मुक्ति का हेतु है और सब कर्म उपासना योगादि से श्रेष्ठ है + तिसको १ जानतू २ अर्थात् तिस ब्रह्म को प्राप्तहो जो परमानन्द की इच्छा रखता है तू + प्राप्तिका उपाय यह है कि यह ज्ञान श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ पुरुषों से प्राप्त होसक्ता है जो त्रिकाण्ड वेदों के तात्पर्य्य को जानते हैं और जिनको ब्रह्म साक्षात् अनुभव अपरोक्ष प्रत्यक्षहै उनको श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ कहते हैं तात्पर्य्य ऐसे पण्डित विरक्त संन्यासी परमहंस हैं वे ब्रह्मज्ञान उपदेश करसक्ते हैं और जो केवल श्रोत्रिय शास्त्रार्थ के जानने वाले हैं ब्रह्मनिष्ठ नहीं ब्रह्मज्ञानरहित हैं वे ब्रह्मज्ञान अनुभव सहित उपदेश नहीं कर सक्ते साक्षात् ब्रह्मको अपरोक्ष नहीं बतासक्ते और जो केवल ब्रह्मनिष्ठहीहैं शास्त्र नहीं पढ़े वे दृष्टान्त युक्ति अनुमान शंका समाधान पूर्वक नहीं उपदेश करसक्ते इस हेतु से ब्रह्मतत्त्व उपदेश करने के योग्य अर्थात् ब्रह्मतत्त्व उपदेश करनेमें समर्थ श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठहीहै अर्थात् श्रोत्रिय और ब्रह्मनिष्ठभीहों श्रीभगवान् कहते हैं कि ऐसे ब्रह्मनिष्ठों के पास जाकर प्रथम उनको + दण्डवत् नमस्कार करके ३ और फिर + प्रश्न करके ४ और बहुत काल संवत् से सिवाय + सेवा करके ५ ज्ञान सीख अर्थात् प्रथम साधु महात्मा के पास जाकर उनको आदर के सहित प्रणाम कर फिर उन्होंसे यह प्रश्न कर कि हे भगवन् ! मुझको कृपा करके ब्रह्मज्ञान उपदेश कीजिये और बहुत दिनों उनकी सेवाकर तन धन मन वाणी करके तब + ज्ञानी ६ तत्त्वदर्शी ७ अर्थात् श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ ७ तुझको ८ ज्ञान ९ उपदेश करेंगे १० तात्पर्य्य यह तीनों साधन अवश्य चाहते हैं जो इन में एक भी न होगा तोभी ज्ञान प्राप्त होना कठिनहै प्रथम तो साधन रहित पुरुषको

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

महात्मा उपदेशही न करेंगे और जो वे दया करके साधनरहितको उपदेश भी करदेंगे तो उसको कभी बोध न होगा क्योंकि यह बात स्पष्ट प्रसिद्ध है कि बहुत लोग वर्षों वेदान्त शास्त्र पढ़ते सुनते हैं और ब्रह्म वार्ता में बहुत चतुर होजाते हैं परन्तु छोकरे लोगाई कुपात्र धनवालों के दासही बनेरहते हैं उनमेंही ममता रखते हैं + केवल नमस्कारमात्र करकेही विना प्रश्न और सेवाके महात्मा उपदेश नहीं करेंगे क्योंकि दण्डवत् सब करसक्ते हैं प्रश्न करने से जिज्ञासु का तात्पर्य्य प्रतीत होताहै न जानिये कैसा अधिकारी है सिवाय इसके धर्मशास्त्र में निषेध है और बहुत लोग ब्रह्मवार्ता में जो कुशल होतेहैं वे प्रश्न भी भलें भले किया करते हैं परन्तु महात्मा विना चिरकाल सेवाके उपदेश नहीं करतेहैं क्योंकि मंत्र का उपदेश करना विना एक वर्षकी परीक्षा किये निषेध है और यह तो साक्षात् ब्रह्मविद्या है इस वास्ते बहुत चिरकाल सेवाकरके और प्रश्न करके और दण्डवत् नमस्कार करकेही ब्रह्मज्ञान प्राप्त होताहै इत्यभिप्रायः ॥ ३४ ॥

यज्ज्ञात्वानपुनर्मोहमेवंयास्यसिपाण्डव ॥ येन भूतान्यशेषेण द्रक्ष्यस्यात्मन्यथोमयि ॥ ३५ ॥

पांडव १ यत् २ ज्ञात्वा ३ एवम् ४ पुनः ५ मोहम् ६ न ७ यास्यसि ८ येन ९ अशेषेण १० भूतानि ११ आत्मनि १२ द्रक्ष्यसि १३ अथो १४ मयि १५ ॥ ३५ ॥ अ० उ० ज्ञान का फल और महिमा कहते हैं चार श्लोकों में + हे अर्जुन! १ जिसको २ जानकर ३ अर्थात् ज्ञानको प्राप्त होकर + इस प्रकार ४ फिर ५ मोहको ६ नहीं ७ प्राप्त होगा जैसा अब मोह तुझको प्राप्त होरहा है और जिस करके ९ अर्थात् उसी ज्ञान करके ९ समस्त १० भूतों को ११ ब्रह्माजी से लेकर चींटी पर्यन्त + आत्मा में १२ देखेगा तू १३ अर्थात् यह समझेगा कि यह समस्त संसार मुझ सच्चिदानन्द मेंही नाम रूपकरके कल्पित है + पीछे उसके १४ मुझ शुद्ध सच्चिदानन्दस्वरूप में १५ आत्मा की एकता जानेगा तू अर्थात् आत्माको नित्य निर्विकार शुद्ध सच्चिदानन्द जानेगा केवल आत्माही करके + बुद्ध्यादि करके नहीं क्योंकि शुद्धबुद्धि में जड़बुद्धि की गम नहीं ॥ ३५ ॥

अपिचेदसिपापिभ्यः सर्वेभ्यःपापकृत्तमः ॥ सर्वंज्ञानप्लवेनैव वृजिनंसंतरिष्यसि ॥ ३६ ॥

चेत् १ सर्वेभ्यः २ पापिभ्यः ३ अपि ४ पापकृत्तमः ५ असि ६ ज्ञानप्लवेन ७

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

एव ८ सर्वम् ९ वृजिनम् १० सन्तरिष्यसि ११ ॥ ३६॥ अ० उ० जो १ सब पापियों से २। ३ भी ४ बड़का पाप करनेवाला ५ है तू ६ तो भी + ज्ञानरूप जहाज करके ७ निश्चय ८ सब पापको ९। १० तर जायगा तू ११ तात्पर्य यह संसार समुद्रवत् अथाह पापरूप है इसको पार होजायगा अर्थात् ज्ञानकरके तेरे पाप सब नाश होजावेंगे ॥ ३६ ॥

यथैधांसिसमिद्धोऽग्निर्भस्मसात्कुरुतेऽर्जुन ॥ ज्ञानाग्निःसर्वकर्माणिभस्मसात्कुरुतेतथा ॥ ३७ ॥

यथा १ एधांसि २ समिद्धः ३ अग्निः ४ भस्मसात् ५ कुरुते ६ अर्जुन ७ तथा ८ ज्ञानाग्निः ९ सर्वकर्माणि १० भस्मसात् ११ कुरुते १२ ॥ ३७ ॥ अ० जैसे १ सूखी + लकड़ियोंको २ प्रज्वलित ३ अग्नि ४ राख ५ कर देती है ६ हे अर्जुन! ७ तैसेही ८ ज्ञानरूप अग्नि ९ सब कर्म्मों को १० नाश ११ कर देय है १२ ॥ ३७ ॥

नहिज्ञानेनसदृशंपवित्रमिहविद्यते ॥ तत्स्वयंयोगसंसिद्धःकालेनात्मनिविन्दति ॥ ३८ ॥

इह १ ज्ञानेन २ सदृशम् ३ पवित्रम् ४ हि ५ न ६ विद्यते ७ तत् ८ योगसंसिद्धः ९ कालेन १० आत्मनि ११ स्वयम् १२ विन्दति १३ ॥ ३८ ॥ अ० कर्म भेदभक्ति योगादि साधनों के बीचमें अर्थात् मोक्षमार्ग में १ ब्रह्मज्ञान की सदृश २। ३ पवित्र ४ ही ५ नहीं ६ है ७ दूसरा मोक्षका साधन + तिस ब्रह्मज्ञानको ८ समाधि योगकरके सिद्धहुआ ९ काल करके १० आत्माके विषय ११ अपनेआप १२ प्राप्त होजाता है १३ तात्पर्य आत्माका ध्यान करते करते साक्षात् अपरोक्ष ज्ञान अपने आप प्राप्त होजाता है कुछ थोड़ेही कालमें इस वास्ते सदा आत्माका ध्यान करना योग्य है ॥ ३८ ॥

श्रद्धावाँल्लभतेज्ञानंतत्परःसंयतेन्द्रियः ॥ ज्ञानंलब्ध्वापरांशांतिमचिरेणाऽधिगच्छति ॥ ३९ ॥

श्रद्धावान् १ तत्परः २ संयतेन्द्रियः ३ ज्ञानम् ४ लभते ५ ज्ञानम् ६ लब्ध्वा ७ पराम् ८ शान्तिम् ९ अचिरेण १० अधिगच्छति ११ ॥ ३९ ॥ अ० उ० ज्ञान की प्राप्तिके साधन बहिरंग तो चौतीसवें मंत्रमें नमस्कार प्रश्न सेवा ये तीन कहे

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

इन तीनों को तो मायावी भी कारसक्ता है यह शंका करके इस मंत्रमें तीन अन्तरंग ज्ञान के साधन कहते हैं ये साधन जिसमें होंगे वह अवश्यही बे सन्देह ज्ञानको प्राप्त होकर मोक्ष होगा यह कहते हैं + श्रद्धावाला १ ब्रह्मज्ञान में + तत्पर परायण २ भले प्रकार जीतीहै इन्द्रिय जिसने ३ सो इन तीन साधनों करके सम्पन्न + ज्ञानको ४ अवश्यही + प्राप्त होता है ५ ज्ञानको ६ प्राप्त होकर ७ परमशान्ति को ८। ९ जल्दी १० प्राप्त होताहै ११ तात्पर्य ये तीनों साधन परस्पर सापेक्ष हैं तीनोंहीसे ज्ञान होताहै एक वा दो से कचाई रहजातीहै ॥३९॥

अज्ञश्चाश्रद्दधानश्चसंशयात्माविनश्यति ॥ नायंलोकोऽस्तिनपरो नसुखंसंशयात्मनः ॥ ४० ॥

अज्ञः १ च २ अश्रद्दधानः ३ च ४ संशयात्मा ५ विनश्यति ६ संशयात्मनः ७ न ८ अयम् ९ लोकः १० न ११ परः १२ न १३ सुखम् १४ अस्ति १५ ॥ ४० ॥ अ० उ० वेदों के महावाक्य सुनकर और ब्रह्म विद्या वेदान्त शास्त्र सुनकर भी जिसको यह संशय है कि मैं पूर्ण ब्रह्म शुद्ध सच्चिदानन्द घन हूं वा नहीं उसको न इस लोक में सुख होगा न परलोक में क्योंकि जिसको स्वयं प्रकाश आत्मा में संशयरहा उसको परोक्ष वाक्यों में कैसे विश्वास होगा इसहेतु से वह संशयात्मा सदा दुःखी रहेगा यद्यपि मन्दबुद्धि और श्रद्धारहित पुरुषों को भी ज्ञान नहीं होता परन्तु वहां यह आशा रहती है कि कभी न कभी मन्द बुद्धि तो बुद्धिमान् होजायगा और श्रद्धारहित श्रद्धावान् होजायगा संशयात्माही भ्रष्टहोगा तात्पर्य मन्दबुद्धि और श्रद्धारहित और संशयात्मा ये तीनों ज्ञान के अनधिकारी हैं और इन तीनोंमें भी संशयात्मा सबसे निकम्मा है सोई इस मंत्र में कहतेहैं श्रीभगवान् + मन्दबुद्धि १ और २ श्रद्धारहित ३ और ४ संशयात्मा ५ नाशहोजाता है ६ अर्थात् आनन्द से भ्रष्ट होजाताहै ये तीनों ब्रह्मानन्दके लेखे मुर्दे की बराबर हैं और इन तीनोंमें से भी संशयात्मा तो अवश्यही भ्रष्ट है + संशयात्मा को ७ न ८ यह ९ लोक १० न ११ परलोक १२ न १३ सुख १४ है १५ तात्पर्य जो पुरुष अज्ञहोताहै तो उसका गुरु शास्त्र में तो विश्वासहोताहै कालपाकर सुधरसक्ताहै और अज्ञ भी हो और श्रद्धारहित भी हो वहभी किसी कालमें श्रद्धावान् बुद्धिमान् होकर सुधरजाताहै और जो जानबूझकर तर्क करता है और अपने विपर्ययपक्ष में दुराग्रह करताहै उस कुतर्की दुराग्रही को कभी सुख न होगा जब कि संशयात्मा कुतर्की दुराग्रही को इसी लोकमें सुख

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri Siddhanta Foundation and eGangotri Varanasi

नहीं तो परलोक का सुख कहां होगा सदा उसके विषय तर्क दुराग्रह संशय बनेही रहैंगे महात्माओं का ऐसे दुष्टोंको कभी एक बात भी ज्ञान की सुनानी न चाहिये क्योंकि वह कुछ न कुछ उसमें झूंठी कुतर्क करेगा + संशयात्मा उसको भी कहतेहैं कि जिसको यह संशय है कि मैं कर्मों का अनुष्ठान करूं वा न करूं अकर्म ज्ञान में निष्ठाकरूं वा न करूं संशयात्मा इसपदका अक्षरार्थ यह है कि संशय है अन्तःकरण में जिसके सो संशयात्मा सो संशय दो प्रकार का है प्रमाणगत और प्रमेयगत सो ऊपर लिखागया तात्पर्य श्रीमहाराज के उपदेश में जो संशय करेगा उसका नाश होयगा यह शाप है भगवान् का वे सन्देह आत्माको शुद्ध सच्चिदानन्द स्वरूप जानना योग्य है ॥ ४० ॥

योगसंन्यस्तकर्माणंज्ञानसंछिन्नसंशयम् ॥ आत्मवन्तंनकर्माणिनिबध्नन्तिधनंजय ॥ ४१ ॥

धनंजय १ योगसंन्यस्तकर्माणम् २ ज्ञानसंछिन्नसंशयम् ३ आत्मवन्तम् ४ कर्माणि ५ न ६ निबध्नन्ति ७ ॥ ४१ ॥ अ० उ० इस अध्याय में जो अर्थ पीछे विस्तार पूर्वक निरूपण किया उसीको इस मंत्रमें संक्षेप करके कहते हैं समस्त अध्यायका तात्पर्यार्थ समझनेके लिये + हे अर्जुन! १ ज्ञानयोग करके संन्यास किये हैं कर्म जिसने २ और + ब्रह्मज्ञान करके छेदन किये हैं संशय जिसने ३ ऐसे + अप्रमत्त आत्मानिष्ठ को ४ कर्म ५ नहीं ६ बन्धन करते हैं ७ ॥ ४१ ॥

तस्मादज्ञानसंभूतं हृत्स्थंज्ञानासिनात्मनः ॥ छित्त्वैनंसंशयंयोगमातिष्ठोत्तिष्ठभारत ॥ ४२ ॥

भारत १ तस्मात् २ अज्ञानसंभूतम् ३ हृत्स्थम् ४ आत्मनः ५ एनम् ६ संशयम् ७ ज्ञानासिना ८ छित्त्वा ९ योगम् १० आतिष्ठ ११ उत्तिष्ठ १२ ॥ ४२ ॥ अ० उ० जब कि संशयात्मा को न इस लोक में सुख होताहै न परलोक में + हे अर्जुन! १ तिस कारणसे २ अज्ञान करके उत्पन्न हुआ ३ अन्तःकरण में स्थित ४ जो यह संशय कि मैं युद्ध करूं वा न करूं और मैं सदा निर्विकार हूं वा नहीं + अपने ५ इस ६ संशय को ७ ब्रह्मज्ञानरूप तलवारसे ८ छेदन करके ९ कर्मयोग का १० अनुष्ठानकर ११ खड़ाहो १२ युद्ध करनेके लिये तात्पर्य्य आत्मा को शुद्ध सच्चिदानन्दनित्यनिर्विकार पूर्णब्रह्म समझकर युद्धकर इत्यभिप्रायः ४२

इति श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सुब्रह्मविद्यायांयोगशास्त्रेश्रीकृष्णार्ज्जुनसंवादेकर्मसंन्यासयोगोनामचतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

पाचवें अध्यायका प्रारम्भ हुआ ॥

अर्जुनउवाच ॥ संन्यासंकर्म्मणांकृष्ण पुनर्योगंचशंससि ॥ यच्छ्रेयएतयोरेकं तन्मेब्रूहिसुनिश्चितम् । १ ॥

कृष्ण १ कर्मणाम् २ संन्यासम् ३ पुनः ४ योगम् ५ च ६ शंससि ७ एतयोः ८ एकम् ९ यत् १० सुनिश्चितम् ११ श्रेयः १२ तत् १३ मे १४ ब्रूहि १५ ॥ १ ॥ अ० उ० चतुर्थ अध्यायमें अर्जुन को समुच्चय प्रतीत हुआ इस वास्ते प्रश्न करता है + हे कृष्णचन्द्र! १ कर्मों का २ त्याग ३ भी आप कहते हो इन दोनों का स्वरूप दिवरात्रिवत् विरुद्ध है एक पुरुषसे एक समय इन दोनों का अनुष्ठान कैसे होसक्ता है + इन दोनों में ८ एक ९ जो १० भलेप्रकार निश्चय किया हुआ ११ श्रेष्ठहै १२ सो १३ मुझको १४ कहो १५ तात्पर्य्य कर्म्मयोग और कर्मसंन्यास इन दोनों में मेरे वास्ते श्रेष्ठ क्या है यह मेरा तात्पर्य्य है यह तो मैं तृतीय अध्याय में समझगया हूं कि अधिकारी प्रति दोनों श्रेष्ठ हैं मैं किस निष्ठा का अधिकारी हूं इत्यभिप्रायः ॥ १ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ संन्यासःकर्मयोगश्चनिःश्रेयसकरावुभौ ॥ तयोस्तुकर्मसंन्यासात्कर्मयोगो विशिष्यते ॥ २ ॥

संन्यासः १ कर्मयोगः २ च ३ उभौ ४ निःश्रेयसकरौ ५ तयोः ६ तु ७ कर्मसंन्यासात् ८ कर्मयोगः ९ विशिष्यते १० ॥ २ ॥ अ० उ० श्रीभगवान् कहते हैं कि पीछे जो हमने कर्मोंका अनुष्ठान करना और त्याग करना कहाहै सो कुछ विरोध नहीं कहा क्योंकि समसमुच्चय मैंने नहीं कहा अधिकारी प्रति क्रमसमुच्चय कहा है शोक मोह रहित ज्ञाननिष्ठावाले पुरुषोंको तो ज्ञाननिष्ठा परिपाक होने के वास्ते कर्मों को त्याग करना श्रेष्ठहै और तमोगुणी रजोगुणी पुरुषों को ज्ञाननिष्ठा की प्राप्ति के लिये कर्मों का अनुष्ठान करना श्रेष्ठ है इस प्रकार कर्मों का + त्याग १ और योग २ । ३ ये क्रमसे + दोनों ४ मोक्ष को प्राप्त करनेवाले हैं ५ यथायोग्य अधिकारियों को और तू जो यह बूझता है कि इन

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

दोनों में से मेरे वास्ते क्या श्रेष्ठ है सो सुन तुझको + तिनके ६ बीच में तो ७ अर्थात् कर्मयोग और कर्मसंन्यास इन दोनों के बीच में + कर्मसंन्यास से ८ कर्मयोग ९ विशेष है १० अर्थात् क्षत्रियों का धर्म जो युद्ध करना है अभी उस का अनुष्ठान करनाही तुझको श्रेष्ठ है कदाचित् इस मन्त्रका कोई यह अर्थकरै कि कर्मसंन्याससे कर्मयोग सबके वास्ते विशेष है तो इस अर्थ में वदतोव्याघात दोष आता है क्योंकि पुनः पुनः वारंवार पीछे श्रीभगवान् ने कर्मसंन्यासपूर्वक ज्ञाननिष्ठा की प्रशंसा करी और आगे करेंगे जिसकी प्रथम आप स्तुति करैं फिर उसीको आप निकृष्ट बतावें इसी को वदतोव्याघातदोष कहते हैं अर्थात् अपने कहेको आपही खंडन करना यह बड़ा दोष है ॥ श्रेयान्द्रव्यमयाद्यज्ञाज्ज्ञानयज्ञः परंतप। नहिज्ञानेनसदृशं पवित्रमिहविद्यते ॥ इत्यादि वाक्य और भी बहुत हैं इस जगह तात्पर्य्य श्रीभगवान् का यही है कि रजोगुणी तमोगुणी पुरुषों के वास्ते कर्मोंका अनुष्ठान करनाही श्रेष्ठ है क्योंकि तमोगुणी रजोगुणी पुरुषोंको कर्मोंका अनुष्ठान करना अन्तःकरण की शुद्धि का हेतु है और सतोगुणी पुरुषों के लिये कर्मोंका त्याग करनाही श्रेष्ठहै क्योंकि उनको अब कर्मों का अनुष्ठान करना विक्षेपका हेतुहै और ज्ञाननिष्ठाके परिपाक होनेमें प्रतिबन्ध है और दोनों का अनुष्ठान एक काल में एक पुरुषसे नहीं होसक्ता कर्म्मनिष्ठा और कर्मनिष्ठा का स्वरूप दिनरात्रिवत् विरुद्ध है प्रथम अन्तःकरण की शुद्धिके लिये तुझको कर्मयोग विशेष है इत्यभिप्रायः ॥ २ ॥

ज्ञेयःसनित्यसंन्यासी योनद्वेष्टिनकांक्षति ॥ निर्द्वन्द्वोहिमहाबाहो सुखंबन्धात्प्रमुच्यते ॥ ३ ॥

यः १ न २ द्वेष्टि ३ न ४ कांक्षति ५ सः ६ नित्यसंन्यासी ७ ज्ञेयः ८ महाबाहो ९ निर्द्वंद्वः १० हि ११ सुखम् १२ बन्धात् १३ प्रमुच्यते १४ ॥ ३ ॥ अ० उ० रागद्वेषरहित निष्काम जो कर्मोंका अनुष्ठान करता है उसको संन्यासीवत् समझना चाहिये इस प्रकार श्रीभगवान् अब कर्मयोग की स्तुति करते हैं कर्मयोग के वास्ते + प्रतिकूल पदार्थोंमें + जो १ नहीं २ द्वेष करता है ३ अनुकूल पदार्थों की + नहीं ४ इच्छा करता है ५ सो ६ कर्मयोगी + नित्यसंन्यासीवत् निष्कामकर्मयोगी को जान तू + हे अर्जुन! ९ द्वन्द्वरहित १० ही ११ सुखपूर्वक १२ बन्ध से १३ छुटता है १४ तात्पर्य्य रागद्वेषादिद्वन्द्वरहित होकर कर्मों का अनुष्ठान कर तू ॥ ३ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

सांख्ययोगौपृथग्बालाःप्रवदन्तिनपण्डिताः ॥ एकमप्यास्थितःसम्यगुभयोर्विन्दतेफलम् ॥ ४ ॥

सांख्ययोगौ १ पृथक् २ बालाः ३ प्रवदन्ति ४ पण्डिताः ५ न ६ सम्यक् ७ एकम् ८ अपि ९ आस्थितः १० उभयोः ११ फलम् १२ विन्दते १३ ॥ ४ ॥ अ० उ० अवस्थाभेद करके कर्मयोग और ज्ञानयोग इन दोनों का क्रमसमुच्चय है अर्थात् प्रथम निष्काम कर्मों की अनुष्ठान करना अन्तःकरण शुद्ध हुये पीछे कर्मों को त्यागदेना यही सिद्धान्त है सब शास्त्र और महात्मा पुरुषों का और जो यह प्रश्न करताहै कि इन दोनोंमें से एक स्वतंत्र मुक्ति का देनेवाला बताओ यह प्रश्न कम समझकाहै कर्मयोग और ज्ञानयोग इन दोनोंका तात्पर्य एक परमानन्दमें ही है इस हेतु से इन दोनों को फल में पृथक् समझना चाहिये सोई कहते हैं + ज्ञानयोग और कर्म्मयोग को १ पृथक् २ एक स्वतंत्र निरपेक्ष मोक्षका देनेवाला + कमसमझ ३ कहते हैं ४ पूर्वापर शास्त्रका तात्पर्य समझेहुये + विद्वान् ५ नहीं ६ पृथक् स्वतंत्र कहते हैं क्योंकि + भले प्रकार ७ एकको ८ भी ९ आश्रय कियाहुआ १० अर्थात् साङ्गोपाङ्ग एक का भी अनुष्ठान किया हुआ + दोनों के ११ फलको १२ प्राप्त करता है १३ अर्थात् दोनों का फल परमानन्द है सोई दोनों को प्राप्त होजाता है तात्पर्य जो कर्मों का अनुष्ठान निष्काम करेगा उसका अवश्यही अन्तःकरण शुद्ध होकर ज्ञान प्राप्त होगा पीछे उसके मोक्षपरमानन्दकी प्राप्ति यही दोनों का फलहै और ज्ञान का अनुष्ठान भलेप्रकार करेगा वे संदेह पहले उसने इस जन्म में वा जन्मान्तर में कर्म्मयोग करके अन्तःकरण शुद्ध कर लिया है उसको भी मोक्ष परमानन्द की प्राप्ति होगी यही दोनों का फल है एक ज्ञानयोग साक्षात् सच्चिदानन्द को प्राप्त करताहै और एक कर्म्मयोग अन्तःकरण शुद्धकर ज्ञानद्वारा सच्चिदानन्द को प्राप्त करता है इसप्रकार ये दोनों फल में एकहैं स्वरूप इनका एक नहीं ॥ ४ ॥

यत्सांख्यैःप्राप्यतेस्थानं तद्योगैरपिगम्यते ॥ एकंसांख्यंचयोगंच यःपश्यतिसपश्यति ॥ ५ ॥

सांख्यैः १ यत् २ स्थानम् ३ प्राप्यते ४ तद् ५ अपि ६ योगैः ७ गम्यते ८ सांख्यम् ९ च १० योगम् ११ च १२ एकम् १३ यः १४ पश्यति १५ सः १६ पश्यति १७ ॥ ५ ॥ अ० उ० पिछले मंत्रमें जो कहा उसीको फिर भलेप्रकार स्पष्ट

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

करते हैं + ज्ञानी १ जिस स्थान को २। ३ साक्षात् व्यवधान रहित + प्राप्त होते हैं ४ तिसको ५ ही ६ कर्म्मयोगी ७ ज्ञानद्वारा + प्राप्त होते हैं ८ ज्ञानयोग को ९ भी १० और कर्मयोग कोभी ११। १२ फलमें + एक १३ जो १४ देखता है १५ सो १६ देखता है १७ शुद्ध सच्चिदानन्दस्वरूप आत्माको तात्पर्य जो यह समझता है कि दोनका फल एक अद्वैत शुद्ध सच्चिदानन्दस्वरूप पूर्णब्रह्म आत्मा है सो महात्मा यथार्थ आत्मा परमात्मा को जानताहै जैसे दो पुरुष जगन्नाथ जी को जाते हैं एक काशीजी में है और एक प्रयागराज में है कहनेवाले दोनों को यही कहते हैं कि ये दोनों जगन्नाथजी को जाते हैं पहुँचेंगे और जानेवाला भी सब ठिकाने दिन प्रतिदिन यही कहता है कि मैं जगन्नाथजी को जाताहूं एक मंजिलवाला भी यही कहता है और बीस मंजिलवाला भी कहता है और बात यथार्थ है कि दोनों एक जगह पहुँचेंगे परन्तु भेदभी है जो सब मंजिल करचुका है एकही मंजिल जिसको रही है वह उसी मंजिल में उसी दिन साक्षात् व्यवधानरहित जगन्नाथ जी में पहुँचेगा इस प्रकार तो ज्ञानी गतिहै और जिसको दोमंजिल रही है वह प्रथम बीचकी मंजिल पर पहुँचकर फिर जगन्नाथजी में पहुँचेगा इस प्रकार कर्म्मयोगी की गतिहै शुद्ध सच्चिदानन्दस्वरूप पूर्णब्रह्म आत्माको दोनों प्राप्तहोंगे यही दोनोंका स्थान परमपदहै विना ब्रह्मज्ञान के कर्म्मयोगी स्वतंत्र मोक्ष नहीं होसक्ता और जो कहदेते हैं या तो उसको पूर्वापर अर्थकी समझ नहीं वा हठकरके वा रुचि बढ़नेकेलिये कहते हैं अर्थ सच्चा वही है जिसमें पूर्वापरसे विरोध न आवे नहीं तो एक श्लोकका अर्थ तो बालकभी कहसक्ताहै ॥ ५॥

संन्यासस्तुमहाबाहोदुःखमाप्तुमयोगतः ॥ योगयुक्तोमुनिर्ब्रह्मन चिरेणाऽधिगच्छति ॥ ६ ॥

महाबाहो १ संन्यासः २ तु ३ अयोगतः ४ दुःखम् ५ आप्तुम् ६ योगयुक्तः ७ मुनिः ८ ब्रह्म ९ न १० चिरेण ११ अधिगच्छति १२ ॥ ६ ॥ अ० उ० कर्मयोग तो ज्ञानद्वारा परमानन्द मुक्तपद को प्राप्त करता है और कर्मों का संन्यास ज्ञान साक्षात् मुक्तपद देताहै तो कर्मयोग क्यों करना चाहिये संन्यास होकर अर्थात् ज्ञानकाही अनुष्ठान करना यह शङ्का करके श्रीमहाराज कहते हैं + हे अर्जुन! १ विना रागद्वेषादि दूर हुये प्रथमही कर्मोंका + संन्यास २ तो ३ अर्थात् प्रथमविना कर्मयोग का अनुष्ठान किये ४ दुःखपूर्वक ५ प्राप्तहोने को ६ शक्य है अर्थात् विना कर्मयोग किये ज्ञान प्राप्तहोना कठिन है + कर्मों के अनुष्ठान करने में बहुत देर

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

लगती है ब्रह्मकी प्राप्ति बहुतकाल में होगी यह शंकाकरके कहते हैं + योगयुक्त ७ मुमुक्षु ८ ब्रह्मको ९ नहीं १० देर करके ११ प्राप्त होगा १२ तात्पर्य कर्मयोगी मुमुक्षु संन्यासी ज्ञाननिष्ठ होकर ब्रह्मको शीघ्रही प्राप्त होगा अथवा इसजगह ब्रह्म संन्यासका नाम है योगयुक्त मुनि संन्यासको शीघ्र सुखपूर्वक प्राप्तहोगा ॥ ६ ॥

योगयुक्तोविशुद्धात्मा विजितात्माजितेन्द्रियः ॥ सर्वभूतात्मभूतात्मा कुर्वन्नपिनलिप्यते ॥ ७ ॥

योगयुक्तः १ विशुद्धात्मा २ विजितात्मा ३ जितेन्द्रियः ४ सर्वभूतात्मभूतात्मा ५ कुर्वन् ६ अपि ७ न ८ लिप्यते ९ ॥ ७ ॥ अ० उ० कर्मयोगी बंधनको प्राप्त होता है यह शंकाकरके कहते हैं कि योगी अन्तःकरण शुद्धिद्वारा ज्ञानी होजाता है इस हेतुसे बन्धनको नहीं प्राप्त होता + योगयुक्त १ विशेष करके शुद्ध है शरीर जिस का २ विशेष करके जीताहै शरीर जिसने ३ जीती हैं इन्द्रिय जिसने ४ सब भूतों का आत्मभूतहै आत्मा जिसका ५ अर्थात् ब्रह्माजीसे लेकर चींटीपर्यंत सब भूतों का आत्मा उसीका आत्माहै सो लोकरक्षाके लिये अथवा स्वभाव सेही कर्म + करताहुआ ६ भी ७ नहीं ८ बन्धन को प्राप्त होता ९ ॥ ७ ॥

नैवकिंचित्करोमीति युक्तोमन्येततत्त्ववित् ॥ पश्यञ्छृण्वन्स्पृशञ्जिघ्रन्नश्नन्गच्छन्स्वपञ्छ्वसन् ॥ ८ ॥ प्रलपन्विसृजन्गृह्णन्नुन्मिषन्निमिषन्नपि ॥ इन्द्रियाणींद्रियार्थेषुवर्त्तन्तइतिधारयन् ॥ ९ ॥

किंचित् १ एव २ न ३ करोमि ४ इति ५ युक्तः ६ तत्त्ववित् ७ मन्येत ८ इन्द्रियाणि ९ इन्द्रियार्थेषु १० वर्तन्ते ११ इति १२ धारयन् १३ पश्यन् १४ शृण्वन् १५ स्पृशन् १६ जिघ्रन् १७ अश्नन् १८ गच्छन् १९ स्वपन् २० श्वसन् २१ प्रलपन् २२ विसृजन् २३ गृह्णन् २४ उन्मिषन् २५ निमिषन् २६ अपि २७ ॥ ८ । ९ ॥ अ० उ० जिस समझसे कर्मोंके साथ बन्धन नहीं होता सो कहते हैं दो श्लोकोंका अन्वय एक है + कुछ १ भी २ नहीं ३ करताहूं मैं ४ यह ५ समाहित सावधान ६ ज्ञानी ७ मानता है ८ इन्द्रिय ९ इन्द्रियों के अर्थों में १० बर्तती हैं ११ अर्थात् शब्दादि विषयोंका भोगना इन्द्रियोंका धर्म है आत्मा असंग निर्विकार शुद्धहै + यह १२ धारण करताहुआ १३ अर्थात् पूर्वोक्त निश्चय करके + कौनसे वे कर्म हैं

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

कि जिनको करताहुआ यह मानताहै कि मैं असंगहूं सो कहते हैं + देखताहुआ १४ सुनताहुआ १५ स्पर्श करताहुआ १६ सूंघताहुआ १७ खाताहुआ १८ चलताहुआ १९ सोताहुआ २० श्वासलेताहुआ २१ बोलताहुआ २२ त्यागताहुआ २३ ग्रहण करताहुआ २४ नेत्रोंको खोलताहुआ २५ मीचताहुआ २६ अपि शब्द करके अनुक्तोंको भी जान लेना २७ तात्पर्य्य जाग्रत् स्वप्न सुषुप्ति अवस्थामें जितनी क्रिया होती हैं इस संघात के विषय सब अनात्म धर्म है किसप्रकार इस अपेक्षा में कहते हैं सुनो दर्शनादि चक्षुआदि इन्द्रियोंका धर्म है आत्माका नहीं चलना पैरोंका धर्म है सोना बुद्धि का श्वास लेना प्राण का बोलना वाणी का त्यागना गुदा उपस्थ का ग्रहण करना हाथों का खोलना मीचना नेत्रों का कूर्म प्राण का धर्म है आत्मा सदा अकर्ता है ज्ञानी यही समझते हैं इसी समझ से निर्बंध होजाते हैं ॥ ८ । ९ ॥

ब्रह्मण्याधायकर्माणि संगंत्यक्त्वाकरोतियः ॥ लिप्यतेनसपापेनपद्मपत्रमिवाम्भसा ॥ १० ॥

यः १ कर्माणि २ ब्रह्मणि ३ आधाय ४ संगम् ५ त्यक्त्वा ६ करोति ७ सः ८ पापेन ९ न १० लिप्यते ११ पद्मपत्रम् १२ इव १३ अम्भसा १४ ॥ १० ॥ अ० उ० जिसके यह अभिमान है कि मैं कर्त्ता हूं अर्थात् जो आत्मा को अकर्त्ता नहीं जानता ब्रह्मज्ञान रहित है उस को तो कर्म बन्धन करेगा और मैला अन्तःकरण होनेसे उसका कर्मोंके संन्यास में ज्ञाननिष्ठा में अधिकार नहीं वह तो बड़े सङ्कट में फँसा यह शङ्का करके श्रीभगवान् उसके वास्ते यह कहते हैं + जो १ कर्मोंको २ परमेश्वर में ३ अर्पण करके ४ और कर्मों के फल में + संग आसक्ति को ५ त्याग करके ६ करता है ७ सो ८ पाप के साथ ९ नहीं १० स्पर्श करता है ११ अर्थात् पाप पुण्य दोनों उस को छूते भी नहीं + कमल का पत्र १२ जैसे १३ जल के साथ १४ नहीं स्पर्श करता ॥ १० ॥

कायेनमनसाबुद्ध्याकेवलैरिन्द्रियैरपि ॥ योगिनःकर्मकुर्वन्तिसंगंत्यक्त्वात्मशुद्धये ॥ ११ ॥

कायेन १ मनसा २ बुद्ध्या ३ इन्द्रियैः ४ केवलैः ५ अपि ६ योगिनः ७ कर्म ८ कुर्वन्ति ९ संगम् १० त्यक्त्वा ११ आत्मशुद्धये १२ ॥ ११ ॥ अ० उ० अन्तःकरण की शुद्धि के लिये जो कर्म करते हैं वे बन्धन को नहीं प्राप्त होते यह वि-

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

चारकर + शरीर करके १ मन करके २ बुद्धि करके ३ इन्द्रियों करके ४ मम-तावर्जित करके ५ अर्थात् केवल ब्रह्मार्पण करताहूं मैं यह समझ करके ५ ही ६ योगी ७ कर्म को ८ करते हैं ९ कर्मोंके फलमें + आसक्ति को १० त्याग करके ११ अन्तःकरण शुद्धि के लिये १२ ॥ टी० ॥ स्नानादि १ ध्यानादि २ तत्त्व का निश्चय करना इत्यादि ३ श्रवणादि ४ ये कर्म केवल अन्तःकरण की शुद्धि और चित्तकी एकाग्रताके लिये करते हैं सिवाय इसके और कुछ फल चाहना बंध का हेतु है तात्पर्य इन कर्मों में अभिनिवेश रहित होकर कर्म करते हैं इस पांचवें पद का यह तात्पर्यार्थ है ॥ ११ ॥

युक्तःकर्म्मफलंत्यक्त्वा शांतिमाप्नोतिनैष्ठिकीम् ॥ अयुक्तःकामकारेण फलेसक्तोनिबध्यते ॥ १२ ॥

युक्तः १ कर्मफलम् २ त्यक्त्वा ३ नैष्ठिकीम् ४ शान्तिम् ५ आप्नोति ६ अयुक्तः ७ कामकारेण ८ फले ९ सक्तः १० निबध्यते ११ ॥ १२ ॥ अ० उ० कर्म एक है कोई तो उसको करके मुक्त होताहै कोई उसको करके बंध होताहै यह कैसी व्यवस्था है ऐसी शंका करके श्रीभगवान् यह कहते हैं + समाहित समाधान भगवद्भक्त १ कर्मों के फलको २ त्याग करके ३ मोक्षरूप शान्तिको ४ । ५ ज्ञान द्वारा + प्राप्त होताहै ६ बहिर्मुख विषयी कामी ७ कामकी प्रेरणा करके ८ फल में ९ आसक्त १० सदा बंधन को प्राप्त रहता है ११ तात्पर्य निष्काम कर्म ज्ञान द्वारा मोक्ष करदेता है उसी कर्म में जो इस लोक वा परलोक के पदार्थों की चाहना होजाती है सो कर्म बंधनको प्राप्त कर देताहै ॥ १२ ॥

सर्वकर्माणिमनसासंन्यस्यास्तेसुखंवशी ॥ नवद्वारेपुरेदेहीनैवकुर्वन्नकारयन् ॥ १३ ॥

वशी १ देही २ सर्वकर्माणि ३ मनसा ४ संन्यस्य ५ सुखम् ६ नवद्वारे ७ पुरे ८ आस्ते ९ न १० एव ११ कुर्वन् १२ न १३ कारयन् १४ ॥ १३ ॥ अ० उ० जिसका अन्तःकरण शुद्ध नहीं उसको कर्म संन्यास से कर्मयोग विशेष है यह विस्तारपूर्वक निरूपण किया अब यह कहते हैं कि जिसका अन्तःकरण शुद्धहै उसको कर्मसंन्यास श्रेष्ठ है + शुद्धान्तःकरणवाला १ देहका स्वामी जीव शुद्ध सच्चिदानन्दस्वरूप अर्थात् ज्ञानी २ सबकर्मों को ३ मन से त्यागकर ५ सुखपूर्वक ६ नवद्वारपुरमें ७ । ८ अर्थात् नव दरवाजे हैं जिस में ऐसे पुरदेह में +

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

बैठा है ९ किसप्रकार बैठा है क्या करें है सो कहते हैं + न १० तो ११ कुछ + करताहुआ १२ न १३ कराताहुआ १४ बैठाहै अर्थात् ज्ञानी इस देहमें न कुछ करता है न कुछ कराता है तात्पर्य न कर्त्ता है न प्रेरक है अपने स्वरूप में जीवते हुयेही मग्न है न आपको कर्त्ता मानता और न शरीरादि के साथ ममता करता है यही उसका न करना न कराना है ॥ टी० ॥ दो कान में दो नाक में दो नेत्रों में और एक मुखमें ये सातद्वार तो शिर में हैं और दो नीचे हैं इसप्रकार नवद्वार हैं ॥ १३ ॥

नकर्तृत्वंनकर्माणिलोकस्यसृजतिप्रभुः ॥ नकर्मफलसंयोगंस्वभावस्तुप्रवर्त्तते ॥ १४ ॥

प्रभुः १ लोकस्य २ कर्तृत्वम् ३ न ४ सृजति ५ न ६ कर्माणि ७ न ८ कर्मफलसंयोगम् ९ स्वभावः १० तु ११ प्रवर्त्तते १२ ॥ १४ ॥ अ० उ० त्वम् पदार्थ जीवको तो निर्विकार निरूपण किया अब तत्पदार्थ ईश्वर को भी निर्विकार निरूपण करते हैं अर्थात् परमार्थ में ये दोनों निर्विकार हैं क्योंकि नाममात्रही है वास्तव दोनों एक हैं दो श्लोकों में कहते हैं + ईश्वर शुद्ध सच्चिदानन्दस्वरूप निर्विकार १ जीवके २ कर्तृत्व को ३ वास्तव + नहीं ४ रचता है ५ और न ६ कर्मों को ७ और + न ८ कर्मोंके फल संयोग को ९ रचताहै यह जो कुछ देखा सुनाजाता है सब + अविद्या १० ही ११ प्रवृत्त होरही है १२ अर्थात् क्रिया कारक फलादि सब अविद्या करके कल्पितहैं न किसीने ये रचे हैं और न वास्तव हैं यह सब जीवके अज्ञान अध्यारोपमें विस्तार होरहाहै वास्तव जीव भी शुद्ध है जगत् का कर्त्ता जो ईश्वर को कहते हैं सो अध्यारोप में करते हैं वास्तव ईश्वर निर्विकार है जगत् है नहीं इत्यभिप्रायः ॥ १४ ॥

नादत्तेकस्यचित्पापंनचैवसुकृतंविभुः ॥ अज्ञानेनावृतंज्ञानंतेनमुह्यन्तिजन्तवः ॥ १५ ॥

विभुः १ कस्यचित् २ पापम् ३ एव ४ न ५ आदत्ते ६ न ७ च ८ सुकृतम् ९ अज्ञानेन १० ज्ञानम् ११ आवृतम् १२ तेन १३ जंतवः १४ मुह्यन्ति ॥ १५ ॥ अ० ईश्वर १ किसी के २ पापको ३ भी ४ नहीं ५ ग्रहणकरते ६ और न ७।८ पुण्यको ९ अनादि अनिर्वाच्य मूलाज्ञान करके १० जीवका + ज्ञान ११ ढक गयाहै १२ तिस करके १३ अर्थात् तिस ज्ञानकरके १३ जीव १४ भ्रान्तिको प्राप्त

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

होरहेहैं अर्थात् ईश्वरकोभी कर्त्ता विकारवान् मानते हैं व अपनेको भी ॥ १५ ॥

ज्ञानेनतुतदज्ञानंयेषांनाशितमात्मनः ॥ तेषामादित्यवज्ज्ञानंप्रकाशयतितत्परम् ॥ १६ ॥

ज्ञानेन १ तु २ तत् ३ अज्ञानम् ४ येषाम् ५ नाशितम् ६ तेषाम् ७ आत्मनः ८ तत्परम् ९ ज्ञानम् १० आदित्यवत् ११ प्रकाशयति १२ ॥ १६ ॥ अ० ज्ञानीको भ्रांति नहीं होती यह कहते हैं + और ब्रह्मज्ञान करके १ । २ सो ३ अज्ञान ४ पूर्व मंत्रोक्त + जिनका ५ नाश होगया है ६ तिनको ७ आत्माका ८ परमार्थतत्त्व ९ ज्ञान १० सूर्यवत् ११ प्रकाश करके परमार्थ तत्त्वरूप आत्मा को प्रकाशकर देताहै जैसे सूर्य अन्धकारको नाश करके पदार्थोंको प्रकाश करदेता है ॥ १६ ॥

तद्बुद्धयस्तदात्मानस्तन्निष्ठास्तत्परायणाः ॥ गच्छंत्यपुनरावृत्तिंज्ञाननिर्धूतकल्मषाः ॥ १७ ॥

तद्बुद्धयः १ तदात्मानः २ तन्निष्ठाः ३ तत्परायणाः ४ ज्ञाननिर्धूतकल्मषाः ५ अपुनरावृत्तिम् ६ गच्छन्ति ७ ॥ १७ ॥ अ० उ० जिन पुरुषों को आत्मतत्त्व का ज्ञान होता है उनका लक्षण कहतेहैं और ज्ञानका फल निरूपण करतेहैं तिसमें ही है बुद्धि जिनकी १ अर्थात् सिवाय आत्माके और किसी पदार्थ में नहीं जाती है बुद्धि जिनकी आत्मा से सिवाय और किसी पदार्थको सत्यत्रिकालाबाध्य निश्चय नहीं करते और + तिसमेंही है मन जिनका २ अर्थात् सिवाय आत्माके और किसी पदार्थ में उनका मन नहीं जाता और है तिसमेंही निष्ठा जिनकी ३ अर्थात् सिवाय आत्माके दूसरी जगह निष्ठा नहीं करते हैं सदा आत्माही में तत्पर रहते हैं और + सोई आत्मा परमआश्रय है जिनका ५ ऐसे महात्मा + ज्ञान करके नाश करदिये हैं पाप जिन्होंने ५ वे + मुक्तिको ६ प्राप्त होते हैं ७ ॥ १७ ॥

विद्याविनयसंपन्नेब्राह्मणेगविहस्तिनि ॥ शुनिचैवश्वपाकेचपण्डिताःसमदर्शिनः ॥ १८ ॥

विद्याविनयसंपन्ने १ ब्राह्मणे २ श्वपाके ३ च ४ गवि ५ हस्तिनि ६ शुनि ७ च ८ एव ९ समदर्शिनः १० पण्डिताः ११ ॥ १८ ॥ अ० उ० पण्डितनाम भी ज्ञानियों का ही है अर्थात् पण्डित ज्ञानीको कहते हैं इस मन्त्र में पण्डित शब्द के अर्थका लक्षण कहते हैं + विद्या नम्रता करके युक्त ब्राह्मणमें १ । २ और चां-

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

चाण्डाल में ३। ४ गौ में ५ हाथी में ६ और कूकर में ७। ८ भी ९ आत्मा की सम देखने का स्वभाव है जिनका १० वे + पण्डित ११ हैं मूर्खों के कहने से और पण्डित नाम रखवालेनेसे पण्डित नहीं होसक्ता ॥ टी० ॥ ब्राह्मण और चाण्डाल में तो कर्म की विषमता है और गौ हाथी कूकर में जातिकी विषमता है तात्पर्य्य सब में आत्मा को सम देखते हैं इसवास्ते उनको भी समदर्शी कहाजाता है व्यवहार में ब्राह्मण और चाण्डालादि को एक देखना समझना भ्रष्ट मूर्खों का काम है ॥ १८ ॥

इहैवतैर्जितःसर्गोयेषांसाम्येस्थितंमनः ॥ निर्दोषं हिसमंब्रह्मतस्माद्ब्रह्मणितेस्थिताः ॥ १९ ॥

येषाम् १ मनः २ साम्ये ३ स्थितम् ४ तैः ५ इह ६ एव ७ सर्गः ८ जितः ९ ब्रह्म १० निर्दोषम् ११ समम् १२ तस्मात् १३ हि १४ ब्रह्मणि १५ ते १६ स्थिताः १७॥१९॥अ०उ० समदर्शियों का माहात्म्य कहते हैं जिनका १ मन २ समता के विषे ३ स्थित है ४ अर्थात् सब भूतों में जिनकी ब्रह्मभावनाहै + तिन्हों ने ५ जीवतेहुये ६ ही ७ संसार ८ जीता है ९ क्योंकि + ब्रह्म १० निर्दोष ११ और + सम १२ है + तिस कारण से १३ ही १४ ब्रह्म में १५ वे १६ पण्डित पूर्वमंत्रोक्त + स्थितहैं १७ अर्थात् ब्रह्मभाव को प्राप्त हैं तात्पर्य्य संसार दोषोंके सहित विषमरूपहै और ब्रह्मसम निर्दोष है ब्रह्मभावको प्राप्तहोकरही संसार जय होसक्ताहै जीताजाता है नाश होसक्ता है अथवा इसप्रकार अन्वय करदेना कि जिस कारण से ब्रह्म सम निर्दोषहै तिस कारणसेही वे ब्रह्म में स्थितहैं और जब कि ब्रह्म में उनकी स्थितिहुई तिस कारणसेही उन्होंने संसारको जीता सिवाय शुद्ध सच्चिदानन्दस्वरूप पूर्णब्रह्म आत्मा के सब पदार्थ सदोष हैं यह समझकर निर्दोष ब्रह्म में स्थितहोकर संसार जीताजाता है ॥ १९ ॥

नप्रहृष्येत्प्रियंप्राप्यनोद्विजेत्प्राप्यचाप्रियम् ॥ स्थिरबुद्धिरसंमूढोब्रह्मविद्ब्रह्मणिस्थितः॥२०॥बाह्यस्पर्शेष्वसक्तात्माविन्दत्यात्मनियत्सुखम् ॥ सब्रह्मयोगयुक्तात्मासुखमक्षयमश्नुते ॥ २१ ॥

बाह्यस्पर्शेषु १ असक्तात्मा २ ब्रह्मयोगयुक्तात्मा ३ सः ४ आत्मनि ५ यत् ६

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

सुखम् ७ विन्दति ८ अक्षयम् ९ सुखम् १० अश्नुते ११ ॥ २१ ॥ अ० उ०, जिस हेतुसे शब्दादि पदार्थों में रागद्वेष नहीं है ज्ञानीका वह हेतु कहते हैं + शब्दादि इन्द्रियों के अर्थों में १ नहीं आसक्त अन्तःकरण जिसका २ और + ब्रह्म में समाधि करके युक्त है अन्तःकरण जिसका ३ सो ४ अन्तःकरण में ५ जो ६ सतोगुणी उपशमात्मक + सुख तिसको ७ प्रथम प्राप्तहोताहै ८ फिर + अक्षय सुखको ९।१० प्राप्तहोताहै ११ ॥टी०॥बाहर जिनका स्पर्श होताहै इन्द्रियों की वृत्तिकरके वे शब्दादि पञ्चइन्द्रियों के अर्थ हैं तिनमें जिनका मन आसक्त नहीं उसमें यह हेतुहै कि उन्होंने आत्मामें अन्तःकरणको समाधान करके जीव को ब्रह्मरूप समझलिया है और आत्मा पूर्णानन्द नित्य एकरस है इसवास्ते उनको अक्षय सुख प्राप्त होताहै अर्थात् वे सच्चिदानन्द स्वरूप एकरसहैं पूर्णानन्द के सामने विषयानन्द तुच्छहै प्रथम तो सतोगुणी सुखके सामने विषयानन्द तुच्छ है फिर परमानन्द के सामने तुच्छहो तो इसमें क्या कहनाहै अथवा इस श्लोक का अन्वय ऐसे करना कि शब्दादि विषयों में नहीं है आसक्त अन्तःकरण जिसका सो महात्मा सात्त्विक सुखको प्राप्त होताहै फिर समाधि करके ब्रह्मात्मा में अन्तःकरण लगायाहै जिसने सो महात्मा पुरुष अक्षय सुखको प्राप्तहोजाताहै २१॥

येहिसंस्पर्शजाभोगादुःखयोनयएवते ॥ आद्यन्तवन्तःकौंतेयनतेषुरमतेबुधः ॥ २२ ॥

संस्पर्शजाः १ ये २ भोगाः ३ ते ४ एव ५ हि ६ दुःखयोनयः ७ कौंतेय ८ आद्यन्तवन्तः ९ तेषु १० बुधः ११ न १२ रमते १३ ॥ २२ ॥ अ० उ० शब्दादि विषयों में इन्द्रादि देवता आनन्द मानते हैं और बड़ी बड़ी समझवाले चतुरलोग वैकुण्ठलोकादि परलोक पदार्थों की प्राप्ति के लिये नानाप्रकार के प्रयत्न करते हैं वहां जाकर नानाप्रकार के शब्दादि विषयों को भोगते हैं पुराणादि में भी उनका माहात्म्य सुनाजाता है ऐसे प्रत्यक्ष सुन्दर शब्दादि विषयों को छोड़ जो ब्रह्मात्मा में परमानन्द मानते हैं वे तो कुछ कमसमझ प्रतीत होते हैं यह शङ्का करके श्रीमहाराज कहते हैं + शब्दादि विषयों से उत्पन्न होते हैं १ जो २ भोग ३ अर्थात् विषयजन्य जो सुख आनन्द + वे ४ निश्चय ५ ही ६ दुःखके कारण हैं ७ अर्थात् वे सन्देह समझना कि शब्दादि पदार्थों में जो सुखहै वह दुःखों का मूलहै जो कोई मूर्ख यह समझे कि आपकी समझ में विषयानन्द दुःखोंका मूलहै हमारी समझमें श्रेष्ठहै यह शङ्का करके प्रत्यक्ष और भी दोष दिखाते हैं +

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

हे अर्जुन! ८ फिर कैसे हैं ये भोग + आदि अन्तवाले हैं अर्थात् आगमापायी आनेजानेवाले हैं सदा नहीं बने रहते ९ तिनके विषय १० विद्वान् ११ नहीं १२ रहताहै १३ अर्थात् जो स्त्रीआदि पदार्थों में रमे हैं शब्दादि विषयों को प्रिय समझकर भोगते हैं और उनकी प्राप्ति के लिये लौकिक वैदिक कर्म्म करते हैं वे बड़ी समझवाले, चतुर नहीं उनको महामूर्ख समझना + उक्तंच + रमन्तिमूर्खाविरमन्तिपण्डिताः + हि यह शब्द कहनेसे तात्पर्य श्रीमहाराजका यहहै कि विषय इस लोक परलोक के सब समहैं उनके प्रयत्न करने में और नाश होनेमें जो २ दुःखहैं वे तो प्रसिद्ध हैं परन्तु भोगकालमें भी वे दुःखही के हेतु हैं चोर राजादि का सदा भय बनारहताहै तात्पर्य जो विषयों में कुछ एक सुख भी प्रतीत होताहै तो सहस्रों प्रकारका उसमें दुःखहै और वह सुखभी अनित्यहै-श्रेष्ठ आत्मानन्दही है आत्मानन्द के भोगनेवाले आत्मानन्द के प्रयत्न करनेवालेही चतुर बुद्धिमान् सबसे श्रेष्ठहैं इत्यभिप्रायः ॥ २२ ॥

शक्नोतीहैवयःसोढुंप्राक्छरीरविमोक्षणात् ॥ कामक्रोधोद्भवंवेगं सयुक्तःससुखीनरः ॥ २३ ॥

यः १ कामक्रोधोद्भवम् २ वेगम् ३ प्राक्छरीरविमोक्षणात् ४ इह ५ एव ६ सोढुम् ७ शक्नोति ८ सः ९ युक्तः १० सः ११ सुखी १२ नरः १३ ॥ २३ ॥ अ० उ० परम पुरुषार्थ मोक्षहै उसके काम क्रोधदो वैरीहैं जो इनको सहेगा त्यागेगा वह मोक्षका भागी होगा यह कहते हैं जो १ महापुरुष काम और क्रोध से प्रकट होताहै जो वेग उसको २। ३ पहले शरीर के छूटने से ४ जीवते ५ ही ६ सहनेको ७ समर्थ है ८ सोई ९ सुखी १० सोई ११ योगी १२ महापुरुष १३ है तात्पर्य कामना सब पदार्थों की शुभ वा अशुभ इसलोक परलोक के पदार्थों की अनर्थका हेतु है और स्त्रीकी कामना तो मोक्ष में बड़ाही प्रतिबन्धन है जिस समय देखने सुनने स्मरण करने से मनमें विकार प्रतीतहो मनमें आवे उसके आने से मनमें विकार प्रतीतहो उसीसमय दोषोंका स्मरणकरे जिस गुणका स्मरण करने से कामना होती है उसका कभी चिन्तन न करे जितने उस पदार्थमें अवगुण हैं उन सबको स्मरणकरे मनोराज्यका अंकुर जमने न दे दूसरे अध्याय के मंत्रोंका विचारकरे नारायणको यादकरै जैसे बने वह समय टलावे और उत्तम उपाय यहहै कि उससमय विरक्त साधुके पास जा बैठे वे सन्देह उसीसमय चित्त शान्त होजायगा और यह प्रयत्न सुषुप्ति मरणपर्यन्त चाहिये कामनाही से क्रोध

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

होताहै ऐसेही क्रोध लोभादिका जब उद्वेगहो उसी समय समझकर निरोध करै इसीप्रकार सहज सहज सहते सहते फिर आपही स्वभाव ऐसा पड़जायगा प्रथम तो कामादि का उदयही न होगा जो कुसङ्ग से उदय भी होवेंगे तो तनक विचार करने से दूर होजावेंगे ॥ २३ ॥

योन्तःसुखोन्तरारामस्तथान्तर्ज्योतिरेवयः ॥ सयोगीब्रह्मनिर्वाणम्ब्रह्मभूतोऽधिगच्छति ॥ २४ ॥

अन्तःसुखः १ यः २ अन्तरारामः ३ तथा ४ एव ५ अन्तर्ज्योतिः ६ यः ७ सः ८ योगी ९ ब्रह्मनिर्वाणम् १० ब्रह्मभूतः ११ अधिगच्छति १२ ॥ २४ ॥ अ० उ० कामानादि के त्यागने से अन्तस्सुख की प्राप्ति होती है कैसा है वह सुख कि स्वतंत्र नित्य पूर्ण अखण्ड है उसमें विहार करता हुआ पूर्णब्रह्म परमानन्द स्वरूप आत्माको सदाके वास्ते प्राप्त होजाताहै सोई कहते हैं + अन्तःकरण में है सुख जिसको १ अर्थात् आत्माहीमें जिसको सुखहै इसी हेतुसे विषयोंमें सुख नहीं मानता जो २ महात्मा और आत्माही में है विहार जिसका ३ इसी हेतुसे बाहर के पदार्थों में नहीं विहार करता और जैसे अन्तर सुख मानता है अंतरही विहार करता है + तैसे ४ ही ५ भीतर दृष्टि जिसको ६ इसी हेतुसे गीत नृत्यादि में दृष्टि नहीं करता + जो ७ महापुरुष योगी + सो ८ योगी ९ ब्रह्मस्वरूप हुआ १० ब्रह्मको अर्थात् निर्वाण ब्रह्म मोक्षको ११ प्राप्त होताहै १२ फिर उसका जन्म मरण नहीं होता पूर्ण परमानन्द स्वरूप आत्माको प्राप्त होताहै ॥ २४ ॥

लभंतेब्रह्मनिर्वाणमृषयःक्षीणकल्मषाः ॥ छिन्नद्वैधायतात्मानः सर्वभूतहितेरताः ॥ २५ ॥

ऋषयः १ क्षीणकल्मषाः २ छिन्नद्वैधाः ३ यतात्मानः ४ सर्वभूतहितेरताः ५ ब्रह्मनिर्वाणम् ६ लभंते ७ ॥ २५ ॥ अ० उ० जो ब्रह्मको प्राप्त होते हैं उनका लक्षण कहते हैं + ज्ञाननिष्ठावाला साधु महात्मा १ नाश होगये हैं पाप जिनके २ और + छिन्नछिन्न दोदो टूक होगये हैं संशय जिनके ३ अर्थात् किसी प्रकार का संशय जिनको नहीं + जीता हुआ है अन्तःकरण जिनका ४ सब भूतों के हितमें प्रीति है जिनकी ५ ऐसे कृपालु महात्मा + ब्रह्मनिर्वाण को ६ प्राप्तहोंगे ७ पहले बहुत होगये वर्तमान कालमें बहुत जीवन्मुक्त विद्यमान हैं ॥ टी० ॥ साधन चतुष्टय संपन्न श्रवणादि साधनोंकरके युक्त ? तिरोभाव होगये हैं रजोगुण तमोगुण जिनके

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

ज्ञानके प्रताप से पाप सब नाश होगये हैं जिनके २ प्रमाणगत वा प्रमेयगत किसी जगह उनको संशय नहीं ३ सदा समाधिनिष्ठ रहते हैं ४ नगर ग्राममें जो उनका आना गृहस्थों के घर जाना गृहस्थों से बात करनी यह उनकी केवल कृपाही समझनी क्योंकि वे पूर्णकाम हैं ऐसे दयालु महापुरुषों का दर्शन भी भागसे होता है ५ उक्तंच + महद्विचलनं नृणां गृहिणान्दीनचेतसाम्। निःश्रेयसायभगवन्कल्प तेनान्यथाकचित् + तात्पर्यार्थ इस श्लोक का यह है कि गृहस्थों के घरमें महात्मा पुरुषों का जो जाना है वह केवल उनके भलेके लिये है सिवाय उसके उन का और कुछ प्रयोजन नहीं कभी कुछ और प्रकारकी कल्पना नहीं करनी क्योंकि गृहस्थ आपही दीन होते हैं उन के पास है क्या जो किसी कामना की कल्पना की जावे ॥ २५ ॥

कामक्रोधवियुक्तानांयतीनांयतचेतसाम् ॥ अभितोब्रह्मनिर्वाणंवर्त्ततेविदितात्मनाम् ॥ २६ ॥

यतीनाम् १ अभितः २ ब्रह्मनिर्वाणम् ३ वर्तते ४ कामक्रोधवियुक्तानाम् ५ यतचेतसाम् ६ विदितात्मनाम् ७ ॥ २६ ॥ अ० उ० कामादिरहित सज्जन जीवतेही मुक्तहैं फिर उनकी विदेहमुक्तियों में तो क्या कहनाहै + संन्यासी के १ सब अवस्था में २ मोक्षपरमानन्द ३ वर्तता है ४ अर्थात् जीवते हुये भी जाग्रत् स्वप्न सुषुप्ति ३ परमानन्द को भोगते हैं तात्पर्य अज्ञानियों की दृष्टि में ज्ञानियों के विषे ये तीन अवस्था प्रतीत होती हैं वास्तव ज्ञानियों के एक तुर्यातीत अवस्था रहती है और पीछे देहके भी परमानन्दको भोगते हैं कैसे हैं वे संन्यासी ज्ञानी + काम क्रोधकरके रहितहैं ५ जीत रक्खाहै अन्तःकरण जिन्होंने ६ जानाहै आत्मतत्त्व जिन्होंने ७ अर्थात् पूर्णब्रह्मसच्चिदानन्द नित्यमुक्त आत्मा को जानते हैं कामादिरहित हैं ॥ २६ ॥

स्पर्शान्कृत्वाबहिर्बाह्यांश्चक्षुश्चैवान्तरेभ्रुवोः॥प्राणापानौसमौकृत्वानासाभ्यंतरचारिणौ ॥ २७ ॥

बाह्यान् १ स्पर्शान् २ बहिः ३ एव ४ कृत्वा ५ चक्षुः ६ च ७ अन्तरे ८ भ्रुवोः ९ प्राणापानौ १० नासाभ्यन्तरचारिणौ ११ समौ १२ कृत्वा १३ ॥ २७॥ अ० उ० जिस योग करके संन्यासी महात्मा जीवतेहुये और देहके पीछे भी सदा परमानन्द भोगते हैं उस योगका लक्षण दो मन्त्रों में तो अब कहते हैं संक्षेप से

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

और अगले छठें अध्याय में विस्तारपूर्वक कहेंगे+बहिः पदार्थों को १ रूप रसादिको २ बाहर ३ ही ४ करके ५ अर्थात् रूप रसादि जो पदार्थ हैं ये सब बाहर हैं चिन्तन करने से भीतर प्रवेश होते हैं इसवास्ते विषयों का चिंतन दर्शनादि त्यागकरके+और चक्षु को ६। ७ दोनों भ्रूके ८ बीच में ९ करके तात्पर्य नेत्रों को बहुत न खोलना न मीचना बहुत खोलने से रूप के साथ सम्बन्ध होजाताहै बहुत मीचने से निद्रा आती है इसवास्ते दोनों भ्रूके मध्य में दृष्टि रखनी+प्राण अपान १० नासाभ्यंतरचारी ११ समान १२ करके १३ मुक्त होजाताहै अर्थात् ऐसे महात्मा सदामुक्तहैं अगले मंत्रके साथ इसका अन्वय है॥ टी०॥ नासिकाके भीतरही प्राण चले शीघ्रगति न होनेपावे ११ नीचे ऊपर की गतिको सम करनी योग्यहै जिसको कुम्भक कहते हैं यह अर्थ साक्षात् गुरुके बतलाने से समझमें आताहै केवल शास्त्रके श्रवण विचारसे नहीं आता॥ २७॥

यतेन्द्रियमनोबुद्धिर्मुनिर्मोक्षपरायणः॥ विगतेच्छाभयक्रोधोयःसदामुक्तएवसः॥ २८॥

यतेन्द्रियमनोबुद्धिः १ मोक्षपरायणः २ विगतेच्छाभयक्रोधः ३ यः ४ मुनिः ५ सः ६ सदा ७ मुक्तः ८ एव ९॥ २८॥ अ० उ० जीते हैं इन्द्रिय मन बुद्धि जिसने १ मोक्षही है परमगति जिसके २ दूर होगई है इच्छा भय क्रोध जिससे ३ ऐसे जो ४ मुनि संन्यासी ५ वे ६ सदा ७ जीतेहुये भी और देहके पीछे भी+ मुक्त ८ ही हैं इससे पृथक् कोई और मुक्ति पदार्थ नहीं सालोक्यादि अनित्य होने से नाममात्र मुक्ति कहलाती है+सब दुःखों की निवृत्ति और परमानन्द स्वरूप आत्माकी प्राप्ति यह मुक्तिका लक्षणहै॥ टी०॥ जिसका मन आत्मामें ही रहता है उसको मुनि कहते हैं॥ २८॥

भोक्तारंयज्ञतपसांसर्वलोकमहेश्वरम्॥ सुहृदंसर्वभूतानांज्ञात्वामांशान्तिमृच्छति॥ २९॥

यज्ञतपसाम् १ भोक्तारम् २ सर्वभूतानाम् ३ सुहृदम् ४ सर्वलोकमहेश्वरम् ५ माम् ६ ज्ञात्वा ७ शान्तिम् ८ ऋच्छति ९॥ २९॥ अ० उ० जैसा पीछे निरूपणकिया इसप्रकार इन्द्रिय और अन्तःकरणादि का निरोध करके ब्रह्मज्ञानद्वारा मुक्तिहोतीहै इसवास्ते अब ज्ञानका स्वरूप कहकर शान्ति फल सबका निरूपण करते हैं+यज्ञ तपका १ भोक्ता २ अविद्योपहित त्वम्पद का वाच्यार्थ है और+सब

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

भूतोंका ३ वे प्रयोजन हित करनेवाला ४ अन्तर्यामी ईश्वर सब कर्मोंके फलका देनेवाला तत्पदका वाच्यार्थ सच्चिदानन्द है और + सब लोकोंका महेश्वर ५ परमात्मा शुद्ध सच्चिदानन्द निर्विकार नित्यमुक्त तत्त्वम्पदों का लक्ष्यार्थ अद्वैत है इसप्रकार + मुझ शुद्ध सच्चिदानन्द स्वरूप पूर्णब्रह्म आत्माको ६ जानकर ७ शांतिको ८ अर्थात् मुक्तिको ८ प्राप्त होताहै ९ नसपुनरावर्तते इत्यभिप्रायः २९॥

इति श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सुब्रह्मविद्यायांयोगशास्त्रेश्रीकृष्णार्जुन संवादेसंन्यासयोगोनामपंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

श्रीस्वामी आनन्दगिरिकृत परमानन्दप्रकाशिका में पांचवां अध्याय समाप्त हुआ ॥ ५ ॥

छठयें अध्यायका प्रारम्भहुआ ॥

उ० इस छठें अध्याय में श्रीभगवान् यह कहेंगे कि जो अग्निहोत्रादि कर्म्म करताहै और कर्मों के फलमें आसक्त नहीं उसको संन्यासी समझो यह कर्म्मयोगीकी स्तुतिहै इसको शास्त्रमें अर्थवाद कहते हैं इस कहने से यह नहीं समझना कि गृहस्थाश्रममें ही सदा बनेरहना चतुर्थ आश्रम संन्यास से क्या प्रयोजनहै जैसे संन्यासी वैसेही गृहस्थी कर्मयोगी हैं यह अधिकार प्रति श्रीमहाराजका कहना है नहीं तो पुनः २ पांचवें बारहवें दूसरे अठारहवें इत्यादि अध्यायों में चतुर्थ आश्रम संन्यासके जो लक्षण और माहात्म्य गृहस्थाश्रम से विशेष अपने मुखसे श्री महाराजने कहाहै वह कहना भगवान्का निरर्थ होजायगा तात्पर्य सर्व्वयज्ञों की वाणीका यह नियमहै कि जिससमय जिस साधन का प्रसंग होताहै उससमय उसीको सबसे अच्छा कहा करते हैं उनका आशय यथार्थ जब प्रतीत होताहै कि अगले पिछले कहेहुये उनके सब अर्थको विचारे फिर अधिकार गौण मुख्य देश वस्तुकालादिका विचारकरे युक्तियों करके सब श्रुति स्मृतियों के साथ उस अर्थ का एक जगह समन्वयकरे अगले पिछले वाक्यों में विरोध न आवे सबका सम्मत एक अर्थ में होजाय तब समझना कि इस श्लोक वा ग्रंथका यह यथार्थ ज्योंका त्यों अर्थ है और लक्षणा व्यंजना शक्तिका भी देखना योग्यहै पूर्वपक्ष सिद्धान्तको पृथक् २ समझना साधन फलका भेददेखना साधनों में भी तारतम्यता अधिकार प्रतिहै इसप्रकार शास्त्रका तात्पर्य जानाजाताहै और भी शास्त्र के तात्पर्य जाननेमें मुख्य छः बातें यहहैं प्रथम तो उपक्रम उपसंहार १ अर्थात् ग्रंथका

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

आदि अन्त देखना कि दोनोंकी संगति मिले है वा नहीं सर्वज्ञों का कहाहुआ जो ग्रंथहोताहै उसके प्रारंभमें जो अर्थ होगा वही अन्तम होगा जैसे श्रीभगवद्गीताका आदिपद अशोच्यहै और माशुच पिछलापदहै इन दोनों पदोंसे प्रथम पीछे जो कथा है वह संगतिके लिये उपोद्घातहै इसप्रकार गीताका उपक्रम उपसंहार एक मिले है और शोचका न होना अर्थात् परमानन्द की प्राप्ति यही गीताशास्त्रका तात्पर्य है १ इसीबातके सिद्ध करनेके लिये बीचमें पांच बात ये हैं अपूर्वता २ अर्थात् आत्माकोही सच्चिदानन्द नित्य जानना जिसके जानने सेही वेशोच होजाता है यह बात अपूर्व अलौकिकहै २ अनुवाद ३ उसी एकबातको नानाप्रकारकी रीति शैली करके पुनः २ कथनकरना ३ अर्थवाद ४ अर्थात् उसी पदार्थकी सिद्धिकें जो साधन हैं उनकोही रुचि बढ़ानेके लिये परात्पर श्रेष्ठ कहना जैसे कर्म भक्ति योगादि तीर्थादि का माहात्म्य कहाहै ४ उपपत्ति ५ अर्थात् फिर युक्तियों करके साधन कहकर सिद्धान्त पक्षको सिद्धकरना ५ फल ६ अर्थात् सिद्धान्तको कथन करना लक्षण करना कि वह परमानन्दस्वरूप ऐसाहै ६ इस प्रकार ग्रंथका तात्पर्य प्रतीत होताहै ग्रंथके एक एक देशसे अर्थात् एक श्लोकवा एक अध्याय से ग्रंथका तात्पर्य नहीं जाना जाता ये भी छःबात उपक्रम उपसंहारादि गीताशास्त्रमें हैं लक्षण व्यंजनादि भी हैं इन छः बातोंका एक पदार्थ में जब सम्मतहोगा तब जानना कि इस ग्रंथका यह तात्पर्य है अर्थवाद साधनोंको सिद्धान्त समझलेना मूर्खोंका कामहै ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ अनाश्रितःकर्मफलंकार्यंकर्मकरोतियः ॥ ससंन्यासीचयोगीचननिरग्निर्नचाऽक्रियः ॥ १ ॥

कर्मफलं १ अनाश्रितः २ कार्यम् ३ कर्म ४ यः ५ करोति ६ सः ७ संन्यासी ८ च ९ योगी १० च ११ न १२ निरग्निः १३ न १४ च १५ अक्रियः १६ ॥ १ ॥

अ० उ० अन्तःकरण शुद्धहोने के लिये कर्मयोगी की स्तुति करते हैं श्रीभगवान् कर्मों के फलका नहीं आश्रयकियाहै जिसने १।२ अर्थात् कर्मफलकी तृष्णा और कामना नहींहै जिसको + करने के योग कर्म को ३।४ जो ५ करता है ६ अर्थात् नित्य नैमित्तिक प्रायश्चित्त कर्म और भगवत् भक्तिसंबन्धि ज्ञानसंबन्धि जो कर्म और तीर्थयात्रा साधुसेवादि साधारण जो कर्म और दानलेना इत्यादि जो असाधारण कर्म हैं इन सब कर्मों को यथाधिकार यथाशक्ति जो करता है + सो ७ संन्यासी ८

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

और ९ योगी १० भी ११ समझनाचाहिये अर्थात् कर्म फलका संन्यास करने से एक देश में तो उसको संन्यासी समझना और कर्मयोग करने से एक देश में उसको योगी समझना इस अर्थ में सम समुच्चय की गन्धमात्र भी नहीं कल्पना करनी+कर्म संन्यास का दिन रात्रिवत् विरोधहै कर्मयोगी कोही संन्यासी कहना यह उपमाहै जैसे स्त्रीके मुखको चन्द्रमा कहना यह उपमा का तात्पर्य एकदेश में होताहै नहीं तो अगले पिछले वाक्यों में विरोध आताहै पीछे श्रीभगवान् ने बहुत जगह कर्म संन्यास फलके सहित निरूपण किया और आगे बहुत करेंगे इस जगह कर्मयोग काही प्रसंग है इसीवास्ते श्रीमहाराज कर्मयोगी की स्तुति करते हैं कैसाहै वह कर्मयोगी+न १२ निरग्निः १३ और न १४। १५ अक्रिय १६ है जैसे चतुर्थाश्रमी संन्यासी अग्निहोत्रादि कर्म नहीं करते निरग्नि होते हैं ऐसा कर्मयोगी नहीं और चतुर्थाश्रमी संन्यासी ज्ञानीवत् अक्रिय भी नहीं क्योंकि ज्ञानी आत्माको अक्रिय क्रियारहित मानते हैं आत्मा का जब देह के साथ संबन्ध माना तब आत्मा अक्रिय कहां रहा यह बात सत्य श्रीमहाराज कहते हैं कि कर्मयोगी अक्रिय नहीं+अथवा केवल अग्नि के न छूनेसे कर्मोंके न करने से विना ज्ञाननिष्ठा परमार्थ में संन्यासी नहीं होसक्ता व्यवहार में उसको नाममात्र संन्यासी कहेंगे तात्पर्य जबतक अन्तःकरण शुद्ध न हो तबतक ज्ञाननिष्ठा और संन्यास का माहात्म्य सुनकर कर्मों का त्याग न करे और जिनका अन्तःकरण शुद्ध हो उनके वास्ते कर्मोंका संन्यास करना चतुर्थाश्रम धारण करना निषेध नहीं अवश्य चतुर्थाश्रम धारण करना उसके विना ज्ञाननिष्ठा कभी परिपाक न होगी यह नियम विधि है ॥ १ ॥

यंसंन्यासमितिप्राहुर्योगंतंविद्धिपाण्डव ॥ नह्यसंन्यस्तसंकल्पोयोगीभवतिकश्चन ॥ २ ॥

पाण्डव १ यम् २ संन्यासम् ३ प्राहुः ४ तम् ५ हि ६ योगम् ७ इति ८ विद्धि ९ असंन्यस्तसंकल्पः १० कश्चन ११ योगी १२ न १३ भवति १४ ॥ २ ॥

अ० उ० कच्चे कर्म योगी का संन्यासमें अधिकार नहीं यह कहते हैं हे अर्जुन! १ जिस को २ संन्यास ३ कहते हैं ४ तिसको ५ ही ६ योग ७ कहते हैं यह ८ जान तू ९ क्योंकि संन्यास योग काही फल है+नहीं संन्यास किये हैं जिसने अर्थात् शुभाशुभ संकल्पों को जिसने नहीं त्यागाहै सो १० कोई ११ योगी १२ नहीं १३ होता है १४ तात्पर्य्य जबतक शुभ वा अशुभ संकल्प मनमें बने रहैं तबतक अ-

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

पने को सिद्धयोगी समझना न चाहिये अर्थात् यह १ समझे कि मेरा भक्तियोग अभी सिद्ध नहीं हुआ जब अन्तःकरण का निरोध होजाय संकल्प विकल्प सूक्ष्म कम होजावें तब संन्यास का अधिकारी होताहै ॥ २ ॥

आरुरुक्षोर्मुनेर्योगंकर्मकारणमुच्यते ॥ योगारूढस्यतस्यैवशमःकारणमुच्यते ॥ ३ ॥

योगम् १ आरुरुक्षोः २ मुनेः ३ कर्म ४ कारणम् ५ उच्यते ६ योगारूढस्य ७ तस्य ८ एव ९ शमः १० कारणम् ११ उच्यते १२ ॥ ३ ॥ अ० उ० हे अर्जुन! पीछे जो मैंने कर्मयोगी की स्तुतिकरी उस कहने से यह नहीं समझना कि सदा कर्म्मही करता रहे अधिकार प्रति मैंने वहां कहा है तात्पर्य्य सिद्धान्त मेरा यह है कि जो मैं अब कहता हूं + ऊपर के पद ज्ञानपर १ चढ़ने की इच्छा है जिसके और ध्यानयोग में समर्थ नहीं अर्थात् सच्चिदानन्द निराकार का ध्यान नहीं करसक्ता ऐसे ज्ञानयोग के जिज्ञासु २ मननशील को ३ अर्थात् मन में तो यह मनन करता है कि सच्चिदानन्द निराकार का ध्यान करना चाहिये परन्तु अन्तःकरण मैला होनेसे ध्यान नहीं होसक्ता ऐसे जिज्ञासु मुनि को ३ कर्म्म बहिरङ्ग भगवत् आराधनादि ४ परमानन्द स्वरूप आत्मा की प्राप्ति में + हेतु ५ कहा है ६ और + योगारूढ़ को ७ अर्थात् शुद्ध अन्तःकरणवाले को तात्पर्य्य जो ज्ञान योगपर चढ़गया है वही कर्मयोगी साधन चतुष्टय संपन्न होकर ज्ञाननिष्ठ हुआ है ७ तिसको ८ ही ९ उपशम १० हेतु ११ कहा है १२ परमानन्द स्वरूप आत्मा की प्राप्ति में उपशम हेतु है अर्थात् लौकिक वैदिक कर्मों से उपराम होकर सच्चिदानन्द निराकार का ध्यान करना कहा है फिर उसको बहिरङ्ग कर्मों में प्रवृत्त होना न चाहिये क्योंकि वे विक्षेपके हेतु हैं और ऊपर चढ़कर नीचे उतरना है ॥ टी० ॥ तिस को ही अर्थात् उसीको कि जो पहले कर्मयोगी था साकार मूर्तियों का ध्यान करता था और बहिरङ्ग कर्मों में प्रवृत्त था उसी बहिर्मुख को अन्तर मुख होना कहते हैं श्रीभगवान् + यह नहीं समझना कि कर्मयोगी को सदा बहिर्मुख रहना ही कहते हैं ज्ञानमार्ग दूसरा है उसके अधिकारी दूसरे हैं जैसे कोई २ कम समझ यह कहा करते हैं कि मकान एक है उसके रस्ते अनेक हैं यह बात नहीं मोक्षमार्ग एकही है मंजिल अनेक हैं रस्ते अनेक हैं यह बात नहीं मोक्ष मार्ग एकही है मंजिल अनेक हैं रस्ते अनेक नहीं रस्ता एकही है अर्थात् मोक्ष के मार्ग अनेक नहीं अधिकार प्रति भूमिका दरजे सीढ़ी अनेक हैं ॥ ३ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

यदाहिनेन्द्रियार्थेषुनकर्मस्वनुषज्जते ॥ सर्वसंकल्पसंन्यासीयोगारूढस्तदोच्यते ॥ ४ ॥

यदा १ हि २ न ३ इन्द्रियार्थेषु ४ न ५ कर्म्मसु ६ अनुषज्जते ७ सर्वसंकल्पसंन्यासी ८ तदा ९ योगारूढः १० उच्यते ११ ॥ ४ ॥ अ० उ० यह कैसे प्रतीत हो कि योगारूढ़ मैं अब हुआ इस अपेक्षा में योगारूढ़ का लक्षण कहते हैं+ जिस काम में १ ही २ जो महापुरुष+न ३ विषयों में ४ न ५ कर्मों में ६ आसक्ति करता है ७ अर्थात् इस लोक में जो देखे सुने हैं रूप शब्दादि और परलोक के जो अर्थवाद सुने हैं किसी में तृष्णा नहीं करता क्योंकि अन्तर परमानन्द स्वतंत्र के सामने बहिःसुख परिच्छिन्न परतंत्र विषयजन्य सुख को तुच्छ समझता है और बहिर्मुख के जो साधन कर्म उनको कर भी सक्ता है परन्तु अपना उन से कुछ प्रयोजन नहीं यह समझकर उन कर्मों में भी प्रीति नहीं करता और सब संकल्पों के त्यागने का स्वभाव है जिस का ८ अर्थात् इस लोक परलोक के निमित्त जो जो संकल्प उत्पन्न होते हैं सब को त्याग देता है तात्पर्य सिवाय सच्चिदानन्द आत्माके और किसी पदार्थ की प्राप्तिका संकल्पमात्र भी नहीं करता जिस काल में+ तिस काल में ९ योगारूढ़ ९ कहा है १० सो महात्मा साधु भगवत् भक्त जो विषयादि में प्रीति नहीं करता ॥ ४ ॥

उद्धरेदात्मनात्मानं नात्मानमवसादयेत् ॥ आत्मैवह्यात्मनोबंधुरात्मैवरिपुरात्मनः ॥ ५ ॥

आत्मना १ आत्मानम् २ उद्धरेत् ३ आत्मानम् ४ न ५ अवसादयेत् ६ आत्मनः ७ आत्मा ८ हि ९ एव १० बंधुः ११ आत्मनः १२ आत्मा १३ एव १४ रिपुः १५ ॥ ५ ॥ अ० उ० अब यह कहते हैं कि ज्ञानपर आरूढ़ होना चाहिये चढ़ना योग्यहै नीचे कर्मोंमें ही गिरना न चाहिये विवेकयुक्त मनकरके १ जीव को २ ज्ञानयोगपर+चढ़ावे ३ यही जीव का संसारसे उद्धार करनाहै अर्थात् ज्ञाननिष्ठ होना योग्य है+जीवको ४ नीचे न गिरावे ५ । ६ अर्थात् सदा कर्मों में ही लगारहै+जीवका ७ विवेकयुक्त मन ८ ही ९ तो १० बंधु ११ है अर्थात् संसारसे मुक्त करनेवाला है और+जीवका १२ रागद्वेषादियुक्त मन १३ ही १४ वैरी १५ है अर्थात् नरकादि को प्राप्त करनेवालाहै ॥ टी० ॥ विवेकयुक्त रागद्वेषादि रहित मनको शुद्ध मन कहते हैं ८ विवेकरहित रागद्वेषादि सहित

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

मनको मलिन मन कहते हैं १३ दो एवकार शब्दोंसे यह तात्पर्य है कि जो मैं कहता हूं इसको धारण करना योग्यहै कहानीवत् सुननेसे प्रयोजन सिद्ध न होगा १० । १४ तात्पर्य बन्ध मोक्षमें कारण मनुष्यों का मनही है विषयों में आसक्त हुआ बंधका हेतु स्वरूपनिष्ठ हुआ मोक्षका हेतु है उक्तंच+मन एव मनुष्याणां कारणं बंधमोक्षयोः+मुक्तिमिच्छसि चेत्तात विषयान् विषवत् त्यज ॥ क्षमार्जवदयातोषसत्यं पीयूषवद्भज+अष्टावक्रजीने कहा है कि हे तात! जो मुक्तिकी इच्छा करताहै तो विषयोंको विषवत् त्याग और क्षमा आर्जव दया संतोष सत्य इनका अनुष्ठान कर यही तात्पर्य इस मंत्रका है ॥ ५ ॥

बन्धुरात्मात्मनस्तस्ययेनात्मैवात्मनाजितः ॥
अनात्मनस्तुशत्रुत्वेवर्तेतात्मैवशत्रुवत् ॥ ६ ॥

तस्य १ एव २ आत्मनः ३ आत्मा ४ बंधुः ५ येन ६ आत्मना ७ आत्मा ८ जितः ९ अनात्मनः १० तु ११ आत्मा १२ एव १३ शत्रुवत् १४ शत्रुत्वे १५ वर्तेत १६ ॥ ६ ॥ अ० उ० पिछले अर्थको इसमंत्र में स्पष्ट करते हैं+तिसही जीवको १ । २ । ३ मन ४ बंधु ५ है कि+जिस जीवने ६ । ७ शरीर इन्द्रिय प्राण अन्तःकरण ८ वशमें किया है ९ और जिसने अन्तःकरणादि नहीं वश किये तिसका १० । ११ मन १२ ही १३ वैरीवत् १४ वैरभावमें १५ वर्तता है १६ तात्पर्य विषयासक्त मन मोक्ष में प्रतिबंधहै इसहेतुसे उसको वैरी कहा और राग द्वेषादि रहित मन मोक्ष में सहायक है इस हेतुसे उसको बंधु कहा ॥ ६ ॥

जितात्मनःप्रशांतस्यपरमात्मासमाहितः ॥
शीतोष्णसुखदुःखेषुतथामानाऽपमानयोः ॥ ७ ॥

जितात्मनः १ प्रशान्तस्य २ परमात्मा ३ समाहितः ४ शीतोष्णसुखदुःखेषु ५ तथा ६ मानापमानयोः ७ ॥ ७ ॥ अ० उ० अन्तःकरणादि के वशकरने का फल कहतेहैं+जीतेहैं अन्तःकरणादि जिसने १ इसी हेतुसे जो भलेप्रकार शान्त है अर्थात् विक्षेपरहित है जो तिसको २ परमात्मा ३ शुद्ध सच्चिदानन्द पूर्णब्रह्म +साक्षात् अपरोक्ष आत्मभाव करके वर्तताहै अर्थात् आत्मा सच्चिदानन्द अखण्ड नित्यमुक्त साक्षात् अपरोक्ष जीतेहुये ही अनुभव करताहै ४ और कोई प्रतिबंध भी उसको बाधा विक्षेप नहीं करसक्ते आधे श्लोक में अब यह कहते हैं+शीत गरमी दुःख सुखमें ५ और तैसे ही ६ मान और अपमान में ७ आत्मा अ-

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

खण्ड अपरोक्ष रहताहै+तात्पर्य पांचवीं छठीं जो ज्ञान की भूमिका हैं उनमें वर्तताहै अर्थात् सदा जीवन्मुक्ति का आनन्द भोगताहै इसी हेतु से उस आनन्द के सामने मानापमानादि भी नहीं प्रतीतहोते और कभी रजोगुणके आविर्भाव होने से वहिर्मुख वृत्ति होने में अपमानादि भी प्रतीत हों तो भी उनको गुणोंका कार्यसमझकर और अपनेको असंग जानकर विक्षेप को नहीं प्राप्त होताहै ॥ ७ ॥

ज्ञानविज्ञानतृप्तात्मा कूटस्थोविजितेन्द्रियः ॥
युक्तइत्युच्यतेयोगी समलोष्टाश्मकांचनः ॥ ८ ॥

युक्तः १ योगी २ इति ३ उच्यते ४ ज्ञानविज्ञानतृप्तात्मा ५ कूटस्थः ६ विजितेन्द्रियः ७ समलोष्टाश्मकांचनः ८ ॥ ८ ॥ अ० उ० जिस योगारूढ़ को अखण्डात्मा अपरोक्ष है उसका लक्षण यह+योगारूढ़ १ योगी २ ऐसा ३ कहा है ४ अर्थात् उसका लक्षण यह है+ज्ञान विज्ञानकरके तृप्त है अन्तःकरण जिसका ५ निर्विकार ६ भले प्रकार जीते हैं इन्द्रिय जिसने ७ समान हैं लोहा पाषाण सोना जिसके ८ उसको योगारूढ़ योगी कहते हैं ॥ टी० ॥ महावाक्य श्रवण करके यह जानना कि मैं ब्रह्म हूं क्योंकि वेदवाक्यमें विश्वास श्रद्धा करना अवश्य योग्य है वेदों के कहने से यह जानना कि मैं सच्चिदानन्द पूर्णब्रह्म हूं इस को ज्ञान कहते हैं अर्थात् यह तो अपरोक्षज्ञान है और युक्ति समन्वयादि करके साक्षात् करामलकवत् अनुभवकरना इसको विज्ञान कहते हैं अर्थात् यह अपरोक्षज्ञान है इन दोनों ज्ञान विज्ञान करके संतुष्ट है अन्तःकरण जिसका उसको ज्ञानविज्ञानतृप्तात्मा कहते हैं ५ राग द्वेषादि विकारों करके जो रहितहै उसको कूटस्थकहतेहैं ८ ॥

सुहृन्मित्रार्युदासीनमध्यस्थद्वेष्यबन्धुषु ॥ साधुष्वपिचपापेषुसमबुद्धिर्विशिष्यते ॥ ९ ॥

सुहृद् १ मित्र २ अरि ३ उदासीन ४ मध्यस्थ ५ द्वेष्य ६ बन्धुषु ७ । १ यहांतक एक पद है+साधुषु २ च ३ पापेषु ४ समबुद्धिः ५ विशिष्यते ६ ॥ ९ ॥ अ० उ० सातवें अङ्क तक पदहै पापी साधु आदि जनोंमें समान बुद्धि है जिसकी सो पूर्वोक्त से भी विशेष है यह कहते हैं+-वे प्रयोजन जो दूसरे का भला चाहे और करे ममता और स्नेह करके वर्जित हो उसको सुहृद् कहते हैं १ ममता स्नेहके वश होकर जो भला करे २ शत्रु ३ किसी का बुरा चाहना न भला चाहना ४ दोके झगड़े में यथार्थ ज्योंका त्यों कहनेवाला ५ आत्मा का

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

अप्रिय अर्थात् आपसे जो प्यार न करै ६ इसमें और शत्रु में कुछ भेद नहीं प्रतीत होता परन्तु भेदहै एक शत्रु तो ऐसा होताहै कि प्रसिद्ध तो मिला रहै पीछे बुराई करै और एक शत्रु ऐसा होताहै कि प्रसिद्ध में भी बुराई करै तीसरे और छठे अङ्क में अर्थात् अरि और द्वेष्य में यही भेदहै + संबन्धी ७ इन सब में ७। १ और साधुजनों में २। ३ और + पापीपुरुषों में ४ समबुद्धिवाला ५ विशेषहै ६ तात्पर्य्य शत्रु मित्रादिमें जो न राग करताहै न द्वेष करता है सो पूर्वोक्त योगीसे भी विशेष है ॥ ९ ॥

योगीयुंजीतसततमात्मानंरहसिस्थितः ॥ एकाकीयतचित्तात्मानिराशीरपरिग्रहः ॥ १० ॥

योगी १ सततम् २ आत्मानम् ३ युंजीत ४ रहसि ५ स्थितः ६ एकाकी ७ यतचित्तात्मा ८ निराशीः ९ अपरिग्रहः १० ॥ १० ॥ अ० उ० योगारूढ़ का लक्षण कहा अब योगको अंगों के सहित कहते हैं + योगारूढ़ १ निरन्तर २ अन्तःकरणको ३ समाधान करै ४ एकान्त में ५ बैठकर ६ अकेला ७ जीता है अन्तःकरणशरीर जिसने ८ आशारहित ९ परिग्रहरहित १० ॥ टी० ॥ योगारूढ़ बहिरङ्ग साधनों में अर्थात् तीर्थ यात्रादि में मुख्यता करके प्रवृत्त न हो निरन्तर दिन रात्रि अन्तःकरण निरोध करै क्षणमात्र बहिर्मुख वृत्ति न होने पावै २ जिस जगह सिंह सर्प चोरादि का अतिभय न हो स्त्री बालक प्राकृत जनों की समुदाय न हो शुद्धचित्त के प्रसन्न करने वाले स्थल में अर्थात् उत्तराखण्ड भागीरथी नर्म्मदा जीके तीर इत्यादि स्थलों में चिरकाल निवास करे ५ एकान्त में भी दो चार इकट्ठे होकर न रहैं ७ एकान्त जगह भी हो और अकेला भी हो तो वहां रहकर शिष्य सेवकों को उपदेश करना इत्यादि क्रिया अथवा मन्दिर कुटीके पास फूल फुलवारी लगाना इत्यादि क्रिया न करै कि जिससे वृत्ति बहिर्मुख हो ८ एकान्त में अकेला जब निवास करे तब किसी से यह आशा न रक्खे कि हमको कोई इसी जगह बैठे हुये भिक्षा दे जायाकरे और बन्धान्न भी न बांधे बन्धान्न की आशा न रक्खे तात्पर्य्य भिक्षान्न भोजन करना योग्यहै ९ एकान्त में अकेला जो मनके समाधान करने को बैठे तो भोजन वस्त्रादि सिवाय शरीरयात्रा के संचय न करै तब अभ्यास होसक्ताहै १० निरन्तर एकान्त अकेला जितेन्द्रिय आशारहित परिग्रहरहित ये सब अंग अन्तःकरण समाधान करने के हैं विना गृहस्थाश्रम के छोड़े विना विरक्त हुये इन सब अंगों का अनुष्ठान भले

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

प्रकार नहीं होसक्ता जो सब न होसके तो जितना होसके अवश्य करना योग्य है विना अभ्यासके बहिरङ्ग साधन निष्फलहै ईश्वराराधनादि कर्मोंका फल यही है कि अन्तःकरण शान्तहो ॥ १० ॥

शुचौदेशेप्रतिष्ठाप्य स्थिरमासनमात्मनः ॥ नात्युच्छ्रितंनातिनीचं चैलाजिनकुशोत्तरम् ॥ ११ ॥

शुचौ १ देशे २ आत्मनः ३ आसनम् ४ स्थिरम् ५ प्रतिष्ठाप्य ६ न ७ अति ८ उच्छ्रितम् ९ न १० अति ११ नीचम् १२ चैलाजिनकुशोत्तरम् १३ ॥ ११ ॥ अ० उ० आसन की विधि दो श्लोकों में कहते हैं आसन योगका बहिरंग साधन है अंतरंग अभ्यासका सहायकहै + पवित्र भूमिमें १ । २ अपना ३ आसन ४ अचल ५ बिछाकर अभ्यास करे कैसाहै वह आसन कि + न ७ बहुत ८ ऊंचा ९ न १० बहुत ११ नीचा १२ हो फिर कैसा इस अपेक्षा में कहते हैं कि + कुश और मृगचर्म और वस्त्र ये ऊपर हों भूमिके अर्थात् पृथिवीके ऊपर प्रथम कुशका आसन उसके ऊपर मृगचर्मादि उसके ऊपर सूतीवस्त्रबिछावे १३ ॥ टी० ॥ कोई भूमि तो स्वभावसेही पवित्र होतीहै जैसे श्रीगंगाजी की रेती ॥ वसुधा सर्वत्र शुद्धा न लेपो यत्र विद्यते ॥ पृथिवी सब जगह पवित्रहै परन्तु जहां लिपगईहो तो फिर उसको लीप लेना योग्यहै अथवा उत्तराखण्डादिकी पवित्रदेश समझना योग्यहै १ । २ दूसरे के आसन पर बैठना शास्त्रमें निषेध है इसवास्ते अपना आसन कहा ३ । ४ स्थिर शब्द से तात्पर्य यह है कि यह काम दो चार घड़ी वा दो चार महीने का नहीं बरसोंका यह काम है अर्थात् जबतक जीवे यही अभ्यास करता रहे यह अभ्यास अज्ञानी को तो ज्ञानका प्राप्त करनेवाला और ज्ञानीको जीवन्मुक्ति देनेवाला है सिवाय इसके और क्या काम श्रेष्ठतर है कि इसको छोड़कर जो करना चाहिये ५ रुई भरे बिछौने वस्त्रबिछाकर न बैठना चौकोर छतकी मुड़ेरी परभी बैठकर योगाभ्यास नहीं करना ७ । ८ । ९ विना आसन पृथिवीपर बैठ वा गढ़े में बैठकर यह योगाभ्यास नहीं होसक्ता इत्यभिप्रायः १० । ११ । १२ ॥ ११ ॥

तत्रैकाग्रंमनःकृत्वा यतचित्तेन्द्रियक्रियः ॥ उपविश्यासनेयुंज्याद्योगमात्मविशुद्धये ॥ १२ ॥

यतचित्तेन्द्रियक्रियः १ तत्र २ आसने ३ उपविश्य ४ मनः ५ एकाग्रम् ६ कृत्वा ७ आत्मशुद्धये ८ योगम् ९ युंज्याद् १० ॥ १२ ॥ अ० जीती हैं चित्त

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

की और इन्द्रियों की क्रिया जिसने १ सो योगी + तिस आसनपर २। ३ बैठ कर ४ मनको ५ एकाग्र करके ६। ७ अंतःकरण की शुद्धिके लिये ८ इस + योगका अभ्यासकरे ९। १० ॥ टी० ॥ अगली पिछली बातों को याद करना यह चित्त की क्रिया है देखना श्रवणादि इन्द्रियों की क्रिया हैं १ मनको सब विषयों से हटाकर आत्मा के सम्मुख करके पिछले मंत्रमें जिस प्रकारका आसन कहा उसपर बैठकर अभ्यास करै ५। ६। ७। २। ३॥ १२॥

समंकायशिरोग्रीवंधारयन्नचलंस्थिरः ॥ संप्रेक्ष्य नासिकाग्रंस्वं दिशश्चानवलोकयन् ॥ १३ ॥

कायशिरोग्रीवम् १ समम् २ अचलम् ३ धारयन् ४ स्थिरम् ५ स्वम् ६ नासिकाग्रम् ७ संप्रेक्ष्य ८ दिशः ९ च १० अनवलोकयन् ११ ॥ १३ ॥ अ० उ० चित्त के एकाग्र करने में देहकी धारणा भी बहिरंग साधन उपयोगी है उसको भी दो मंत्रोंमें कहते हैं + देहका मध्यभाग और शिर ग्रीवाको १ सम २ अचल ३ धारण करताहुआ ४ दृढ़ प्रयत्नवान् होकर ५ अपनी ६ नासिका के अग्र को ७ देख करके ८ पूर्वादि + दिशाको ९ भी १० नहीं देखताहुआ ११ आत्मपरायण होकर बैठे ॥ टी० ॥ मूलाधार से लेकर मूर्द्धातक सीधा निश्चल बैठे १। २। ३। ४ दुःख समझकर प्रयत्न में कचाई न होनेपावे सावधान होकर धीरजके सहित दृढ़ होकर बैठे जो शरीर पात होजाय तो होजाय परन्तु विना मनके शांत हुये यहां से हटना नहीं ५ नासाग्र दृष्टि में तात्पर्य यह नहीं कि नासिकाके अग्र भागको ही देखते रहना किन्तु यह तात्पर्य है कि ऐसे बैठे जैसे नासाग्रदृष्टि होकर बैठते हैं दृष्टि और वृत्ति आत्मा में लगानी योग्यहै नेत्रों को न बहुत खोलना न मीचना इत्यभिप्रायः ६। ७। ८ ॥ १३ ॥

प्रशांतात्माविगतभीर्ब्रह्मचारिव्रतेस्थितः ॥ मनः संयम्यमच्चित्तोयुक्तआसीतमत्परः ॥ १४ ॥

प्रशांतात्मा १ विगतभीः २ ब्रह्मचारिव्रतेस्थितः ३ मनः ४ संयम्य ५ मच्चित्तः ६ युक्तः ७ मत्परः ८ आसीत ९ ॥ १४ ॥ अ० ॥ भलेप्रकार शान्त हुआहै अन्तःकरण जिसका १ दूर होगयाहै भय जिसका २ ब्रह्मचर्य व्रतमें स्थित ३ मन को ४ रोककर ५ मुझ सच्चिदानन्द स्वरूपमें चित्त है जिसका ६ सो + समाहित हुआ ७ मैं सच्चिदानन्द स्वरूपही हूं परमपुरुषार्थ जिसके ८ ऐसा समझ

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

कर + बैठे ९ ॥ टी० ॥ अष्टांग मैथुन करके वर्जित ज्ञान के उपदेश करनेवाले गुरुकी टहलमें तत्पर भिक्षान्न सदा भोजन करनेवाला ३ अन्तःकरणकी वृत्तियों को उपसंहार करके ४ । ५ समाधान अप्रमत्त अनालस्य हुआ ७ परब्रह्म की प्राप्ति कोही परम पुरुषार्थ समझ ब्रह्मपर होकर ८ पूर्वोक्त आसनपर बैठकर अभ्यास करै ॥ १४ ॥

युंजन्नेवंसदात्मानं योगीनियतमानसः ॥ शांतिंनिर्वाणपरमांमत्संस्थामधिगच्छति ॥ १५ ॥

योगी १ सदा २ एवम् ३ आत्मानम् ४ युंजन् ५ नियतमानसः ६ शांतिम् ७ अधिगच्छति ८ परमाम् ९ मत्संस्थाम् १० ॥ १५ ॥ अ० उ० ॥ इस प्रकार अभ्यास करने से जो होताहै सो सुन अर्ज्जुन योगी विरक्त १ सदा २ इसप्रकार ३ शरीर इन्द्रिय प्राण अन्तःकरण को ४ समाधान करताहुआ ५ निरोध हुआहै मन जिसका ६ सो + शांतिको ७ प्राप्त होताहै ८ कैसी है वह शांति + मोक्षमें निष्ठाहै जिसकी अर्थात् मोक्षमें तात्पर्य है जिसका ९ और वह शांति + सच्चिदानन्द रूपहै १० उसको प्राप्तहोता है तात्पर्य परमगति मोक्ष को प्राप्त होताहै ॥ १५ ॥

नात्यश्नतस्तुयोगोस्तिनचैकान्तमनश्नतः ॥ नचातिस्वप्नशीलस्यजाग्रतोनैवचार्जुन ॥ १६ ॥

अर्ज्जुन १ अति २ अश्नतः ३ तु ४ योगः ५ न ६ अस्ति ७ एकांतम् ८ अनश्नतः ९ च १० न ११ अति १२ स्वप्नशीलस्य १३ च १४ न १५ जाग्रतः १६ च १७ न १८ एव १९ ॥ १६ ॥ अ० उ० ॥ ध्याननिष्ठ योगी के अब आहारादि का नियम कहते हैं दो मंत्रों में यह भी बहिरंग साधन उपयोगी है + हे अर्ज्जुन! १ बहुत २ भोजन करनेवालेको ३ भी ४ योगका फल परमानन्द ५ नहीं ६ होता ७ अर्थात् योगसिद्ध नहीं होता अत्यन्त ८ नहीं खाने वाले को ९ भी १० नहीं ११ बहुत १२ सोनेवालेको १३ भी १४ नहीं १५ + जागने वालेको १६ भी १७ नहीं १८ योग सिद्धहोता + निश्चय १९ यही बातहै॥१६॥

युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्यकर्मसु ॥ युक्तस्वप्नावबोधस्ययोगोभवतिदुःखहा ॥ १७ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

कर्मसु १ युक्तचेष्टस्य २ युक्ताहारविहारस्य ३ युक्तस्वप्नावबोधस्य ४ दुःखहा ५ योगः ६ भवति ७ ॥ १७ ॥ अ० उ० ऐसे पुरुषको योग सिद्ध होताहै + युक्त का खाना और चलनाहै जिसका १ शौच स्नानादि + कर्मों में २ प्रमितमयी हुई क्रिया है जिसकी ३ युक्तका सोना जागना है जिसका ४ उसको दुःखोंका नाश करनेवाला ५ योग ६ सिद्ध + होताहै ७ ॥ टी० ॥ चार भागमें से दो भाग तो अन्नसे एक जलसे पूर्णकरै एक भाग पवन आनेजाने के लिये खाली रक्खे तात्पर्य यह कि एक बेर कुछ क्षुधारखकर भोजन करना + द्वौ भागौ पूरयेदन्नै स्तोयेनैकं प्रपूरयेत् । मारुतस्यप्रचारार्थं चतुर्थमवशेषयेत् + सिवाय शौचस्नान भिक्षाके वृथा डोलना फिरना वे योगहै क्रियाका प्रमाण बांधना योग्यहै अर्थात् इतनीदूर जंगलजाना इतनी देरमें स्नानकरना अमुक समय इतनी देरमें भोजन करना ये सब विधि मनुआदि धर्मशास्त्र में से श्रवण करने योग्य हैं ३ रात्रि के बीचमें डेढ़पहर सोना सिवाय उसके सदा जागना योग्यहै ॥ १७ ॥

यदाविनियतंचित्तमात्मन्येवाऽवतिष्ठते ॥ निःस्पृहःसर्वकामेभ्योयुक्तइत्युच्यतेतदा ॥ १८ ॥

यदा १ विनियतम् २ चित्तम् ३ आत्मनि ४ एव ५ अवतिष्ठते ६ सर्वकामेभ्यः ७ निःस्पृहः ८ तदा ९ युक्तः १० उच्यते ११ इति १२ ॥ १८ ॥ अ० उ० ॥ किसकाल में योग सिद्धहोताहै इस अपेक्षामें कहते हैं जिस कालमें १ भलेप्रकार निरोधहुआ जीता हुआ २ चित्त ३ आत्मा में ४ ही ५ ठहरताहै ६ सब कामों से ७ दूर होगई है तृष्णा जिसकी ८ सो तिसकालमें ९ सिद्धयोगी १० कहाहै ११ यह १२ जानना योग्यहै अर्थात् जिसकालमें इस लोक व परलोककी सब कामना दूर होजावें और चित्त भलेप्रकार एकाग्र होकर आत्मामें स्थितहो जिसका सो महात्मा तिसकाल में सिद्धयोगी कहाजाताहै तात्पर्य जब ऐसा होजाय कि जैसा इस मंत्रमें कहाहै तब समझना कि मुझको अब योग सिद्धहुआ ॥ १८ ॥

यथादीपोनिवातस्थो नेंगतेसोपमास्मृता ॥ योगिनोयतचित्तस्ययुंजतोयोगमात्मनः ॥ १९ ॥

यथा १ दीपः २ निवातस्थः ३ न ४ इंगते ५ सा ६ उपमा ७ स्मृता ८ योगिनः ९ यतचित्तस्य १० आत्मनः ११ योगम् १२ युंजतः १३ ॥ १९ ॥ अ० उ० ॥ एकाग्रचित्त की उपमा यह है + जैसे १ दीपक २ पवनरहित जगह ज-

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

लताहुआ ३ नहीं ४ हलता ५ सो ६ उपमा ७ कही है ८ योगी के ९ जीतेहुये चित्तकी १० अर्थात् जिस योगी का भलेप्रकार अंतःकरण निरोधहै उस अन्तःकरणकी यह उपमाहै कि जैसे पवनरहित जगहमें जलताहुआ दीवा नहीं हलता ऐसेही उसयोगीका चित्त स्थिर रहता है फिर कैसाहै वह योगी कि जिसका चित्त स्थिर रहताहै सो कहते हैं + आत्माकी ११ प्राप्तिके लिये + आत्मध्यान योगके १२ अनुष्ठान करनेवाले का १३ चित्त स्थिर रहताहै ॥ १९ ॥

यत्रोपरमतेचित्तं निरुद्धंयोगसेवया ॥ यत्रचैवात्मनात्मानं पश्यन्नात्मनितुष्यति ॥ २० ॥

यत्र १ योगसेवया २ निरुद्धम् ३ चित्तम् ४ उपरमते ५ यत्र ६ च ७ आत्मना ८ आत्मानम् ९ एव १० पश्यन् ११ आत्मनि १२ तुष्यति १३ ॥ २० ॥ अ० उ० ॥ जिस कालमें १ समाधियोगका अनुष्ठान करके २ निरोध हुआ ३ चित्त ४ संसार से + उपराम होताहै ५ और जिस कालमें ६ । ७ समाधि करके शुद्ध किया हुआ जो अन्तःकरण तिस + अन्तःकरण करके ८ परम चैतन्य ज्योतिस्वरूप आत्माको ९ ही १० देखता हुआ ११ अर्थात् आत्मा को प्राप्त हुआ ११ सच्चिदानन्द स्वरूप आत्मामें १२ सन्तुष्ट होताहै १३ तिसकाल में योग की सिद्धि होती है ॥ २० ॥

सुखमात्यन्तिकंयत्तद्बुद्धिग्राह्यमतीन्द्रियम् ॥ वेत्तियत्रनचैवायं स्थितश्चलतितत्त्वतः ॥ २१ ॥

यत् १ आत्यंतिकम् २ सुखम् ३ अतीन्द्रियम् ४ बुद्धिग्राह्यम् ५ यत्र ६ च ७ अयम् ८ स्थितः ९ तत् १० वेत्ति ११ तत्त्वतः १२ एव १३ न १४ चलति १५ ॥ २१ ॥ अ० उ० + जो १ अत्यन्त २ सुख ३ इन्द्रियों का विषय नहीं ४ अपने अनुभव करके ग्रहण होताहै ५ और जिस कालमें ६ । ७ यह ८ विद्वान् ९ आत्म स्वरूप में + स्थितहुआ ९ तिसको अर्थात् तिस सुखको १० अनुभव करताहै ११ आत्म + तत्त्व से १२ भी १३ नहीं १४ चलता १५ तिसकाल में योग की सिद्धि होती है ॥ २१ ॥

यंलब्ध्वाचापरंलाभंमन्यतेनाधिकंततः ॥ यस्मिन्स्थितोनदुःखेन गुरुणापिविचाल्यते ॥ २२ ॥

यम् १ लब्ध्वा २ अपरम् ३ अधिकम् ४ लाभम् ५ न ६ मन्यते ७ ततः ८

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

यस्मिन् ९ च १० स्थितः ११ गुरुणा १२ दुःखेन १३ अपि १४ न १५ विचाल्यते १६ ॥ २२ ॥ अ० + जिसको अर्थात् आत्माको १ प्राप्त होकर २ अपर ३ अधिक ४ लाभ ५ नहीं ६ मानताहै ७ तिससे अर्थात् आत्माके लाभसे ८ और जिसमें अर्थात् आत्मामें ९ । १० स्थितहुआ ११ बड़े १२ दुःखकरके १३ भी १४ नहीं १५ विचलता है १६ ॥ २२ ॥

तंविद्याद्दुःखसंयोगवियोगंयोगसंज्ञितम् ॥ स निश्चयेनयोक्तव्योयोगोनिर्विण्णचेतसा ॥ २३ ॥

तम् १ योगसंज्ञितम् २ विद्याद् ३ दुःखसंयोगवियोगम् ४ सः ५ योगः ६ अनिर्विण्णचेतसा ७ निश्चयेन ८ योक्तव्यः ९ ॥ २३ ॥ अ० उ० + पिछले तीन मंत्रों में जो आत्मा की अवस्था विशेष कही + तिसको १ योगसंज्ञित २ जान तू ३ अर्थात् योगहै संज्ञा जिसकी तात्पर्य जिस अवस्था विशेष का योग नामहै उसी को तू योग जान् पिछले तीन मंत्रों में जो आत्माकी अवस्था विशेष कही उसी का नाम योगहै कैसाहै वह योग + दुःख के संयोग का वियोगहै जिसमें अर्थात् दुःख और विषयसम्बन्धी सुख जहां कोई नहीं केवल निरतिशय आनन्द है विषय सम्बन्ध सुख भी विद्वान् की दृष्टि में दुःखोंका मूलहै क्योंकि अतिशय वाला सुख दुःख रूपहै इस जगह योग शब्दको विपरीत लक्षण समझना क्योंकि इस जगह वियोग का नाम जो योगसंज्ञित है यह विपरीत अलंकार कहलाताहै जैसे सुन्दरको वे सुन्दर कहना + सो ५ योग ६ अनिर्विण्ण चित्त करके ७ शास्त्र आचार्यों से + निश्चय करके ८ अनुष्ठान करना योग्य है ९ अर्थात् आत्मा में तत्पर होना योग्यहै + टी० + दुःख बुद्धि करके प्रयत्न की जो शिथिलता उस को छोड़कर अर्थात् चित्तमें यही नहीं चिंतन करना कि इसमें तो दुःख प्रतीत होता है पीछे का आनन्द फल किसने देखाहै ऐसा समझकर चित्तको कच्चा न करै वारंवार उत्साह धीरजकरै ॥ २३ ॥

सङ्कल्पप्रभवान्कामांस्त्यक्त्वासर्वानशेषतः ॥ मनसैवेन्द्रियग्रामंविनियम्यसमन्ततः ॥ २४ ॥ शनैः शनैरुपरमेद्बुध्याधृतिगृहीतया ॥ आत्मसंस्थंमनः कृत्वानकिंचिदपिचिन्तयेत् ॥ २५ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

संकल्पप्रभवान् १ कामान् २ सर्वान् ३ अशेषतः ४ त्यक्त्वा ५ मनसा ६ एव ७ समन्ततः ८ इन्द्रियग्रामम् ९ नियम्य १० ॥ २४ ॥ शनैः १ शनैः २ उपरमेत् ३ धृतिगृहीतया ४ बुद्ध्या ५ मनः ६ आत्मसंस्थम् ७ कृत्वा ८ किंचित् ९ अपि १० न ११ चिन्तयेत् १२ ॥ २५ ॥ अ०+संकल्पसे उत्पन्न होती हैं १ योगकी वैरी जो+कामना २ तिन+सबको ३ समूल ४ त्यागकरके ५ विवेकयुक्त+मन करके ६ निश्चय ७ सब तरफ़ से ८ इन्द्रियों के समूहको ९ रोककर १० ॥ २४ ॥ सहज १ सहज २ अर्थात् अभ्यास क्रमकरके संसार से+उपरामहो ३ अर्थात् देखने सुनने बोलने खाने सोने आदि क्रियाओं से मनको शनैः शनैः हटा कर आत्मामें दिन दिन प्रति विशेष लगाना योग्य है+धीरज के सहित ४ बुद्धि करके ५ अर्थात् धीरज करके वश में करीहुई जो बुद्धि तिसकरके ५ मनको ६ आत्मामें भलेप्रकार स्थित ७ करके ८ अर्थात् यह सब आत्माही है आत्मासे पृथक् कुछभी नहीं इसप्रकार मनको आत्माकार करके ८ कुछ ९ भी १० न ११ चिन्तन करे १२ यही योगकी परम अवधिहै+टी०+चौथे मंत्रको+चित्तसे किंचित्मात्र भी चिन्तन किया और कामना उत्पन्नहुई इसवास्ते विषयों का चिन्तन करनाही अनर्थका हेतुहै १ सर्वान् अशेषतः इन दोनों पदों के अर्थ में कुछ भेद नहीं प्रतीत होता दो पद के कहने से तात्पर्य श्रीमहाराजका यह है कि इस लोक परलोक की कामना गंधमात्र भी न रहने पावे कामसे अन्तःकरण को निर्लेप करदेना योग्य है ३ । ४ शब्दादि विषयों से ८ सब इन्द्रियों को ९ निरोधकरके १० पूर्वोक्त योगका अनुष्ठान करना योग्य है ॥ २५ ॥

यतोयतोनिश्चरतिमनश्चंचलमस्थिरम् ॥ ततस्ततोनियम्यैतदात्मन्येववशंनयेत् ॥ २६ ॥

अस्थिरम् १ चंचलम् २ मनः ३ यतः ४ यतः ५ निश्चरति ६ ततः ७ ततः ८ नियम्य ९ एतद् १० आत्मनि ११ एव १२ वशम् १३ नयेत् १४ ॥ २६ ॥ अ० उ०+विचारने से भी जो कदाचित् रजोगुण के वशसे मन न ठहरे आत्मा में तो फिर प्रत्याहार करके ठहराना योग्यहै सोई कहते हैं+अस्थिर १ चंचल २ मन ३ जिस ४ जिस ५ विषय में+जावे ६ तहां ७ तहां से ८ रोककर ९ इसको १० अर्थात् मनको १० आत्मामें ११ ही १२ वश १३ करे १४ अर्थात् आत्मामें ही स्थिरकरे+टी०+मनका स्वभावही यहहै कि एक जगह नहीं ठ-

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

हरता सदा का चंचलहै १। २ इसप्रकार अभ्यास करनेसे यह मन अस्थिर स्थिर होजाताहै आत्मामें इसवास्ते मनपर सदा दृष्टि रखनी योग्यहै ॥ २६ ॥

प्रशान्तमनसंह्येनंयोगिनंसुखमुत्तमम् ॥ उपैति शान्तरजसंब्रह्मभूतमकल्मषम् ॥ २७ ॥

एनम् १ योगिनम् २ हि ३ उत्तमम् ४ सुखम् ५ उपैति ६ शान्तरजसम् ७ प्रशान्तमनसम् ८ ब्रह्मभूतम् ९ अकल्मषम् १० ॥ २७ ॥ अ० उ०+ इसप्रकार अभ्यास करने से रजोगुणका नाश होताहै रजोगुणका नाशहोने से योगका फल आत्मसुख प्राप्तहोता है यह कहते हैं+इस योगीको १। २ ही ३ उत्तम ४ सुख ५ प्राप्तहोता है ६ कैसाहै यह योगी+शान्तहोगया है रजोगुण जिसका ७ भले प्रकार शान्त होगया है मन जिसका ८ जीवन्मुक्त ९ निष्पाप अर्थात् धर्म अधर्म करके वर्जित १० ऐसे योगीको निरतिशय सुख प्राप्तहोता है ॥ २७ ॥

युंजन्नेवंसदात्मानंयोगीविगतकल्मषः ॥ सुखेन ब्रह्मसंस्पर्शमत्यंतंसुखमश्नुते ॥ २८ ॥

एवम् १ योगी २ सदा ३ आत्मानम् ४ युंजन् ५ अत्यन्तम् ६ सुखम् ७ अश्नुते ८ विगतकल्मषः ९ सुखेन १० ब्रह्मसंस्पर्शम् ११ ॥ २८ ॥ अ० इसप्रकार १ योगी २ सदा ३ मनको ४ वशकरताहुआ ५ अत्यन्त ६ सुखको ७ अर्थात् निरतिशय सुखको ७ प्राप्तहोता है ८ कैसा है वह योगी+दूरहोगये हैं पाप जिसके ९ सो वह फिर कैसे सुख को प्राप्तहोताहै अर्थात् कैसा है वह सुख+अनायास करके १० ब्रह्मजीवका स्पर्श है जिसमें ११ अर्थात् जीव ब्रह्मकी एकताको प्राप्त होताहै जिसको अखण्डानन्द साक्षात्कार कहते हैं तात्पर्य जीवन्मुक्त होजाता है जीवतेहुयेही उस नित्य अखण्डानन्द को अनुभव करताहै ॥ २८ ॥

सर्वभूतस्थमात्मानं सर्वभूतानिचात्मनि ॥ ईक्षते योगयुक्तात्मा सर्वत्रसमदर्शनः ॥ २९ ॥

योगयुक्तात्मा १ सर्वत्र २ समदर्शनः ३ आत्मानम् ४ सर्वभूतस्थम् ५ सर्वभूतानि ६ च ७ आत्मनि ८ ईक्षते ९ ॥ २९ ॥ अ० उ० अब इस योगका फल जीव ब्रह्मकी एकताको दिखाते हैं+योग करके युक्त है अन्तःकरण जिसका अर्थात् समाहित अन्तःकरणवाला १ सब जगह २ सम देखनेवाला ३ अपने+

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

आत्माको ४ सबभूतों में स्थित ५ और सब भूतोंको ६। ७ अपने + आत्मामें देखता है ॥ टी० ॥ ब्रह्माजी से लेकर चींटी पर्यंत आत्माकी एकता देखता है ६ सब विषयभूतोंमें ब्रह्माजी से लेकर स्थावरपर्यंत निर्विशेष ब्रह्म और आत्मा की एकता का ज्ञानहै जिसके सो सर्वत्र सम देखनेवाला है ॥२९ ॥

योमांपश्यतिसर्वत्र सर्वंचमयिपश्यति ॥ तस्याहंनप्रणश्यामिसचमेनप्रणश्यति ॥ ३० ॥

यः १ माम् २ सर्व्वत्र ३ पश्यति ४ सर्व्वम् ५ च ६ मयि ७ पश्यति ८ तस्य ९ अहम् १० न ११ प्रणश्यामि १२ सः १३ च १४ मे १५ न १६ प्रणश्यति १७ ॥ ३० ॥ अ० उ० ॥ जीव ब्रह्म की एकता देखने का फल कहते हैं यही मुख्य उपासना परमेश्वर की है + जो १ मुझ सच्चिदानन्द परमेश्वर को २ सर्वत्र ३ देखताहै ४ और सबको ५। ६ मुझमें ७ देखताहै ८ अर्थात् मुझ सबके आत्माको सब भूतों में और सब भूतोंको मुझ सब भूतों के आत्मा में जो देखताहै + तिसको ९ मैं १० नहीं ११ परोक्षहूं १२ अर्थात् जो ऐसे समझता है उसीको मैं साक्षात्कार हूं वही मेरा दर्शन करताहै आत्मासे पृथक् मैं नहीं + और सो १३। १४ विद्वान् १४ मुझको १५ नहीं १६ परोक्षहै १७ अर्थात् वह मेरी आत्माहै वही मुझको सदा अपरोक्षहै इसी हेतुसे ब्रह्मका जाननेवाला ब्रह्म कहलाताहै मुझमें और ज्ञानी में किंचित् भेद नहीं ॥ ३० ॥

सर्वभूतस्थितंयोमां भजत्येकत्वमास्थितः ॥ सर्वथावर्त्तमानोऽपि सयोगीमयिवर्त्तते ॥ ३१ ॥

एकत्वम् १ आस्थितः २ यः ३ माम् ४ सर्वभूतस्थितम् ५ भजति ६ सः ७ योगी ८ सर्वथा ९ वर्त्तमानः १० अपि ११ मयि १२ वर्त्तते १३ ॥ ३१ ॥ अ० उ० ॥ पूर्व मंत्रोक्त ज्ञानी विधि निषेधका दास नहीं अर्थात् परतंत्र नहीं स्वतंत्र है यह कहते हैं + ब्रह्मके साथ + एकता को १ प्राप्तहुआ २ अर्थात् सच्चिदानन्द स्वरूप अपने प्रत्येक आत्माको पूर्णब्रह्म जानताहुआ २ जो ३ मुझ सच्चिदानन्द सब भूतों में स्थित को ४। ५ भजता है अर्थात् यह सब वासुदेव है ऐसे जो समझताहै + सो ७ योगी ज्ञानी ८ सर्वथा ९ वर्त्तमान १० भी ११ मुझ सच्चिदानन्द स्वरूप में वर्तताहै १२। १३ ॥ टी० ॥ विधि निषेधको उल्लंघकर भी जो विद्वान् का व्यवहार किसी को प्रतीत होताहो तो भी विद्वान् वेदों के साक्षी से

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

ब्रह्ममेंही विहार करताहै विधि निषेध अज्ञानियों के वास्ते है विद्वानोंका व्यवहार प्रातीतक विदेह मुक्तिमें क्षति करनेवाला नहीं यह बात आनन्दामृतवर्षिणी तृतीयअध्यायमें भले प्रकार स्पष्ट कीगई है द्रष्टव्यम् ॥ ३१ ॥

आत्मौपम्येनसर्वत्र समंपश्यतियोऽर्जुन ॥ सुखं वायदिवादुःखं सयोगीपरमोमतः ॥ ३२ ॥

अर्जुन १ यः २ आत्मौपम्येन ३ सर्वत्र ४ समम् ५ पश्यति ६ सुखम् ७ वा ८ यदि ९ वा १० दुःखं ११ सः १२ योगी १३ परमः १४ मतः १५ ॥ ३२ ॥ अ० उ० ज्ञानियों में ऐसा ज्ञानी श्रेष्ठहै + हे अर्जुन १ जो २ विद्वान् २ आत्माकी उपमा करके ३ सर्वत्र ४ सम ५ देखताहै ६ सुखको ७ भी ८ और ९ दुःखको भी १० । ११ सो १२ विद्वान् १३ श्रेष्ठ १४ मानाहै १५ महात्मा पुरुषों ने अर्थात् महात्मा ऐसे विद्वान्को उत्तम मानते हैं ॥ टी० ॥ जैसे इष्ट अनिष्ट की प्राप्तिमें मुझको दुःख सुख होताहै ऐसेही सबको होताहै इसवास्ते जहां तक होसके किसी को शरीर मन वाणी से दुःख नहीं देना सुख देना योग्यहै आपको सुख तो शूकर कूकरभी चाहते प्रयत्न करते हैं दूसरे को सुख देना परोपकार करना सज्जनों का कामहै नहीं तो पशु पक्षी मनुष्यों में क्या विशेषताहुई अथवा ऐसेही सब जीव हैं आत्मासे दूसरे को नीच समझना नीचों का काम है आत्मदृष्टिकरके और देहदृष्टि करके भी सम देखना योग्यहै क्योंकि देह सबके अनित्य है और आत्मा सबका नित्यहै यह विचार परमार्थ का है व्यवहार में परमार्थ नहीं मिलसक्ता ॥ ३२ ॥

अर्जुनउवाच ॥ योऽयंयोगस्त्वयाप्रोक्तःसाम्येन मधुसूदन ॥ एतस्याहंनपश्यामिचंचलत्वात्स्थितिं स्थिराम् ॥ ३३ ॥

मधुसूदन १ अयम् २ यः ३ योगः ४ साम्येन ५ त्वया ६ प्रोक्तः ७ एतस्य ८ स्थिराम् ९ स्थितिम् १० अहम् ११ न १२ पश्यामि १३ चंचलत्वात् १४ ॥ ३३ ॥ अ० उ० श्रीभगवान् का यह उपदेश सुनकर अर्जुनने विचार किया कि श्रीमहाराज जो कहते हैं वह तो सब सत्यहै परन्तु मन लय विक्षेपरहित होकर आत्माकार सम दीर्घकाल स्थित रहै यह मेरी कम समझसे मुझको असम्भाव प्रतीत होताहै इसी हेतुसे कहेहुये लक्षण श्रीमहाराजके में असम्भाव दोष मानता

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

हुआ अर्जुन प्रश्न करताहै जिज्ञासा करके दो श्लोकों में + हे कृष्णचन्द्र १ यह २ जो ३ योग ४ समता करके ५ आपने ६ कहा ७ इसकी ८ दीर्घकाल ९ स्थिति १० मैं ११ नहीं १२ देखताहूं १३ अर्थात् क्षण दो क्षण घड़ी दो घड़ी मन लय विक्षेप रहित होकर समता को प्राप्त होजाय यह तो सम्भाव होसक्ता है परन्तु सदा अथवा दिन रात्रिमें पांच चार पहर मन सम आत्माकार रहे यह मेरी कम समझ से असम्भावहै क्योंकि मनको + चंचल होनेसे १४ अर्थात् मन तो चंचलहै वह कैसे ठहर सक्ताहै ॥ ३३ ॥

चंचलंहिमनःकृष्णप्रमाथिबलवद्दृढं ॥ तस्याहंनिग्रहंमन्येवायोरिवसुदुष्करम् ॥ ३४ ॥

अ० उ० + सिवाय चंचल होनेके जो मनमें और भी दोषहैं उनको भी प्रकट करताहै अर्जुन + हे भगवन् १ मन २ चंचल ३ है यह तो असिद्धही है ४ सिवाय इसके जो इसमें और भी दोषहैं उनको सुनिये प्रथम तो चंचल दूसरे + प्रथम न स्वभाववाला अर्थात् शरीर इन्द्रियों को विक्षेप करनेवाला और परवश करनेवालाहै ५ तीसरे यह कि ५ बलवाला ६ ऐसाहै विवेकी जनोंके वशमें भी नहीं रहता अर्थात् जो भलेप्रकार शोचते समझते भी हैं कि इसकाम करनेमें यह यह दोष और यह यह दुःखहैं तो भी मन के वशहोकर उसी काममें प्रवृत्त होते हैं चौथे यह कि अनादि काल कालका शब्दादि विषयों की वासना में ऐसा + दृढ ७ बँधाहुआ है कि अनेक कर्म उपासनादि करते भी हैं तो भी विषयों से पृथक् नहीं होताहै परमेश्वर आपकी कृपासे जो होजाय वह तो सब सत्यहै परंतु मैंतो मनका निरोध पवनवत् अति कठिन समझताहूं यह अभिप्रायहै इसीको अक्षरमें योजना करते हैं + तिस्का ८ अर्थात् मनका निग्रह ९ वायु १० वत् ११ अति कठिन १२ मैं १३ मानताहूं १४ जैसे पवन का रोकना विषयों से कठिन प्रतीत होताहै ॥ ३४ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ असंशयंमहाबाहोमनोदुर्निग्रहंचलम् ॥ अभ्यासेनतुकौन्तेयवैराग्येणचगृह्यते ॥ ३५ ॥

महाबाहो १ असंशयम् २ मनः ३ दुर्निग्रहम् ४ चलम् ५ कौन्तेय ६ अभ्यासेन ७ तु ८ वैराग्येण ९ च १० गृह्यते ११ ॥ ३५ ॥ अ० उ० अर्जुन ने जो मनकी गति कही इसको अंगीकार करके श्रीभगवान् मनके निरोधका उपाय

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

बताते हैं + हे अर्ज्जुन १ पीछे दो मंत्रों में जो तुमने मनकी गति कही सो सत्य है + नहीं है संशय उसमें २ मन ३ दुर्निग्रह ४ है अर्थात् मनका रोकना कठिन है और कैसा है यह मन कि + चलताही रहता है कभी स्थिर नहीं होता ५ परंतु + हे अर्ज्जुन ६ अभ्यास करके ७ तो ८ और वैराग्य करके ९। १० वश में होसक्ताहै ११ ॥ टी० ॥ मनकी जो गतिहैं लय और विक्षेप लय अभ्यास करके विक्षेप वैराग्य करके दूर होताहै + विजातीय का तिरस्कार करके सजातीय का प्रवाह करना अर्थात् वृत्तिको आत्माकार करना इसको अभ्यास कहते हैं और विषयों में दोष दृष्टि करनी इसको वैराग्य कहते हैं और भी वैराग्यके लक्षण जहां तहां मोक्षशास्त्रमें प्रसिद्धहैं वश करनेके मुख्य ये दोही उपायहैं इनको छोड़ जो पृथक् यत्न करते हैं वे वृथा मृगतृष्णावत् भ्रमते हैं यह अभ्यास वैराग्य तो हो नहीं सक्ता वृथा, साधु महात्मा महापुरुषों में वाक्यवादी माथा मारते हैं अर्थात् वारंवार यही बूझते हैं कि महाराज मनका निरोध जैसे हो ऐसीकोई रीति कहो हजारोंवेर मनके निरोधका उपाय वैराग्यको सुनते हैं तो भी माथा मारतेही रहते हैं कभी क्षणमात्र अनुष्ठान करने को तो प्रसंगहै अनुष्ठान करनेवाले को यह याद रहे कि वैराग्य और अभ्यास में वैराग्य प्रथम पीछे अभ्यास होसक्ताहै पाठ क्रम से अर्थ क्रम बलवान् होताहै ॥ ३५ ॥

असंयतात्मनायोगोदुष्प्रापइतिमेमतिः ॥ वश्यात्मनातुयततताशक्योऽवाप्तुमुपायतः ॥ ३६ ॥

असंयतात्मना १ योगः २ दुःप्राप ३ इति ४ मे ५ मतिः ६ वश्यात्मना ७ यतता ८ तु ९ उपायतः १० अवाप्तुम् ११ शक्यः १२ ॥ ३६ ॥ अ० नहीं भले प्रकार जीताहै मन जिसने १ उसको + योग २ प्राप्तहोना कठिनहै ३ यह ४ मेरी ५ समझ ६ है अर्थात् यह मेरा निश्चय कियाहुआहै और + वशवर्त्ति है मन जिसका अर्थात् मन जिसके वशमें है उस ७ यत्न करनेवाले को ८ तो ९ वैराग्य और अभ्यास इनहीं दोनों + उपायसे १० योग + प्राप्त होनेको ११ शक्य है अर्थात् प्राप्त होसक्ताहै १२ ॥ टी० ॥ जीव ब्रह्मकी एकताका नाम योगहै २ तात्पर्य वैराग्य अभ्यास करके जिसने मन वश कियाहै उसको नित्य अखण्डानन्द की प्राप्ति होती है विना वैराग्य अभ्यास के कोई आशा आनन्द छाया की भी न रक्खै ॥ ३६ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

अर्जुनउवाच ॥ अयतिःश्रद्धयोपेतोयोगाच्चलितमानसः ॥ अप्राप्ययोगसंसिद्धिंकांगतिंकृष्ण गच्छति ॥ ३७ ॥

श्रद्धया १ उपेतः २ योगात् ३ चलितमानसः ४ अयतिः ५ योगसंसिद्धिम् ६ अप्राप्य ७ काम् ८ गतिम् ९ गच्छति १० कृष्ण ११ ॥ ३७ ॥ अ० उ० शास्त्रकी विधिको सुन समझकर बहिरङ्ग नित्यादि कर्मोंको त्यागकरके श्रद्धा पूर्व्वक जो कोई मुमुक्षु ज्ञानमार्गमें प्रवृत्तहो अर्थात् वेदान्त शास्त्रके श्रवणादिमें तत्परहो और प्रारब्धवशात् वा किसी प्रतिबंधसे ज्ञान प्राप्त न हो और वैराग्य अभ्यासमें भी शिथिल होजाय और मनविषयों की तरफ लगजाय ऐसे पुरुषकी क्या गति होगी क्योंकि कर्मोंके त्यागदेनेसे तो उसको स्वर्गादिकी प्राप्ति न होगी और ज्ञान न होने से वह मुक्त न होगा और श्रद्धापूर्व्वक ज्ञानयोगमें प्रवृत्तहोनेसे उसको गति होनी न चाहिये क्योंकि ब्रह्मविद्या के लक्षण मात्र श्रवण करनेका अत्यन्त माहात्म्य है यह संशय करके अर्जुन प्रश्नकरता है + ज्ञानयोग में + श्रद्धा करके १ युक्त २ अर्थात् ज्ञानयोगमें श्रद्धावान् और किसी प्रतिबन्ध करके अर्थात् किसी हेतु करके + ज्ञानयोग से ३ चलित होगयाहै मन जिसका ४ अर्थात् श्रवणादि से हटकर विषयों में लगगयाहै मन जिसका + नहीं यत्नकिया है ५ भले प्रकार वैराग्य अभ्यास में जिसने अर्थात् मन्द वैराग्य शिथिल अभ्यास रहाहै जो सो मुमुक्षु + योगकी सिद्धिको अर्थात् जीव ब्रह्मकी एकता के ज्ञानको ६ नहीं प्राप्तहोकर ७ किस ८ गतिको ९ प्राप्तहोताहै १० हे कृष्णचन्द्र महाराज ११ ॥ ३७ ॥

कच्चिन्नोभयविभ्रष्टश्छिन्नाभ्रमिवनश्यति ॥ अप्रतिष्ठोमहाबाहोविमूढोब्रह्मणःपथि ॥ ३८ ॥

उभय विभ्रष्टः १ छिन्नाभ्रम् २ इव ३ कच्चित् ४ नश्यति ५ न ६ महाबाहो ७ ब्रह्मणः ८ पथि ९ विमूढः १० अप्रतिष्ठः ११ ॥ ३८ ॥ अ० कर्म मार्ग और ज्ञान मार्ग में + उभय भ्रष्टहुआ १ छिन्नाभ्र २ वत् ३ अर्थात् बादल के टूटकी तरह + क्या ४ नाशहोजाता है ५ क्या नहीं + ६ नाशहोता + हे कृष्णचन्द्र ७ कैसाहै वह अयति + ब्रह्म के ८ मार्ग में ९ विमूढ हुआ १० निराश्रय ११ है अर्थात् उसको न कर्म योगका आश्रयरहा न ज्ञानयोगका ॥ टी० ॥ जैसे बादलका

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

टूक एक बादलमें से पृथक् होकर पवन के बादल दूसरे बादल की ओर जाता हुआ बीचमें ही नाश होजाताहै ३ ब्रह्मकी प्राप्ति के उपाय वैराग्य अभ्यास में ८। ९ शिथिलहुआ अर्थात् मन्दबुद्धि हुआ १० ॥ ३८ ॥

एतन्मेसंशयंकृष्णछेत्तुमर्हस्यशेषतः॥ त्वदन्यः संशयस्यास्यछेत्तानह्युपपद्यते ॥ ३९ ॥

कृष्ण १ अशेषतः २ एतद् ३ मे ४ संशयम् ५ छेत्तुम् ६ हि ७ अर्हसि ८ त्वदन्यः ९ अस्य १० संशयस्य ११ छेत्ता १२ न १३ उपपद्यते १४ ॥ ३९ ॥ अ० हे कृष्णचन्द्र १ समस्त २ इस ३ मेरे ४ संशय ५ छेदन करने को ६ आप + ही ७ योग्यहो ८ आपसे पृथक् ९ इस १० संशयका ११ दूर करनेवाला १२ नाशकरनेवाला १२ छेदन करनेवाला १२ नहीं १३ प्रतीत होताहै १४ कोई मुझको आप सर्वज्ञहैं यह संशय आपही नाश करसक्ते हैं ॥ ३९ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ पार्थनैवेहनामुत्रविनाशस्तस्यविद्यते ॥ नहिकल्याणकृत्कश्चिद्दुर्गतिंतातगच्छति ॥ ४० ॥

पार्थ १ तस्य २ विनाशः ३ न ४ एव ५ इह ६ न ७ अमुत्र ८ विद्यते ९ कल्याणकृत १० कश्चित् ११ हि १२ दुर्गतिम् १३ न १४ गच्छति १५ तात १६ ॥ ४० ॥ अ० उ० हे अर्जुन १ तिसका २ अर्थात् ज्ञाननिष्ठ मुमुक्षुका ३ नाश ३ न ४ तो ५ इसलोकमें ६ न ७ परलोकमें ८ होताहै ९ अर्थात् पूर्व जन्मसे नीच जन्मकी प्राप्ति नहीं होती तात्पर्य उसकी हानि क्षति न इसलोक में न परलोकमें क्योंकि + शुभकर्म्म करनेवाला १० कोई ११ भी १२ दुर्गति को १३ नहीं १४ प्राप्तहोता १५ हे तात १६ और यह तो बहुत उत्तम शुभ करनेवाला है क्योंकि श्रद्धापूर्वक जो ज्ञानयोग में प्रवृत्तहुआ है तात्पर्य श्रद्धापूर्वक जो ज्ञान योगमें प्रवृत्त होताहै और किसी प्रतिबन्ध से जो उसको ज्ञान प्राप्त न हो अथवा मुमुक्षुही मन्द प्रयत्न रहे अर्थात् आत्मा की प्राप्ति के लिये भले प्रकार प्रयत्न न करे और विना ज्ञान के उसका देहपात होजाय तो उसको विद्वान् लोग बुरा नहीं कहते न परलोक में उसको नरक की प्राप्ति होती है न पूर्व जन्मसे हीन जन्म की प्राप्ति होतीहै जो उसकी गति होती है सो अगले मंत्रों में कहते हैं इसी हेतुसे इस मंत्रमें यह कहा कि उसका इसलोक परलोक में नाश नहीं होता ॥ ४० ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

प्राप्यपुण्यकृतांल्लोकानुषित्वाशाश्वतीःसमाः ॥
शुचीनांश्रीमतांगेहेयोगभ्रष्टोऽभिजायते ॥ ४१ ॥

पुण्यकृतान् १ लोकान् २ प्राप्य ३ शाश्वतीः ४ समाः ५ उषित्वा ६ शुचीनाम् ७ श्रीमताम् ८ गेहे ९ योगभ्रष्टः १० अभिजायते ११ ॥ ४१ ॥ अ० उ० जो योगभ्रष्ट दुर्गति को नहीं प्राप्तहोता तो फिर किस गतिको प्राप्त होताहै इस अपेक्षा में कहते हैं + पुण्यकारी पुरुषों के १ लोकों को २ प्राप्तहोकर ३ अर्थात् अश्वमेधादि यज्ञों के करनेवाले जिन लोकों में जाते हैं लाखों वर्ष वहां ४।५ वस कर + पवित्र ७ धन वालों के ८ घरमें ९ योगभ्रष्ट १० जन्मलेताहै ११ तात्पर्य वेदोक्त मार्ग में चलनेवाले श्रीमानों के कुल में योगभ्रष्ट उत्पन्न होताहै कुमार्गियों के कुपात्र उत्पन्न होते हैं ॥ ४१ ॥

अथवायोगिनामेवकुलेभवतिधीमताम् ॥ एतद्धिदुर्लभतरंलोकेजन्मयदीदृशम् ॥ ४२ ॥

अथवा १ धीमताम् २ योगिनाम् ३ एव ४ कुले ५ भवति ६ लोके ७ यत् ८ ईदृशम् ९ जन्म १० एतद् ११ हि १२ दुर्लभतरम् १३ ॥ ४२ ॥ अ० उ० ब्रह्मको परोक्ष समझकर जिसने थोड़ाही कभी कभी ब्रह्म विचार किया था उस की गतितो पिछले मंत्रमें कही + अब पक्षान्तर उसकी गति कहते हैं अथवा यह शब्द पक्षान्तर में भी आताहै १ तात्पर्य अब इस मंत्रमें उसकी गति कहते हैं कि जिसने बहुत ब्रह्म विचारकिया था और अपरोक्ष ज्ञानहोने में कुछ थोड़ाही काल रहा था सो योग भ्रष्ट + ज्ञानवान् २ योगियों के ३ ही ४ कुलमें ५ उत्पन्न + होता है ६ इस + लोकमें ७ जो ८ ऐसा ९ जन्म १० यह ११ ही १२ बहुत दुर्लभ है १३ क्योंकि ज्ञानियों के कुलमें जन्महोना मोक्षका हेतुहै कर्मकांडी धन वालों के कुलमें नानाप्रकार का विक्षेप होनेसे उसी जन्ममें मोक्ष होजाना कठिन प्रतीत होताहै + नास्य कुले ब्रह्मविद्भवति इति श्रुतिः + यहां वेद प्रमाण है कि ज्ञानी के कुलमें अज्ञानी नहीं उत्पन्न होना अर्थात् ज्ञानीहोजाताहै उत्पन्न होकर + तात्पर्य इस लोकमें विचार करना आत्मतत्त्वका यही दुर्लभहै भोग तो सबलोकों में बराबर हैं अर्थात् पशु पक्षी आदमी देवतादि के भी भोग दुःख के देनेमें सब सम हैं केवल आकृतिका भेदहै जो राजा को रानी में आनन्द वही कङ्गाल को अपनी स्त्री में और कूकर को कूकरी में वही आनन्दहै खाना सोना मैथुन भयआदि सब

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

जीवन में समहैं मनुष्य देहमें एक ब्रह्मज्ञानही विशेष है जिसको ब्रह्मज्ञान नहीं, सो पशु पक्षियों से भी नीच है क्योंकि पशु पक्षियों का तो अज्ञान एक धर्म है उनको बुरा कहना नहीं बनता इस मनुष्य निर्भाग ने मनुष्यदेह पाकर जो ब्रह्मज्ञान न सम्पादन किया तो फिर क्या अलौकिक पदार्थ सम्पादन किया + आहार निद्रा भय मैथुनंच सामान्यमेतत्पशुमानवानाम् + ज्ञानंनराणामधिको विशेषः ज्ञानेनहीनः पशुभिः समानः ॥ ४२ ॥

तत्रतंबुद्धिसंयोगंलभतेपौर्वदेहिकम् ॥ यततेचततोभूयःसंसिद्धौकुरुनन्दन ॥ ४३ ॥

तम् १ बुद्धियोगम् २ पौर्वदेहिकम् ३ तत्र ४ लभते ५ कुरुनन्दन ६ ततः ७ भूयः ८ संसिद्धौ ९ च १० यतते ११ ॥ ४३ ॥ अ० तिस १ ज्ञान योगको २ पूर्व देहमें जिसके जानने की इच्छाकरके अभ्यास करता था उसी को ३ श्रीमानों के कुलमें अर्थात् कर्म्मकाण्डियों के कुलमें अथवा ज्ञानियों के कुलमें ४ प्राप्त होताहै ५ हे अर्ज्जुन ६ फिर ७ अधिक ८ मोक्षमें ९ ही १० अर्थात् मुक्तिके वास्तेही यत्न करता है ॥ ४३ ॥

पूर्वाभ्यासेनतेनैव ह्रियतेह्यवशोपिसः ॥ जिज्ञासुरपियोगस्य शब्दब्रह्माऽतिवर्त्तते ॥ ४४ ॥

सः १ अवशः २ अपि ३ हि ४ तेन ५ एव ६ पूर्वाभ्यासेन ७ ह्रियते ८ योगस्य ९ जिज्ञासुः १० अपि ११ शब्दब्रह्म १२ अतिवर्त्तते १३ ॥ ४४ ॥ अ० उ० फिर अधिक यत्न करने में कारण यह है + सो १ योगभ्रष्ट कर्म्मकाण्डियों के कुलमें अथवा ज्ञानियों के कुलमें जन्म लेकर दैवयोग से + परवश २ भी ३ हो जावे अर्थात् माता पिता पुत्र मित्र धनादि में आसक्त होजावे अथवा भेदवादियों के पंजे में आजावे + तो भी ४ सोई ५ । ६ पूर्वाभ्यास ७ कि जो अभ्यास करता करता योगभ्रष्ट हुआ था वही + विषयों से विमुख करके ब्रह्मविचार के सम्मुख करदेता है ८ योगभ्रष्ट को + हे अर्ज्जुन ब्रह्मविचार का ऐसाही माहात्म्य है सो सुन + ज्ञानयोग का ९ जिज्ञासु १० भी ११ शब्द ब्रह्मको १२ उलंघकर वर्तताहै १३ अर्थात् कर्म्मकाण्ड को छोड़ ब्रह्मनिष्ठ होजाता है ब्रह्म विचार करनेवाला ब्रह्मनिष्ठ होजाय तो इसमें क्या कहनाहै जो अनजान अवस्थामें क्षणमात्र भी यह चिंतवन करताहै कि मैं ब्रह्महूं सो विचार महापातकों

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

को दूर करदेता है जैसे सूर्य तमको और जो समझकर वरसों चिंतवन करते हैं उनका तो क्या कहनाहै अर्थात् उनकी सद्गति मोक्षमें किंचित् भी संदेहनहीं + क्षणं ब्रह्माहमस्मीति यःकुर्यादात्मचिन्तनम्। तन्महापातकंहन्ति तमःसूर्योदये यथा॥४४॥

प्रयत्नाद्यतमानस्तु योगीसंशुद्धकिल्विषः ॥ अनेकजन्मसंसिद्धस्ततोयातिपरांगतिम् ॥ ४५ ॥

यतमानः १ योगी २ तु ३ प्रयत्नाद् ४ अनेकजन्मसंसिद्धः ५ ततः ६ पराम् ७ गतिम् ८ याति ९ ॥ ४५ ॥ अ० उ० योगभ्रष्ट तीसरे जन्ममें तो अवश्यही मुक्त होगा इसमें सन्देह नहीं यह कहते हैं अर्थात् पिछले कहे हुये अर्थको फिर कैमुतिक न्यायकरके दृढ़ करते हैं + जब कि जिज्ञासु परमपदको प्राप्तहोता है फिर + प्रयत्न करनेवाला १ योगी २ जो ३ प्रयत्नमें ४ निष्पाप होकर ४ अनेक जन्मों में भलेप्रकार सिद्धहोकर अर्थात् ब्रह्मवित् होकर ५ फिर ६ परम ७ गतिको ८ प्राप्त होताहै ९ इसमें क्या कहनाहै तात्पर्य ब्रह्मका जिज्ञासू भी योग भ्रष्ट मन्द वैराग्य दूसरेही जन्म में सद्गति को प्राप्त होताहै और प्रयत्न करनेवाला विद्वान् ज्ञानवान् होकर दूसरे जन्ममें अथवा उसी जन्म में मोक्षको प्राप्त हो तो फिर इसमें क्या कहनाहै प्रथम तो योग भ्रष्ट दूसरेही जन्ममें मोक्ष होगा और अनेक जन्म में अर्थात् तीसरे जन्ममें मुक्तहो तो इसमें क्या कहनाहै न एक अनेक इस प्रकार अनेक शब्दका अर्थ दो या तीन होसक्ताहै और अनेक जन्म का यह भी अर्थ है कि असंख्यात जन्मों से पुण्य करता जो चला आता है वह उन पुण्यों के प्रताप से निष्पाप ज्ञानवान् होकर पिछले जन्ममें ब्रह्मनिष्ठ होकर वही योगभ्रष्ट सद्गति को प्राप्त हो तो इसमें क्या कहना है ॥ ४५ ॥

तपस्विभ्योऽधिकोयोगी ज्ञानिभ्योऽपिमतोऽधिकः ॥ कर्मिभ्यश्चाधिकोयोगीतस्माद्योगीभवार्जुन ॥ ४६ ॥

योगी १ तपस्विभ्यः २ अधिकः ३ ज्ञानिभ्यः ४ अपि ५ अधिकः ६ मतः ७ कर्मिभ्यः ८ च ९ अधिकः १० ॥ ४६ ॥ अ० उ० ब्रह्मज्ञान का साधन अष्टाङ्ग योग तप पंडिताई कर्म से श्रेष्ठ है यह कहते हैं + योगी १ तपस्वी पुरुषों से २ श्रेष्ठ ३ है क्योंकि चांद्रायणादि व्रतोंका करना पंचाग्नि तपना शीतकालमें प्रातः-

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

काम स्नान करना आदि तप कहलाताहै यह बहिरंग साधनहै + पण्डितों से ४ भी ५ योगी + श्रेष्ठ ६ माना है ७ इस जगह ज्ञानीका अर्थ जो पंडित किया उसका तात्पर्य्य यह है कि विना अनुष्ठान करनेवाले जो केवल विद्यावान्ही हैं अर्थात् केवल श्रोत्रिय हैं ब्रह्मनिष्ठ नहीं समझना क्योंकि अष्टांगयोग ज्ञान का अंतरंग साधन है जैसे विद्या तप विचारादि साधन हैं + अग्निहोत्रादि कर्म्म करनेवालों से ८ भी ९ योगी १० श्रेष्ठ ११ है क्योंकि यह भी साधन ज्ञान का बहिरंग है + हे अर्जुन! १२ तिस कारण से १३ योगी १४ हो तू अर्थात् धारणा ध्यानादि में तत्परहो क्योंकि यह ज्ञानका अंतरंग साधनहै ॥ ४६ ॥

योगिनामपिसर्वेषांमद्गतेनान्तरात्मना ॥ श्रद्धावान्भजतेयोमांसमेयुक्ततमोमतः ॥ ४७ ॥

सर्वेषाम् १ योगिनाम् २ अपि ३ मद्गतेन ४ अन्तरात्मना ५ यः ६ श्रद्धावान् ७ माम् ८ भजते ९ सः १० मे ११ युक्ततमः १२ मतः १३ ॥४७॥ अ० उ० ज्ञान का उत्तम साधन अंतरंग भगवद्भक्ति है सब कर्मयोगियों में भगवद्भक्त श्रेष्ठ है सोई कहते हैं + सब १ योगियों के २ मध्य में + भी ३ मद्गत अन्तःकरण करके ४ । ५ अर्थात् मुझ वासुदेव में अन्तःकरण समाहित करके + जो ६ श्रद्धावान् ७ ब्रह्म का जिज्ञासु + मुझको ८ भजता है ९ अर्थात् अभेद उपासना करता है + सो १० मुझको ११ युक्ततम १२ सम्मत है १३ अर्थात् वह सब योगियों से श्रेष्ठ है ॥ ४७ ॥

इति श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सुब्रह्मविद्यायांयोगशास्त्रेश्रीकृष्णार्जुनसंवादे
आत्मसंयमयोगोनामषष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥
स्वामी आनन्दगिरिकृत परमानन्दप्रकाशिका टीका
में छठां अध्याय समाप्त हुआ ॥ ६ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

सातवें अध्यायका प्रारम्भ हुआ॥

उ० + बीचके छः अध्यायों में सात से बारह तक उपासना करने के योग्य भगवत् का स्वरूप विशेष निरूपण किया गया है उपासना करने के लिये जिस परमेश्वर की भक्ति करनी उसका स्वरूप भी तो पहले समझलेना उचित है जो अपना स्वरूप श्रीकृष्णचन्द्र महाराजने समस्त गीताशास्त्र में और विशेष बीच के छः अध्यायों में निरूपण किया है वह स्वरूप परमेश्वर का समझना तात्पर्य्य यह कि पहले परमेश्वर का स्वरूप समझ कर फिर उनकी भक्ति करनी योग्य है बारंबार परमेश्वर यह कहते हैं कि मुझ में मन लगा मेरा भजन कर माम् मम अहम् इत्यादि प्रयोग अस्मत् शब्दके हैं जिस जगह यह प्रयोग हैं वहां तात्पर्य अस्मत् शब्दसे है अस्मत् आत्मा को कहते हैं त्वम्, त्वाम्, ते इत्यादि युष्मत् के प्रयोग हैं अस्मत् शब्दके प्रयोग भगवत् विषय जो गीताशास्त्र में हैं उनका तात्पर्य किसी जगह तो मायोपहित चैतन्यमें है किसीजगह अविद्योपहित चैतन्य में किसी जगह शुद्ध चैतन्य में किसी जगह लीलाविग्रह मूर्त्तिमें और किसी जगह सगुण ब्रह्ममें तात्पर्य्य है सब जगह लीलाविग्रह मूर्त्तिका अर्थ नहीं समझना बहुत जगह तो सोपाधिक निरुपाधिक का भेद हमने दिखा दियाहै किसी किसी जगह स्पष्ट समझकर छोड़दियाहै वहां विचार करलेना कि इस जगह तात्पर्य निरुपाधिक ब्रह्म में है अथवा सोपाधिक ब्रह्ममें और यह भी विचार लेना कि इस जगह जो अस्मत् शब्दका प्रयोग है इसका तात्पर्य तत्पदार्थ में है अथवा त्वम् पदार्थ में है अथवा दोनों की एकता में है तब भगवत् का स्वरूप समझ में आवेगा नहीं तो यह अनर्थ नहीं समझ लेना कि श्रीकृष्णचन्द्र महाराज श्यामसुन्दर स्वरूप से सिवाय श्रीसदाशिव शक्ति आदि देवता जीवहैं श्रीकृष्णचन्द्र महाराज ने मूर्त्ति कोही परब्रह्म कहा है किन्तु यह समझना कि श्रीकृष्णचन्द्र महाराज शुद्ध सच्चिदानन्द निराकार अखण्ड पूर्णब्रह्महैं विष्णु शिव सूर्य शक्ति गणेशादि वासुदेव दाशरथि आदि उनकी लील विग्रह मूर्त्ति हैं जो राम कृष्णादि की एकता में प्रमाण है वही विष्णु शिवादि की एकता में प्रमाण है॥ १२॥

श्रीभगवानुवाच॥मय्यासक्तमनाःपार्थयोगंयुंजन्मदाश्रयः॥असंशयंसमग्रम्मांयथाज्ञास्यसितच्छृणु १

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

पार्थ १ मयि २ आसक्तमनाः ३ मदाश्रयः ४ योगम् ५ युंजन् ६ यथा ७ समग्रम् ८ असंशयम् ९ माम् १० ज्ञास्यसि ११ तत् १२ शृणु १३ ॥ १ ॥ उ० पिछले अध्याय में श्रीभगवान् ने कहा कि जो मुझमें मन लगाकर मुझको भजता है वह कर्मयोगियों में श्रेष्ठ है इस वास्ते अब अपना वही स्वरूप कहते हैं कि जिसकी भक्ति करनी योग्य है ॥ अ० हे अर्ज्जुन! १ मुझमें २ आसक्तहै मन जिसका ३ और मेराही आश्रय ले रक्खाहै जिसने ४ विभूति बल ऐश्वर्यादि सहित ८ निस्सन्देह ९ ॥ टी० ॥ जैसा स्वरूप हमें आगे कहनाहै उसमें मन लगाकर २। ३ सिवाय परमेश्वरके और कोई नहीं है आश्रय जिसका ४ हे अर्ज्जुन! इस प्रकार तू १ योगका ५ अभ्यास करता हुआ कि जो योग मैंने छठें अध्याय में निरूपण किया उसप्रकार मनको समाधान करके ६ जैसे मैं सोपाधिक और निरुपाधिक हूं वैसाही ७। ८ सन्देहरहित मुझ शुद्ध सच्चिदानन्द निराकार निर्विकार को और लीलाविग्रह श्यामसुन्दरादि स्वरूपको जानेगा तू ९। १०। ११ सोई आगे कहूंगा १२ सावधान होकर सुन १३ ॥ १ ॥

ज्ञानंतेऽहंसविज्ञानमिदंवक्ष्याम्यशेषतः ॥ यज्ज्ञात्वानेहभूयोऽन्यज्ज्ञातव्यमवशिष्यते ॥ २ ॥

इदम् १ ज्ञानम् २ ते ३ अहम् ४ वक्ष्यामि ५ सविज्ञानम् ६ अशेषतः ७ यत् ८ ज्ञात्वा ९ इह १० भूयः ११ अन्यत् १२ ज्ञातव्यम् १३ न १४ अवशिष्यते १५ ॥ २ ॥ अ० उ० आगे जो ज्ञान कहना है प्रथम उसकी इस श्लोक में स्तुति करते हैं+यह १ जो आगे+ज्ञान २ तेरे अर्थ ३ मैं ४ कहूंगा ५ सो+विज्ञान के सहित ६ समस्त कहूंगा+जिसको ८ जानकर ९ अर्थात् जिस ज्ञानमें मुझको जानकर ९ मोक्षमार्गमें १० फिर अधिक ११ अन्य पदार्थ १२ जानने के योग्य १३ नहीं १४ शेषरहेगा १५ तात्पर्य उसीसे कृतार्थ होजायगा परोक्ष शास्त्र द्वारा जो परमेश्वर का ज्ञान है उसको ज्ञान कहते हैं और अनुभव युक्तिपूर्वक साक्षात् अपरोक्ष जो परमेश्वर का सन्देहरहित ज्ञानहै उसको विज्ञान कहते हैं ॥ २ ॥

मनुष्याणांसहस्रेषुकश्चिद्यततिसिद्धये ॥ यततामपिसिद्धानांकश्चिन्मांवेत्तितत्त्वतः ॥ ३ ॥

मनुष्याणाम् १ सहस्रेषु २ कश्चित् ३ सिद्धये ४ यतति ५ यतताम् ६ अपि ७ सिद्धानाम् ८ माम् ९ तत्त्वतः १० कश्चित् ११ वेत्ति १२ ॥३॥ अ० उ० विशेष

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

करके कम समझ लोग यह कहा करते हैं कि ईश्वर का ज्ञान सबको है जो इस प्रजाका कर्ता पालक है वह परमेश्वर है उसको समस्त गुणोंकी खानि समझना रूपरङ्ग उसमें नहीं इस हेतुसे कोई उसको देख नहीं सक्ता अब विचारो कि यह तो समझ और निश्चय और स्नेह ऐसे तुच्छपदार्थों में जिनके स्मरण करने से समझवालों को ग्लानि आजाय जैसे स्त्री छोकरे धनान्ध नीच यह बड़े आश्चर्य की बातहै कि सद्गुण करना छोड़ तुच्छपदार्थ धनान्धादि नीच पुरुषों में मन जावे तात्पर्य यह है कि पूर्वोक्त बोली मन्दमति आलसी विषयी बहिर्मुखों की हैं परमेश्वर के ज्ञानकी गन्धभी उनके पास होकर नहीं निकली यह सब उनका वाचक ज्ञानहै क्योंकि उनके मुखमें परमेश्वरही धूलि डालकर भगवत् के स्वरूप का ज्ञान अतिदुर्लभ निरूपण करते हैं परमेश्वर का ज्ञान किसी अन्तर्मुख विरले महात्मा कोही है बहिर्मुख विषयी परमेश्वर को कभी नहीं जानसक्ते सोई इस श्लोकमें कहते हैं + हजारों मनुष्यों में १ । २ कोई ३ सच्चिदानन्द की प्राप्तिके लिये ४ प्रयत्न करताहै ५ उन यत्न करनेवालों में ६ भी ७ कोई देहसे पृथक् सूक्ष्मरूप सच्चिदानन्दको जान जाताहै ऐसे + सिद्धोंमेंसे ८ मुझको ९ यथार्थ १० कोई ११ जानताहै १२ तात्पर्य अब विचार करना चाहिये कि मनुष्योंसे व्यतिरिक्त जीवनको तो मोक्षमार्ग में प्रवृत्ति लेशमात्र नहीं और मनुष्योंमेंभी भरतखण्ड से अन्य द्वीपों में रहते हैं व श्रुति स्मृति के जो द्वेषी हैं वे आत्मविद्याको भी नहीं जानते आत्मज्ञान तो बहुत कठिन है और भरतखण्डनिवासी वर्णाश्रमवालों में भी प्रायशः द्वैतवादी हैं प्रत्युत द्वैतवादी भी कम हैं विशेष करके तो अनजान हैं किंचित् परलोक का उनको विचार नहीं और जो कोई परलोक के विचार में प्रवृत्त भी होताहै तो नये नवीन पंथ सम्प्रदायों ने उनको ऐसा भुला रक्खा है कि उस व्यवस्था लिखने के लिये पृथक् ग्रन्थ चाहिये तात्पर्य इन पूर्वोक्त सब उपाधियों से बचकर कोई महात्मा आत्माकी प्राप्ति के लिये प्रयत्न करताहै और उन में से कोई ईश्वर से अभिन्न यथार्थ सच्चिदानन्द आत्मा को परमात्मा जानताहै जिनको ब्रह्मविद्या प्राप्तहुई और ब्रह्मवत् पुरुष जिससे मिले उसके भाग्य की बड़ाई जितनी कीजावे वह कमसे कम है और जिन्होंने आत्मतत्त्व को जाना वे तो मन और वाणी से परे पहुँचे उनका क्या कहनाहै ॥ ३ ॥

भूमिरापोऽनलोवायुःखंमनोबुद्धिरेवच ॥ अहङ्कारइतीयंमेभिन्नाप्रकृतिरष्टधा ॥ ४ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

भूमिः १ आपः २ अनलः ३ वायुः ४ खम् ५ मनः ६ बुद्धिः ७ एव ८ च ९ अहंकारः १० इति ११ इयम् १२ मे १३ प्रकृतिः १४ अष्टधा १५ भिन्ना १६ ॥ ४ ॥ उ० जिस प्रकार यथार्थ परमेश्वरका स्वरूप जाना जाता है सोई कहते हैं प्रथम इस श्लोक में अपरा प्रकृतिका स्वरूप निरूपण करते हैं क्योंकि प्रकृतिद्वारा भगवत्का ज्ञान होताहै + पृथ्वी जल तेज वायु आकाश १ । २ । ३ । ४ । ५ इन का अर्थ गन्धादि पंचतन्मात्रा समझना इस जगह पंचीकृत पंच स्थूल भूत नहीं समझना और अहंकार ६ महत्तत्त्व ७ । ८ । ९ अविद्या १० । ११ इस प्रकार मन और बुद्धि और अहंकारका अर्थ क्रमसे अहंकार और महत्तत्त्व और अविद्या समझना + यह १२ मेरी १३ प्रकृति १४ आठप्रकार के १५ भेदको प्राप्तहुई है १६ अर्थात् एक प्रकृति अपरा यही अष्ट प्रकारकी है और आगे तेरहवें अध्याय में इसीको चौबीस भेदमें निरूपण करूंगा ॥ टी० ॥ गन्ध १ रस २ रूप ३ स्पर्श ४ शब्द ५ अहंकार ६ महत्तत्त्व ७ अविद्या ८ सबका कारण अविद्या है अविद्या से महत्तत्त्व महत्तत्त्व से अहंकार अहंकार से शब्दादि उत्पन्नहुये हैं जैसे विष मिले हुये अन्नको विष कहते हैं इसी प्रकार अविद्योपहित चैतन्यको अविद्या कहागया तात्पर्य जगत् का कारण मायोपहित अव्यक्त है विना चैतन्य रचनादि क्रिया असम्भव है अविद्याका अर्थ इस जगह मूलाज्ञान प्रकृति समझना आनन्दामृतवर्षिणी के द्वितीय अध्याय में इन सबका अर्थ विस्तारपूर्वक और क्रमसे लिखाहै ॥ ४ ॥

अपरेयमितस्त्वन्यांप्रकृतिंविद्धिमेपराम् ॥ जीवभूतांमहाबाहोययेदंधार्य्यतेजगत् ॥ ५ ॥

इयम् १ अपरा २ इतः ३ तु ३ अन्याम् ४ जीवभूताम् ५ मे ६ पराम् ७ प्रकृतिम् ८ विद्धि ९ महाबाहो १० यया ११ इदम् १२ जगत् १३ धार्य्यते १४ ॥ ५ ॥ उ० इस श्लोक में परा प्रकृति निरूपण करते हैं + पीछे जिसके आठ भेद कहे ॥ अ० यह १ प्रकृति + अपरा २ अर्थात् निकृष्ट अशुद्ध जड़ अनर्थ करनेवाली संसार बन्धको प्राप्तकरनेवाली है + इससे ३।३ जुदी ४ जीवरूप को ५ मेरी ६ परा ७ प्रकृति ८ जानत् ९ हे अर्जुन! १० जिसने ११ यह १२ जगत् १३ धारण कररक्खाहै १४ ॥ टी० ॥ शुद्ध प्रकृष्ट श्रेष्ठ मेरी आत्मरूप जान ७ इस जगत्को रचकर इसके भीतर जीवरूप होकर मैंही प्रवेश हुआहूं ११ । १२ । १३ । १४ तत्सृष्ट्वातदेवानुप्राविशतइतिश्रुतिः ॥ ५ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

एतद्योनीनिभूतानिसर्वाणीत्युपधारय ॥ अहंकृत्स्नस्यजगतः प्रभवःप्रलयस्तथा ॥ ६ ॥

सर्वाणि १ भूतानि २ एतद्योनीनि ३ इति ४ उपधारय ५ अहम् ६ कृत्स्नस्य ७ जगतः ८ प्रभवः ९ प्रलयः १० तथा ११ ॥ ६ ॥ अ० सब १ भूतोंकी २ यह योनी हैं ३ यह ४ जानतू ५ अर्थात् अपरा और परा यही दोनों प्रकृति सब जगत्का कारण हैं और + मैं ६ समस्त ७ जगत्का ८ उत्पत्ति करनेवाला ९ और नाश करनेवाला १० । ११ हूं तात्पर्य उपादान कारण प्रकृति है और निमित्त कारण चैतन्य ईश्वर है इसवास्ते अभिन्न निमित्तोपादान कारण ईश्वर है जगत्का + यह अर्थ आनन्दामृतवर्षिणी के द्वितीय अध्याय में स्पष्ट दृष्टान्त सहित लिखाहै ॥ ६ ॥

मत्तःपरतरंनान्यत्किंचिदस्तिधनंजय ॥ मयिसर्वमिदंप्रोतंसूत्रेमणिगणाइव ॥ ७ ॥

धनंजय १ मत्तः २ परतरम् ३ अन्यत् ४ किंचित् ५ न ६ अस्ति ७ इदम् ८ सर्वम् ९ मयि १० प्रोतम् ११ सूत्रे १२ मणिगणाः १३ इव १४ ॥ ७ ॥ अ० उ० जैसे पीछे कहा इसी हेतुसे मुझसे जुदा कोई पदार्थ नहीं यह कहते हैं + हे अर्जुन! १ मुझसे २ श्रेष्ठ ३ जुदा ४ सृष्टि संहारका स्वतंत्रकारण ४ कुछ ५ नहीं ६ है ७ यह ८ सब ९ जगत् + मुझ सच्चिदानन्द परमेश्वर में १० गुँथा हुआ है ११ सूत्र में १२ सूत्रकेही बनेहुये + मणिके दाने १३ जैसे १४ ॥ ७ ॥

रसोहमप्सुकौन्तेयप्रभास्मिशशिसूर्य्ययोः ॥ प्रणवःसर्ववेदेषु शब्दःखेपौरुषंनृषु ॥ ८ ॥

कौन्तेय १ अप्सु २ रसः ३ अहम् ४ शशिसूर्ययोः ५ प्रभा ६ अस्मि ७ सर्ववेदेषु ८ प्रणवः ९ खे १० शब्दः ११ नृषु १२ पौरुषम् १३ ॥ ८ ॥ अ० उ० श्रीभगवान् जी अपनी पूर्णता को विस्तारपूर्वक कहते हैं पांच मंत्रों में + हे अर्जुन! १ जलमें २ रस ३ मैं हूं ४ चन्द्र सूर्य में ५ प्रभा दीप्ति चमक रोशनी ६ मैं हूं ७ सब वेदों में ८ ॐकार ९ मैं हूं + आकाशमें १० शब्द ११ मैं हूं + पुरुषों में १२ उद्यम १३ मैं हूं + तात्पर्य्य जलादि पदार्थ रसादि पदार्थों के विना कुछ नहीं ॥ ८ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

पुण्योगन्धःपृथिव्यांचतेजश्चास्मिविभावसौ ॥ जीवनंसर्वभूतेषुतपश्चास्मितपस्विषु ॥ ९ ॥

पृथिव्याम् १ च २ पुण्यः ३ गंधः ४ विभावसौ ५ तेजः ६ च ७ अस्मि ८ सर्व्वभूतेषु ९ जीवनम् १० तपस्विषु ११ तपः १२ च १३ अस्मि १४ ॥ ९ ॥ अ० पृथिवी में १ । २ पवित्र ३ गंध ४ मैं हूं अर्थात् सुगंध + अग्निमें ५ तेज मैं हूं ६ । ७ । ८ । सब भूतों में ९ जीव १० मैं हूं + तपस्वी पुरुषों में ११ तप मैं हूं १२ । १३ । १४ ॥ टी० ॥ तप दो प्रकारका है विचारको भी तप कहते हैं और द्वन्द्वके सहन को भी तप कहते हैं ॥ ९ ॥

बीजंमांसर्वभूतानांविद्धिपार्थसनातनम् ॥ बुद्धिर्बुद्धिमतामस्मि तेजस्तेजस्विनामहम् ॥ १० ॥

पार्थ १ सर्वभूतानाम् २ सनातनम् ३ बीजम् ४ माम् ५ विद्धि ६ बुद्धिमताम् ७ बुद्धिः ८ अस्मि ९ तेजस्विनाम् १० तेजः ११ अहम् १२ ॥ १० ॥ अ० हे अर्ज्जुन! १ सब भूतोंका २ सनातन ३ बीज ४ मुझको ५ जानो ६ बुद्धिमानों में ७ बुद्धि ८ मैं हूं ९ तेजस्वी पुरुषों में १० तेज ११ मैं हूं १२ ॥ १० ॥

बलंबलवतांचाहङ्कामरागविवर्जितम् ॥ धर्माविरुद्धोभूतेषुकामोस्मिभरतर्षभ ॥ ११ ॥

कामरागविवर्जितम् १ बलवताम् २ च ३ बलम् ४ भरतर्षभ ५ धर्माविरुद्धः ६ भूतेषु ७ कामः ८ अस्मि ९ ॥ ११ ॥ अ० कामराग करके वर्ज्जित १ बलवानों में २ । ३ बल ४ मैं हूं और + हे अर्ज्जुन! ५ धर्म से अविरुद्ध ६ भूतों में ७ काम ८ मैं हूं ९ ॥ ११ ॥

येचैवसात्त्विकाभावाराजसास्तामसाश्चये ॥ मत्तएवेतितान्विद्धि नत्वहंतेषुतेमयि ॥ १२ ॥

ये १ च २ एव ३ सात्त्विकाः ४ भावाः ५ राजसाः ६ ये ७ च ८ तामसाः ९ तान् १० मत्तः ११ एव १२ इति १३ विद्धि १४ तेषु १५ अहम् १५ न १६ तु १८ ते १९ मयि २० ॥ १२ ॥ अ० जो १ । २ । ३ सतोगुणी ४ भाव ५ शमदमादि + रजोगुणी ६ हर्षदर्पादि + और ७ । ८ तमोगुणी ९ भाव

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

शोकमोहादि + तिनको १० मुझते ११ ही १२। १३ जानतू १४ क्योंकि मेरी प्रकृतिके गुणों का कार्य है शम हर्ष शोकादि + तिनमें १५ मैं १६ नहीं १७। १८ वर्तताहूं अर्थात् जीववत् तिनके आधीन मैं नहीं परंतु + वे १९ मुझ में २० मेरे आधीन हुये वर्तते हैं ॥ १२ ॥

त्रिभिर्गुणमयैर्भावैरेभिः सर्वमिदं जगत् ॥ मोहितं नाभिजानाति मामेभ्यः परमव्ययम् ॥ १३ ॥

एभिः १ त्रिभिः २ गुणमयैः ३ भावैः ४ इदम् ५ सर्वम् ६ जगत् ७ मोहितम् ८ एभ्यः ९ परम् १० माम् ११ अव्ययम् १२ न १३ अभिजानाति १४॥१३॥ अ० इन १ तीन २ गुणमय ३ पदार्थों करके ४ यह ५ सब ६ जगत् ७ मोहित हो रहा है ८ इसके ९ परे १० मुझ ११ अव्ययको १२ नहीं १३ जानता है १४ तात्पर्य कोई सतोगुण में कोई रजोगुण में कोई तमोगुण में मोहितहैं इनसे परे विलक्षण निर्गुण शुद्ध सच्चिदानन्द निराकार निर्विकार परमेश्वरको नहीं जानते परमेश्वर को भी सगुणही समझते हैं ॥ १३ ॥

दैवीह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया ॥ मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते ॥ १४ ॥

एषा १ मम २ माया ३ गुणमयी ४ दैवी ५ हि ६ दुरत्यया ७ ये ८ माम् ९ एव १० प्रपद्यन्ते ११ एताम् १२ मायाम् १३ ते १४ तरन्ति १५ ॥ १४॥ उ० अनादि अविद्या विना शुद्ध सच्चिदानन्द भगवत् भजनके दूर न होगी यह कहते हैं ॥ अ० यह १ मेरी २ माया ३ त्रिगुणवाली ४ अलौकिक अद्भुत ५ है + हि इस शब्दका तात्पर्य यह है कि यह माया ऐसी है जो बात समझ के योग्य है उसको भी दिखासक्ती है और जो न समझमें आवे उसको भी दिखासक्ती है सो यह बात संसार में प्रसिद्ध है इसी हेतुसे जगत् भ्रांत हो रहा है विना परमेश्वर की कृपा यह माया + दुस्तर है ७ विद्वानों ने ऐसा निश्चय कियाहै + कि जो ब्रह्मतत्त्व के जिज्ञासु ८ मुझको ९ ही १० भजते हैं ११ इस १२ माया को १३ वे १४ तरेंगे १५ अर्थात् माया को माया समझ कर मुझ त्रिगुण रहित शुद्ध सच्चिदानन्द को प्राप्त होंगे ॥ टी० ॥ दैवी देवसम्बन्धी अर्थात् ब्रह्मा विष्णु रामकृष्णादि और वैकुंठादि जिसका परिणाम है उसको दैवीमाया कहते हैं यह विना ज्ञाननिष्ठा दूर नहीं होती + मुझ निर्गुण शुद्ध सच्चिदानन्दकोही

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

जो चिन्तन करेंगे सगुण पदार्थ में प्रीति नहीं करेंगे वेही निर्गुणको प्राप्तहोंगे और जो सगुण पदार्थों में प्रीति करेंगे उनको त्रिगुणवाली माया दूर न होगी क्योंकि जिस पदार्थ को त्यागनाथा उसमें प्रीति करी फिर कैसे यह तीनगुण दूर होसक्ते हैं + एक शब्दसे स्पष्ट प्रतीत होताहै कि मां शब्दका अर्थ इस जगह शुद्धब्रह्म है मायोपहित वा लीलाविग्रह सगुण नहीं मायोपहित ईश्वर सगुणब्रह्म का जो आराधन करते हैं तो अवश्यही मायाका भी आराधन उसके साथ होताहै जिस का विशेष चिंतवन रहेगा वह पदार्थ कैसे दूरहोगा और जो सगुणब्रह्म काही आराधन करनाहै तो निष्काम होकर शुद्धब्रह्म की जिज्ञासा करके आराधन करे तो भी वह मार्ग क्रममुक्तिका है और जिनको शुद्धब्रह्म की जिज्ञासा तक नहीं उनकी अविद्या कभी दूर न होगी ॥ १४ ॥

नमांदुष्कृतिनोमूढाःप्रपद्यन्तेनराऽधमाः ॥ माय याऽपहृतज्ञानाआसुरंभावमाश्रिताः ॥ १५ ॥

नराधमाः १ माम् २ न ३ प्रपद्यन्ते ४ मूढाः ५ दुष्कृतिनः ६ मायया ७ अपहृतज्ञानाः ८ आसुरम् ९ भावम् १० आश्रिताः ११ ॥ १५ ॥ अ० उ० + जो निर्भाग न निर्गुणब्रह्म का आराधन करते हैं न सगुणब्रह्म का उसमें यह कारणहै + नरों में अधम १ मुझको २ नहीं ३ भजते हैं ४ हेतु इस में यहहै + कि विवेकरहितहैं ५ इसमें क्या हेतुहै कि + दुष्ट खोटे कर्म करनेवाले हैं ६ अर्थात् शास्त्रोक्त मार्ग में नहीं चलते श्रुति स्मृति परमेश्वरकी आज्ञाको छोड़ नानाप्रकारके कल्पित पंथोंमें शिर मारते हैं इसमें जो हेतुहै सो सुन + माया करके ७ दूर होगयाहै ज्ञान जिनका ८ अर्थात् तमोगुण रजोगुण में सत्त्वगुण उनका तिरोभाव रहताहै इसमें यह हेतुहै कि + असुरभावको ९ । १० आश्रय कर रक्खाहै उन्होंने ११ अर्थात् सोलहवें अध्यायमें काम क्रोध दम्भ दर्पादि असुरोंका स्वभाव कहेंगे भगवत् से विमुख सदा कामादि अनर्थों में फँसे रहते हैं जो पूर्व संस्कार से उनमें किसी समय सत्त्वगुण का आविर्भाव होताहै फिर भी कुसंग के दोषसे भगवत् के सम्मुख नहीं होते हैं और न शुभकर्म करते हैं इसी हेतु से उनको विवेक नहीं होता और इसी हेतुसे वे लोग सब से अधम हैं ॥ १५ ॥

चतुर्विधाभजन्तेमांजनाःसुकृतिनोऽर्जुन ॥ आर्तोजिज्ञासुरर्थार्थीज्ञानीचभरतर्षभ ॥ १६ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

अर्जुन १ चतुर्विधाः २ सुकृतिनः ३ जनाः ४ माम् ५ भजन्ते ६ भरतर्षभ ७ आर्तः ८ अर्थार्थी ९ जिज्ञासुः १० ज्ञानी ११ च १२ ॥ १६ ॥ उ० + जो निष्काम सगुणब्रह्म का भी आराधन होसके तो सकामही परमेश्वर का आराधन करना योग्यहै जो न निष्काम भजन करें न सकाम उन्होंसे सकाम पुरुषही भगवत्का आराधन करनेवाले श्रेष्ठहैं इसीवास्ते चारोंप्रकारके मेरे भक्त सुकृती कहे जाते हैं वे चार प्रकारके भक्त तारतम्यता के साथ उत्तरोत्तर ये हैं + अ० + हे अर्जुन! १ चार प्रकार के २ सुकृतीजन ३।४ मुझको ५ भजते हैं ६ हे अर्जुन! ७ वे यहहैं आर्त्त ८ अर्थार्थी ९ जिज्ञासु १० ज्ञानी ११ । १२ टी० + विपत्तिसमय में परमेश्वर को स्मरण करना उसको आर्त्तभक्त कहते हैं जैसे द्रौपदी गजेन्द्रादि ८ स्त्री पुत्र राज्यादिकी कामनाकरके जो परमेश्वरका आराधन करते हैं वे अर्थार्थी जैसे ध्रुवादि ९ ब्रह्मतत्त्वकी जिज्ञासा करके निष्काम जो नारायणका पूजन भजन करते हैं वे जिज्ञासु जैसे उद्धव सुदामादि १० शुद्ध सच्चिदानन्द निराकार निर्विकार नित्यमुक्त परमात्माको आप से अभिन्न अपरोक्ष जो जानते हैं वे ज्ञानी जैसे शुकदेव वामदेव जनक याज्ञवल्क्य वशिष्ठ सनकादि ११ चारों प्रकारके भक्तों को उत्तरोत्तर श्रेष्ठ समझना ॥ १६ ॥

तेषांज्ञानीनित्ययुक्तएकभक्तिर्विशिष्यते ॥ प्रियो हिज्ञानिनोत्यर्थमहंसचममप्रियः ॥ १७ ॥

तेषाम् १ ज्ञानी २ विशिष्यते ३ नित्ययुक्तः ४ एकभक्तिः ५ अहम् ६ ज्ञानिनः ७ अत्यर्थम् ८ प्रियः ९ हि १० स ११ च १२ मम १३ प्रियः १४ ॥ १७ ॥ अ० उ० + पूर्वोक्त भक्तों में ब्रह्मज्ञानी चार हेतु करके सबसे श्रेष्ठ है यह कहते हैं + तिनके १ मध्य में + ज्ञानी २ विशेष हैं ३ प्रथम तो तीनों अवस्था में सच्चिदानन्द स्वरूपसे च्युत नहीं होता इसवास्ते ज्ञानी को + नित्ययुक्त ४ कहते हैं अर्थात् सदा आनन्दस्वरूप ब्रह्मका उसको स्मरण रहताहै दूसरे यह कि एक अद्वैतमें ही है भक्ति जिसकी अर्थात् सिवाय सच्चिदानन्द पदार्थके और कोई पदार्थ दृश्य जड़ उसकी दृष्टि में नहीं जिसकी दृष्टि में दूसरा पदार्थ है बुरा व भला वेसन्देह उसमें कभी न कभी मन जायगा इसी वास्ते ज्ञानी को + एक भक्ति ५ कहते हैं अर्थात् ज्ञानी परमानन्दका ही उपासक है परमानन्दस्वरूप भगवत्ही उसके साधन हैं और परमानन्दही फल है औरों के फल साधनों में भेदहै तीसरे यह कि + मैं ६ ज्ञानी को ७ अत्यन्त बहुत ८ ही प्यारा ९ । १०

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

हूं क्योंकि परमानन्द बहुत प्यारा होता है यह लोकमें भी प्रसिद्धहै ज्ञानी मुझको परमानन्दरूप जानताहै आनन्दजनक जड़ दृश्यरूपवाला मुझको नहीं जानता चौथे यह कि+सो ज्ञानी ११+१२ मुझको १३ भी अत्यन्त+प्यारा १४ है क्योंकि परात्पर पूर्णब्रह्म अखण्ड अद्वैत मुझको समझताहै सिवाय सच्चिदानन्द के और पदार्थ का अत्यन्त अभाव जानताहै इसी हेतुसे वह मुझको प्रियहै एक पदार्थ तो आनन्दजनक और एक पदार्थ निजानन्दरूप हैं विचारो दोनों में कौनसा श्रेष्ठ है ॥ १७ ॥

उदाराःसर्वएवैतेज्ञानीत्वात्मैवमेमतम् ॥ आस्थितःसहियुक्तात्मामामेवानुत्तमांगतिम् ॥ १८ ॥

एते १ सर्वे २ एव ३ उदाराः ४ ज्ञानी ५ तु ६ मे ७ आत्मा ८ एव ९ मतम् १० हि ११ सः १२ युक्तात्मा १३ माम् १४ एव १५ आस्थितः १६ अनुत्तमाम् १७ गतिम् १८ ॥ १८ ॥ अ० उ०+भगवद्विमुखों से सब भक्त सकाम और निष्काम श्रेष्ठहैं और ज्ञानी तो साक्षात् नारायणस्वरूप हैं यह कहते हैं आगे बारहवें अध्याय में भी श्रीमहाराज कहेंगे कि निर्गुणब्रह्म के उपासक तो मुझको प्राप्तही हैं जो मेरा स्वरूपहै सोई उनकाहै+वे १ पूर्वोक्त आर्त्तादि तीनोंभक्त+सब २ ही ३ श्रेष्ठ ४ हैं परन्तु+ज्ञानी ५ तो ६ मेरा ७ आत्मा ८ ही ९ अर्थात् ज्ञानी मुझसे दासवत् जुदा नहीं स्वामीसेवकवत् पृथक् नहीं वह वनवृक्षवत् मेराही स्वरूपहै यह मेरा+निश्चय १० है +क्योंकि ११ वह यह समझताहै कि मैं पूर्णब्रह्म सच्चिदानन्द नित्यमुक्त हूं इस वास्ते+सो ज्ञानी १२ युक्तात्मा समाहित है १३ और मुझको १४ ही १५ आश्रयकर रक्खा है १६ कैसा हूं मैं कि नहीं है सिवाय मुझसे उत्तम गति कोई सावयव पदार्थ सो मैं ही अनुपमगति हुई यह समझकर मुझ+अनुत्तम गतिको १७। १८ आश्रयकर रक्खाहै अर्थात् मुझसे पृथक् कुछ और फल नहीं मानता परात्पर फल मैं हूं सच्चिदानन्द हूं ॥ १८ ॥

बहूनांजन्मनामन्तेज्ञानवान्मांप्रपद्यते ॥ वासुदेवःसर्वमितिसमहात्मासुदुर्लभः ॥ १९ ॥

बहूनाम् १ जन्मनाम् २ अन्ते ३ इति ४ सर्वम् ५ वासुदेवः ६ ज्ञानवान् ७ माम् ८ प्रपद्यते ९ सः १० महात्मा ११ सुदुर्लभः १२ ॥ १९ ॥ उ० ॥ फिर भी ज्ञानी

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

की स्तुति करतेहुये यह कहते हैं कि ऐसा ज्ञानी भक्त दुर्लभहै + अ० + बहुत १ जन्मों के २ अन्तमें ३ अर्थात् सकाम निष्काम उपासना करते करते पिछले जन्म में कि जिस शरीर में मोक्षहोनाहै उस जन्ममें मुझको जो मेरा भक्त ऐसा समझता है कि + यह ४ सब ५ जगत् चराचर अस्ति भाति प्रियरूप + वासुदेव ६ है इसप्रकार + ज्ञानवान् हुआ हुआ + मुझको ८ भजताहै ९ जो भक्त + सो १० महात्मा परिच्छिन्न दृष्टि है प्रायशः सब आत्माको और परमात्माको परिच्छिन्न समझते हैं प्रत्युत कोई कोई निर्भाग ज्ञानियोंकी प्रत्यक्ष वा किसी बहाने मिल करके असूया बुराई करते हैं इस श्रीमहाराजके वाक्यका आदर नहीं करते अपने आप अपनी जिह्वा से बारंबार यह कहें कि मैं पापी पापात्मा पाप करता हूं जो दूसरा कहै कि तुम पापी गुलामहो तो उसी समय लड़ने को उद्यतहोजावें ऐसे लोगोंको जो गतिहोगी सो दृष्टान्त से स्पष्ट किये देते हैं + अब इतिहास लिखते हैं + एक राजा, भेदवादी भगवत् का उपासक सबसे यह प्रश्न किया करताथा कि महाराज जो पापी भगवत्से विमुख हैं उनका तो उद्धार श्रीनारायण अपने आप करेंगे क्योंकि उनका नाम पतितपावन अधमउद्धारण करुणाकर है और जो भगवद्भक्त कर्मकाण्डी ज्ञानी योगी हैं वे भक्ति ज्ञान कर्म योगादिके आश्रयसे कृतार्थ होंगे नरकमें कौन जायेंगे चौरासी लाख योनियों में कौन भ्रमेंगे इस प्रश्नका उत्तर बहुत पंडितोंको न आया एक ज्ञानी महात्मा राजाके पास पहुंचे राजाने उनका बहुत सन्मान करके यही प्रश्न उनसे भी किया प्रथम महात्मा ने यह कहा कि हे राजन्! तुम बड़े सुकृती धर्मात्मा समझनेवाले भगवद्भक्तहो राजाने कहा कि महाराज ऐसे तो आपही हैं मैं तो अधम पापात्मा हूं महात्मा उसी समय वहां से खड़े होगये और राजा की तरफ़ से मुखफेर कहने लगे कि आज कैसे अधम पापात्मा से सम्भाषण हुआ राजाको सुनतेही इन शब्दों के क्रोध आगया और कहने लगा कि तू कैसा ज्ञानी है जो लोगोंको गालियां देताहै महात्माने कहा कि बच्चा गालियां नहीं देता तेरे प्रश्नका उत्तर देताहूं तात्पर्य मेरे कहने का समझ कि तुझसे तुझ सरीखे तुझ सदृश लोग नरकमें जायेंगे आप तो अपनेमुख से सहस्रवार अपने को पापी कहताहै + पापोहंपापकर्माहं पापात्मा पापसम्भवः + जो हमने एकवार कहा तो उसका इतना बुरा मानता है कि अभी तो हमको सुकृती धर्मात्मा भगवद्भक्त कहता था और अभी तू तड़ाक करने लगा अब तू यह अपने आपे को विचार कि मैं पतितहूं वा धर्मात्माहूं जो तू पतित है तो औरों के कहने का क्यों बुरा मानाहै और जो धर्मात्मा

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

है तो शुद्धात्मा को पापात्मा क्यों कहता है अपने को शुद्धात्मा समझ राजा का अज्ञान इतने ही स्वल्प उपदेश से जाता रहा और जाना कि दास और पतित जो अपने को कहते हैं यह ऊपरही की बोल चालहै दास पतित बनना तो कठिन है मुख से तो यह कहैं कि + सियारामय सब जग जानी । करौं प्रणाम समेम सुबानी ॥ और ज्ञानियों की बुराई करें धन्य है ऐसी समझ को भूला अर्थ समझा पूर्णता का यह इतिहास भले प्रकार विचारने के योग्य है ॥ १९ ॥

कामैस्तैस्तैर्हृतज्ञानाः प्रपद्यन्तेऽन्यदेवताः ॥ तं तं नियममास्थाय प्रकृत्यानियताःस्वया ॥ २० ॥

अन्यदेवताः १ प्रपद्यन्ते २ तैः ३ तैः ४ कामैः ५ हृतज्ञानाः ६ स्वया ७ प्रकृत्या ८ नियताः ९ तम् १० तम् ११ नियमम् १२ आस्थाय १३ ॥२०॥ अ०उ० + सब भक्त निर्गुणब्रह्मकी निष्काम उपासना क्यों नहीं करते अपने से अन्य देवता का क्यों आराधन करते हैं इस अपेक्षा में यह कहते हैं चार मंत्रों में + परमेश्वर का भजन करके वैकुण्ठादि में जावैंगे वहां के दिव्य शब्दादि विषयों का और स्त्री आदि पदार्थों को भलेप्रकार भोगकरैंगे अथवा इसी लोकमें स्त्री पुत्र धनादि की प्राप्तिहोगी और प्रायशः वर्तमानकालमें भी देवतों की उपासना में शब्दादि विषयोंको त्यागना नहीं पड़ता प्रत्युत फूल बंगला हिंडोरा रासलीला नृत्यगानादि को उत्तमकर्म समझते हैं इन इन कामना करके जो आत्मा से भिन्न + अन्य मूर्त्तिमान् देवता का १ भजन करते हैं २ इसमें हेतु यह है कि तिन ३ तिन ४ कामना करके ५ हरागया है आत्मज्ञान जिनका ६ वे + अपनी ७ प्रकृति करके ८ प्रेरेहुये ९ तिस १० तिस ११ नियमको १२ आश्रय करके १३ अन्यदेवता का भजन करते हैं अर्थात् रजोगुण तमोगुण के वश होकर जो जो नियम भेदउपासना में हैं सबको अंगीकार करके आत्मा से अन्यदेवता ही को पूजते हैं जैसे कहते हैं कि घरका योगी योगना आन गांव का सिद्ध ऐसेही वे उपासक हैं शास्त्रका भी प्रमाण सुनो + वासुदेवं परित्यज्य योऽन्यदेवमुपासते । तृषितो जाह्नवीतीरे कूपं खनति दुर्मतिः ॥ जो देव सबमें बस रहाहै और साक्षात् चैतन्यानन्द अनुभव होताहै उसको छोड़ अन्यदेवकी जो उपासना करते हैं वे ऐसे हैं कि जैसे प्यासा मूर्ख श्रीगङ्गाजीका जल छोड़ गङ्गातीरे कूप खोदताहै ऐसेही परमानन्दस्वरूप चैतन्यदेव आत्माकोछोड़ तुच्छ विषयानन्दकेलिये प्रयत्नकरते हैं ॥२०॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

योयोयांयांतनुंभक्तः श्रद्धयार्चितुमिच्छति ॥ तस्यतस्याचलांश्रद्धांतामेवविदधाम्यहम् ॥ २१ ॥

यः १ यः २ भक्तः ३ श्रद्धया ४ याम् ५ याम् ६ तनुम् ७ अर्चितुम् ८ इच्छति ९ तस्य १० तस्य ११ अचलाम् १२ श्रद्धाम् १३ ताम् १४ अहम् १५ एव १६ विदधामि १७ ॥ २१ ॥ उ० + सकाम आत्मा से अन्य देवतों के भक्तों को पिछले मंत्र में परतंत्र प्रकृति के और वासना के वश कहा अब अपने आधीन कहते हैं जो कोई यह शङ्का करे कि जब परमेश्वर अन्तर्यामी सबके प्रेरकहैं तो फिर अन्य देवतों के भक्तों को भी वासुदेव भगवान् पूर्णब्रह्म सच्चिदानन्द आत्माके सम्मुख क्यों नहीं करदेते इस अपेक्षामें श्रीमहाराज यह कहैंगे कि जैसे जिसकी इच्छा होती है उसके अनुसार उसकी श्रद्धा दृढ़ करदेताहूं निष्काम जो मेरा आराधन करतेहैं उनको सन्मार्ग में लगादेताहूं मुझको चिन्तामणिवत् समझना प्रसिद्ध वाक्य है + जैसे को हरि तैसे सोई कहते हैं इस मंत्रमें + अ० + जो १ जो २ विष्णु शिव राम कृष्ण इन्द्रादिका + भक्त ३ श्रद्धा करके ४ जिस ५ जिस ६ मूर्त्तिको ७ पूजाकरने की ८ इच्छा करताहै ९ तिस १० तिसके विषय ११ दृढ़ १२ श्रद्धा १३ जोहै + तिसको १४ मैं १५ ही १६ स्थिर करताहूं १७ अन्तर्यामीरूप होकर वेदशास्त्राचार्य द्वारा + तात्पर्य जो जिस मूर्त्तिमान् देवता में प्रीति करता है परमेश्वर भी आचार्यरूप होकर उसीको दृढ़ करदेते हैं निष्काम भक्तोंको परमेश्वर सुधारते हैं सुखमानकर बहिर्मुख हुये बहिःसुख की इच्छा करते हैं वे कभी विषयी कहे जाते हैं ॥ २१ ॥

सतयाश्रद्धयायुक्तस्तस्याराधनमीहते ॥ लभतेचततःकामान्मयैवविहितान्हितान् ॥ २२ ॥

स १ तया २ श्रद्धया ३ युक्तः ४ तस्य ५ आराधनम् ६ ईहते ७ ततः ८ कामान् ९ लभते १० च ११ तान् १२ मया १३ एव १४ विहितान् १५ हि १६ ॥ २२ ॥ अ० उ० + पूर्वपक्षकी श्रुति स्मृतिकोही सिद्धान्त समझकर उनमें श्रद्धा से सकाम परमेश्वरका आराधन करनेसे जो कभीकभी किसीकिसीको फल भी प्रत्यक्ष होजाताहै अर्थात् मूर्त्तिमान् परमेश्वरका दर्शनहोजाना अथवा स्त्री पुत्र राज्य स्वर्ग वैकुण्ठादि की प्राप्ति होजानी यह सब फल उसको कामना के अनुसार मैंही देताहूं क्योंकि कामियों को रूप रसादि विषयही प्रिय होते हैं जो यह फल प्रत्यक्ष

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

किसीको भी न होय तो फिर वेद शास्त्रादि में उनका विश्वास न रहेगा जो उन का विश्वास वेद शास्त्रादिमें बना रहेगा तो कभी न कभी सिद्धान्तकी श्रुति स्मृतियों में भी उनकी विश्वास होजायगा फिर मेरा निष्काम आराधन करके कृतार्थ होजावेंगे उनको प्रत्यक्ष फल दिखाने में यह तात्पर्य मेराहै इसवास्ते उसके वही श्रद्धा स्थिर करताहूं + सो १ तिस २ श्रद्धा करके ३ युक्त ४ तिसका ५ ही ६ + आराधन करताहै ७ तिससे ८ ही कामनाको ९ प्राप्त होता है १०। ११ कैसी हैं वे कामना कि + तिनको १२ मैंने १३ ही १४ रचीहैं १५ निश्चय १६ तात्पर्य सकाम भक्त पूर्व पक्षकी श्रुति स्मृतियों में श्रद्धा करके जिस भक्तकी जिस देवता में प्रीति है उसकाही आराधन करताहै उससेही मनोवाञ्छित फलको प्राप्त होताहै वास्तव वे कामना रचीहुई परमेश्वर की हैं परमेश्वरनेही वह फल उनको दिया है परन्तु वे उस मूर्त्तिका दियाहुआ समझते हैं उसी को परात्पर समझलेते हैं इसी वास्ते वे जन्म मरणसे नहीं छूटते इस बातको अगले श्लोकमें भले प्रकार स्पष्ट करेंगे॥ २२॥

अन्तवत्तुफलंतेषां तद्भवत्यल्पमेधसाम्॥ देवान्देवयजोयान्ति मद्भक्तायान्तिमामपि॥ २३॥

अल्पमेधसाम् १ तेषाम् २ तत् ३ फलम् ४ अन्तवत् ५ तु ६ भवति ७ देवयजः ८ देवान् ९ यान्ति १० मद्भक्ताः ११ माम् १२ अपि १३ यान्ति १४॥ २३॥ उ० + सच्चिदानन्द आत्मासे अन्य मूर्त्तिमान् परमेश्वरको परमेश्वर मानकर जो उनका आराधन करताहै क्या उससे निर्गुण निराकार सच्चिदानन्द की उपासना करने वाले कुछ अधिक फलको प्राप्त होतेहैं इस अपेक्षा में श्रीमहाराज यह कहतेहैं कि हां बेसन्देह फलमें बड़ा अन्तरहै वह अन्तर यहहै + अ० + परिच्छिन्न दृष्टि हैं जिनकी १ अर्थात् कम समझ जो परमेश्वरको एकदेशी समझते हैं + तिनको २ जो फल होताहै मूर्त्तिमान् परमेश्वर दर्शनादि वैकुण्ठादिकी प्राप्ति स्त्री पुर राज्यादि की प्राप्ति + सो ३ यह सब + फल ४ अन्तवाला ५। ६ है ७ अर्थात् अनित्य है + क्योंकि + देवतोंके पूजनेवाले ८ देवतों को ९ प्राप्तहोते हैं १० और मुझ सच्चिदानन्द निराकार आत्मा के भक्त ११ मुझ सच्चिदानन्द निराकारको १२ ही १३ प्राप्तहोते हैं १४ विचार करो फल में कितना बड़ा अन्तरहै जो यह शङ्काकरे कि श्रीकृष्णचन्द्र महाराज नित्यहैं उन्होंसे अन्य देवता अनित्य हैं तो फिर यह विचारना चाहिये कि देवतों की मूर्त्ति अनित्य हैं व उनका स्वरूप

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

सच्चिदानन्द अनित्यहै और श्रीकृष्णचन्द्र महाराजकी मूर्त्ति श्यामसुन्दर स्वरूप नित्य है व उनका स्वरूप सच्चिदानन्द नित्यहै दोनों की मूर्त्तियों को जो नित्य कहैं तौभी नहीं बनसक्ता और सच्चिदानन्द स्वरूप दोनों को जो अनित्य कहैं तौभी नहीं बनसक्ता क्योंकि वेद शास्त्रोंका यह सिद्धान्तहै यद्दृश्यं तत् अनित्यं जो दृश्यहै सो सब अनित्यहै + तदुक्तम् + जो गोचर जहँलग मन जाई। सो सब माया जानो भाई॥ और मां शब्दकी देव शब्दसे विलक्षणताहै तात्पर्य्य यह बात स्पष्ट है कि श्रीकृष्णचन्द्र महाराज पूर्णब्रह्म सच्चिदानन्द निराकारहैं सो नित्य हैं मूर्त्ति परमेश्वर की मायिक होती है + गीतामाहात्म्य पद्मपुराण में लक्ष्मीजी से श्रीनारायण कहते हैं मायामयमिदंदेवि वपुर्मेनतुतात्त्विकम्॥ अ० + हे देवि! मेरा शरीर मायामय है वास्तव नहीं देव शब्दका तात्पर्य्य मूर्त्तियों में है मां शब्दका तात्पर्य्य सच्चिदानन्द निराकार में है॥ २३॥

अव्यक्तंव्यक्तिमापन्नं मन्यन्तेमामबुद्धयः॥ परं भावमजानन्तो ममाव्ययमनुत्तमम्॥ २४॥

अबुद्धयः १ माम् २ अव्यक्तम् ३ व्यक्तिम् ४ आपन्नम् ५ मन्यन्ते ६ मम ७ परम् ८ भावम् ९ अजानन्तः १० अव्ययम् ११ अनुत्तमम् १२॥ २४॥ उ० + निर्गुण ब्रह्मकी उपासना में और सगुणब्रह्म लीलाविग्रह मूर्त्ति आदिकी उपासना में यत्न सम होताहै और फल निर्गुण उपासनाका आप विशेष और नित्य कहते हो फिर लीलाविग्रह मूर्त्तियों के उपासक भी आपके निरुपाधिक शुद्धस्वरूप सच्चिदानन्द निराकार ब्रह्मात्माकी क्यों नहीं उपासना करते हैं यह शङ्काकरके इस मंत्रमें श्रीमहाराज यह कहेंगे कि कम समझ होनेसे मुझ परात्पर निर्विकार शुद्ध सच्चिदानन्दको नहीं जानते मूर्त्तिमान्ही मुझको समझते हैं हे अर्जुन! यह बड़े कष्टकी बातहै इसप्रकार विचार करतेहुये श्रीभगवान् यह कहते हैं + अ० + अविवेकी विचाररहित १ मुझ २ निराकार को ३ मूर्त्तिमान् ४ । ५ मानते हैं ६ मेरे ७ परं ८ प्रभाव को ९ नहीं जानते १० कैसाहै मेरा परमप्रभाव कि प्रथम तो + निर्विकार ११ और फिर + अनुत्तम १२ अर्थात् उससे सिवाय और कोई पदार्थ उत्तम नहीं + टी० + मूर्त्तिको ४ प्राप्तहुआ ५॥ २४॥

नाहंप्रकाशःसर्वस्ययोगमायासमावृतः॥ मूढो यंनाभिजानातिलोकोमामजमव्ययम्॥ २५॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

सर्वस्य १ अहम् २ प्रकाशः ३ न ४ योगमायासमावृतः ५ अयम् ६ मूढः ७ लोकः ८ माम् ९ अजम् १० अव्ययम् ११ न १२ अभिजानाति १३॥२५॥अ०+ सबको १ मैं २ प्रकट ३ नहीं ४ अर्थात् सब मुझको नहीं जानसक्ते मेरे भक्तही मुझको जानसक्ते हैं क्योंकि+योगमाया करके ढकाहुआ हूं ५ अर्थात् मेरी योगमाया अचिन्त्यहै उस मायाके सम्बन्ध से अभक्त अश्रद्धावान् मुझको नहीं पहचान सक्ते इसी हेतुसे+यह ६ मूढ़ ७ जन ८ मुझ ९ अज १० अव्ययको ११ नहीं १२ जानताहै १३ ॥ २५ ॥

वेदाहंसमतीतानि वर्त्तमानानिचार्जुन ॥ भविष्याणिचभूतानि मांतुवेदनकश्चन ॥ २६ ॥

अर्ज्जुन १ समतीतानि २ वर्तमानानि ३ च ४ भविष्याणि ५ च ६ भूतानि ७ अहम् ८ वेद ९ माम् १० तु ११ कश्चन १२ न १३ वेद १४ ॥ २६ ॥ अ० उ०+पीछे यह कहा कि मैं योगमाया करके ढकाहुआ हूं सो वह योगमाया मुझको ज्ञानमें प्रतिबन्ध नहीं जीवकोही मोहनेवाली है जैसे बाजीगर की माया बाजीगरको नहीं मोहती है औरों कोही मोहती है यह कहते हैं+हे अर्ज्जुन ! १ पिछले २ और वर्त्तमान ३। ४ और अगिले ५। ६ भूतों को ७ मैं ८ जानताहूं ९ और मुझको १०। ११ कोई १२ नहीं १३ जानता १४ अर्थात् सच्चिदानन्द से पृथक् प्रथम तो कोई पदार्थ नहीं हैं और जो भ्रान्तिजन्य हैं भी तो जड़ हैं वे कैसे चैतन्य को जानसक्ते हैं तात्पर्य्य आत्मा से पृथक् जो ईश्वरको कोई जाना चाहे वह मूर्खतमहै क्योंकि स्पष्ट श्रीमहाराज कहते हैं कि मुझको कोई नहीं जानता इस वाक्यका यही अभिप्रायहै कि आत्मासे भिन्न मुझको कोई नहीं जानता ॥२६॥

इच्छाद्वेषसमुत्थेन द्वन्द्वमोहेनभारत ॥ सर्वभूतानिसम्मोहं सर्गेयान्तिपरन्तप ॥ २७ ॥

परन्तप १ सर्गे २ इच्छाद्वेषसमुत्थेन ३ द्वन्द्वमोहेन ४ भारत ५ सर्वभूतानि ६ सम्मोहम् ७ यान्ति ८ ॥ २७ ॥ उ०+जीवों को जो अज्ञान दृढ़ होरहाहै और विवेक नहीं होता उसमें कारण यहहै कि स्थूलशरीरके उत्पन्न होतेही अनुकूल पदार्थों में तो इच्छा और प्रतिकूल पदार्थों में द्वेष उत्पन्न होजाता है इच्छा द्वेष क्यों उत्पन्न होते हैं इसमें हेतु यहहै कि शीतोष्णादि द्वन्द्वके निमित्त जो भ्रान्ति है अर्थात् विवेक नहीं इसवास्ते इच्छा द्वेष उत्पन्न होते हैं तात्पर्य्य शीतोष्णादि

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

के दूर करनेके लिये जो प्रयत्न करनाहै सोई भ्रान्तिहै क्योंकि शीतोष्णादि की प्राप्ति और उनका दूरहोना प्रारब्धवशात् अवश्यभावि हैं जैसे दुःखके लिये कोई यत्न नहीं करता सुखकी रक्षामें सुखकी प्राप्तिके लिये दिनरात पत्थर रहते हैं परन्तु दिनरातकी तरह दुःख सुख बनाही रहताहै जिनके यह विचार नहीं वे अविवेकी अपने अविवेक से अज्ञानी बनरहे हैं यही बात इस मंत्र में कहते हैं+ अ०+हे अर्जुन! १ स्थूलशरीर की उत्पत्तिहुयेसन्ते २ अर्थात् स्थूलशरीर की उत्पत्तिके पीछे ३ इच्छा द्वेष करके उत्पन्न हुआ द्वन्द्वके निमित्त जो मोह अर्थात् विवेक न होना इसकरके ३। ४ अर्थात् इस हेतुसे ३। ४ हे अर्जुन! ५ सब जीव ६ अज्ञानको ७ प्राप्त हैं ८ तात्पर्य द्वन्द्व के निमित्त जो प्रयत्न करना यह अविवेक है विना इसके त्याग किये परमेश्वर का ज्ञान और अपना ज्ञान न होगा इच्छा द्वेष यही दोनों संसार की जड़हैं इनका त्याग अवश्य करना चाहिये ॥ २७ ॥

येषांत्वन्तगतंपापंजनानांपुण्यकर्मणाम् ॥ ते द्वन्द्वमोहनिर्मुक्ताभजन्तेमांदृढव्रताः ॥ २८ ॥

येषां १ तु २ पुण्यकर्मणाम् ३ जनानाम् ४ पापम् ५ अन्तगतम् ६ ते ७ द्वन्द्वमोहनिर्मुक्ताः ८ दृढव्रताः ९ माम् १० भजन्ते ११॥ २८ ॥ उ०+शुभकर्म्म करनेसे रजोगुण तमोगुण कम होगया है जिनका उनको द्वन्द्व के निमित्त भी मोह कम होताहै वे मेरा भजन करसक्ते हैं और उनको मेरे स्वरूप का यथार्थ ज्ञान होता है यह कहते हैं+जिन १। २ पुण्यकारी ३ जनोंका ४ पाप ५ नष्ट होगयाहै ६ वे ७ द्वन्द्वके निमित्त जो मोह उससे छूटेहुये ८ और दृढ़हैं व्रत नियम जिनके वे ९ मुझको १० भजते हैं ११+टी०+निष्काम शास्त्रोक्त सद्गुरुने उपदेश किया उसमें दृढ विश्वास रखना कि ऐसेही है उसीके अनुसार अनुष्ठान करना यह दृढव्रत है जिनके ॥ २८ ॥

जरामरणमोक्षायमामाश्रित्ययतन्तियें ॥ तेब्रह्म तद्विदुःकृत्स्नमध्यात्मंकर्मचाखिलम् ॥ २९ ॥

ये १ माम् २ आश्रित्य ३ जरामरणमोक्षाय ४ यतन्ति ५ ते ६ तत् ७ ब्रह्म ८ विदुः ९ कृत्स्नम् १० अध्यात्मम् ११ अखिलम् १२ कर्म १३ च १४॥ २९॥ अ० उ०+जिस वास्ते भजन करते हैं सो कहते हैं और भगवत्का भजन करनेवाले जानने के योग्य जो पदार्थ सबको जानकर कृतार्थ होजाते हैं यह भी कहते हैं दो

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

श्लोकों में + जो १ परमानन्द के जिज्ञासु + मुझ परमेश्वर को २ आश्रय करके ३ जरा मरण छूटनेके वास्ते ४ अर्थात् जन्म मृत्यु जरा व्याधि नाश होने के लिये ४ प्रयत्न करते हैं ५ वे ६ तिस ७ ब्रह्मको ८ जानते हैं ९ अथवा जान जावेंगे कि जिस ब्रह्मके जानने से मुक्ति होती है और समस्त १० अध्यात्म ब्रह्म को ११ समस्त १२ कर्मोंको १३ । १४ जानते हैं अर्थात् भलेप्रकार कर्म्म अध्यात्म ब्रह्मको जानते हैं इन शब्दों का अर्थ श्रीमहाराज आठवें अध्याय में निरूपण करेंगे ॥ २९ ॥

साधिभूताधिदैवंमांसाधियज्ञंचयेविदुः ॥ प्रयाण कालेऽपिचमांतेविदुर्युक्तचेतसः ॥ ३० ॥

युक्तचेतसः १ ये २ माम् ३ साधिभूताधिदैवम् ४ साधियज्ञम् ५ च ६ विदुः ७ ते ८ प्रयाणकाले ९ अपि १० च ११ माम् १२ विदुः १३ ॥ ३० ॥ उ० + भगवद् भक्त अन्तकाल में भी बेसन्देह भगवत्का चिंतवन करके परमेश्वरको प्राप्तहोंगे भगवद्भक्तों में योगभ्रष्ट की भी शंका न करनी क्योंकि उनके अन्तःकरण का प्रेरक अन्तर्यामी उनका स्वामी अपने में मन आप लगा लेगा सिवाय इसके वे आप परमेश्वर की कृपासे समाहितचित्त होतेहैं सोई कहते हैं + अ० + ॥ समाहित है चित्त जिनका १ ऐसे जो २ मुझको ३ सहित अधिभूत और अधिदैव के और ४ सहित अधियज्ञ के ५ । ६ जानते हैं ७ । ८ वे अन्तकाल में भी ९।१०। ११ मुझको १२ जानेंगे १३ अर्थात् मेरे स्मरण कृपाज्ञान अन्तकाल में उनको बना रहेगा क्योंकि उनका चित्त सावधानहै अधिभूतादि शब्दोंका अर्थ श्रीमहाराज आपही आठवें अध्याय में निरूपण करेंगे ॥ ३० ॥

इति श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सुब्रह्मविद्यायांयोगशास्त्रेश्रीकृष्णार्जुन संवादेज्ञानविज्ञानयोगोनामसप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

श्रीस्वामी आनन्दगिरिकृत परमानन्दप्रकाशिकाटीका में सातवां अध्याय समाप्त हुआ ॥ ७ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

आठवें अध्यायका प्रारम्भहुआ ॥

अर्जुनउवाच ॥ किंतद्ब्रह्मकिमध्यात्मंकिंकर्मपुरुषोत्तम॥अधिभूतंचकिंप्रोक्तमधिदैवंकिमुच्यते १॥

पुरुषोत्तम १ तत् २ ब्रह्म ३ किम् ४ अध्यात्मम् ५ किम् ६ कर्म ७ किम् ८ अधिभूतम् ९ च १० किम् ११ प्रोक्तम् १२ अधिदैवम् १३ किम् १४ उच्यते १५॥१॥ अ०उ०+पिछले अध्यायमें श्रीभगवान्ने कहा कि जो मुझ परमेश्वरका आश्रय लेकर मुक्तिके लिये यत्न करते हैं वे ब्रह्मादि सप्त पदार्थों को मुझसहित अन्तकाल में भी जानेंगे क्योंकि मुक्ति विना ब्रह्मज्ञानके नहीं होती यह वेदों में कहा है+ऋतेज्ञानान्नमुक्तिः इति श्रुतिः+इसवास्ते अर्जुन ब्रह्मादि सप्तपदार्थोंके जाननेकी इच्छाकरके प्रश्न करताहै+अ०+हे पुरुषोत्तम! १ सो २ ब्रह्म ३ क्याहै ४ अर्थात् जिसके जाननेसे मुक्ति होतीहै वह सोपाधिक ब्रह्महै वा निरुपाधिक शुद्ध सच्चिदानन्द निराकार है जो शुद्ध सच्चिदानन्द के जाननेसेही मुक्ति होतीहै तो उसका अर्थ कृपाकरके मुझको समझाना चाहिये मैं तो अबतक इसी श्यामसुन्दर मूर्त्तिको परात्पर परब्रह्म समझताथा और आपही हैं पूर्णब्रह्म परन्तु सोपाधिक और निरुपाधिकका भेद मैं जानना चाहताहूं कि किस प्रकार तो आप सोपाधिक हैं और किस प्रकार निरुपाधिक हैं यह मेरा तात्पर्य है अर्थात् शुद्ध स्वरूप आपका क्याहै और इस प्रकार+अध्यात्म ५ क्या है ६ कर्म ७ क्या है ८ और अधिभूतम् ९। १० किसको ११ कहते हैं १२ अधिदैव १३ किसको १४ कहते हैं १५ तात्पर्य अर्जुनका यह है कि इन शब्दों के अर्थ शास्त्रमें कै कै प्रकारके बहुत हैं और जैसे ब्रह्म शुद्धको भी कहते हैं और मायोपहितको और सगुण निर्गुणको भी ब्रह्म कहते हैं अब मैं यह जानना चाहताहूं कि वह ब्रह्मपदार्थ क्या है जिसके जानने से मुक्त होताहै इसप्रकार कर्म और जीवादि पदार्थोंका क्या अर्थ है अर्जुन का तात्पर्य यहहै कि मुक्तिका हेतु ब्रह्मादि पदार्थोंका ज्ञान मैं जानना चाहताहूं॥ १ ॥

अधियज्ञःकथंकोऽत्र देहेस्मिन्मधुसूदन ॥ प्रयाणकालेचकथंज्ञेयोऽसिनियतात्मभिः ॥ २ ॥

मधुसूदन १ अत्र २ देहे ३ अधियज्ञः ४ कः ५ कथम् ६ अस्मिन् ७ नियता-

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

त्मभिः ८ प्रयाणकाले ९ च १० कथं ११ ज्ञेयः १२ असि १३ ॥ २ ॥ अ०+ हे भगवन्! १ इस २ देहमें ३ अधियज्ञ ४ कौनहै ५ अर्थात् जो जो कर्म शरीर मन वाणी से होताहै उसका फलदाता इस शरीर में कौनहै+स्वरूप बूझकर उसके रहनेका प्रकार बूझता है कि+किसप्रकार ६ इसमें ७ अर्थात् इस देहमें वह स्थितहै और+समाधानहै अन्तःकरण जिनका ऐसे पुरुषों करके ८ किसप्रकार ११ जानने के योग्य १२ हो आप १३ अर्थात् समाधान अन्तःकरण वाले अन्तकालमें आपको किस प्रकार जानते हैं अर्थात् अन्तकालमें क्या उपाय सब से श्रेष्ठ करना योग्यहै जिस उपाय के करने से मुक्त होजावे तात्पर्य जिनका चित्त समाधानहै उनकी उपासना में तो सन्देह है नहीं क्योंकि चित्तका निरोध होना ही उपासनाका फल है अर्जुनका प्रश्नहै कि उसको अन्तकालमें क्या करना चाहिये इसहेतुसे स्पष्ट प्रतीत होताहै कि उपासनासे बढ़कर उपाय बूझताहै इन प्रश्नों का अर्थ इनहीं प्रश्नों के उत्तरमें सब स्पष्ट होजावेगा ॥ २ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ अक्षरंब्रह्मपरमं स्वभावोऽध्यात्ममुच्यते ॥ भूतभावोद्भवकरो विसर्गःकर्मसंज्ञितः ३

परमम् १ ब्रह्म २ अक्षरम् ३ उच्यते ४ स्वभावः ५ अध्यात्मम् ६ भूतभावोद्भवकरः ७ विसर्गः ८ कर्मसंज्ञितः ९ ॥ ३ ॥ अ०+तीन प्रश्नका उत्तर इस श्लोक में है ब्रह्म अध्यात्मकर्म+परमम् १ ब्रह्मको २ शुद्ध सच्चिदानन्द अक्षर अखण्ड नित्यमुक्त निराकार परात्पर ३ कहते हैं ४ और जीवको ५ अध्यात्म ६ कहते हैं+भूतों की उत्पत्ति और उद्भव करनेवाला ७ जो देवतोंका उद्देश करके द्रव्यका+त्याग ८ सो+कर्मसंज्ञित है ९ टी०+कर्म है संज्ञा जिसकी उसको कर्मसंज्ञित कहते हैं तात्पर्य यज्ञमें है ९ चैतन्यंयदधिष्ठानं लिङ्गदेहश्चयः पुनः। चिच्छायालिंगदेहस्था तत्संघोजीवउच्यते॥ अधिष्ठान जो चैतन्य और सूक्ष्मशरीर और सूक्ष्मशरीर में उसी चैतन्यका प्रतिबिम्ब इन सबके संघात को जीव कहते हैं ५॥३॥

अधिभूतंक्षरोभावःपुरुषश्चाधिदैवतम् ॥ अधियज्ञोहमेवात्र देहेदेहभृतांवर ॥ ४ ॥

क्षरः १ भावः २ अधिभूतम् ३ च ४ पुरुषः ५ अधिदैवतम् ६ हेदेहभृतांवार ७ अत्र ८ देहे ९ अधियज्ञः १० अहम् ११ एवास्मि १२ ॥ ४ ॥ उ० तीन प्रश्नका उत्तर इस मंत्रमें है+ नाशवान् १ पदार्थ को २ अधिभूत ३ कहते हैं+पुरुषों को ४। ५ अधिदैव ६ कहते हैं+हे देहधारियों में श्रेष्ठ

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

अर्जुन ! ७ इस ८ देहमें ९ अधियज्ञ १० मैं अन्तर्यामी ११ । १२ हूं ॥ टी० ॥ देहादि पदार्थ नाशवान् हैं १२ जिस करके यह सर्व जगत् पूर्ण हो रहाहै अथवा सब शरीरों में जो विराजमान है उसको वैराजपुरुष हिरण्यगर्भ भी कहते हैं सूर्य्यमण्डलके मध्यवर्त्ति और व्यष्टि सब देवतोंका अधिपति समष्टि देवता है ४ पीछे अर्जुनने यह भी प्रश्न कियाथा कि किसप्रकार वह अधियज्ञ इस देह में स्थितहै और अधियज्ञ किसको कहते हैं श्रीभगवान्ने कहा कि अन्तर्यामी अधियज्ञ मैं हूं इसी कहने से यह जानलेना कि ईश्वर अन्तर्यामी देहमें आकाशवत् स्थित है जो सबका साक्षी बुरे भले कर्म्मों के फलका देनेवालाहै और वह असंग है यह समझना चाहिये तात्पर्य्य यहहै कि ऐसा ईश्वर को समझने से मोक्षकी प्राप्ति होतीहै ॥ ४ ॥

अन्तकालेचमामेव स्मरन्मुक्त्वाकलेवरम् ॥ यः प्रयातिसमद्भावं यातिनास्त्यत्रसंशयः ॥ ५ ॥

अन्तकाले १ च २ माम् ३ एव ४ स्मरन् ५ यः ६ कलेवरम् ७ मुक्त्वा ८ प्रयाति ९ सः १० मद्भावम् ११ याति १२ अत्र १३ संशयम् १४ न १५ अस्ति १६ ॥ ५ ॥ उ०+सातवें प्रश्न का उत्तर इसमंत्र में है अर्थात् मुक्तिका मुख्य उपाय यहहै+अ०+अन्तकालमें १ । २ मुझ अन्तर्यामी को ३ ही ४ स्मरण करता हुआ ५ जो ब्रह्मका जिज्ञासु ६ शरीर को ७ त्यागकर ८ अर्चिरादि मार्गकरके+जाताहै ९ सो १० कारण ब्रह्मको ११ प्राप्त होताहै १२ इसमें १३ संशय १४ नहीं १५ है १६ ॥ ५ ॥

यंयंवापिस्मरन्भावं त्यजत्यन्तेकलेवरम् ॥ तं तमेवेतिकौन्तेय सदातद्भावभावितः ॥ ६ ॥

यम् १ यम् २ भावम् ३ स्मरन् ४ वा ५ अपि ६ अंते ७ कलेवरम् ८ त्यजति ९ कौन्तेय १० तम् ११ तम् १२ एव १३ एति १४ सदा १५ तद्भावभावितः १६ ॥ ६ ॥ उ०+अन्तकाल में जिस पदार्थका चिन्तवन करेगा उसी को प्राप्त होगा यह कहते हैं+अ०+जिस १ जिस २ पदार्थको ३ स्मरण करताहुआ ४ । ५ । ६ अन्तकाल में ७ शरीर को ८ त्यागता ९ हे अर्जुन! १० तिस ११ तिसको १२ ही १३ प्राप्त होताहै १४ क्योंकि+सदा १५ तिसका चिंतवन करके बसगया है चित्त जिसका अर्थात् सदा चिंतवन रहेगा वह पदार्थ उसके मनमें बसजायगा

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

इस हेतु से अन्तकाल में भी उसको वही स्मरण होगा + बद्धोबद्धाभिमानीस्यात् मुक्तोमुक्ताभिमानिकः । किंवदन्तीहसत्येयं या मतिःसागतिर्भवेत् ॥ यह कहानी सच्ची है कि जिसको यह अभिमान है अर्थात् यह मानता है कि मैं बद्ध हूं परतंत्र परमेश्वर का दास हूं वह ऐसाही होगा और जो आत्माको स्वतन्त्र असंग मुक्त मानता है वह स्वतन्त्र मुक्तहोगा जैसी जिसकी समझहै उसको वही गतिहोगी इस हेतुसे परमानन्दके उपासक परमानन्दकोही प्राप्तहोंगे मूर्त्तियों के उपासक मूर्त्तियोंको स्त्री छोकरों के उपासक स्त्री छोकरों को प्राप्तहोंगे ॥ ६ ॥

तस्मात्सर्वेषुकालेषु मामनुस्मरयुध्यच ॥ मय्यर्पितमनोबुद्धिर्मामेवैष्यस्यसंशयः ॥ ७ ॥

तस्मात् १ सर्वेषु २ कालेषु ३ माम् ४ अनुस्मर ५ युध्य ६ च ७ मयि ८ अर्पितमनोबुद्धिः९ माम् १० एव११एष्यसि १२ असंशयः १३ ॥ ७ ॥ उ० + जब कि यह नियम है कि सदा जिस पदार्थका चिंतवन रहेगा अन्तकाल में वह अवश्य याद आवैगा इसी वास्ते सदा परमेश्वरका ही चिंतवन करना चाहिये और विना अन्तःकरण शुद्धहुये परमेश्वरका स्मरण नहीं होसक्ता इसवास्ते अन्तःकरणकी शुद्धिके लिये स्वधर्मका अनुष्ठान करना चाहिये यह कहते हैं + अ० + तिसकारणसे १ सब कालमें २ । ३ मुझ अन्तर्यामीको ४ स्मरणकर ५ जो न होसके तो + युद्धकर ६ क्योंकि युद्ध करनाही क्षत्रियोंका धर्म है युद्ध करने से अन्तःकरण शुद्ध होता है क्षत्रियों का + मुझमें अर्पित करी हैं मन बुद्धि जिस ने ९ ऐसा होकर तू + मुझको १० ही ११ प्राप्तहोगा १२ नहीं है संशय इसमें १३ तात्पर्य्य प्रथम अन्तःकरण शुद्ध करके और फिर मुझमें मन लगाकर तू मुझकोही प्राप्तहोगा इसमें संशय मतकर कि युद्ध करनेसे अन्तःकरण शुद्धहोगा वा नहीं बेसंदेह अन्तःकरण शुद्धहोगा और फिर मेरा सदा स्मरण करके मुझको प्राप्तहोगा परमेश्वरमें जो मन नहीं लगता है इसमें यही हेतुहै कि अन्तःकरण शुद्ध नहीं प्रथम उपाय मुक्तिका यही है कि निष्कामहोकर भलेप्रकार कर्म्मोंका अनुष्ठान करे ॥ ७ ॥

अभ्यासयोगयुक्तेनचेतसानान्यगामिना ॥ परमं पुरुषंदिव्यंयातिपार्थाऽनुचिन्तयन् ॥ ८ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

पार्थ १ अनुचिन्तयन् २ परमम् ३ पुरुषम् ४ दिव्यम् ५ याति ६ अभ्यासयोगयुक्तेन ७ चेतसा ८ न ९ अन्यगामिना १० ॥ ८ ॥ उ० ॥ परमेश्वर के स्मरण करने में दो प्रकारके साधनहैं अन्तरंग बहिरंग यज्ञादि निष्काम कर्मोंका अनुष्ठान करना बहिरंग साधनहैं और शमादि अन्तरंग साधन हैं क्रमसे दोनों प्रकार के साधनों का अनुष्ठान करना आवश्यक है इसीवास्ते पहले मंत्रमें बहिरंग साधन कहा अब अन्तरंग साधन कहतेहैं + अ० + हे अर्ज्जुन! १ शास्त्रगुरुसे जैसा स्वरूप परमेश्वरका निश्चय कियाहै उसीप्रकार परमेश्वरको + चिन्तवन करताहुआ २ परम ३ पुरुष ४ दिव्य को ५ प्राप्तहोता है ६ अर्थात् कारण ब्रह्मको अर्चिआदि मार्ग करके प्राप्त होताहै उसका अन्तरंग साधन यहहै कि स्त्री धनादि पदार्थों से मन हटाकर परमेश्वर में लगाना योग्य है जब जब किसी पदार्थमें मनजावे उसी समय वहां से हटाकर परमेश्वरमें लगाना इसको अभ्यासयोग कहते हैं इस + अभ्यासयोग करके युक्त ७ जो चित्त ऐसे + चित्त करके ८ परमेश्वर का चिंतवन होसक्ताहै और दूसरा विशेषण उस चित्तका यहहै कि पीछे इस अभ्यासयोगके + नहीं ९ रहताहै अन्य पदार्थमें जानने का स्वभाव जिसका १० अर्थात् स्वाभाविक किसी पदार्थमें सिवाय परमेश्वरके मन नहीं जाता है ऐसे चित्तकरके कि जिसके ये दो विशेषण कहे अर्ज्जुन परमेश्वरको चिंतवन करता हुआ परमेश्वर कोही प्राप्त होताहै ॥ ८ ॥

कविंपुराणमनुशासितारमणोरणीयांसमनुस्मरेद्यः ॥ सर्वस्यधातारमचिन्त्यरूपमादित्यवर्णंतमसः परस्तात् ॥ ९ ॥

कविम् १ पुराणम् २ अनुशासितारम् ३ अणोः ४ अणीयांसम् ५ सर्वस्य ६ धातारम् ७ अचिन्त्यरूपम् ८ आदित्यवर्णम् ९ तमसः १० परस्तात् ११ यः १२ अनुस्मरेत् १३ ॥ ९ ॥ अ० उ० + उस परमपुरुषके ये विशेषणहैं और इसमन्त्र का पिछले मन्त्रकेसाथ सम्बन्धहै कैसाहै वह परमपुरुष + सर्वज्ञ १ अनादिसिद्ध २ नियंता प्रेरक ३ सूक्ष्म से ४ अतिसूक्ष्म ५ सबका ६ पालनेवाला ७ अचिंत्यशक्तिमान् होनेसे और अप्रमाण महिमा और गुण प्रभाव होनेसे + अचिंत्यरूप ८ आदित्यवत् स्वप्रकाशरूप ९ अर्थात् ज्ञानस्वरूप अग्निसूर्यवत् उसका प्रकाश नहीं समझना केवल शुद्ध ज्ञान प्राप्ति चित् चिती चैतन्यमात्र अनुभव करना चाहिये फिर इसीको व्यतिरेकमुख करके करते हैं + अज्ञान से १० परे ११

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

पूर्वोक्त ऐसे पुरुषोंको + जो १२ शुद्ध ब्रह्मका जिज्ञासु + स्मरण करता है १३ सो उसी परंपुरुष दिव्यको प्राप्त होताहै पिछले मन्त्र के साथ इसका अन्वयहै फिर शुद्ध सच्चिदानन्द स्वरूप आत्माको ज्ञानद्वारा प्राप्त होता है ॥ ९ ॥

प्रयाणकालेमनसाचलेन भक्त्यायुक्तोयोगबलेन चैव ॥ भ्रुवोर्मध्येप्राणमावेश्यसम्यक् सतंपरंपुरुषमुपैतिदिव्यम् ॥ १० ॥

प्रयाणकाले १ अचलेन २ मनसा ३ योगबलेन ४ च ५ एव ६ प्राणम् ७ भ्रुवोः ८ मध्ये ९ सम्यक् १० आवेश्य ११ भक्त्या १२ युक्तः १३ सः १४ तम् १५ परम् १६ पुरुषम् १७ दिव्यम् १८ उपैति १९ ॥ १० ॥ अ० उ० + इस प्रकार सच्चिदानन्द पुरुष को जो स्मरण करताहै सो तिसही सच्चिदानन्दको प्राप्त होताहै यह कहते हैं + अन्तकालमें १ अचल २ मनकरके ३ योग के बलसे ४ । ५ । ६ प्राण को ७ दोनों भ्रूके ८ बीच में ९ भलेप्रकार १० ठहराय कर ११ भक्तिकरके १२ युक्त १३ जो पुरुष जैसे पीछे कहाहै उसप्रकार का सच्चिदानन्द को स्मरण करता है + सो १४ तिस १५ परं १६ पुरुष १७ दिव्यको १८ प्राप्त होताहै १९ + टी० + सिवाय सच्चिदानन्द निराकार के किसी पदार्थ साकार में स्त्री पुत्र धनादि मानापमानादि में मन न जावे २ । ३ आसन प्राणायामादि के बलसे ४ सुषुम्णामार्ग करके प्राण को स्थिर करके ७ । ८ । ९ । १० । ११ उससमय सच्चिदानन्दका ध्यान करना यही भक्तिहै ऐसी भक्तिकरता हुआ १२ । १३ परंपुरुष सच्चिदानन्द को ही प्राप्त होगा अर्थात् सच्चिदानन्दरूप हो जायगा ॥ १० ॥

यदक्षरंवेदविदोवदंति विशंतियद्यतयोवीतरागाः ॥ यदिच्छंतोब्रह्मचर्यंचरन्ति तत्तेपदंसंग्रहेणप्रवक्ष्ये ॥ ११ ॥

वेदविदः १ यत् २ अक्षरम् ३ वदन्ति ४ वीतरागाः ५ यतयः ६ यत् ७ विशन्ति ८ यत् ९ इच्छंतः १० ब्रह्मचर्यम् ११ चरंति १२ तत् १३ पदम् १४ ते १५ संग्रहेण १६ प्रवक्ष्ये १७ ॥ ११ ॥ उ० + महावाक्यों का अर्थ विचारने में जो समर्थ हैं अर्थात् निर्मल और तीव्र बुद्धिवाले जो अन्तर्मुख हैं वे तो उत्तम अधि-

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

कारी हैं उनको ब्रह्मविद्याका श्रवण करना यही उपाय मुक्ति का मुख्य उनके वास्ते है और जो मन्दबुद्धि हैं और मन्दवैराग्य हैं गृहस्थ छोड़कर जिन्हों से ब्रह्मवित्जनों का सेवन नहीं होसक्ता अथवा ब्रह्मविद्या के पढ़नेवाले गुरु किसी कारण से उनको प्राप्त नहीं होते अथवा ब्रह्मविद्याके पढ़ने की सामग्री पुस्तकादि नहीं मिलती हैं जिनको ऐसे पुरुष मन्द और मध्यम अधिकारी हैं मोक्षमार्ग में उनके लिये परमकरुणाकर श्रीभगवान् ऐसा अच्छा उपाय बताते हैं कि उस का अनुष्ठान करने से शीघ्र बेसन्देह ज्ञानद्वारा मुक्तिको प्राप्त होंगे प्रथम उसमुक्ति पदकी स्तुति करते हैं फिर आगे के दो श्लोकों में उसकी प्राप्तिका उपाय कहेंगे +अ०+वेदके जानने वाले १ जिसको २ अक्षर ३ कहते हैं ४ और दूर होगया है राग जिनका ५ ऐसे+संन्यासी ज्ञाननिष्ठ महात्मा ६ जहां ७ प्रवेश होते हैं ८ और जिस की ९ इच्छा करते हुये १० ब्रह्मचारी गुरुदेवजी के घर रहकर+ ब्रह्मचर्य व्रत ११ करते हैं १२ सो १३ पद १४ तेरे अर्थ १५ संक्षेप करके १६ कहूंगा १७ अर्थात् उस पदकी प्राप्तिका उपाय तुझ से कहूंगा कि जिस पद का वेदों का तात्पर्य और सिद्धान्त जाननेवाले अक्षर ब्रह्म कहते हैं और सबपदार्थों में दूर होगयाहै राग जिन का न इस लोक के किसी पदार्थमें राग है न परलोक के किसी पदार्थ में ऐसे विरक्त साधु महात्मा विज्ञानी महापुरुष जिस परमपद में प्रवेश होते हैं और जिस पद की इच्छा करके ब्रह्मचारी काश्यादि क्षेत्रों में जाकर और वहां गुरुदेव की टहल करके सांगोपांग वेदों का अध्ययन करते हैं अर्थात् वेद शास्त्र भलेप्रकार पढ़ते विचारते हैं ब्रह्मचर्य व्रत में स्थित रहते हैं ऐसे पदकी प्राप्ति का उपाय तुझ से कहूंगा सावधान होकर सुन ॥ ११ ॥

सर्व्वद्वाराणिसंयम्यमनोहृदिनिरुध्यच ॥ मूर्ध्न्याधायात्मनःप्राणमास्थितोयोगधारणाम् ॥ १२ ॥

सर्व्वद्वाराणि १ संयम्य २ मनः ३ हृदि ४ निरुध्य ५ च ६ आत्मनः ७ प्राणम् ८ मूर्ध्नि ९ आधाय १० योगधारणाम् ११ आस्थितः १२ ॥ १२ ॥ अ० उ०+उत्तम उपासना सनातन की यहहै दो मन्त्रों में कहते हैं सब इन्द्रियों के द्वारों को १ रोक कर २ और मन को ३ हृदय में ४ रोक कर ५ । ६ और अपने ७ प्राण को ८ मूर्द्धामें ९ ठहराय कर १० योगधारणा को ११ आश्रय किया हुआ १२ परमगतिको प्राप्त होताहै अगले मन्त्रके साथ इसका अन्वयहै+टी०+ चक्षुरादि का रूपादि के साथ सम्बन्ध नहीं होने देना इसी को इन्द्रियोंका रोकना

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

कहते हैं अर्थात् देहयात्रा से सिवाय दर्शनादि क्रिया नहीं करनी १। २ अन्तः करणको वहिर्मुख नहीं करना अर्थात् वाहर के शब्दादि पदार्थोंका सङ्कल्प विकल्प नहीं करना सिवाय आत्मा के किसी पदार्थ भूत भविष्यत् का चिंतन नहीं करना सिवाय आत्माके और किसी पदार्थ में निश्चयात्मिका बुद्धि नहीं करनी अर्थात् यह पदार्थ सत्य है तात्पर्य सिवाय आत्माके और किसीको सत्य नहीं समझना और देहादि के साथ तादात्म्यता सम्बन्ध करके अहंकार नहीं करना इस को अन्तःकरण का निरोध कहते हैं ३। ४। ५ प्राणायाम के अभ्यास से प्राणकी गतिको मस्तक में निश्चल करके तात्पर्य प्राणका निरोध करना चाहिये प्राणके निरोध करनेसे ही अन्तःकरण निरोध होता है मनकी और प्राण की एक गतिहै ७। ८। ९। १० यम नियम आसन प्राणायाम प्रत्याहार धारणा ध्यान समाधि ये आठ अंग योगके हैं इस योगका अवश्य आश्रय रखना चाहिये अवश्य अनुष्ठान करना उचित है जितनी अपनी सामर्थ्यहो इसका अनुष्ठान किये विना मन प्राण का निरोध कठिनहै जबकि प्राण मनका निरोध न हुआ तो आत्मानन्द का साक्षात् होना बहुत कठिन है और जीवन्मुक्तिका होना तो बहुतही दुर्लभ है पूर्व संस्कार वा ईश्वर महात्माजनोंका अनुग्रह दूसरी बात है मार्ग तो अपरोक्ष ज्ञानका यही है इसके पीछे विचार है और इनका फल प्रत्यक्ष है जिसको यह योग थोड़ासाभी प्राप्तहै उसको बहुत पढ़ने सुननेकी अपेक्षा नहीं १२॥

ओमित्येकाक्षरंब्रह्मव्याहरन्मामनुस्मरन् ॥ यः प्रयातित्यजन्देहंसयातिपरमांगतिम् ॥ १३ ॥

ओम् १ इति २ एकाक्षरम् ३ ब्रह्म ४ व्याहरन् ५ माम् ६ अनुस्मरन् ७ यः ८ देहम् ९ त्यजन् १० प्रयाति ११ सः १२ परमाम् १३ गतिम् १४ याति १५॥१३॥ अ० उ० + ओम् इस शब्द का उच्चारण करना वेदों में बहुत जगह लिखा है और इसका बड़ा प्रत्यक्ष परचा है + ओम् १ यह २ एक अक्षर ३ ब्रह्म का वाचक होनेसे + ब्रह्मस्वरूप है ४ इसको दीर्घ स्वर में + उच्चारण करता हुआ ५ और इसका वाच्य जो ईश्वर मैं हूं + मुझ सच्चिदानन्द ईश्वर को ६ स्मरण करता हुआ ७ जो ८ ब्रह्मका जिज्ञासु ८ शरीरको ९ छोड़कर १० अर्चिरादि मार्ग करके + जाता है ११ सो १२ परम् १३ गति को १४ प्राप्त होता है १५ अर्थात् ऐसे उपासक का फिर जन्म नहीं होता ब्रह्मलोक में जाकर ज्ञानद्वारा परमानन्दस्वरूप आत्माको प्राप्त होता है + जैसे घंटा का

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

शब्द एक बेर तो बड़े चला जाताहै फिर सहज सहज कम होकर जहांसे उठा था वहीं समाजाता है इसी प्रकार ओम् का दीर्घ स्वर से उच्चारण करना चाहिये थोड़ीदेर पीछे स्थित होकर मकार में थमजाना यह उपासना बहुत बढ़की है + ॐकारःसर्ववेदानां सारस्तत्त्वप्रकाशकः । तेनचित्तसमाधानं मुमुक्षूणांप्रकाश्यते + असंख्यात श्लोकोंमें ओम् का अर्थ है वेद शास्त्रों में बहुत जगह जो नाम उच्चारण का माहात्म्य लिखा है वहां तात्पर्य्य इसी नामके उच्चारण करने से है और तारक मन्त्र यही है चारों वेद षट्शास्त्र पुराणादि इसकी टीकाहैं इस की जप करने की विधि महात्माओं से श्रवण करके अवश्यही अनुष्ठान करना चाहिये अन्तकाल में एक बार उच्चारण करने से जब परमगतिको प्राप्त होता है तो फिर क्या कहना है कि जो पहले से अभ्यास करनेवाले परमगति को प्राप्तहों यह ओंकार सब वेदोंका सार ब्रह्मतत्त्व का प्रकाश करनेवाला और चित्तका समाधान करनेवाला है ॥ १३ ॥

अनन्यचेताःसततंयोमांस्मरतिनित्यशः ॥ तस्याहंसुलभःपार्थनित्ययुक्तस्ययोगिनः ॥ १४ ॥

अनन्यचेताः १ यः २ माम् ३ सततम् ४ नित्यशः ५ स्मरति ६ पार्थ ७ तस्य ८ नित्ययुक्तस्य ९ योगिनः १० अहम् ११ सुलभः १२ ॥ १४ ॥ अ० उ० + इस प्रकार अन्तकाल में धारण करके मेरा स्मरण नित्य प्रतिदिन अभ्यास करनेवाला ही करसक्ता है विना अभ्यासके अन्तकाल में मेरा स्मरण कठिनहै यहबात पहले भी कहचुके हैं श्रीभगवान् फिरभी उसीको स्मरण कराते हैं + अ० + नहीं है अन्य पदार्थ में मन जिसका अर्थात् सिवाय परमेश्वर के और किसी पदार्थ पुत्र मित्र स्त्री धनादि में नहीं है चित्त जिसका ऐसा ब्रह्मका जिज्ञासु + जो २ मुझको ३ निरन्तर ४ प्रतिदिन ५ स्मरण करता है ६ हे अर्जुन! ७ तिस ८ नित्ययुक्त ९ योगी को १० मैं सुलभ ११ हूं और को नहीं + टी० + प्रातःकाल सायंकाल पर्यंत और सायंकालसे प्रातःकालपर्यंत अन्तर न पड़े अर्थात् अष्टप्रहर के बीच में निद्रा शौच स्नान भोजनादि प्रमितक्रिया के विना सिवाय नारायण के और किसी पदार्थका चिन्तन न हो ४ जबतक जीवे कोई एकदिन वा महीना वा वर्ष वा शतवर्ष तबतक उसके बीच में सिवाय सच्चिदानन्द के और कहीं मन मुख्य होकर न जावे ५ ऐसे समाहित चित्तको मैं सुलभ हूं अर्थात् अन्तकाल में मेरी प्राप्ति उसको बेसन्देह सुखपूर्वक होगी ॥ १४ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

मामुपेत्यपुनर्जन्म दुःखालयमशाश्वतम् ॥ ना प्नुवन्तिमहात्मानः संसिद्धिंपरमांगताः ॥ १५ ॥

महात्मानः १ माम् २ उपेत्य ३ पुनः ४ जन्म ५ न ६ आप्नुवंति ७ परमाम् ८ संसिद्धिम् ९ गताः १० दुःखालयम् ११ अशाश्वतम् १२॥ १५॥ अ० उ० + आप की प्राप्ति में क्या लाभ है इस प्रश्न के उत्तर में यह कहते हैं + महात्मा विरक्त वैराग्यवान् १ मुझको २ प्राप्तहोकर ३ अर्थात् सच्चिदानन्दरूप होकर ३ फिर ४ जन्मको ५ नहीं ६ प्राप्तहोते हैं ७ क्योंकि वे जीवतेही + परम ८ सिद्धिको ९ अर्थात् जीवन्मुक्तिको ८। ९ प्राप्तहोगयेहैं १० कैसाहै वहजन्म + दुःखों की खानि स्थान है ११ फिरभी यह नहीं कि ऐसाही बनारहै. क्योंकि दूसरा विशेषण उसका यह है कि + अनित्यहै अर्थात् क्षणभंगुरहै दूसरे क्षणमें दूसरा जन्महोते देर नहीं लगती ॥ १५ ॥

आब्रह्मभुवनाल्लोकाः पुनरावर्त्तिनोऽर्जुन ॥ मा मुपेत्यतुकौन्तेय पुनर्जन्मनविद्यते ॥ १६ ॥

अर्जुन १ आब्रह्मभुवनात् २ लोकाः ३ पुनरावर्त्तिनः ४ कौन्तेय ५ माम् ६ उपेत्य ७ तु ८ पुनः ९ जन्म १० न ११ विद्यते १२॥ १६ ॥ अ० उ० ॥ ब्रह्मलोकादि की प्राप्ति में क्या आपकी प्राप्ति नहीं सच्चिदानन्द स्वरूपहोने मेंही आप की प्राप्तिहै इस अपेक्षा में श्रीमहाराज कहतेहैं क्योंकि + हे अर्जुन! १ ब्रह्मलोकसे लेकर २ जितने सावयव + लोक ३ हैं सब + पुनरावृत्ति वाले हैं अर्थात् सबलोकों में वैकुण्ठादि में भी जाकर लौट आता है मनुष्य लोक में और जो ब्रह्मा के साथ मुझ सच्चिदानन्द रूपको प्राप्तहोताहै सो शुद्ध सच्चिदानन्द निराकारका उपासकही प्राप्तहोता है उससे सिवाय सब लौट आते हैं क्योंकि वे मुझ शुद्ध सच्चिदानन्द के उपासक नहीं अर्थात् ज्ञाननिष्ठ वे नहीं भेदवादी हैं और + हे अर्जुन ५ मुझ शुद्ध सच्चिदानन्द के उपासक तो + मुझ सच्चिदानन्दरूप को ६ प्राप्त होकर ७। ८ दूसरे ९ जन्मको १० नहीं ११ प्राप्तहोते हैं १२ तात्पर्य ब्रह्मलोक का अर्थ यह नहीं समझना कि वहलोक ब्रह्माजीकाहै उसमें केवल ब्रह्माजी के उपासक जातेहैं और राम कृष्ण विष्णु शिवादि के उपासक गोलोक वैकुण्ठादि में जातेहैं वे नित्य हैं यह सब अर्थवाद है और स्थूलबुद्धिवालों के लिये स्थूल रोचक वाक्यहैं क्योंकि सब देवताओंके उपासक अपने अपने स्वामीके लोकको

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

सबसे बड़ा और नित्य कहते हैं प्रत्युत यह कहतेहैं कि इससे सिवाय कोई दूसरा लोकहै नहीं सिवाय इसके गोलोकादि का वर्णन वेदों में तो है नहीं पुराणों में सुना जाता है स्वर्ग का वर्णन वेदों में बहुत जगह है पूर्वमीमांसावाले वेद का प्रमाण देकर स्वर्गको नित्य अनादि कहते हैं अब विचार करना चाहिये कि स्वर्ग को श्रीभगवान् ने क्यों अनित्य कहा जो यह कहो कि स्वर्ग के नित्य प्रतिपादन करने में जो श्रुति हैं वे रोचक वाक्यहैं उनको अर्थवाद समझना चाहिये अब विचारो कि वेदकी श्रुतिको तो अर्थवाद और रोचक माना फिर पुराणों के वाक्यों को रोचक और अर्थवाद मानने में क्यों शंका करतेहो प्रत्युत पुराणों का वाक्य तब तक प्रमाण के योग्य नहीं कि जबतक उस वाक्य के अनुसार श्रुति न पावें क्योंकि कितने पुराण संदिग्ध हैं स्पष्ट यह बात हम कहते हैं कि भागवत दो प्रसिद्ध हैं उनमें से एक बेसन्देह मनुष्य कृतहै जब कि एक पण्डित ने एक पुराण बनाकर अठारह सहस्रश्लोकों का प्रचार कर दिया तो क्यों न संशय पड़ेगा उन पुराणों में कि जो श्रुति के अनुसार न होगा तात्पर्य ब्रह्मलोक पूर्ण ब्रह्म नारायण का लोक है पूर्णब्रह्म सच्चिदानन्द के उपासक उस लोक में जाते हैं जब वही अनित्यहै तो और की अनित्यतामें क्या संदेहहै ब्रह्मलोक में जाकर कोई तो ब्रह्माजी के साथ मुक्त होजातेहैं और कोई लौटआते हैं यह बात भी इसी अध्याय में आगे कहेंगे ॥ १६ ॥

सहस्रयुगपर्यन्तमहर्यद्ब्रह्मणोविदुः ॥ रात्रिंयुगसहस्रांतांतेऽहोरात्रविदोजनाः ॥ १७ ॥

अहोरात्रविदः १ जनाः २ ते ३ ब्रह्मणः ४ यत् ५ अहः ६ सहस्रयुगपर्यन्तम् ७ विदुः ८ रात्रिम् ९ युगसहस्रान्ताम् १० ॥ १७ ॥ अ०उ० + ब्रह्मलोकादि इस हेतु से अनित्यहैं + दिनरातके जाननेवाले अर्थात् कालकी संख्या करनेवाले १ जो + पुरुष २ वे ३ ब्रह्माजीका ४ जो ५ दिन ६ है उस को + सहस्र युग पर्यन्त ७ । ४३२०००००० कहते हैं ८ अर्थात् सत्ययुग १७२८००० त्रेता १२९६००० द्वापर ८६४००० कलियुग ४३२००० इन चारों युगोंका जोड़ ४३२०००० वर्ष होते हैं ४३२०००० को १००० से गुणा जावे तो चार अरब बत्तीस करोड़ ४३२००००००० वर्ष होते हैं चार अरब बत्तीसकरोड़ वर्ष का ब्रह्माजीका एक दिन होता है और रात्रिभी इतनेही वर्षोंकी होती है + रात्रि को ९ भी + युगसहस्रान्ता १० कहते हैं इसप्रकार महीनों और वर्षोंकी

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

कल्पना करके शत वर्ष की अवस्था आयु ब्रह्माजी की है जिस दिन ब्रह्माजी प्रयाण करते हैं उसी दिन सब लोक सावयव नाश होजाते हैं दिन रात ब्रह्माजी की आठ अर्ब चौंसठ करोड़ वर्षों की होती है ८६४००००००० इस संख्याके निरूपण करने का तात्पर्य वैराग्यमें है+टी०+हज़ारयुगोंपर अन्तहै जिसका उसको सहस्रयुगपर्य्यन्त कहते हैं और हज़ार युगों का अन्तहै जिसका उसको युगसहस्रांता कहते हैं सहस्रयुग शब्द का तात्पर्य सहस्र चौकड़ी में है॥ १७॥

अव्यक्ताद्व्यक्तयःसर्वाः प्रभवंत्यहरागमे॥ रात्र्यागमेप्रलीयंते तत्रैवाव्यक्तसंज्ञके॥ १८॥

अहरागमे १ सर्वाः २ व्यक्तयः ३ अव्यक्तात् ४ प्रभवन्ति ५ रात्र्यागमे ६ अव्यक्तसंज्ञके ७ तत्र ८ एव ९ प्रलीयन्ते १०॥ १८॥ अ० उ०+यह मनुष्य लोक और कई लोक इससे ऊपर के और नीचे के ब्रह्माजी की रातमें ही नाश होजाते हैं और रातभर कारण रूप हुये सब अविद्या में रहते हैं फिर+अ०+दिनके आगम में अर्थात् ब्रह्माजीका दिन उदय होतेही १ सब २ व्यक्ति ३ अर्थात् सब भूत आकाशादि कार्य के सहित+अव्यक्त से ४ अर्थात् कारणरूप से+प्रकट होजाते हैं ५ और रात्रिके आगम में ६ अव्यक्तसंज्ञा है जिस की ७ तिसमें ८ ही ९ लय होजाते हैं १० टी०+स्थावर जंगमें सब ब्रह्माजीकी स्वप्न अवस्था में लय होजाते हैं और जाग्रत् अवस्था में उसी स्वप्न में से सब प्रकट होजाते हैं तात्पर्य यह संसार ब्रह्मलोकादि और ब्रह्मादि के सहित सब स्वप्न है यह समझकर सिवाय सच्चिदानन्द आत्मा के अन्य किसी पदार्थ में प्रीति न करनी क्योंकि सब अनित्य हैं अनित्य पदार्थ वर्त्तमान काल में भी दुःख का हेतु होता है॥ १८॥

भूतग्रामःसएवायंभूत्वाभूत्वाप्रलीयते॥ रात्र्यागमेऽवशःपार्थ प्रभवत्यहरागमे॥ १९॥

अयम् १ भूतग्रामः २ सः ३ एव ४ अवशः ५ अहरागमे ६ भूत्वा ७ पार्थ ८ रात्र्यागमे ९ प्रलीयते १० भूत्वा ११ प्रभवति १२॥ १९॥+उ०+यह नहीं समझना कि नई सृष्टिमें नये जीव उत्पन्न होते हैं क्योंकि जीव नित्य और अनादि हैं और संसार अनादि शांत है इसवास्ते यह श्लोक वैराग्य के लिये कहते हैं

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

+अ०+यह १ भूतों का समूह २ जो पूर्वकल्प में लय होगया था+सो ३ ही ४ परतंत्र हुआ ५ अर्थात् अविद्याके वश हुआ ५ दिनके आगममें ६ प्रकट+ होकर ७ हे अर्जुन! ८ रात्रिके आगम में ९ लय होजाताहै १० और फिर दिनके आगम में स्थूल सूक्ष्म+होकर ११ प्रकट होता है १२+टी०+भूत्वा भूत्वा दो बार कहने से यह अभिप्राय है कि जबतक ज्ञान नहीं होता तबतक यह चक्र चलाही जाता है इसवास्ते अवश्य ज्ञान में ही यत्न करना चाहिये अथवा इस श्लोक का अन्वय ऐसे करना कि हे अर्जुन! यह भूतोंका समुदाय भी प्रथम कल्प में था सोई अवश हुआ रात्रिके आगममें होकर फिर लय होकर फिर होकर लय होजाता है और दिनके आगम में प्रकट होजाता है तात्पर्य इस अन्वय में भी वही अक्षरों का जोड़ और प्रकार है ॥ १९ ॥

परस्तस्मात्तुभावोऽन्योव्यक्तोऽव्यक्तात्सनातनः॥
यस्ससर्वेषुभूतेषु नश्यत्सुनविनश्यति ॥ २० ॥

तस्मात् १ अव्यक्तात् २ तु ३ यः ४ सनातनः ५ भावः ६ अव्यक्तः ७ सः ८ परः ९ अन्यः १० सर्वेषु ११ भूतेषु १२ नश्यत्सु १३ न १४ विनश्यति १५ ॥ २० ॥ + अ०उ०+सावयव लोकोंको अनित्य कहकर शुद्धसच्चिदानन्द स्वरूप को परात्पर नित्य प्रतिपादन करते हैं और उसी को परमगति और अपना धाम अपनेसे अभिन्न कहते हैं अर्थात् सच्चिदानन्द स्वरूप परमेश्वर से जुदा कोई धाम नहीं और न कोई जुदा मुक्तिपदार्थ है पूर्णब्रह्म शुद्ध सच्चिदानन्द नित्यमुक्त आत्मा को जानना यही मुक्तिहै और यही परमधाम है और यही परमेश्वर की दर्शनप्राप्ति है इससे भिन्न सब भ्रांतिहै यह कहते हैं दो श्लोकों में और तीसरे श्लोक में प्रथम यह पदहै कि पुरुषः सपरः वहांतक अन्य है+चराचर का कारण जो अव्यक्त+तिससे १ अर्थात् पूर्वोक्त+अव्यक्त से २ भी ३ जो ४ सनातन ५ पदार्थ ६ अव्यक्त ७ है+सो ८ श्रेष्ठ ९ और विलक्षण १० है कैसा है वह कि+सर्व भूतों के ११ । १२ नाश हुये भी १३ नहीं १४ नाश होताहै १५+टी०+सोपाधिक मायोपहित ब्रह्म को कारण अव्यक्त कहते हैं और शुद्ध सच्चिदानन्द अखण्ड नित्यमुक्त अद्वैत एकरस निराकार को शुद्ध अव्यक्त कहते ज्ञान काल में उपाधि का नाश होजाता है फिर केवल अद्वैत मायारहित अखण्ड सच्चिदानन्द रहजाता है इसी को अव्यक्त निराकार कहते हैं ॥ २० ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

अव्यक्तोऽक्षरइत्युक्तस्तमाहुःपरमांगतिम्॥यंप्राप्यननिवर्तन्ते तद्धामपरमंमम ॥ २१ ॥

अव्यक्तः १ अक्षरः २ इति ३ उक्तः ४ तम् ५ परमाम् ६ गतिम् ७ आहुः ८ तत् ९ मम १० परमम् ११ धाम १२ यम् १३ प्राप्य १४ न १५ निवर्तन्ते १६ ॥ २१ ॥ अ० उ० + शुद्ध अव्यक्त सच्चिदानन्द को अद्वैत सिद्धकरते हैं सच्चिदानन्दसे जुदा कोई और पदार्थ नहीं + अव्यक्तको १ अक्षर २ ऐसा ३ कहा है ४ और तिसको ५ ही + परम ६ गति ७ मुक्ति ७ कहतेहैं ८ और सोई ९ मेरा १० परम ११ धाम १२ है कैसा है वह धाम कि + जिसको १३ प्राप्त होकर १४ नहीं १५ लौट कर आते हैं १६ अर्थात् फिर सच्चिदानन्द जीव को उपाधिका सम्बन्ध नहीं होता क्योंकि ज्ञान से उपाधिका अत्यन्त अभाव होजाता है + तात्पर्य्य सब दुःखों की निवृत्ति और परमानन्द की प्राप्तिकोही परमगति और मुक्ति और परमधाम कहते हैं गोलोक सत्यलोक वैकुण्ठ अयोध्या वृन्दावन कैलासादि सब इसी अव्यक्त सच्चिदानन्द परमधाम के नाम हैं इसप्रकार समझ कर जो वैकुंठादि को नित्य परात्पर कहे तो उसका कहना सत्यहै और जो उनको सावयव और सच्चिदानन्द से भिन्न कहे अर्थात् वैकुण्ठादिको तो श्रेष्ठमन्दिर बताये और विष्णु आदि देवतों का उन मन्दिर लोकोंका स्वामी भिन्न बतावे यह अर्थवाद है अधिकार प्रति स्थूल रोचक वाक्य हैं इस मन्त्र में यह अर्थ स्पष्ट है कि परमात्मा से परमात्मा का धाम भिन्न नहीं क्योंकि परमात्मा निराकारहै आश्रय साकारों का चाहता है परमेश्वर अपने को अव्यक्त अमूर्त अक्षर अखण्ड अविनाशी कहते हैं ऐसा अर्थ स्पष्ट सुन देखकरभी जो फिरभी परमेश्वर को और उन के धामको सावयव साकार सिद्धांत और परमार्थ बताये वह मूर्खतम बिना पुच्छ का पशु है जिसका भगवद्वाक्य में विश्वास नहीं ॥ २१ ॥

पुरुषःसपरःपार्थभक्त्यालभ्यस्त्वनन्यया ॥ यस्यान्तःस्थानिभूतानि येनसर्वमिदंततम् ॥ २२ ॥

पार्थ १ सः २ परः ३ पुरुषः ४ भक्त्या ५ लभ्यः ६ तु ७ अनन्यया ८ यस्य ९ भूतानि १० अन्तःस्थानि ११ येन १२ इदम् १३ सर्वम् १४ ततम् १५ ॥ २२ ॥ अ० उ० + परमगतिकी प्राप्तिका उपाय सब से श्रेष्ठ मुख्य ज्ञानलक्षणा अनन्य पराभक्ति है इसी को उत्तमपुरुष और परमपुरुष परमात्मा कहते हैं +

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

पुरुषान्नपरं किंचित्साकाष्ठा सापरागतिः + श्रुति ने यह कहा है कि पुरुष से परे श्रेष्ठ कुछ नहीं यही पुरुष परात्पर अवधिहै और यही परमगतिहै + हे अर्जुन!१ सो २ पर ३ पुरुष ४ अर्थात् परब्रह्म पूर्ण नारायण सच्चिदानन्द ४ भक्ति करके ५ प्राप्त होता है ६ यह तुशब्द विलक्षण अर्थमें आताहै इसजगह विलक्षणता यह है कि भजन कीर्तन सेवा प्रदक्षिणादि भक्ति का अर्थ नहीं क्योंकि आगे उसके अनन्यया विशेषण है श्रीभगवान् कहते हैं कि परमात्मा भक्ति उस के प्राप्त होती है परन्तु कैसी भक्ति करके कि + अनन्य करके ८ अर्थात् सिवाय सच्चिदानन्द के अन्य अर्थात् दूसरा कोई और पदार्थ जिसकी वृत्ति में नहीं रहा ऐसी वृत्ति करके परमात्मा प्राप्त होता है घण्टा बजाना परिक्रमा करनी यह तो बालक और मूर्ख बहिर्म्मुख विषयी भी करसक्ते हैं सुन्दर पदार्थमें सब काहीं मन लगजाता है सिवाय इसके यह बात स्पष्ट है कि श्रीभगवान् अर्जुनको उपदेश करते हैं श्यामसुन्दर स्वरूप तो अर्जुनको प्राप्तही है सच्चिदानन्द निराकार आत्मा काही उसको ज्ञान नहीं उसीको परमपुरुष श्रीभगवान् बतातेहैं + जिसके ९ भूत १० आकाशादि + भीतर स्थित है ११ अर्थात् सब जगत् सोपाधिक सच्चिदानन्द कारण ईश्वर में स्थित है और + जिस करके १२ यह १३ सब १४ जगत् १४ व्याप्तहै १५ अर्थात् सब जगत् में सच्चिदानन्द अस्ति भाति प्रिय होकर पूर्ण होरहा है ॥ २२ ॥

यत्रकालेत्वनावृत्तिमावृत्तिंचैवयोगिनः ॥ प्रयातायांतितंकालंवक्ष्यामिभरतर्षभ ॥ २३ ॥

यत्र १ काले २ तु ३ प्रयाताः४योगिनः ५ अनावृत्तिम् ६आवृत्तिम् ७च ८ एव ९ यांति१०भरतर्षभ ११ तम् १२ कालम् १३ वक्ष्यामि १४ ॥२३॥अ०उ०+ज्ञानी जीतेही ब्रह्माजी से प्रथमही स्वतन्त्र होकर मुक्त होता है और ब्रह्माका उपासक ब्रह्माजी के साथ परतन्त्र होकर मुक्त होताहै और कर्म्मनिष्ठावाले और भेद उपासना वाले सदा परतन्त्र रहते हैं स्वर्गादि में जाकर सालोक्यादि मुक्ति को प्राप्त होकर फिर जन्म मरण चक्र में घूमते हैं सो इन परतन्त्र मुक्तिवालों का मार्ग मुझ से सुन आगे दो श्लोकों में कहूंगा विना ब्रह्मज्ञानके जो इनका हाल होता है बहिर्म्मुख विषयी पामरोंका तो कुछ प्रसंगही नहीं वे तो संसार में डूबे रहते हैं + अ० + जिस मार्गमें १ । २ । ३ जातेहुये ४ योगी ५ अनावृत्ति ६ और आवृत्तिको ७ । ८ । ९ प्राप्त होते हैं १० हे अर्जुन! ११ तिस १२ मार्ग

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

को १३ कहूंगा मैं १४ तुझ से आगे दो श्लोकों में अभिप्राय मेरा उन मार्गों के कहने से यह है कि जबतक बने स्वतन्त्र होना चाहिये + पराधीन सपनेहु सुख नाहीं। शोच विचार देखु मनमाहीं + टी० + कर्मनिष्ठ और भेदवादी आवृत्ति मार्ग होकर परतन्त्र पराधीन हुये स्वर्गादि में जाते हैं ब्रह्म के उपासक अनावृत्ति मार्ग होकर ब्रह्मलोक में जाते हैं ज्ञानी महात्मा स्वतन्त्र होकर सब से पहले मुक्त होते हैं वे किसी के घर नहीं जाते निजानन्द को प्राप्त होते हैं ॥ २३॥

अग्निर्ज्योतिरहःशुक्लःषण्मासाउत्तरायणम् ॥
तत्रप्रयातागच्छन्तिब्रह्मब्रह्मविदोजनाः ॥ २४ ॥

अग्निः १ ज्योतिः २ अहः ३ शुक्लः ४ षण्मासाउत्तरायणम् ५ तत्र ६ प्रयाताः ७ ब्रह्मविदः ८ जनाः ९ ब्रह्म १० गच्छन्ति ११ ॥ २४ ॥ उ० + सच्चिदानन्द ब्रह्म निराकार के उपासकों का अनावृत्ति मार्ग कहते हैं अर्थात् ब्रह्मपद की मंजिल मंजिल हैं + अ० + अग्निः १ ज्योतिः २ दिन ३ शुक्लपक्ष ४ छःमहीने उत्तरायण ५ इस मार्गमें ६ जाते हुये ७ ब्रह्मके जाननेवाले ८ अर्थात् ब्रह्मोपासक ८ जन ९ क्रम क्रम से अर्थात् उत्तरोत्तर मंजिल दरमंजिल + ब्रह्म को १० प्राप्त होंगे ११ अर्थात् फिर उनका जन्म न होगा ज्ञानद्वारा परमानन्द स्वरूप आत्मा को प्राप्त होंगे + टी० + अग्नि के देवता को फिर ज्योतिके फिर दिनके फिर शुक्लपक्ष के फिर उत्तरायण के देवता को प्राप्त होंगे तात्पर्य्य यह है कि पहिले अग्नि के देवता के पास ब्रह्मउपासक पहुँचेंगे फिर वह देवता ज्योति के देवताके पास पहुँचा देगा इसीप्रकार आगे भी कल्पना करलेनी इसी प्रकार ब्रह्मलोक में पहुँचेंगे फिर ब्रह्माजी के साथ मुक्त होजावेंगे अग्नि आदि शब्द देवतों के उपलक्षण हैं तात्पर्य्य देवतों से है यह मार्ग सनातन श्रौत उपासना का है इसी प्रकार की उपासना इन दिनों में बहुत कम करते हैं प्रत्युत इसके जानने वाले भी कम हैं हेतु इसमें यह है कि रूप रंग नृत्यवाली उपासना में आसक्त हो रहे हैं यथार्थ उपासना और भक्ति यह है कि जिस भक्ति उपासना की वेद शास्त्रों में बड़ाई है ॥ २४ ॥

धूमोरात्रिस्तथाकृष्णःषण्मासादक्षिणायनम् ॥
तत्रचान्द्रमसंज्योतिर्योगीप्राप्यनिवर्त्तते ॥ २५ ॥

तथा १ धूमः २ रात्रिः ३ कृष्णः ४ षण्मासादक्षिणायनम् ५ तत्र ६ योगी ७

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

चांद्रमसम् ८ ज्योतिः ९ प्राप्य १० निवर्तते ११ ॥ २५ ॥ अ० उ० + कर्मनिष्ठा वालों का आवृत्तिमार्ग कहते हैं अर्थात् वह रस्ता कि जिस रस्ते जाकर लौट आते हैं जैसे अनावृत्ति मार्गवाले ब्रह्मविद् अग्नि आदि देवताओं को पहले प्राप्त होकर ब्रह्म को प्राप्त होते हैं फिर उनका जन्म नहीं होता + तैसे १ कर्मनिष्ठ आवृत्ति मार्गवाले धूमादि देवतों को पहले प्राप्त होकर फिर स्वर्गलोक को प्राप्त होकर लौट आते हैं उनकी मंजिल यह है + धूम २ रात्रि ३ कृष्णपक्ष ४ छः महीने दक्षिणायन ५ इन रस्तों में ६ जाता हुआ + कर्मयोगी ७ चांद्रमस ८ अर्थात् स्वर्ग को ९ प्राप्त होकर १० लौट आताहै ११ मनुष्य लोकमें + पहिले धूमके देवता के पास जाताहै फिर रात्रिके फिर कृष्णपक्षके फिर दक्षिणायन इस प्रकार उत्तरोत्तर क्रम क्रमसे मंजिल दर मंजिल स्वर्ग में पहुँचाता है तात्पर्य जो निवृत्ति मार्ग में स्थित होकर अंतरंग उपासना करते हैं अर्थात् सच्चिदानन्द अक्षर निराकार आत्मा का जो आराधन करते हैं वे क्रम क्रमसे ब्रह्मलोक में पहुँचकर मोक्ष होंगे कर्मनिष्ठ वहां का भोग भोगकर लौट आवेंगे निषिद्ध कर्म करनेवाले नरक में जाकर फिर मनुष्यों में जन्म लेंगे और अतिनिषिद्धकर्म करनेवाले चौरासीलक्ष योनियों में भ्रमेंगे ॥ २५ ॥

शुक्लकृष्णेगतीह्येतेजगतःशाश्वतेमते ॥ एकया यात्यनावृत्तिमन्ययाऽऽवर्त्ततेपुनः ॥ २६ ॥

शुक्लकृष्णे १ एते २ गती ३ हि ४ जगतः ५ शाश्वते ६ मते ७ एकया ८ अनावृत्तिम् ९ याति १० अन्यया ११ पुनः १२ आवर्तते १३ ॥ २६ ॥ अ० उ० + शुक्ल और कृष्ण १ ये २ दो गति ३ । ४ जगत्की ५ अनादी ६ मानीहैं ४ क्योंकि संसार अनादी है इसवास्ते इन दोनों मार्गों को भी अनादि मानाहै महात्मा + हि यह शब्द स्पष्ट करताहै कि यह बात वेद शास्त्रों में प्रसिद्ध है + एक करके ८ अर्थात् शुक्ल मार्ग करके ८ अनावृत्तिको ९ प्राप्त होताहै १० अर्थात् फिर उसका जन्म नहीं होता ब्रह्माजी के साथ मुक्त होजाता है जबतक ब्रह्मलोक में दिव्य भोग भोगता है और ब्रह्मज्ञान श्रवण करता है और + अन्य करके ११ अर्थात् दूसरे कृष्णमार्ग करके फिर १२ जन्म मरणको प्राप्त होताहै अर्थात् कृष्णमार्ग करके जो स्वर्गादि में जाता है वह लौट आता है और जो शुक्लमार्ग करके जाता है वह मुक्त होता है + टी० + जगत् कहने से सब जगत् नहीं समझना इस जगत् में ज्ञाननिष्ठ और कर्मनिष्ठ जो पुरुष हैं उनकी ये दोगति हैं सब

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

जगत् की नहीं भेदवादी उपासकादि का कर्मनिष्ठ पुरुषों में अन्तर्भाव है ज्ञान प्रकार स्वरूप है इसवास्ते उसको शुक्ल कहा और कर्म तम जड़ रूप है इस वास्ते उनका मार्ग कृष्णकहा स्पष्ट बात है कि ज्ञानमार्ग अज्ञान को दूर कर सक्ता है तात्पर्य यह है कि ज्ञानी प्रकाश वाले रस्ते जाते हैं और अज्ञानी कर्मी अन्धकार के रस्ते जाते हैं अब विचारना चाहिये कि इन दोनों मार्गों में से श्रेष्ठ ज्ञानमार्ग है व कर्ममार्ग है ॥ २६ ॥

नैतेसृतीपार्थजानन् योगीमुह्यतिकश्चन ॥ तस्मात्सर्वेषुकालेषु योगयुक्तोभवार्ज्जुन ॥ २७ ॥

पार्थ १ कश्चन २ योगी ३ एते ४ सृती ५ जानन् ६ न ७ मुह्यति ८ अर्जुन ९ तस्मात् १० सर्वेषु ११ कालेषु १२ योगयुक्तः १३ भव १४ ॥ २७ ॥ उ० + पूर्णब्रह्म सच्चिदानन्द का ध्यान करनेवाला योगी इन दोनोंमार्गों में प्रीति नहीं करता तात्पर्य यह है कि ब्रह्मलोकादि में जाने की इच्छा नहीं करता ब्रह्माजी से पहलेही मुक्त हुआ चाहता है + अ० + हे अर्जुन ! १ कोई २ योगी ३ इन दो ४ मार्गों को ५ जानता हुआ ६ नहीं ७ मोह को प्राप्त होता है ८ बहिर्मुख विषयी सब पदार्थों के भोगने की इच्छा करते हैं जैसे इस लोक के भोग वैसेही परलोक के क्योंकि दोनों अनित्य दुःखदायी हैं जो कोई ब्रह्मलोक में जाकर मुक्त होंगे उनको क्या दुःख है इस का उत्तर यह है कि जैसे व्यवहार में राज्य करने में द्रव्य ऐश्वर्य ईश्वरता की प्राप्ति में और उनके साधनों में भी तो सुख मानते हैं और कहते हैं कि राज्य करने में क्या दुःख है ऐसाही यह प्रश्न है विचार करो कि एक के मकान में उसकी आज्ञामें रहना दुःख है व सुख है जिन्होंने सदा स्त्री धन राज्यादि की सेवा टहल करी है उनकी सेवामें ही सुख प्रतीत होताहै इसी हेतु से परमेश्वर के भी दास बना चाहते हैं + हे अर्जुन ! ९ तिस कारण से १० सब काल में ११ । १२ योगयुक्त १३ हो तू १४ + टी० + सच्चायोगी कोई भी ब्रह्मलोकादि की इच्छा नहीं करता क्योंकि इन मार्गों को जानताहै और समझता है कि जगह जगह धक्के खाकर ब्रह्मलोक में पहुँचता है फिर वहां ब्रह्माजी बूझते हैं कि तू कौन है ऐसी तू तड़ाक नीच आदमी सहते हैं महात्मा ऐसी जगह नहीं जाते जहां कोई तू तड़ाक करे इसी वास्ते हे अर्जुन! उत्साह और धीरज की कमर बांध दिन रात्रि गंगा प्रवाहवत् शुद्ध सच्चिदानन्द का ध्यानकर पूर्ण सच्चिदानन्द कोही प्राप्त होगा ॥ २७ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

वेदेषुयज्ञेषुतपस्सुचैव दानेषुयत्पुण्यफलंप्रदिष्टम् ॥ अत्येतितत्सर्वमिदंविदित्वा योगीपरंस्थानमुपैतिचाद्यम् ॥ २८ ॥

यत् १ पुण्यफलम् २ वेदेषु ३ यज्ञेषु ४ तपस्सु ५ च ६ एव ७ दानेषु ८ प्रदिष्टम् ९ योगी १० इदम् ११ विदित्वा १२ तत् १३ सर्वम् १४ अत्येति १५ च १६ आद्यम् १७ परम् १८ स्थानम् १९ उपैति २० ॥ २८ ॥ अ० उ० + श्रद्धा बढ़ाने के लिये योगकी स्तुति करते हैं श्रीभगवान् कहते हैं कि हे अर्जुन ! सुन ध्याननिष्ठ योगी का माहात्म्य + जो १ पुण्यफल २ वेदों में ३ और यज्ञों में ४ और तपमें ५ । ६ । ७ और दान में ८ वेदशास्त्र और महात्माओंने + कहा है ९ अर्थात् सांग और सोपांग विधिवत् वेदों के अध्ययन करने में जो पुण्य का फल होता है कि जैसा शास्त्र ने कहा है + ध्याननिष्ठ योगी अर्थात् पूर्णब्रह्म सच्चिदानन्द निराकाररूपका ध्यान करनेवाला १० यह ११ जानकर १२ अर्थात् जो पीछे कहा वह सब फल मुझको हुआ यह समझकर अथवा सप्त प्रश्नों का अर्थ भले प्रकार जानकर और उनका भले प्रकार अनुष्ठान करके + तिस १३ सबको १४ उल्लंघ जाता है १५ अर्थात् यह फल आवान्तर बीचका फल जिसको गौण कहते हैं उसको उल्लंघकर उससे श्रेष्ठ फलको प्राप्त होताहै अर्थात् फिर १६ आदि १७ परम् १८ स्थानको १९ प्राप्तहोताहै अर्थात् कारण ब्रह्मको प्राप्तहोताहै ॥ २८ ॥

इति श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सुब्रह्मविद्यायांयोगशास्त्रेश्रीकृष्णार्जुनसंवादे महापुरुषयोगोनामाष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

स्वामी आनन्दगिरिकृत परमानन्दप्रकाशिका भाषाटीका में आठवां अध्याय समाप्त हुआ ॥ ८ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

नवें अध्याय का प्रारम्भ हुआ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ इदंतुतेगुह्यतमं प्रवक्ष्यामयनसूयवे ॥ ज्ञानंविज्ञानसहितं यज्ज्ञात्वामोक्ष्यसेऽशुभात् ॥ १ ॥

इदम् १ तु २ ज्ञानम् ३ विज्ञानसहितम् ४ गुह्यतमम् ५ ते ६ प्रवक्ष्यामि ७ अनसूयवे ८ यत् ९ ज्ञात्वा १० अशुभात् ११ मोक्ष्यसे १२ ॥ १ ॥ उ० + इस अध्याय में अचिंत्यप्रभाव और अपनी अचिंत्यशक्ति निरूपण करके तत्पदार्थ को त्वम् पदार्थ के साथ एकता लक्ष्यार्थ में दिखाकर उसकी प्राप्ति का सुलभ उपाय निरूपण करेंगे और वह उपाय सबके वास्ते असाधारण है + अ० + जो इस अध्याय में कहना है यह १ । २ ज्ञान ३ अनुभवके साथ ४ गुप्ततम ५ तेरे अर्थ ६ कहूंगा ७ कैसा है तू कि + असूयारहित है ८ अर्थात् किसी के गुणों में अवगुण आरोपण नहीं करता है तू किसी के गुणों में अवगुण आरोपण करना बड़ा अनर्थ है वह ब्रह्मविद्या का अधिकारी नहीं इस विशेषण से अर्जुन को ब्रह्मविद्या का अधिकारी दिखाया कैसा है वह ज्ञान कि + जिस को ९ जान कर १० अर्थात् जिस ज्ञान करके आत्मा को यथार्थ जानकर + अशुभ संसार से ११ छूटजायगा तू १२ + टी० + तू य शब्द ऐसी जगह विशेष आता है कि जहां पूर्वोक्त से विलक्षण विशेष निरूपण होगा + धर्मतत्त्व गुप्त है और उपासना का तत्त्व गुप्ततर है और ज्ञानका तत्त्व गुप्ततम है ५ केवल तेरे कल्याण के अर्थ तुझ से कहूंगा मेरा कुछ मतलब नहीं ६ ऐसे कौनहैं कि गुण में अवगुण निकालें सुनो ज्ञाननिष्ठा में जो तर्क करते हैं श्रद्धा नहीं करते जान बूझ ब्रह्मविद्याका उलटा अर्थ करते हैं ८ तात्पर्य ब्रह्मविद्याका अधिकारी जानकर तुझ से कहूंगा तू मेरा भक्त है इस ज्ञान के आसरे से तू मुक्त होगा कोई कोई जो यह कहते हैं कि विना अद्वैत ब्रह्मज्ञान के भी मोक्ष होजाता है सो नहीं किन्तु इसी ज्ञान कि जो विज्ञान के सहित मैं कहूंगा जिससे आत्मा अद्वैत जानाजावे उससे मोक्षहोगा द्वैत ज्ञान में तेरे सन्देह नहीं साक्षात् द्वैत उपासना का फल मैं प्रत्यक्ष हूं आत्माका यथार्थ ज्ञान तुझको नहीं वह मैं विलक्षण कहूंगा इस वास्ते तु पद इस श्लोक में है ॥ १ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

राजविद्याराजगुह्यंपवित्रमिदमुत्तमम् ॥ प्रत्यक्षा वगमंधर्म्यंसुसुखंकर्तुमव्ययम् ॥ २ ॥

इदम् १ राजविद्या २ राजगुह्यम् ३ पवित्रम् ४ उत्तमम् ५ प्रत्यक्षावगमम् ६ धर्म्यम् ७ कर्तुम् ८ सुसुखम् ९ अव्ययम् १० ॥ २ ॥ उ० + इस श्लोक में ब्रह्मज्ञान के सब विशेषण हैं + अ० + यह १ ब्रह्मज्ञान + सब विद्या का राजा है २ अर्थात् अठारह विद्या हैं प्रसिद्ध यह सब का राजा है और + गुप्त पदार्थों का भी राजा है ३ क्योंकि कोई विरले महात्मा जानते हैं और यह + पवित्र ४ है क्योंकि निरवयव पदार्थ है चतुर्थ अध्याय में श्रीभगवान् ने कहा है कि ज्ञान के सदृश और कोई पदार्थ पवित्र नहीं और सब से + श्रेष्ठ ५ है क्योंकि अनेक जन्मों के पापों को अनादि काल की अविद्या को एक क्षण में नाश करदेता है + दृष्टफल वाला है ६ क्योंकि आत्मा को जीते हुये ही अनुभव करादेते हैं अर्थात् ज्ञानी को परात्पर परमानन्द नित्यमुक्त की प्राप्ति जीतेजी होती है क्योंकि ज्ञानियों को जीवन्मुक्त कहते हैं + और सब धर्मों का फल यही है सब धर्म कर्म उपासना इसी के वास्ते हैं + ७ और कहने को ८ अर्थात् अनुष्ठान करने के लिये + सुखवाला है ९ अर्थात् सुखपूर्वक इसका अनुष्ठान होसक्ता है क्योंकि अपना आत्मा सुखरूप है सुखको सब जानते हैं सुख पदार्थ के जानने में कुछ प्रयत्न नहीं करना पड़ता केवल इतना और समझना चाहिये कि मेरे हृदय में जो यह सुख प्रतीत होता है इसका अखण्ड अद्वैत पुंज हूं मैं वशिष्ठ जीने श्रीरामचन्द्रजी से कहा है कि हे राम ! फूल के मलने में विलम्ब और यत्न होता है ज्ञानकी प्राप्ति उससे भी जल्दी होती है क्योंकि स्वयंशुद्ध आत्मा सदा प्राप्त है केवल अज्ञान दूर होना चाहिये और अज्ञान दूर होने में पल भी नहीं लगती मूर्ख बका करते हैं कि अजी अज्ञान बड़ा कठिन है देखो श्रीभगवान् उन के मुखपर क्या धूलि डालते हैं जड़ पदार्थों के जानने में ज्ञानकी इच्छा होती है ज्ञान स्वरूप के जानने में क्या प्रयत्न चाहिये जैसे कोई कहै कि मैं अपनी आंख नहीं देखता हूं उस मूर्ख से कहना चाहिये कि जिससे तू सबको देखता है वह तेरी आंख है और जैसे कोई बोले और कहे कि मेरे मुखमें जीव है वा नहीं ऐसेही अज्ञानी कहतेहैं कि ब्रह्मज्ञान हमकोहै वा नहीं सो निश्चय उन को ज्ञान नहीं और न होगा क्योंकि ज्ञानस्वरूप आत्मासे पृथक् पदार्थ को ब्रह्म जाना चाहते हैं वह कैसे प्राप्त होगा और इसका फल + अविनाशी १० है

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

क्योंकि आत्मा नित्य है आत्मा से पृथक् सब पदार्थ अनित्य हैं प्रत्युत परमार्थ दृष्टि करके अभावरूप हैं ॥ २ ॥

अश्रद्दधानाःपुरुषा धर्मस्याऽस्यपरन्तप ॥ अप्राप्यमांनिवर्त्तन्ते मृत्युसंसारवर्त्मनि ॥ ३ ॥

परन्तप १ अस्य २ धर्म्मस्य ३ अश्रद्दधानाः ४ पुरुषाः ५ माम् ६ अप्राप्य ७ मृत्युसंसारवर्त्मनि ८ निवर्तन्ते ९ ॥ ३ ॥ उ० + जबकि यह ब्रह्मज्ञान सब गुणसम्पन्न है तो बहुत लोग कर्मकाण्डी द्वैतवादी इसका क्यों नहीं आदर करते यह शंका करके कहते हैं + अ० + हे अर्जुन! १ इस २ धर्म के ३ अश्रद्धा वाले ४ पुरुष ५ अर्थात् जो ब्रह्मज्ञान में श्रद्धा नहीं करते वे + मुझको ६ नहीं प्राप्त हो कर ७ जन्ममरणरूप संसारमार्ग में ८ भ्रमा करते हैं ९ तात्पर्य्य अन्तःकरण मैला होने से और कम समझ से ब्रह्मविद्या का कर्मकाण्डी द्वैतवादी उपासकादि श्रवण नहीं करते इसी हेतु से वे इस परमधर्म का अनुष्ठान नहीं करते और जो श्रवण भी करते हैं और पढ़ते भी हैं तो उसका अर्थ उलटा समझते हैं तात्पर्य्य अभिप्राय शास्त्र का नहीं समझते रोचक अर्थवाद वाक्यों में विश्वास करते हैं सिद्धान्त में श्रद्धा नहीं करते इसी हेतुसे उलटाही फल उनको मिलता है अर्थात् वेदोक्त अनुष्ठान करने से परमफल मुक्ति होना चाहिये सो वे आप अपने मुख से यह कहते हैं कि हम वृन्दावन के गीदड़ शृगाल होजावें परन्तु मुक्ति हम नहीं चाहते इस वाक्यको विचारो कि जिनकी मुक्तिफलमें श्रद्धा नहीं तो ज्ञाननिष्ठा तो मुक्ति का साधनहै उसमें उनकी श्रद्धा कब होसक्ती है चतुर्थ अध्याय में कह चुके हैं कि ज्ञानको श्रद्धावान् प्राप्त होताहै यह जो लोग बहिर्मुख हैं और रूप रसादिही में सुख समझते हैं अन्तरसुख नहीं जानते यह बहिर्मुख होनाही ज्ञाननिष्ठा में अश्रद्धा का कारणहै और यह न समझना चाहिये कि भक्ति उपासना के आश्रय सम्बन्ध आड़ मिस बहानेसे जो रूपका देखना और शब्दका सुननाहै यह विषय विषवत् नहीं इनसे कुछ क्षति नहीं होती किन्तु विषय सब बराबरहैं केवल इतना भेदहै जैसे लोहेकी बेड़ी और सोनेकी बेड़ी तात्पर्य लौकिक प्रसिद्ध विषयों से वे अच्छे हैं यह बात कुछ बुरे मानने की नहीं विचार देखो कि रामलीलादि के देखनेवाले प्रायशः विषयी बहिर्मुख पामर होते हैं व प्रेमी वैराग्यवान् विवेकी साधनसम्पन्न हैं और शतप्रचास लोग जो नये श्रद्धापूर्वक ऐसी भक्ति में लगेंगे ऐसी भक्ति को पुण्यजनक मोक्षप्रदा परात्पर समझ

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

कर भी जो लगेंगे व लगतेहैं तो वे परिणाम में बहिर्मुखही रहते हैं व अन्तर्मुख शमदमादि साधनसम्पन्न होजाते हैं तात्पर्य्य यहहै कि जो ऐसा २ रस चखते हैं उनको ज्ञाननिष्ठा आपही फीकी लगेगी यह व्यवस्था सुनीहुई और अनुमान द्वारा मैंने नहीं लिखी किन्तु अपनी आंखों से देखीहुई और बरतीहुई लिखीहै ऐसे आदमियों के सामने ज्ञानका नामभी लेना दुःखका मूलहै ॥ ३ ॥

मयाततमिदंसर्वंजगदव्यक्तमूर्त्तिना ॥ मत्स्थानिसर्वभूतानि नचाहंतेष्ववस्थितः ॥ ४ ॥

मया १ अव्यक्तमूर्त्तिना २ इदम् ३ सर्वम् ४ जगत् ५ ततम् ६ सर्वभूतानि ७ मत्स्थानि ८ अहम् ९ तेषु १० न ११ च १२ अवस्थितः १३ ॥ ४ ॥ उ० + ज्ञाननिष्ठा के अनधिकारियों को फलके सहित कहकर और अर्जुनको ज्ञाननिष्ठा में श्रद्धावान् असूयारहित समझकर अर्जुनको सम्मुख करके ब्रह्मज्ञान कहतेहैं + मुझ १ अव्यक्तमूर्त्ति करके अर्थात् सोपाधिक सच्चिदानन्द करके २ यह ३ सब ४ जगत् ५ व्याप्त होरहाहै ६ अर्थात् इन्द्रिय मनके विषय जो जो पदार्थ हैं सब में निराकार सत् चित् आनन्द पूर्ण होरहाहै ऐसा कोई पदार्थ नहीं कि जिसमें सत्ता चैतन्यता आनन्दता न हो + सब भूत सूक्ष्म स्थूल मुझ सोपाधिक सच्चिदानन्द में स्थितहैं अर्थात् कल्पित हैं ७ जैसे शुक्तिमें रजत और + मैं ९ तिनमें १० नहीं ११ । १२ स्थितहूं १३ अर्थात् मैं असंगहूं मेरा किसी के साथ सम्बन्ध नहीं जैसे यह कहते हैं कि घटमें आकाशहै सो नहीं वास्तव घटही आकाशमें है और जो भीतर भी प्रतीत होताहै तौभी निर्विकार असंगहै ॥ ४ ॥

नचमत्स्थानिभूतानिपश्यमेयोगमैश्वरम् ॥ भूतभृन्नचभूतस्थो ममात्माभूतभावनः ॥ ५ ॥

भूतानि १ न २ च ३ मत्स्थानि ४ न ५ च ६ भूतस्थः ७ मे ८ योगम् ९ ऐश्वरम् १० पश्य ११ ममात्मा १२ भूतभृत् १३ भूतभावनः १४ ॥ ५ ॥ उ० + परमानन्दस्वरूप नित्यमुक्त निराकार परमात्मा में त्रिगुणात्मक जगत् स्थूल सूक्ष्म और इन दोनोंका कारण अज्ञानकल्पित है यह भी जिज्ञासू के समझानेके लिये अध्यारोप में कहाजाता है वास्तव तीनकालमें यह जगत् नहीं परमात्मा अखंड अद्वैत नित्यमुक्त हैं कल्पितशब्द भी कल्पितहै जो यह कहो कि इस कल्पनारूप

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

क्रियाका कर्ता कर्म अधिकरण कौनहै सुनो यह सब अविद्याहै अर्थात् कर्त्ता कर्म क्रिया अधिकरण यह सब अविद्या है अर्थात् कल्पना करनेवाली भी अविद्या कल्पना भी अविद्या जो पदार्थ कल्पना कियाजाता है सो भी अविद्या जिस में कल्पना होती है सो भी अविद्या जिसे करके जिसकेलिये जिससे होती है कल्पना वह सब अविद्या है अविद्या का लक्षण क्याहै सुनो + अविद्यायाअविद्यात्व-मिदमेवहिलक्षणम् + अविद्याका अविद्याही रूपहै और जो कोई यह प्रश्न करे कि चैतन्यरूप आत्मामें अज्ञान होना असम्भवहै उसी से फिर बूझना कि जब तुम आपही कहते हो हम तो प्रथमही कहचुके हैं कि तीनकालमें अज्ञान हैं नहीं और जो यह कहो कि अज्ञान हमको और बहुत लोगोंको प्रतीत होताहै तो विचारना चाहिये कि आत्मा चैतन्य वा जड़है प्रत्यक्ष में प्रमाण और युक्तियों की क्या आकांक्षाहै और तुम कैसे कहते हो कि ज्ञानरूप में अज्ञान नहीं बनसक्ताहै यह बातें अलौकिक हैं सोई परमेश्वर इस मंत्रमें कहते हैं कि वास्तव ॥ अ० + भूत १ न २ । ३ मुझमें स्थितहै ४ और न ५ । ६ मैं + भूतों में स्थित हूं ७ हे अर्जुन! + मेरे ८ इस + योग ९ और ईश्वरताको १० देख ११ अर्थात् विचार कर कि + मेरा आत्मा अर्थात् मैंहीं १२ असङ्ग नित्यमुक्त निर्विकारहूं और मैंहीं + भूतोंको धारण करताहूं १३ भूतों को पालन करताहूं १४ भूतोंको जो धारणकरे उसको भूतभृत् कहते हैं जो भूतोंको पालनकरे उसको भूतभावन कहते हैं और योगशब्द जो इस मंत्रमें है उसका अर्थ अचिंत्यशक्ति है जगत्की रचना स्थितिलयके विषय बुद्धिको बहुत श्रमदेना न चाहिये केवल अपने कल्याणपर दृष्टि रखनी योग्यहै जीवको स्पष्ट प्रतीत यह होताहै कि मैं अज्ञान करके जगत् में फँसरहा हूं अपनी व्यवस्था और अपने घरकी व्यवस्था मुझको मालूम नहीं फिर परमेश्वर की व्यवस्था और उनकी लीलाकी व्यवस्था मैं कैसे जानसकूंगा तात्पर्य्य अज्ञान की निवृत्ति का उपाय करना चाहिये जो बूझो कि क्या उपायहै स्पष्टबातहै कि अज्ञान ज्ञान से दूर होताहै जो बूझो ज्ञान किसको कहते हैं उत्तर इसका बहुत सीधा और सहज है परन्तु अधिकारीकी समझ में आताहै और इस गीताशास्त्र में जगह २ ज्ञानका उपदेशहै प्रथम ज्ञानमें श्रद्धा करनी योग्यहै और जितेन्द्रिय तत्परहोना चाहिये सद्गुरुकी कृपा से ज्ञान प्राप्त होजायगा जो श्रीभगवान् ने ऊपर निरूपण किया सब समझमें आजायगा केवल इस बातमें विद्या और चर्चाका काम नहीं तीनों साधन जो पीछे कहे वे प्रथमहैं पीछे विद्या और चर्चा भी चाहिये ॥ ५ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

यथाकाशस्थितोनित्यं वायुःसर्वत्रगोमहान् ॥ तथासर्वाणिभूतानि मत्स्थानीत्युपधारय ॥ ६ ॥

यथा १ महान् २ सर्वत्रगः ३ वायुः ४ नित्यम् ५ आकाशस्थितः ६ तथा ७ सर्वाणि ८ भूतानि ९ मत्स्थानि १० इति ११ उपधारय १२ ॥ ६ ॥ उ० + दो श्लोकों में जो अर्थ पीछे निरूपण किया उसको दृष्टान्त देकर स्पष्ट करते हैं + अ० + जैसे १ अप्रमाण २ सब जगत् ३ वायुः ४ सदा ५ आकाशमें स्थितहै ६ तैसेही ७ सब ८ भूत ९ मुझ में स्थित हैं १० यह ११ जान तू १२ ॥ ६ ॥

सर्वभूतानिकौन्तेयप्रकृतिंयान्तिमामिकाम् ॥ कल्पक्षयेपुनस्तानि कल्पादौ विसृजाम्यहम् ॥ ७ ॥

कौन्तेय १ कल्पक्षये २ सर्वभूतानि ३ मामिकाम् ४ प्रकृतिम् ५ यान्ति ६ कल्पादौ ७ पुनः ८ तानि ९ अहम् १० विसृजामि ११ ॥ ७ ॥ उ० + जगत् जैसे स्थितहै सो व्यवस्था कह कर सृष्टि और लय कहते हैं अर्थात् श्रीभगवान् यह कहते हैं कि जैसे जगत् की स्थितिकालमें मैं असंग हूं ऐसेही सृष्टि और प्रलयकाल में भी असंग हूं + अ० + हे अर्ज्जुन! १ कल्पके क्षयमें २ अर्थात् प्रलयकालमें + सब भूत सिवाय ब्रह्मवित् के + मेरी ४ प्रकृति को ५ अर्थात् अपरा त्रिगुणात्मिका माया को + प्राप्त होते हैं ६ माया में लय होजाते हैं सूक्ष्मरूप होकर और + कल्पके आदि में अर्थात् जगत्की सृष्टि समय ७ फिर ८ तिनको ९ मैं १० रच देता हूं ११ प्रकट कर देताहूं इत्यभिप्रायः तात्पर्य्य माया और उसका कार्य और परा प्रकृति जीवरूप सब परतंत्रहैं स्वतंत्र कोई नहीं सब ईश्वराधीनहैं इस वास्ते सदा ईश्वरका आराधन करना योग्यहै जो स्वतंत्र और मुक्त होना चाहै सो ॥ ७ ॥

प्रकृतिंस्वामवष्टभ्य विसृजामिपुनःपुनः ॥ भूतग्राममिमंकृत्स्नमवशंप्रकृतेर्वशात् ॥ ८ ॥

स्वाम् १ प्रकृतिम् २ अवष्टभ्य ३ इमम् ४ कृत्स्नम् ५ भूतग्रामम् ६ पुनः ७ पुनः ८ विसृजामि ९ प्रकृतेः १० वशात् ११ अवशम् १२ ॥ ८ ॥ उ० + निराकार निरवयव आप जगत्को कैसे रखते हो यह शंकाकरके कहते हैं ॥ अ० + अपनी १ प्रकृति को २ वशकरके ३ अर्थात् माया के साथ सम्बन्ध करके + इस ४ समस्त ५ भूतों के समूहको ६ वारंवार ७ । ८ मैं रचताहूं ९ कैसाहै यह भूतग्राम अर्थात्

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

जगत् + प्रकृतिके १० वशहै ११ परतंत्र है १२ यह जगत् अपने कर्मोंके वशमें है स्वतंत्र नहीं इत्यभिप्रायः + टी० + त्रिगुणात्मक जो अज्ञान है वह शुद्ध सत्त्व प्रधान हुआ माया कहा जाताहै उस मायाके सम्बन्धसे जगत् रचताहूं और उसके मैं वश नहीं वह मेरे आधीनहै और वही अज्ञान मलिन सत्त्व प्रधानहुआ अविद्या कहा जाताहै यह समस्त जगत् अविद्या के आधीन होरहा है अर्थात् अवश परतंत्र होरहाहै उन कर्मोंके अनुसार वारंवार उनको मैं रचताहूं वारंवार कहनेसे यह तात्पर्य्य है कि यह जगत् अनादि है असंख्यात वार उत्पन्नहुआ और नाश हुआ यह सब जगत् अविद्याके वश में है और अविद्या ईश्वरके वश में है ॥ ८॥

नचमांतानिकर्माणिनिबध्नन्तिधनञ्जय ॥ उदासीनवदासीनमसक्तंतेषुकर्मसु ॥ ९ ॥

धनञ्जय १ तानि २ कर्माणि ३ माम् ४ नच ५ निबध्नन्ति ६ उदासीनवत् ७ आसीनम् ८ तेषु ९ कर्मसु १० असक्तम् ११ ॥ ९॥ उ० + जब कि रचना पालना संहार करना इन क्रियाके आप कर्त्ताहो तो जीववत् आप को वे बंधन कैसे नहीं करते यह शंका करके कहते हैं + अ० + हे अर्ज्जुन! १ जगत्की रचनादि जो कर्म हैं + वे २ कर्म ३ मुझको ४ नहीं ५ बंधन करते हैं ६ क्योंकि मैं उदासीनवत् ७ स्थितहूं ८ और तिन ९ कर्मोंमें १० सक्त नहीं ११ + टी० + असक्तम् और आसीनम् ये दोनों माम् शब्दके विशेषणहैं उदासीन भी होना और कर्म भी करना इनका स्थितिगतिवत् विरोध है इसवास्ते उदासीनवत् कहा तात्पर्य्य कर्म करनेसे जीव भी बंधको नहीं प्राप्त होताहै कर्मों में सक्त होजाना बंधहै जो जीव कर्मोंमें सक्त न हो तो उसको भी कर्म्म बंधन नहीं करसक्ते फिर मैं कैसे बद्ध होसक्ताहूं ॥ ९ ॥

मयाध्यक्षेणप्रकृतिःसूयतेसचराचरम् ॥ हेतुनानेनकौन्तेय जगद्विपरिवर्त्तते ॥ १० ॥

प्रकृतिः १ मया २ अध्यक्षेण ३ सचराचरम् ४ सूयते ५ कौन्तेय ६ अनेन ७ हेतुना ८ जगत् ९ विपरिवर्त्तते १० ॥ १० ॥ उ० + जगत् की रचनादि क्रिया में विषम दोष प्रतीत होताहै यह शङ्काकरके कहते हैं ॥ अ० + प्रकृति १ मुझ २ अध्यक्षरूप करके ३ अर्थात् मुझ निमित्तमात्र कारण करके + सचराचर ४ जगत् को उत्पन्न करती है ५ हे अर्ज्जुन! ६ इस ७ हेतु करके ८ जगत् वारंवार

CC-0. Digitized by eGangotri: Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

उत्पन्न होताहै १० + टी० + जगत्की रचनादि क्रियामें प्रकृति उपादानकारण है और मैं निमित्तकारण हूं वह प्रकृति मेरी अचिंत्य शक्तिहै मुझसे भिन्न नहीं इसवास्ते मैं अभिनिमित्तोपादानकारण हूं यह बात दृष्टान्त के सहित भले प्रकार आनन्दामृतवर्षिणी के द्वितीय अध्याय में लिखी है निमित्तकारण होना और उदासीन रहना यह दोनों बनसक्ते हैं ऐसे जैसे प्रकाश व्यवहारमें निमित्तकारण है विना प्रकाश कुछ व्यवहार भी नहीं होसक्ता और प्रकाश में जो बुरा भला कर्मकरे वह प्रकाश को नहीं लगेगा क्रिया करनेवालेको लगेगा इसी प्रकार वह विषम दोष मायामें है ईश्वरमें नहीं यह बात भले प्रकार विचारने के योग्यहै जो ईश्वरको जगत्का कर्त्ता कहाजावे तो ईश्वरमें विषमदोष आताहै और जो माया को कर्त्ता कहाजावे तो वह जड़है और जो जगत्को अनीश्वर कहाजावे तो वेद शास्त्रादि सब व्यर्थ हुयेजाते हैं तात्पर्य यहहै कि ईश्वर जगत्के अभिन्ननिमित्तोपादानकारण है इसमें कोई दोष नहीं विना चैतन्यका आश्रय सम्बन्ध लिये स्वतंत्र माया जगत्को नहीं रचसक्ती और प्रकाशवत् ईश्वरको निमित्तमात्र होने में कुछ दोष नहीं ॥ १० ॥

अवजानन्तिमांमूढा मानुषींतनुमाश्रितम् ॥ परंभावमजानन्तो ममभूतमहेश्वरम् ॥ ११ ॥

मूढाः १ माम् २ अवजानन्ति ३ मानुषीम् ४ तनुम् ५ आश्रितम् ६ मम ७ परम् ८ भावम् ९ अजानन्तः १० भूतमहेश्वरम् ११ ॥११॥ उ० + जैसा स्वरूप मैंने पीछे कहा बहुत जीव मुझको ऐसा नहीं जानते हैं मनुष्यों की बराबर मुझको समझ कर मेरा निरादर करते हैं मेरे वाक्यमें जो श्रद्धा नहीं करते यही मेरी अवज्ञा है मुझ निराकारको हठकरके अज्ञानसे मोहके वशहोकर साकार कहते हैं + अ० + विवेकरहित अर्थात् नित्य क्या है और अनित्य क्याहै इसप्रकार आत्मा अनात्मा का जिनको विचार नहीं ऐसे मूढ़ १ मुझको २ निरादर करतेहैं अर्थात् मेरी अवज्ञा तिरस्कार करते हैं ३ कौनसे मेरे स्वरूपका अनादर करतेहैं कि जो + मनुष्यसम्बन्धी ४ शरीर ५ मैंने + आश्रय कियाहै ६ अर्थात् दुष्टोंके नाशकरनेको और साधुजन अपने भक्तों की रक्षा करने को मनुष्य कैसा आकारवाला जो मैं प्रतीतहोताहूं उस स्वरूपको मूर्ख मनुष्य राजपुत्रादिही समझतेहैं यही मेरी अवज्ञाहै + मेरे ७ परं ८ प्रभावको ९ नहीं जानते १० अर्थात् मुझको ऐसा नहीं समझते कि यह + भूतोंके महेश्वर हैं ११ मुझ मनुष्याकार को मनुष्यही समझते

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

हैं यही मेरी अवज्ञाहै + तात्पर्य अध्यारोप अपवाहन्याय करके निष्प्रपंच वस्तु सच्चिदानन्द में त्रिगुणात्मक जगत् प्रपंच निरूपण किया है महात्मा और वेदों ने वास्ते समझाने जिज्ञासुके जैसे तत्पदका वाच्यार्थ लक्ष्यार्थ और त्वंपद का वाच्यार्थ लक्ष्यार्थ अध्यारोपमें निरूपण कियाहै और ईश्वरको जगत्का अभिन्न निमित्तोपादान कारण वर्णन किया फिर लक्ष्यार्थ में दोनों पदोंकी एकता जैसे कही तीन सम्बन्ध और लक्षणादि करके इसप्रकार जो जीव ईश्वरको नहीं जानते अथवा जानबूझ निरादर करते हैं अर्थात् शास्त्रीयज्ञान हो भी जाताहै शास्त्र के पढ़ने सुनने से तो भी उसमें श्रद्धा नहीं करते अध्यारोप और पूर्वपक्षकी श्रुति स्मृतियोंका प्रमाण देदेकर वृथा वाद करते हैं यही ईश्वरकी अवज्ञा निरादरहै और अपने मनुष्यशरीर में जो सच्चिदानन्द आत्माहै उसके परमप्रभाव को नहीं जानते वर्ण आश्रमवाला औरोंका दास सिद्धान्तमें भी सदा समझते हैं यह सच्चिदानन्द की अवज्ञा तिरस्कार है इतिहास से इस बातको स्पष्टकरते हैं + इतिहास + एक साहूकार बालक लड़के को घरमें छोड़ परदेश में चलागया लड़का तरुणहोकर वास्ते तलाशकरने अपने पिता के निकला और ढूंढता ढूंढता पिताके पास पहुँच गया न पिताने पहचाना न लड़के ने और उस लड़के को टहल करनेके लिये नौकर रखलिया लड़के ने कहा भी उस देवदत्त साहूकारका नाम लेकर कि मैं अमुक देवदत्त साहूकारका लड़काहूं अपने पिताको तलाशकरनेको आयाहूं उनका पता नहीं लगता कोई कहीं बताता है और कोई कहीं और मैं महादीन होगया वह साहूकारने सुना भी और कुछ विश्वास भी हुआ परन्तु मूर्ख सहवासियों के उपदेश से उसमें विश्वास न किया कि यही मेरा लड़का है सदासे उसी लड़के की तलाश में था दिनरात्रि चाहताथा कि किसी प्रकार मेरा लड़का मुझको मिले एक आदमी सच्चा सद्गुणाकर विद्यावान् उस लड़के को पहचानताथा उसी जगहका रहनेवालाथा जहां साहूकारका पहला घरथा दैवयोग से वह आदमी साहूकारके पास जा पहुंचा लड़केको देखा पहचाना परन्तु साहूकारकी प्रीति उस लड़के में पुत्रवत् न देखी इस हेतुसे और अन्य कारण से भी साहूकारसे यह न कहा कि इसलड़के में तेरीप्रीति पुत्रवत् क्यों नहीं और न कभी साहूकार ने बूझा था इसवास्तेभी कुछ न कहा एकदिन एकान्तमें साहूकारने उस आदमी से अपने लड़के के स्नेहकी व्यवस्था कहकर लड़के का पता बूझा और लड़के के कहनेके अनुसार कुछ विश्वास हुआ था और मूर्ख सहवासियों के कहने से लड़केमें विश्वास नहीं किया था यह सब व्यवस्था कही उस आदमीनेकहा कि

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

तेरा लड़का वेसन्देह यही है साहूकार यह सुनकर पुत्रानन्दमें मग्न होगया लड़के को छाती में लगाकर बहुत सन्मान किया और उन सहवासी उपदेश करनेवाले मंत्रियों को मूर्ख और लालची समझा उस आदमी के साथ बहुत स्नेह किया अपना सुहृद हितकारी समझा इस दृष्टान्त के एक एक पदमें दार्ष्टान्तहैं भलेप्रकार विचारो जैसे साहूकार ने लड़केका तिरस्कार किया मूर्ख मंत्रियों के उपदेश से इसी प्रकार अज्ञानी जीवनने तिरस्कार किया है सच्चिदानन्द आत्माका मूर्खों के उपदेशसे जो कोई कहे कि साहूकारके सहवासी मंत्री उपदेष्टा तो मूर्ख अनजान थे उनका क्या दोषथा उत्तर उसका यहहै कि मूर्खोंको मंत्री और उपदेष्टा बनाना किसने कहाहै दार्ष्टांत में साहूकारके उपदेश करनेवालोंकी जगह लोभी लालची कमसमझ विषयी बहिर्म्मुख प्रवृत्तिमार्गवाले उपदेश करनेवालों को समझना चाहिये जैसे साहूकारके सहवासी मंत्रियों ने जानबूझकर अपने खातेपीनेका हर्ज समझकर लड़के में विश्वास न होने दिया इसी प्रकार प्रवृत्तिमार्गवाले उपदेष्टा आचार्य्य गुरु अपने विषयानन्द में ब्रह्मज्ञान को विक्षेपका हेतु समझकर आत्मा में विश्वास नहीं होनेदेते नानाप्रकार की युक्ति और तर्क सिखाते हैं तात्पर्य ब्रह्मज्ञानमें मोहनभोग और तस्मई आदि पदार्थ खाने को और फूल बंगला हिंडोला नृत्यादि देखने को रागादि सुनने को स्त्री छोकरे राजादि धनी विषयीजन चेली चेला करनेको नहीं मिलते हैं इस हेतुसे ब्रह्मज्ञानको भूसेका कूटना बताते हैं ऐसे पुरुषों के लक्षण और कर्म फलके सहित अगले मंत्र में श्रीभगवान् निरूपण करेंगे ॥ ११ ॥

मोघाशामोघकर्माणोमोघज्ञानाविचेतसः॥राक्षसीमासुरींचैवप्रकृतिंमोहिनींश्रिताः॥ १२ ॥

मोघाशा १ मोघकर्माणः २ मोघज्ञानाः ३ विचेतसः ४ राक्षसीम् ५ आसुरीम् ६ च ७ एव ८ प्रकृतिम् ९ मोहिनीम् १० श्रिताः ११ ॥ १२ ॥ उ० × जबतक शुद्ध सच्चिदानन्द स्वरूप पूर्णब्रह्म आत्मा को नहीं जाना है तबतक उनका कर्म और ज्ञान और आशा ये सब निष्फल हैं क्योंकि जो पदार्थ अनित्य है अथवा दीवार में प्रेतवत् प्रतीत होताहै ऐसे पदार्थों की आशा रखनी और उनकेलिये प्रयत्न करना ये सब निष्फल हैं अनित्य फलकी जो प्राप्तिभी होजावे सो भी निष्फल है प्रत्युत पहलेसे सिवाय दुःखकी हेतुहै प्राप्तहोकर जो पदार्थ जातारहे उस से न मिलना उस पदार्थ का अच्छाहै पिछले मंत्रमें जो मूढ़ शब्दहैं उसीके इस

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

मंत्रमें विशेषण हैं कैसे हैं वे मूढ़ कि + अ० + निष्फल हैं आशा जिनकी १ अर्थात् सच्चिदानन्द रूप आत्मा से अन्य ईश्वर के मिलनेकी जो आशा रखतेहैं यह आशा उनको निष्फल है क्योंकि आत्मा से भिन्न परमार्थ में कोई ईश्वर नहीं और + निष्फल हैं कर्म जिनके २ अर्थात् आत्मासे पृथक् ईश्वर वा स्वर्ग वैकुंठादि की प्राप्तिके लिये जो प्रयत्न करते हैं वह भी निष्फल हैं इस में भी वही पहला हेतुहै और + निष्फल हैं ज्ञान जिनके ३ अर्थात् आत्मासे भिन्न जो जो पदार्थ उन्होंने सच्चे समझरक्खेहैं सब झूठेहैं क्योंकि आत्मा अद्वैत एक है इस विशेषण से यह भी समझना चाहिये कि वे बालकवत् मूढ़ अज्ञानी नहीं अनात्मशास्त्र का उनको बहुत ज्ञानहै अर्थात् अनात्माको तो यथार्थ नहीं जानते अनात्मपदार्थ बहुत जानते हैं आत्माके यथार्थ न जाननें में और मोघाशादि होनेमें ये दो हेतु हैं प्रथम यह कि वे + विक्षिप्त चित्त हैं ४ अर्थात् बहिर्मुख विषयी मूर्खवत् रूप रसादि विषयोंकी इच्छा रखते हैं अंतःसुख में वृत्ति नहीं लगाते यह हेतुहेतुगर्भित विशेषणहै अर्थात् इस हेतु दूसरा हेतु यहहै कि + राक्षसी ५ और भी आसुरी ६।७।८ माया ९ मोहनयी को १० आश्रय कर रक्खा है ११ अर्थात् जैसे असुर और राक्षस देहाभिमानी होतेहैं ऐसेही अज्ञानी अनात्मदर्शी होतेहैं क्योंकि जिस को अन्तर आत्मानन्द प्राप्त न होगा वह बेसन्देहही विषयानन्दकी कामना रक्खेगा कामनासे क्रोधादि असुर राक्षसोंकासा स्वभाव अवश्यहोगा तात्पर्य इन दोनों मंत्रों का ज्ञाननिष्ठामें प्रयत्नकरने के लिये है अनात्मदर्शियों की निष्ठा हटाने में और उनकी निन्दा करने में तात्पर्य्य नहीं क्योंकि प्रवृत्तिमार्ग भी अधिकार प्रति मोक्षमार्ग है ॥ १२ ॥

महात्मानस्तुमांपार्थदैवींप्रकृतिमाश्रिताः ॥ भजन्त्यनन्यमनसो ज्ञात्वाभूतादिमव्ययम् ॥ १३ ॥

पार्थ १ महात्मानः २ तु ३ अनन्यमनसः ४ दैवीम् ५ प्रकृतिम् ६ आश्रिताः ७ भूतादिम् ८ अव्ययम् ९ माम् १० ज्ञात्वा ११ भजंति १२ ॥ १३ ॥ उ० + ऐसे पुरुष परमेश्वरका आराधन करते हैं + अ० + हे अर्जुन! १ महात्मा पुरुष २ तो ३ अनन्यमनहुये ४ दैवी ५ प्रकृति को ६ आश्रय कियेहुये ७ आकाशादि भूतोंका कारण ८ अविनाशी ९ मुझको १० जानकर ११ सेवते हैं १२ + वी० + संसारको दुःखरूप मुझको मुख्य पुरुषार्थ समझकर संसार के विषयों से उपरामहुये मोक्ष में जो प्रयत्न करते हैं वे महात्मा हैं २ सिवाय श्रीनारायण के और किसी जगह पुत्र

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

मित्र स्तुति मानादि में नहीं है मन जिनका ३ सोलहवें अध्याय में छब्बीस लक्षण दैवीसम्पत् के कहेंगे उन साधनों करके संपन्न अर्थात् धीरजवाले इन्द्रियों को विषयों से विमुख करनेवाले ऐसे लक्षण हैं जिनमें वे परमेश्वर को ही सेवते हैं स्त्री छोकरों को बहिर्मुख धनी कामीजनों को नहीं सेवते ॥ १३ ॥

सततंकीर्त्तयन्तोमां यतंतश्चदृढव्रताः ॥ नमस्यंतश्चमांभक्त्या नित्ययुक्ताउपासते ॥ १४ ॥

सततम् १ कीर्त्तयंतः २ माम् ३ उपासते ४ नित्ययुक्ताः ५ भक्त्या ६ माम् ७ च ८ नमस्यंतः ९ यतंतः १० च ११ दृढव्रताः १२॥ १४ ॥ उ० + महात्मा इस प्रकार भजन करते हैं जैसा इन दो मंत्रों में वर्णन करते हैं + अ० + महात्मा + निरंतर १ कीर्त्तन करतेहुये २ मुझको ३ सेवतेहैं ४ अर्थात् मोक्ष शास्त्रका पढ़ाना जिज्ञासुओं को सुनाना विष्णुसहस्रनाम गीतादि का पाठ करना नामोच्चारण करना गुरुमंत्र गायत्री जपना और सबसे श्रेष्ठ यह है कि गायत्रीका जप करना यही मेरी उपासना है इस प्रकार महात्मा मेरी उपासना करते हैं कैसे हैं वे कि सदा + युक्त हुये ५ प्रेमलक्षणा भक्ति करके ६ मुझको ७ । ८ नमस्कार करते हैं ९ अर्थात् सदा यही स्मरण करते हैं कि विश्वम्भर नारायण हमारे स्वामी हैं यह समझकर बहुत प्रीति नम्रता के साथ ॐनमोनारायणाय इत्यादि मन्त्र पढ़कर वारंवार नमस्कार करतेहैं फिर कैसे हैं कि मोक्षमार्ग में सर्वाङ्ग लगाकर सदा + यत्न करते हैं १० । ११ जैसे धन स्त्री की चाहवाले रुपये स्त्री के लिये प्रयत्न करते हैं और फिर कैसे हैं कि + दृढ़व्रत हैं जिनके १२ अर्थात् ब्रह्मचर्यादि व्रतमें ऐसे दृढ़हैं कि जहांतक बने स्वप्न में भी वीर्य्य को स्खलित नहीं होने देते बुद्धिपूर्वक वीर्यका त्याग करना तो महापामरों पाजियों का कामहै यद्यपि गृहस्थों के वास्ते अपनी स्त्री का संग करना कहीं २ लिखा है परन्तु वहां भी तात्पर्य उनका वीर्य के निरोध में ही है जो पुरुष वीर्य का निरोधन नहीं करसक्ता उससे मोक्षमार्ग में प्रयत्न करना कठिन है क्योंकि घरकी पूंजी को तो वृथा व्यय करता है फिर यह कैसे विश्वास हो कि यह कुछ बाहर से कमाई करके इकट्ठा करेगा यह वीर्य एक अमोल प्रकाशमान रत्नहै जिसके भीतर यह बना रहेगा वह भगवत्स्वरूप को देख सकेगा और जो यह रत्न खोदिया तो परमेश्वर के दर्शनसे निराश होवे इसी प्रकार खोटा धन अपने संग में नहीं लाना किसीको किसी प्रकार दुःख

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

नहीं देना प्रारब्ध परमेश्वर पर विश्वास रखना और भी बहुत ऐसे अनेक दृढ़ व्रत नियम हैं जिनके यह सब परमेश्वर की भक्ति है ॥ १४ ॥

ज्ञानयज्ञेनचाप्यन्ये यजन्तोमामुपासते ॥ एकत्वेनपृथक्त्वेन बहुधाविश्वतोमुखम् ॥ १५ ॥

ज्ञानयज्ञेन १ माम् २ यजंतः ३ उपासते ४ अन्ये ५ च ६ अपि ७ एकत्वेन ८ पृथक्त्वेन ९ बहुधा १० विश्वतोमुखम् ११॥१५॥ अ०+कोई महात्मा तो + ज्ञानयज्ञ करके १ मुझको २ पूजते हुये ३ उपासना करते हैं ४ अर्थात् मुझ सच्चिदानन्द को सब भूतों में जानते हैं, साधु महात्मा भगवद्भक्तों को जो पूजन करना उनकी सेवा उपासना करनी उनको भगवत्स्वरूप समझना यह मेरी उत्तम उपासना है क्योंकि जैसे मेरे रामकृष्णादि निमित्त अवतार हैं ऐसेही साधु महात्मा मेरे भक्त नित्य अवतार हैं + और कोई ५ । ६ । ७ लक्ष्यार्थ में जीव ईश्वर को एक समझकर + अभेद अद्वैत भावना करके ८ अर्थात् सोहं ब्रह्माहमस्मि यही निरन्तर निदिध्यासन करते रहते हैं और कोई + पृथक् भावना करके ९ अर्थात् परमेश्वर सच्चिदानन्द घन सर्व्वज्ञता भक्तवत्सलता करुणादि अनेक गुण शक्तिकरके युक्त नित्यमुक्त प्रभु सगुण ब्रह्महै यद्यपि मैं भी सच्चिदानन्द हूं परन्तु अनादि त्रिगुणमय माया में फँस रहा हूं उस पूर्णब्रह्म सगुणाकारकी कृपासे छूटूंगा और अपने परमानन्द स्वरूपको प्राप्त हूंगा यह दोनों बातें विना भगवत् की कृपा प्राप्त न होंगी यह समझ कर पूर्णब्रह्म सच्चिदानन्द की उपासना करते हैं और कोई + बहुत प्रकार का १० मुझको समझ कर मेरी उपासना करते हैं अर्थात् ब्रह्मा विष्णु महेश सूर्य शक्ति गणेश अग्नि चंद्र राम कृष्णादि को मेराही रूप साक्षात् मुझ सच्चिदानन्दको मूर्त्तिमान् समझकर मेरी उपासना करते हैं और कोई + विराट् विश्वरूप ११ मुझको समझकर मेरी उपासना करतेहैं अपने अपने अधिकार में ये सब महात्माहैं पूर्णब्रह्म शुद्ध सच्चिदानन्द निराकार निर्विकार नित्यमुक्त मेरे स्वरूप को अवश्य काल पाकर प्राप्तहोंगे ॥ १५ ॥

अहंक्रतुरहंयज्ञःस्वधाहमहमौषधम् ॥ मंत्रोऽहमहमेवाज्यमहमग्निरहंहुतम् ॥ १६ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

कर्म करनेवालों से वैदिक कर्म करनेवाले अच्छे हैं इस हेतुसे वैदिक कर्म करने वाले पवित्र कहे जाते हैं ३ वेदोक्त कर्मोंका जो करना है कर्मकांडी इसीको ईश्वर मानते हैं अर्थात् कर्महीको स्वर्गफलदाता समझते हैं ४। ५। ६ तात्पर्य वेदोक्त कर्म्मों का निष्काम जो अनुष्ठान करना है अथवा भगवद्भक्ति और ज्ञाननिष्ठाके सम्बन्धी जो कर्म हैं उनका करना बन्धका हेतु नहीं अन्तःकरण की शुद्धि और जीवन्मुक्ति का हेतुहै और मुक्तिके लिये भेद उपासना भी अच्छी है वैकुंठादि लोकों की प्राप्तिके लिये और सावयव भगवत् मूर्त्तिकी प्राप्तिके लिये जो मूर्त्तिमान् भगवत्की सकाम उपासना करते हैं उनका भी इन्हीं लोगों में अन्तर्भावहै कि जिनका वीसवें और इक्कीसवें दो श्लोकों में प्रसंग है जो फल अनित्य कर्म्मकांडियोंको होगा वही फल भेदवादियों को होगा मूर्त्तिमान् परमेश्वरकी उपासना भी निष्काम करनी चाहिये रूप देखनेके वास्ते न करे उसका फल अनित्य और दुःखका हेतु होगा जैसे प्रथम किसी समय दशरथ कौशल्या गोपी यशोदा नन्दादिको हुआ है और जो उसको दुःख न समझे वह वे सन्देह करे ॥ २० ॥

तेतंभुक्त्वास्वर्गलोकंविशालंक्षीणेपुण्येमर्त्यलोकंविशंति ॥ एवंत्रयीधर्ममनुप्रपन्ना गतागतंकामकामालभंते ॥ २१ ॥

ते १ तम् २ विशालम् ३ स्वर्गलोकम् ४ भुक्त्वा ५ पुण्ये ६ क्षीणे ७ मर्त्यलोकम् ८ विशंति ९ एवम् १० त्रयीधर्मम् ११ अनुप्रपन्नाः १२ कामकामाः १३ गतागतम् १४ लभंते १५ ॥ २१ ॥ अ० + वे १ अर्थात् शब्द स्पर्शादि विषयोंकी कामना वाले वेदोक्त कर्म्म करनेवाले सकामपुरुष १ तिस २ विशाल ३ स्वर्ग को ४ भोग करके ५ अर्थात् अपने कर्मों के फलको स्वर्ग में भोग करके ५ पुण्य ६ नाशहोतेही ७ मनुष्यलोक में ८ प्राप्तहोंगे ९ इस प्रकार १० वेदोक्तधर्म ११ करनेवाले १२ भोगों की कामनावाले १३ गतागत को प्राप्तहोते हैं १५ अर्थात् स्वर्गादि में गये फिर वहां से धक्केखाकर मनुष्यलोक में आये फिर भी वेही कर्म किये और जब खोटे कर्म बनगये तब नरक में गये सदा वे लोग कभी नरक में कभी स्वर्ग में कभी मनुष्ययोनि में कभी पशु पक्षियों की योनि में भटकते फिराकरते हैं सदा शुद्ध सच्चिदानन्द भगवत् से विमुखहोकर भोगों के वश में फँसे रहते हैं जब कि ऐसे लोगों की व्यवस्था है तो जो सदा लौकिक बखेड़ों मेंही लगा रहताहै उसकी व्यवस्था क्या कही जावै और यह एक बारीक बात सोचने

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

के योग्य है कि सकाम वैदिककर्म्म करनेवालों की तो यह व्यवस्था है पुराणोक्त सकामकर्म्म और सकाम उपासना जो करते हैं उनको क्या फल होगा अपनी अपनी बुद्धि के अनुसार विचार करना चाहिये प्रकट करके लिख देने में बहुत लोग कि जो मोक्षमार्ग का आश्रयलेकर भोग भोगते हैं दुःख पावेंगे बुद्धिमान् मनमें समझ लेते हैं इस शास्त्र में जिस जगह सकाम कर्म्म का प्रसंग है तो उस जगह अर्थ से सकाम उपासनाको भी वैसाही समझना चाहिये और जिस जगह स्वर्गादि फलका प्रसंग है वहां वैकुण्ठादि फलको भी वैसाही समझना चाहिये ॥ २१ ॥

अनन्याश्चिंतयन्तोमांयेजनाःपर्युपासते ॥ तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमंवहाम्यहम् ॥ २२ ॥

ये १ जनाः २ अनन्याः ३ माम् ४ चिन्तयन्तः ५ पर्युपासते ६ तेषाम् ७ नित्याभियुक्तानाम् ८ योगक्षेमम् ९ अहम् १० वहामि ११ ॥ २२ ॥ अ० उ० + जो ज्ञाननिष्ठ पुरुष अभेद भावना करके मेरी उपासना करते हैं उनको इसलोक परलोक के पदार्थ मुक्तिपर्यन्त देकर मैंही रक्षा करता हूं यह कहते हैं + जो १ जन २ अर्थात् कर्म्मफल के संन्यासी अभेद उपासक २ अनन्य ३ मुझको ४ चिन्तन करतेहुये ५ उपासना करते हैं ६ अर्थात् सदा वे यह चिन्तन करते रहते हैं कि शरीर इन्द्रिय प्राण अन्तःकरण से परे सच्चिदानन्द स्वरूप तीनों अवस्थाका साक्षी जो यह हमारा आत्मा है यही पूर्ण ब्रह्म है जिसको महावाक्य प्रतिपादन करते हैं इससे अन्य जुदा और कोई सच्चिदानन्द ब्रह्म नहीं इसप्रकार अनन्य हुये निदिध्यासन करते हैं शरीरादि विजातीय पदार्थों का तिरस्कार करके सजातीय पदार्थ सच्चिदानन्द आत्मा में निर्मल अन्तःकरणकी वृत्ति का गंगावत् प्रवाह किया है जिन्हों ने + तिन ७ नित्य आत्मनिष्ठों को ८ योगक्षेम ९ मैं सोपाधिक सच्चिदानन्द मायोपहित ईश्वर १० प्राप्त करता हूं ११ टी० + अप्राप्त पदार्थ को प्राप्त करना उसको योग कहते हैं और प्राप्त पदार्थ की रक्षा करनी उसको क्षेम कहते हैं आत्मनिष्ठ पुरुषों को आत्मतत्त्वकी प्राप्ति मेरी कृपा से होती है और मैं ही उसकी रक्षाकरता हूं और करूंगा यह मेरी प्रतिज्ञा है कब तक कि जब तक ज्ञाननिष्ठा का भलेप्रकार परिपाक न होगा जो कोई यह शङ्का करे कि जो भगवद्भक्त नहीं उनको क्या पदार्थ रुपये आदि नहीं मिलते हैं और उनके क्या पदार्थों की रक्षा नहीं होती उत्तर इसका यहहै कि जो भगवद्भक्त नहीं

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

क्रतुः१अहम् २ यज्ञः ३ अहम्४स्वधा५ अहम् ६ अहम्७ औषधम् ८ मंत्रः९ अहम् १० अहम्११एव १२ आज्यम् १३ अहम्१४अग्निः१५ अहम्१६ हुतम् १७॥ १६॥ अ० उ०+पिछले मंत्रमें दश अंकवाला जो पद है उसकी व्याख्या चार मंत्रों में करते हैं+श्रौत यज्ञ १ अग्निष्टोमादि+अहम् २ अर्थात् मैं हूं+स्मार्त्त यज्ञ अतिथि अभ्यागत की पूजादि पंचयज्ञ ३ मैं हूं ४ पितरोंको जो अन्न दियाजाताहै मंत्रसे सो५ मैं हूं ६ मनुष्यादि जो यवादि भक्षण करतेहैं सो मैं हूं ७।८ यज्ञमें जो पढ़ेजाते हैं ॐ नमःशिवाय इत्यादि मंत्र ९ मैंहूं १० मैंही ११।१२ होमादि का साधन हूं १३ मैं १४ अग्नि हूं १५ मैं १६ होम हूं १७ तात्पर्य ये सब अन्तःकरण शुद्धिके कारणहैं और मोक्षके साधनहैं ॥ १६ ॥

पिताहमस्यजगतोमाताधातापितामहः ॥ वेद्यंपवित्रमोंकारऋक्सामयजुरेवच ॥ १७ ॥

अस्य १ जगतः २ अहम् ३ पिता ४ माता ५ धाता ६ पितामहः ७ वेद्यम् ८ पवित्रम् ९ ॐकारः१० ऋक्सामयजुः ११ एव १२ च १३ ॥ १७॥ अ०+इस जगत् का १।२ मैं ३ पिता ४ माता ५ विधाता ६ पितामह ७ हूं+जानने के योग्य ८ पवित्र शुद्ध ९ प्रणव १० ऋक् साम यजुः चारों वेद भी ११।१२। १३ मैंहूं टी०+उत्पन्न करनेवाला पालन करनेवाला कर्मोंके फलका देनेवाला वेदादि प्रमाणोंका विषय प्रमेय चैतन्य मैंहीहूं सब वेद मुझकोही प्रतिपादन करते हैं चकारसे अथर्वण वेद भी जानना चाहिये ऋगादि वेद और ॐ प्रमाण भी मैंहीहूं और प्रमाता प्रमाण भी मैंहीहूं इति तात्पर्यार्थः ॥ १७ ॥

गतिर्भर्ताप्रभुःसाक्षीनिवासःशरणंसुहृत् ॥ प्रभवःप्रलयःस्थानंनिधानंबीजमव्ययम् ॥ १८ ॥

गतिः १ भर्त्ता २ प्रभुः ३ साक्षी ४ निवासः५ शरणम् ६ सुहृत् ७ प्रभवः ८ प्रलयः ९ स्थानम् १० निधानम्११अव्ययम्१२ बीजम् १३॥१८॥ अ०+कर्मों का फल १ पोषण करनेवाला २ समर्थ स्वामी ३ शुभाशुभ देखनेवाला ४ भोग स्थान ५ रक्षा करनेवाला ६ वे प्रयोजन हित करनेवाला ७ जगत्का आविर्भाव है जिस से ८ संहर्ता ९ सर्वभूत स्थित हैं जिसमें १० लयका स्थान ११ अविनाशी १२ बीज १३ मैंहूं ॥ १८ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

तपाम्यहमहंवर्षं निगृह्णाम्युत्सृजामिच ॥ अमृतंचैवमृत्युश्चसदसच्चाहमर्जुन ॥ १९ ॥

अहम् १ तपामि २ वर्षम् २ उत्सृजामि ४ च ५ निगृह्णामि ६ अमृतम् ७ च ८ एव ९ मृत्युः १० च ११ सत् १२ असत् १३ च १४ अहम् १५ अर्जुन १६ ॥ १९॥अ०+ग्रीष्मऋतु में सूर्य में स्थितहोकर मैं जगत्को तपाताहूं २ वर्षा को ३ वर्षाताहूं ४ और ५ जब कभी प्रजा पुण्यकरना छोड़देती है तब वर्षाका+निग्रह करलेताहूं अर्थात् पानी नहीं वर्षाताहूं अमृत अर्थात् जीवना भी और मृत्यु अर्थात् भूतोंका अदर्शन भी ७।८।९।१०। ११ मैंही हूं और+स्थूल १२ सूक्ष्म प्रपंच १३। १४ मैंहीहूं १५ हे अर्जुन! १६ तात्पर्य बहुत महात्मा इसप्रकार मुझको जानकर सर्वात्मदृष्टि कर मेरी उपासना करते हैं ॥ १९ ॥

त्रैविद्यामांसोमपाःपूतपापायज्ञैरिष्ट्वास्वर्गतिंप्रार्थयन्ते ॥ तेपुण्यमासाद्यसुरेन्द्रलोकमश्नन्तिदिव्यान्दिविदेवभोगान् ॥ २० ॥

त्रैविद्याः १ सोमपाः २ पूतपापाः ३ यज्ञैः ४ माम् ५ इष्ट्वा ६ स्वर्गतिम् ७ प्रार्थयन्ते ८ ते ९ पुण्यम् १० लोकम् ११ आसाद्य १२ दिवि १३ दिव्यान् १४ देवभोगान् १५ अश्नन्ति १६॥ २०॥अ० उ०+जो कामना करके वेदोक्त भी कर्म करते हैं उनका जन्म मरण विना ज्ञाननिष्ठा के दूर न होगा प्राकृतों का तो कुछ प्रसंगही नहीं यह कहते हैं दो श्लोकों में+जो+तीन वेदके जाननेवाले १ अमृतके पान करनेवाले २ पवित्रजन ३ श्रौत स्मार्त+यज्ञों करके ४ मुझको ५ पूजन करके ६ स्वर्ग की प्राप्ति ७ चाहते हैं ८ वे ९ पुण्यफल १० स्वर्गलोक को ११ प्राप्तहोकर १२ अर्थात् पुण्योंका फल जो स्वर्गलोकहै तिसमें बसकर १२ स्वर्ग में १३ दिव्य १४ अर्थात् अलौकिक जो इस लोकमें नहीं स्वर्ग में ही हैं उन+देवभोगों को १५ भोगते हैं १६ टी० ऋक् साम यजुः इन तीन वेद के जाननेवाले अर्थात् अथर्वण वेद में ब्रह्मविद्या विशेष है उसको नहीं जानते १ यज्ञ के शेष भागको अर्थात् यज्ञ में से बचाहुआ जो अन्न उसको अमृत कहते हैं उस अन्नके भोजन करनेवालों का अन्तःकरण शुद्ध होजाताहै जो निष्कामहोकर करेंगे नहीं तो स्वर्गको प्राप्तहोंगे इत्यभिप्रायः २ वनज नौकरीआदि लौकिक

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

कर्म करनेवालों से वैदिक कर्म करनेवाले अच्छे हैं इस हेतुसे वैदिक कर्म करने वाले पवित्र कहे जाते हैं ३ वेदोक्त कर्मोंका जो करना है कर्मकांडी इसीको ईश्वर मानते हैं अर्थात् कर्महीको स्वर्गफलदाता समझते हैं ४ । ५ । ६ तात्पर्य वेदोक्त कर्मों का निष्काम जो अनुष्ठान करना है अथवा भगवद्भक्ति और ज्ञाननिष्ठाके सम्बन्धी जो कर्म हैं उनका करना बन्धका हेतु नहीं अन्तःकरण की शुद्धि और जीवन्मुक्ति का हेतुहै और मुक्तिके लिये भेद उपासना भी अच्छी है वैकुंठादि लोकों की प्राप्तिके लिये और सावयव भगवत् मूर्त्तिकी प्राप्तिके लिये जो मूर्त्तिमान् भगवत्की सकाम उपासना करते हैं उनका भी इन्हीं लोगों में अन्तर्भावहै कि जिनका बीसवें और इक्कीसवें दो श्लोकों में प्रसंग है जो फल अनित्य कर्मकाण्डियोंको होगा वही फल भेदवादियों को होगा मूर्त्तिमान् परमेश्वरकी उपासना भी निष्काम करनी चाहिये रूप देखनेके वास्ते न करे उसका फल अनित्य और दुःखका हेतु होगा जैसे प्रथम किसी समय दशरथ कौशल्या गोपी यशोदा नन्दादिको हुआ है और जो उसको दुःख न समझे वह वे सन्देह करे ॥ २० ॥

तेतंभुक्त्वास्वर्गलोकंविशालंक्षीणेपुण्येमर्त्यलोकंविशंति ॥ एवंत्रयीधर्ममनुप्रपन्ना गतागतंकामकामालभंते ॥ २१ ॥

ते १ तम् २ विशालम् ३ स्वर्गलोकम् ४ भुक्त्वा ५ पुण्ये ६ क्षीणे ७ मर्त्यलोकम् ८ विशंति ९ एवम् १० त्रयीधर्मम् ११ अनुप्रपन्नाः १२ कामकामाः १३ गतागतम् १४ लभंते १५ ॥ २१ ॥ अ० + वे १ अर्थात् शब्द स्पर्शादि विषयोंकी कामना वाले वेदोक्त कर्म्म करनेवाले सकामपुरुष १ तिस २ विशाल ३ स्वर्ग को ४ भोग करके ५ अर्थात् अपने कर्मों के फलको स्वर्ग में भोग करके ५ पुण्य ६ नाशहोतेही ७ मनुष्यलोक में ८ प्राप्तहोंगे ९ इस प्रकार १० वेदोक्तधर्म ११ करनेवाले १२ भोगों की कामनावाले १३ गतागत को प्राप्तहोते हैं १५ अर्थात् स्वर्गादि में गये फिर वहां से धक्केखाकर मनुष्यलोक में आये फिर भी वेही कर्म किये और जब खोटे कर्म बनगये तब नरक में गये सदा वे लोग कभी नरक में कभी स्वर्ग में कभी मनुष्ययोनि में कभी पशु पक्षियों की योनि में भटकते फिराकरते हैं सदा शुद्ध सच्चिदानन्द भगवत् से विमुखहोकर भोगों के वश में फँसे रहते हैं जब कि ऐसे लोगों की व्यवस्था है तो जो सदा लौकिक बखेड़ों मेंही लगा रहताहै उसकी व्यवस्था क्या कही जावै और यह एक बारीक बात सोचने

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

के योग्य है कि सकाम वैदिककर्म्म करनेवालों की तो यह व्यवस्था है पुराणोक्त सकामकर्म्म और सकाम उपासना जो करते हैं उनको क्या फल होगा अपनी अपनी बुद्धि के अनुसार विचार करना चाहिये प्रकट करके लिख देने में बहुत लोग कि जो मोक्षमार्ग का आश्रयलेकर भोग भोगते हैं दुःख पावेंगे बुद्धिमान् मनमें समझ लेते हैं इस शास्त्र में जिस जगह सकाम कर्म्म का प्रसंग है तो उस जगह अर्थ से सकाम उपासनाको भी वैसाही समझना चाहिये और जिस जगह स्वर्गादि फलका प्रसंग है वहां वैकुण्ठादि फलको भी वैसाही समझना चाहिये ॥ २१ ॥

अनन्याश्चिंतयन्तोमांयेजनाःपर्युपासते ॥ तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमंवहाम्यहम् ॥ २२ ॥

ये १ जनाः २ अनन्याः ३ माम् ४ चिन्तयन्तः ५ पर्युपासते६ तेषाम्७नित्याभियुक्तानाम् ८ योगक्षेमम् ९ अहम्१०वहामि ११ ॥२२॥ अ०उ०+जो ज्ञाननिष्ठ पुरुष अभेद भावना करके मेरी उपासना करते हैं उनको इसलोक परलोक के पदार्थ मुक्तिपर्यन्त देकर मैंही रक्षा करता हूं यह कहते हैं+जो १ जन २ अर्थात् कर्म्मफल के संन्यासी अभेद उपासक २ अनन्य ३ मुझको ४ चिन्तन करतेहुये ५ उपासना करते हैं ६ अर्थात् सदा वे यह चिन्तन करते रहते हैं कि शरीर इन्द्रिय प्राण अन्तःकरण से परे सच्चिदानन्द स्वरूप तीनों अवस्थाका साक्षी जो यह हमारा आत्मा है यही पूर्ण ब्रह्म है जिसको महावाक्य प्रतिपादन करते हैं इससे अन्य जुदा और कोई सच्चिदानन्द ब्रह्म नहीं इसप्रकार अनन्य हुये निदिध्यासन करते हैं शरीरादि विजातीय पदार्थों का तिरस्कार करके सजातीय पदार्थ सच्चिदानन्द आत्मा में निर्मल अन्तःकरणकी वृत्ति का गंगावत् प्रवाह किया है जिन्हों ने+तिन ७ नित्य आत्मनिष्ठों को ८ योगक्षेम ९ मैं सोपाधिक सच्चिदानन्द मायोपहित ईश्वर १० प्राप्त करता हूं ११ टी०+अप्राप्त पदार्थ को प्राप्त करना उसको योग कहते हैं और प्राप्त पदार्थ की रक्षा करनी उसको क्षेम कहते हैं आत्मनिष्ठ पुरुषों को आत्मतत्त्वकी प्राप्ति मेरी कृपा से होती है और मैं ही उसकी रक्षाकरता हूं और करूंगा यह मेरी प्रतिज्ञा है कब तक कि जब तक ज्ञाननिष्ठा का भलेप्रकार परिपाक न होगा जो कोई यह शङ्का करे कि जो भगवद्भक्त नहीं उनको क्या पदार्थ रुपये आदि नहीं मिलते हैं और उनके क्या पदार्थों की रक्षा नहीं होती उत्तर इसका यहहै कि जो भगवद्भक्त नहीं

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

वे दिनरात्रि आप पदार्थों के योग क्षेममें प्रयत्न करते हैं फिर भी सन्देह रहता है और परमानन्द रूप मुक्ति से तो वे सदा विमुख रहते हैं और जो भगवद्भक्त हैं उनको मुख्य फल पदार्थ परमानन्द स्वरूप मुक्ति तो अवश्यही मिलेगी परन्तु गौणफल शरीरयात्रा के लिये अन्न वस्त्रादि उनको बेयत्न प्राप्तहोते हैं और उन की रक्षा अन्तर्यामी करताहै वे सदा बेसन्देह रहतेहैं जैसे कोई फलकी इच्छाकर के बागमें गया वह फल तो उसको अवश्यही मिलेगा और रस्ते में फुलवारी का देखना सुगन्धका सूंघना इत्यादि गौणफल उसको अपने आप मिलजाते हैं और मुख्यफलभी प्राप्तहोता है भक्त और अभक्तके योग क्षेममें इतना भेदहै ॥ २२॥

येऽप्यन्यदेवताभक्ता यजन्तेश्रद्धयान्विताः॥
तेऽपिमामेवकौंतेय यजन्त्यविधिपूर्वकम् ॥ २३ ॥

कौंतेय १ ये २ अपि ३ भक्ताः ४ श्रद्धया ५ अन्विताः ६ अन्यदेवताः ७ यजन्ते ८ ते ९ अपि १० माम् ११ एव १२ यजन्ति १३ अविधिपूर्वकम् १४॥ २३ ॥ अ० उ०+जो भक्त आत्मा से जुदा विष्णु महेश रामकृष्णादि देवता को समझकर भिन्नभावना करके व्यासादि के वाक्यों में विश्वास करके राम कृष्ण इन्द्रादि की उपासना करते हैं वे भी परमेश्वरका ही भजन करते हैं परन्तु वह निष्ठा उनकी अज्ञानपूर्वक है उसको स्थिरता नहीं यह बात इस मंत्र में श्रीभगवान् स्पष्ट वर्णन करते हैं+हे अर्जुन! १ जो २। ३ भक्त ४ श्रद्धाकरके ५ युक्त ६ अन्य देवता का अर्थात् सच्चिदानन्द स्वरूप आत्मा से अन्य पृथक् सावयव वा निरवयव देवता का ७ यजन पूजा सेवा ध्यान करते हैं ८ वे ९ भी १० मेरा ही ११। १२ यजन करते हैं १३ परन्तु + अज्ञानपूर्वक १४ यजन करते हैं तात्पर्य उनके भजने में तो सन्देह नहीं परन्तु वह भजन मेरा अज्ञानपूर्वक है क्योंकि वास्तव न मेरा स्वरूप उन्होंने जाना न अपना परन्तु जो वह भजन निष्काम होगा तो वे भी ज्ञानद्वारा अवश्य मोक्षहोंगे और उनका योग क्षेमभी मैं ही करूंगा जो निष्काम भजन करता है त्रिदहमोक्षपर्यन्त पदार्थ उसको मैं देता हूं और रक्षा करता हूं तौ भी पशुवृत्तिका त्यागना अवश्य चाहिये जैसे पशु मनुष्यों का दास बना रहता है ऐसेही अन्य देवता का उपासक देवता का पशु बना रहता है जो आपको ब्रह्म नहीं जानता वह निराकार सच्चिदानन्द होकर साकाररूपका दास बनकर साकारों के आधीन रहता है और आपभी साकार बनताहै इससे परे और क्या अज्ञान होगा पूर्ण अनन्यको परिच्छिन्न तुच्छ एकदेशीय मानना जड़ वै

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

तन्य द्रष्टा और दृश्यको एक समझना इससे परे और क्या अज्ञान होगा + तदुक्तम् + अन्योसावहमन्योस्मीत्युपास्तेयोन्यदेवताम् । नसवेदनरोब्रह्मसदेवानां यथापशुः ॥ तात्पर्यार्थ इस मंत्र का ऊपर लिख गया ॥ २३ ॥

अहंहिसर्वयज्ञानां भोक्ताचप्रभुरेवच ॥ नतुमाम भिजानन्तितत्त्वेनातश्च्यवन्तितें ॥ २४ ॥

सर्वयज्ञानाम् १ भोक्ता २ च ३ प्रभुः ४ एव ५ च ६ अहम् ७ हि ८ माम् ९ तत्त्वेन १० न ११ तु १२ अभिजानन्ति १३ अतः १४ ते १५ च्यवन्ति १६ ॥ २४ ॥ अ० उ० + पिछले मंत्रमें कहा कि भेदवादी अज्ञानपूर्वक मेरा भजन करते हैं इस मंत्रमें फिर उसी बातको स्पष्ट करते हैं + सब यज्ञों का एक भोक्ता २ । ३ और + स्वामी ४ । ५ । ६ मैं ७ ही ८ हूं + मुझको ९ तत्त्वसे १० नहीं ११ । १२ जानते १३ इस वास्ते १४ वे १५ गिर पड़ते हैं १६ तात्पर्य श्रौत स्मार्त्त सब यज्ञोंका भोगनेवाला और मालिक मैं सच्चिदानन्द हूं मुझको यथार्थ नहीं जानते अर्थात् यह नहीं समझते कि फलदाता अन्तर्य्यामी सच्चिदानन्द मायोपहित हुआ वही एक शुद्ध सच्चिदानन्दरूप यज्ञों का स्वामी और फलदाता है अविद्योपहित हुआ वही उस फलका भोक्ता है और वह मुझ सच्चिदानन्दरूप आत्मा से कोई जुदा वास्तव सच्चिदानन्द नहीं इस प्रकार जो ईश्वरका स्वरूप नहीं जानते वे इस हेतुसे जन्ममरण के चक्रमें घूमते हैं इस मंत्रमें प्रभु शब्द तत्पदका वाच्यार्थ है और भोक्ता शब्द त्वंपद का वाच्यार्थ है लक्ष्यार्थ में दोनों की एकता श्रीभगवान् स्पष्ट कहते हैं कि प्रभु भी और भोक्ता भी दोनों मैंहीं हूं अहं शब्दका लक्ष्यार्थ में तात्पर्य्य है अर्थात् श्रीभगवान् कहते हैं कि मैं शुद्ध सच्चिदानन्दस्वरूप मायोपहित हुआ तो सब यज्ञों का फलदाताहूं और अविद्योपहित हुआ उसी फलका मैंहीं भोक्ताहूं अब विचार करना चाहिये कि जप स्वाध्याय इन्द्रिय प्राणादि का निरोधादि जो यज्ञ चतुर्थ अध्यायमें श्रीभगवान् ने निरूपण करे हैं उनका भोक्ता ईश्वर है वा जीव ॥ २४ ॥

यान्तिदेवव्रतादेवान्पितॄन्यान्तिपितृव्रताः ॥ भूतानियान्तिभूतेज्यायान्तिमद्याजिनोपिमाम् ॥ २५ ॥

देवव्रताः १ देवान् २ यान्ति ३ पितृव्रताः ४ पितॄन् ५ यान्ति ६ भूतेज्याः ७ भूतानि ८ यान्ति ९ मद्याजिनः १० माम् ११ अपि १२ यान्ति १३ ॥ २५ ॥ अ०

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

उ० + भेदभावना करके व अभेदभावना करके जो परमेश्वर का आराधन करते हैं उन दोनोंका फल इस मन्त्र में कहते हैं + देवतों के उपासक १ देवतों को २ प्राप्त होते हैं ३ पित्रों के उपासक ४ पित्रों को ५ प्राप्त होते हैं ६ भूतों के उपासक ७ भूतों को ८ प्राप्त होतेहैं ९ मेरे उपासक १० मुझको ११ ही १२ प्राप्त होते हैं १३ + टी० + ब्रह्मा विष्णु महेश राम कृष्णादि और इन्द्रादि मूर्त्तिमान् देवतों के आराधन करने वाले १ सालोक्य सारूप्य सामीप्य सायुज्यको प्राप्त होते हैं २ विनायक मातृगण भूतों के पूजने वाले मातृगण भूतों में जा मिलेंगे और इस कलियुग में जो मीरां गूंगादि पीरों का भूत प्रेतों का पूजन करते हैं वे उनको ही प्राप्त होंगे अर्थात् मरकर सब भूत प्रेत बनेंगे ७ और मुझ शुद्ध सच्चिदानन्दस्वरूप आत्मा के यजन करनेवाले अर्थात् ज्ञाननिष्ठावाले १० मुझ नित्यमुक्त परमानन्दस्वरूप निराकार निर्विकार को ११ अवश्य निश्चय १२ प्राप्त होंगे १३ अर्थात् नित्यमुक्त परमानन्दस्वरूप ही होजावेंगे + मां शब्द का अर्थ जो सावयव मूर्त्तिमान् वासुदेव किया जावे तो इस गीताशास्त्र को योगशास्त्र ब्रह्मविद्या कहना नहीं बनता क्योंकि इस अर्थ में यह ग्रन्थ स्पष्ट एकदेशीय प्रतीत होताहै मूर्त्तिमान् वासुदेव श्रीकृष्णचन्द्र महाराज के उपासकोंका यह ग्रंथ हुआ औरों को इस से क्या प्रयोजन रहा यह बात नहीं किन्तु मां शब्दका अर्थ सच्चिदानन्द निराकार है सो वह नित्य है उससे पृथक् सब अनित्य हैं इतने में ही तात्पर्य्यार्थ समझलेना श्रीमहाराज ने आठवें अध्याय में स्पष्ट कह दिया है कि ब्रह्मलोक से बड़ा और कोई लोक नहीं क्योंकि उसका निरूपण वेदों में है जब उसी को अनित्य कहा तो औरों को कैमुतिक न्यायसे अनित्य समझलेना चाहिये और ब्रह्म शब्द का अर्थ बड़ा बृहत् है इस प्रकार नहीं समझना कि ब्रह्मलोक केवल ब्रह्माजी के लोक को कहते हैं ब्रह्माजीसे विष्णु महेश बड़े हैं उन के लोक जुदे हैं सो नहीं किन्तु पूर्णब्रह्म परमेश्वर के सावयव लोक का नाम ब्रह्मलोक है और वह एकही है सत्यलोक वैकुण्ठ कैलासादि यह पुराणों की प्रक्रिया है ॥ २५ ॥

पत्रंपुष्पंफलंतोयंयोमेभक्त्याप्रयच्छति ॥ तदहंभक्त्युपहृतमश्नामिप्रयतात्मनः ॥ २६ ॥

यः १ पत्रम् २ पुष्पम् ३ फलम् ४ तोयम् ५ मे ६ भक्त्या ७ प्रयच्छति ८ तत् ९ भक्त्या १० उपहृतम् ११ प्रयतात्मनः १२ अहम् १३ अश्नामि १४ ॥ २६ ॥ अ०

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

उ०+परमेश्वर का दास हूं मैं इस प्रकार भेदभावना करके श्रद्धापूर्वक परमेश्वर की जो भक्ति करते हैं उनको ज्ञाननिष्ठा की प्राप्ति का सुलभ उपाय श्री भगवान् बताते हैं+जो १ भक्त+पत्र २ फूल ३ फल ४ जल ५ मेरेअर्थ ६ भक्ति करके ७ अर्पण करताहै ८ सो ९ भक्ति करके १० अर्पण किया हुआ ११ पदार्थ थोड़ा भी रूखा सूखा+शुद्धान्तःकरणवाले अपने भक्त का १२ मैं १३ आदरपूर्वक प्रीति के साथ+खाता हूं अर्थात् ग्रहण करता हूं तात्पर्य्य पत्र तुलसी बिल्वपत्रादि और जल सदाशिवजी पर जो चढ़ाते हैं उससे महेश्वर प्रसन्न होते हैं श्री महाराज कहते हैं कि मैं फल भोजन करता हूं फूल सूंघता हूं पत्र ग्रहण करता हूं जल पान करता हूं जैसे गुलदस्ते में फूल भी होते हैं उसको हाथमें ग्रहण करके फूलों को सूंघते और पत्रों को देखतेहैं दुर्योधन की मेवा त्यागी शाक विदुर घर खायो इसी प्रकार किसी जगह पत्र का भोजन भी होताहै ॥ २६ ॥

यत्करोषियदश्नासि यज्जुहोषिददासियत् ॥ यत्तपस्यसिकौन्तेयतत्कुरुष्वमदर्पणम् ॥ २७ ॥

कौन्तेय १ यत् २ करोषि ३ यत् ४ अश्नासि ५ यत् ६ जुहोषि ७ यत् ८ ददासि ९ यत् १० तपस्यसि ११ तत् १२ मदर्पणम् १३ कुरुष्व १४ ॥ २७ ॥ अ० उ०+परमकरुणाकर श्रीभगवान् उससे भी और सुलभ उपाय बताते हैं पत्रादि करके जो श्रीनारायण का पूजन करना है सो परतन्त्र है यह स्वतन्त्र उपाय सुन+हे अर्जुन ! १ जो २ करता है तू ३ जो ४ खाता है तू ५ जो ६ होम करता है तू ७ जो ८ देता है तू ९ जो १० तप करता है तू ११ सो १२ सब+मेरे अर्पण १३ कर तू १४ तात्पर्य्य लौकिक वैदिक शुभाशुभ जो तू कर्म करता है अर्थात् जो खाता है पहरता है होम करता है देता है तप करता है हे अर्जुन ! सबको मेरे अर्पण कर तात्पर्य निष्काम हो फलकी इच्छा मतकर +आत्मात्वंगिरिजा मतिः सहचराः प्राणाः शरीरं गृहं पूजाते विषयोपभोगरचना निद्रा समाधिस्थितिः । संचारः पदयोः प्रदक्षिणविधिः स्तोत्राणि सर्वा गिरो यद्यत्कर्म करोमि तत्तदखिलं शंभो तवाराधनम् ॥ यह शरीर आपका घर शिवालय है इस शरीर में सदा शिवरूप सच्चिदानन्द आत्मा आपही बुद्धि श्रीपार्वती जी हैं आपके साथ चलनेवाले नौकर प्राण हैं ये जो मैं विषयानन्द के वास्ते विषय भोगता हूं खाता पीता देखता सुनता बोलता स्पर्श करता हूं यही मैं आपकी पूजा करता हूं निद्रा मेरी समाधि है फिरना मेरा आपकी प्रदक्षिणाहै

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

जो कुछ मैं बोलता हूं यह सब आपकी स्तुति करता हूं जो जो और भी मैं कर्म करता हूं हे चन्द्रशेखर! सब प्रकार आपकाही मैं आराधन करता हूं आप आशुतोष हो जल्दी मुझपर कृपा करो विदेहमुक्ति को मैं प्राप्त हूं ॥ २७ ॥

शुभाशुभफलैरेवंमोक्ष्यसेकर्मबन्धनैः॥ संन्यास योगयुक्तात्माविमुक्तोमामुपैष्यसि ॥ २८ ॥

एवम् १ शुभाशुभफलैः २ कर्मबन्धनैः ३ मोक्ष्यसे ४ संन्यासयोगयुक्तात्मा ५ विमुक्तः ६ माम् ७ उपैष्यसि ८ ॥ २८ ॥ अ० उ० + निष्कामकर्म करनेवाले निष्फल नहीं रखते उनको अनन्त अविनाशी परमानन्द फल प्राप्त होताहै इस हेतुसे हे अर्जुन! इसप्रकार तू मेरी भक्ति करताहुआ बेसंदेह मुक्त अविनाशी परमानन्दरूपको प्राप्त होगा यह कहतेहैं इस श्लोक में + शुभ अशुभ फल हैं जिनके २ तिन कर्मबंधनों से ३ छूट जायगा तू ४ फिर पीछे + संन्यासयोग करके युक्तहै आत्मा अन्तःकरण जिसका ऐसा तू ५ होकर + जीवन्मुक्तहुआ ६ शरीरपात के पीछे + मुझ परमानन्दस्वरूप नित्यमुक्त पूर्णब्रह्म शुद्ध अनन्त आत्मा को ७ प्राप्तहोगा तू ८ तात्पर्य निष्काम उपासना करने से चित्त शुद्ध होकर एकाग्र होजाता है फिर कर्म उसको अपने आप बन्धनविक्षेपरूप प्रतीत होने लगते हैं उन सबकर्मोंका त्याग करके विरक्त संन्यासी होजाता है तब विरक्त अवस्था में ज्ञाननिष्ठा प्राप्त होतीहै फिर जीते जी उस परात्पर परमानन्द को अनुभव करता है और जीवन्मुक्तहुआ विचरता है प्रारब्धकर्म नाशहोने के पीछे देहपात हो जाताहै मूलाज्ञान कार्यसहित नाश होजाता है यही सब अनर्थों की निवृत्ति और परमानन्दकी प्राप्तिहै इसीका नाम कैवल्यमुक्ति है ॥ २८ ॥

समोहंसर्वभूतेषुनमेद्वेष्योस्तिनप्रियः॥ येभजन्ति तुमांभक्त्यामयितेतेषुचाप्यहम् ॥ २९ ॥

सर्वभूतेषु १ अहम् २ समः ३ न ४ मे ५ द्वेष्यः ६ अस्ति ७ न ८ प्रियः ९ तु १० ये ११ माम् १२ भक्त्या १३ भजन्ति १४ ते १५ मयि १६ तेषु १७ च १८ अपि १९ अहम् २० ॥ २९ ॥ अ० उ० + कोई कोई प्राणी अपनेको बड़ी समझ वाला समझकर भगवद्भक्तिरहित यह कहा करते हैं। विना भक्ति तारो तो तारवो तिहारो है ॥ यह आलसी विषयी बहिर्मुखों की बात है इस वाक्य से यद्यपि महिमा भगवत् की पाई जाती है परन्तु भक्ति का माहात्म्य जाता है ता-

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

त्पर्य इस वाक्य का भगवत्माहात्म्य में समझना चाहिये इस जगह भक्ति के माहात्म्य का प्रसंग है क्योंकि भगवत् अपने को राग द्वेषादिरहित सम कहते हैं दूसरेका भला बुरा विना राग द्वेष नहीं हो सक्ता विना भक्ति भगवत् यदि किसी का भला करें तो बड़ी विषमता की बात है अन्य जीव भक्ति फिर क्यों करेंगे तात्पर्य भगवद्भक्ति करनी आवश्यक है सोई कहते हैं + सब भूतों में अर्थात् भक्त अभक्तों में १ मैं २ बराबर ३ हूं + न ४ कोई + मेरा ५ वैरी ६ है ७ न ८ कोई मेरा + प्यारा ९ है परन्तु १० जो ११ मुझको १२ भक्ति करके १३ भजते हैं १४ अर्थात् मेरी भक्ति सेवा करते हैं १४ वे १५ मुझमें १६ हैं + और तिनमें १७। १८। १९ मैं २० हूं अर्थात् वे मेरे हृदय में हैं मुझको उनके उद्धार करने का स्मरण सदा बनारहता है और तिनके हृदयमें मैं सदा विराजमान रहता हूं यह मेरीभक्ति का प्रताप है जैसे अग्नि सम है उसका किसी से रागद्वेष नहीं परन्तु जो अग्नि के पास जाता है उसीका शीत दूर होता है जो अग्निका सेवन नहीं करता उसका शीत दूर नहीं होता इसी प्रकार जो भगवत् की भक्ति करते हैं वेही मोक्षहोंगे तात्पर्यार्थ यह हुआ कि जनोंमें विषमता दोषहैं क्योंकि कोई भक्ति करता है कोई नहीं ईश्वर में यह दोष नहीं जो दोपुरुष भक्ति करें एक मोक्षहो एक न हो तो ईश्वर में विषमता आवे जो कोई यह शंकाकरे कि अजामीलादि बहुत जीव विना भक्ति मोक्ष हुये यह झूंठ उनके पहिले जन्मों की कथा श्रवणकरनी चाहिये वे लोग योगभ्रष्ट थे ॥ २९ ॥

अपिचेत्सुदुराचारो भजतेमामनन्यभाक् ॥ साधुरेवसमन्तव्यः सम्यग्व्यवसितोहिसः ॥ ३० ॥

चेत् १ अनन्यभाक् २ सुदुराचारः ३ अपि ४ माम् ५ भजते ६ स ७ साधुः ८ एव ९ मन्तव्यः १० हि ११ सः १२ सम्यग्व्यवसितः १३ ॥ ३० ॥ उ० + भगवद्भक्तिका माहात्म्य और अतर्क्य प्रभाव कहते हैं + अ० + कदाचित् १ अनन्य भजन करने वाला अर्थात् सब तरफ से मन को रोककर केवल श्रीनारायण का जो आराधन करता है वह लोकदृष्टि में यदि २ अत्यन्त दुराचार भी है अर्थात् वह स्नानादि आचार नहीं भी करता परंतु अनन्य हुआ ३।४ मुझको ५ भजताहै ६ अर्थात् सदा नारायण का ध्यान श्रीकृष्णादि के चरित्रों का स्मरण करता रहता है अथवा ज्ञाननिष्ठ महापुरुष आत्मानन्द में मग्न रहताहै ६ सो ७ साधु ८ ही ९ मानना योग्य है १० कभी उसको बुरा नहीं

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

समझना मुख से बुरा कहना तो बड़ाही अनर्थ है + क्योंकि ११ सो १२ भले प्रकार बहुत अच्छे निश्चय वालाहै १३ अर्थात् भीतरका निश्चय उसका अच्छा है निश्चय यह बातहै कि पार हुये पीछे नौकाका क्या कामहै आचार पूजा पत्री तबतक है कि जबतक श्रीमहाराज के चरणकमलों में व आत्मस्वरूप में मन अनन्य होकर नहीं लगाहै + ज्ञाननिष्ठोविरक्तोवा मद्भक्तोवानपेक्षकः। सलिंगानाश्रमांस्त्यक्त्वाचरेद्वेदविधिगोचरः॥ इसश्लोक का तात्पर्य यह है कि ज्ञाननिष्ठ विरक्त वा मेरा भक्त बेपरवाह सब दिखावट के चिह्न आश्रमों को त्यागकर सिवाय भगवद्भजन व आत्मनिष्ठा के सब वेद शास्त्रकी विधिको नमस्कारकर पंचमाश्रम परमहंस अवस्थामें विचरे + वेद में भी यह लिखा है कि जिसको वर्णाश्रम का अभिमान है वह बेसन्देह श्रुतिस्मृति का दास है और जो वर्णाश्रम रहित अपने को सर्वथा श्रीनारायण का दास व सच्चिदानन्द पूरणब्रह्म आत्मा को जानता है वह श्रुतिमार्ग को उल्लंघन करके वर्तता है अर्थात् यह समझता है कि वेदकी विधि तबतक है कि जबतक स्त्री पुत्र धन राज्यादि का दास है अनन्य नारायण का दास नहीं और आत्मनिष्ठ नहीं और यह प्रकटरहै कि यह कथा सबे पुरुषों की है बिना भक्ति वा बिना ज्ञानभ्रष्ट भी ऐसेहीं होते हैं तथाहि। वर्णाश्रमाभिमानेन श्रुतिदासोभवेन्नरः। वर्णाश्रमविहीनश्चवर्त्ततेश्रुतिमूर्द्धनि॥३०॥

क्षिप्रंभवतिधर्मात्मा शश्वच्छान्तिंनिगच्छति॥ कौन्तेयप्रतिजानीहि नमेभक्तःप्रणश्यति॥ ३१॥

धर्मात्मा १ भवति २ क्षिप्रम् ३ शश्वत् ४ शान्तिम् ५ निगच्छति ६ कौन्तेय ७ प्रतिजानीहि ८ मे ९ भक्तः १० न ११ प्रणश्यति १२॥ ३१॥ अर्जुन सुन भक्ति का माहात्म्य अनन्यभक्त दुराचार भी + धर्मात्मा १ है २ शीघ्र जल्दी ३ नित्य ४ शांति को ५ अर्थात् उपराम उपशम को ६ प्राप्त होगा ६ हे अर्जुन! ७ इस बात की + तू प्रतिज्ञा कर ८ कि + मेरा ९ भक्त १० अर्थात् परमेश्वरका दुराचार भी भक्त १० नहीं ११ भ्रष्ट होता है अर्थात् अधोगति को नहीं प्राप्त होता है १२ उपासनाकांड का यह सूत्र है॥ अथातो भक्तिजिज्ञासा + पीछे धर्म के भक्ति की जिज्ञासा होती है इस हेतु से प्रतीत होता है कि पहले जन्मों में वह धर्म करचुका इसी वास्ते श्रीमहाराजने भी उसको धर्मात्मा कहा और अपने भक्तसे कहते हैं कि भुजा उठाकर कुरुकियों की सभा में यह प्रतिज्ञाकर कि भग-

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

वह्नक दुराचार भी नहीं दुर्गति को प्राप्त होता है भक्तिमार्ग वालों का यह डंका बजता है ॥ ३१ ॥

मांहिपार्थव्यपाश्रित्ययेऽपिस्युःपापयोनयः ॥ स्त्रियो वैश्यास्तथाशूद्रास्तेऽपियान्तिपरांगतिम् ॥ ३२ ॥

पार्थ १ ये २ अपि ३ पापयोनयः ४ स्युः ५ ते ६ अपि ७ माम् ८ हि ९ व्यपाश्रित्य १० तथा ११ शूद्राः १२ स्त्रियः १३ वैश्याः १४ पराम् १५ गतिम् १६ यान्ति १७ ॥ ३२ ॥ उ० + आचारभ्रष्ट को जो मेरी भक्ति पवित्र कर दे तो इसमें क्या आश्चर्य मानता है तू हे अर्जुन ! मेरी भक्ति रजोगुणी तमोगुणी जन्मके पापियों को कृतार्थ कर देती है + अ० + हे अर्जुन! १ जो २ निश्चय ३ जन्मकेपापी ४ भी + हैं ५ अर्थात् पापियों के कुलमें अन्त्यज म्लेच्छ वर्णसंकरों में उत्पन्न हुये हों ५ वे ६ भी ७ मुझको ८ ही ९ आश्रय करके १० परमगति मुक्तिको प्राप्त १ होंगे पहिले बहुत होगये अबहैं और होंगे और जैसे ये मेरा आश्रय लेकर मुझको प्राप्त होते हैं + तैसेही ११ शूद्र १२ स्त्री १३ वैश्य १४ परमगतिको १५ । १६ प्राप्त होते हैं १७ अर्थात् रजोगुणी तमोगुणी मूर्ख पण्डित सब लोग लुगाई मेरा आश्रय लेकर मुझको प्राप्त होते हैं मेरी कृपा और भक्ति के प्रताप से ज्ञानवान् होकर सब परमानन्दस्वरूप आत्माको प्राप्त होते हैं मेरी भक्ति में सबका अधिकारहै भक्त जनही मुझको प्यारा है मेरा भक्त व्यवहारमें कोई जाति कहलाताहो शूद्र वा म्लेच्छ वा वर्णसंकर जो वह मेरा भक्त है तो परमार्थ में उस को साधु संन्यासी समझना चाहिये क्योंकि उत्तमपदका भागी वही है ज्ञाता पुरुष विद्वान् व्यवहार में भी उसको श्रेष्ठ जानते हैं परमार्थ में तो वह बेसन्देह सबसे श्रेष्ठहै बारहवें अंकसे सत्रहवें अंकतक की टीका लिखते हैं + मैत्रेयी गार्गी मदालसा मीरा करमेती इत्यादि हजारों परमपद को प्राप्त हुई वर्त्तमानकाल में बहुतसी स्त्रियां उदार दात्री तपस्विनी ज्ञानिनी व भक्त प्रसिद्धहैं जिनकी सहाय से और मुख्य जिनकेवास्ते यह टीका बनी वे बीबीबीरा और बीबीजानकी ये दोनों स्त्री ब्राह्मणी हैं जानकी के दो विशेषण विद्वानों ने दिये हैं ब्राह्मणवंशविद्वज्जनैर्वन्दिता अर्थात् ब्राह्मणों के वंश में जो विद्वान् जन वे उसको भक्ति विरक्त के प्रताप से वन्दना करते हैं और श्री सम्प्रदाय चन्द्रिका अर्थात् श्रीसम्प्रदाय के प्रकट और प्रसिद्ध करने के लिये यह जानकी चांदनी के सदृश है गुजरात देश अहमदाबाद नगरी की रहनेवाली शंकरलाल विष्णु नागर ब्राह्मण की बेटी

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

मानसलाल प्रसिद्धसांकललील की पत्नी श्रीमान् उत्तम गुणों की खानि अब श्रीवृन्दावनचन्द में वास करती हैं घर में इनकानाम पार्व्वती था श्रीसम्प्रदाय की अब ये शरणागतहुई तब विधिवत् द्वितीय नाम बीबीजानकी रक्खागया बीबी बीरा का द्वितीय नाम बीबीझुनिया भी प्रसिद्ध है इन्हों ने श्रीवीरविहारीजी और वीरेश्वर महादेवजी का मन्दिर बनवाकर सर्वस्वदान कर दिया यह भी वृन्दावन में वास करे हैं हरीराम सारस्वत ब्राह्मण की बेटी शिवदत्त की पत्नी हैं सर्वस्वदान से विशेष कोई दान नहीं सर्वस्वदान का फल अक्षय है और जीते जी प्रत्यक्ष होता है, इसमें इतिहास यह है श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य्य महाराज एक स्त्री के घर भिक्षा के लिये गये उस समय स्त्री के घर में कुछ न था स्त्री बड़ी पछताई श्रीमहाराज को करुणा आई कहा कि तेरे घर में जो दाना अन्न का था कोई फल सूखा पड़ाहो ढूंढ करला एक आमला उस स्त्री को मिला अति संकोच के साथ महाराज के भिक्षा वस्त्र में दिया जो कि उस स्त्री के घरमें सिवाय उस आमले के कुछ न था श्रीमहाराज ने सर्व्वस्व दान की कल्पना कर लक्ष्मी जीका आवाहन किया श्रीजी आई महाराजने कहा इस स्त्री को विशेष द्रव्यदो महारानीजी ने कहा हमको देने में इन्कार नहीं परंतु सप्तजन्म यह दरिद्री रहेगी, ऐसे इसके कर्म हैं और यह मर्याद भी आप की बांधी हुई है महाराज ने कहा इसने इस समय सर्वस्व दान किया इसका प्रत्यक्ष शीघ्र मनोवाञ्छित फल होना चाहिये देवीजी बोलीं कि सत्यहै जो आज्ञाहो महाराजने कहा कि इसका घर सोने के आमलों से भरदो उसी समय सोने के आमले वर्षे उसका सब घर भरगया श्रीमहाराज उस स्त्री को सर्व्वस्वदानका माहात्म्य विचारकर परमपद की प्राप्ति का वरदान देगये विचारो भक्तिमार्ग में तर्क का अवसर नहीं स्त्री शूद्रादि भक्ति करके सब परमपद के अधिकारी हैं भक्ति का फल प्रत्यक्ष देखने के लिये बीबी जानकी और बीबीबीरा की कथा लिखी गई + भक्ति भक्त भगवन्त गुरु चतुर्नाम वपु एक। तिनके पद वन्दन किये नाशत विघन अनेक॥ अथवा तिनके यश वरणन किये नाशत विघन अनेक॥ चारों का प्रभाव इस टीका में लिखा गया ग्रन्थ के बीच का यह मंगलाचरण है आनन्दचन्द्रप्रभा ग्रन्थ वार्तिक भाषा में बीबीबीरा और जानकी ने मिलकर बनाया है संख्या में दश हजार श्लोकों से कम नहीं सिवाय होगा--अ--क--ह--इत्यादि अक्षरों की संख्या पर अकार से हकार पर्य्यन्त कई सौ प्रमाणिक महानुभावों की कथा उसमें सिवाय वैराग्य विद्या भक्ति इत्यादिकों से विशेष लिखीहैं उस ग्रन्थ से और शब्दादि प्रमाणों

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

करके यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि स्त्री शूद्रादि सब लोग लुगाईमात्र भक्ति के प्रताप से परमगति को प्राप्त होते हैं जिससे परे अन्य श्रेष्ठ कोई गति नहीं उसको ही परमगति कहते हैं ॥ ३२ ॥

किंपुनर्ब्राह्मणाःपुण्याभक्ताराजर्षयस्तथा ॥ अ
नित्यमसुखंलोकमिमंप्राप्यभजस्वमाम् ॥ ३३ ॥

तथा १ ब्राह्मणाः २ राजर्षयः ३ पुण्याः ४ भक्ताः ५ पुनः ६ किम् ७ असुखम् ८ अनित्यम् ९ इमम् १० लोकम् ११ प्राप्य १२ माम् १३ भजस्व १४ ॥ ३३ ॥ उ० + व्यवहार में जो ब्राह्मण क्षत्रिय कहलाते हैं यह मेरी भक्ति करके परमगति को प्राप्तहों तो इस में क्या कहना है अर्थात् यह बात बेसन्देह है इसमें व्यवहार परमार्थ दोनों का सम्मतहै परन्तु विना मेरी भक्ति हे अर्जुन! जो तू चाहे कि मैं व्यवहार में क्षत्रिय कहलाता हूं इस हेतु से परमगति को प्राप्त होजाऊंगा इसका लेशमात्र भी भरोसा मत रख मैं तुझ को समझाता हूं कि यह व्यवहारिक जाति का अभिमान छोड़ जल्द मेरा भजन कर शरीरोंका भरोसा नहीं शरीरका नाम दुःखालय है अर्थात् यह शरीर दुःखों का घर है इसमें सुखकी आशा छोड़ वर्त्तमान में जैसा तू है वैसा ही भजन कर तात्पर्य इस श्लोकका लिखा गया अब अक्षरार्थ लिखते हैं श्रीभगवान् कहते हैं कि जैसे व्यवहार में जो शूद्र वर्णसंकरादि कहलाते हैं वे मेरा आश्रय लेकर मुझको प्राप्तहोंगे अर्थात् परमगति को प्राप्त होते हैं + अ० + तैसेही १ व्यवहार में जो ब्राह्मण २ और + राजऋषि क्षत्रिय ३ कहलाते हैं कैसे हैं यह कि व्यवहारमें भी उनको जन्म सेही पवित्र कहते हैं यह मेरे ४ भक्त ५ होकर अर्थात् मेरी भक्ति करके परमगतिको प्राप्तहों तो + फिर ६ क्या ७ कहना है इस बात काही अर्जुन निश्चय रख बेसन्देह तू भक्ति करके परमगति को प्राप्त होगा इस वास्ते + अनित्य ८ और + असुख अर्थात् नहीं है किसी कालमें सुख जिसमें ऐसे ९ इस १० शरीर को ११ प्राप्त होकर १२ मेरा १३ भजनकर १४ मुझको भज तात्पर्य्य अनित्य होने से तू देर मतकर और असुख होने से यह मत समझ कि जिस काल में सुख होगा तब भजन करूंगा इस में कभी सुख होताही नहीं सुख भजन में ही है व्यवहार की जातिका आश्रय छोड़ भक्तिका आश्रय ले जिस भक्ति के प्रताप से व्यवहार में जो शूद्र वर्णसंकर कहेजाते हैं वे भी परमगति को प्राप्त होते हैं और तू तो व्यवहार

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

में भी उत्तम कहलाता है तू क्यों देर करता है जल्द भजनकर यह मतलब है महाराज का ॥ ३३ ॥

मन्मनाभवमद्भक्तोमद्याजीमांनमस्कुरु ॥ मामेवैष्यसियुक्त्वैवमात्मानंमत्परायणः ॥ ३४ ॥

मन्मनाः १ भव २ मद्भक्तः ३ मद्याजी ४ माम् ५ नमस्कुरु ६ एवम् ७ आत्मानम् ८ युक्त्वा ९ मत्परायणः १० माम् ११ एव १२ एष्यसि १३ ॥ ३४ ॥ उ० + भजनका प्रकार दिखलाते हुये फलपूर्वक इस प्रसंगको समाप्त करते हैं + अ० + मुझमें है मन जिसका १ ऐसा + हो तू २ अर्थात् मुझ में ही मनलगा और + मेरा भक्त ३ हो + और + मेरा यजन करने वाला ४ हो तू अर्थात् मेरी पूजा कर और + मुझको ५ नमस्कार कर ६ इस प्रकार ७ मनको ८ मुझ में + लगा करके ९ मुझ परायण हुआ १० मुझको ११ ही १२ प्राप्त होगा तू १३ अर्थात् मुझ परमानन्द स्वरूप को प्राप्त होगा ॥ ३४ ॥

इति श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सुब्रह्मविद्यायांयोगशास्त्रेश्रीकृष्णार्ज्जुनसंवादे राजविद्याराजगुह्ययोगोनामनवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

स्वामीआनन्दगिरिकृत परमानन्दप्रकाशिकाभाषाटीका में नवां अध्याय समाप्त हुआ ॥ ९ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

अथ श्रीभगवद्गीता उत्तरार्द्धप्रारम्भः॥

श्रीभगवानुवाच॥

भूयएवमहाबाहोशृणुमेपरमंवचः॥ यत्तेहंप्रीयमाणायवक्ष्यामिहितकाम्यया॥ १॥

महाबाहो १ भूयः २ एव ३ मे ४ वचः ५ शृणु ६ यत् ७ परमम् ८ ते ९ प्रीयमाणाय १० हितकाम्यया ११ अहम् १२ वक्ष्यामि १३॥ १॥ उ० + सातवें नवें अध्याय में संक्षेप करके तौ मैंने अपनी विभूतियों का निरूपण किया अब विस्तारपूर्वक कहता हूं + अ० + हे अर्जुन! १ फिर २ भी ३ मेरा ४ वचन ५ सुन ६ कैसा है वह वचन कि + जो ७ परमार्थ निष्ठा वाला ८ अर्थात् मेरा वचन सुनने में परमार्थ में निष्ठा होजाती है वारंवार तुझ से इसीलिये कहताहूं कि मेरे वचन सुनने में तेरी प्रीति है + तुझ प्रीतिमान् के अर्थ ९। १० अर्थात् तू मेरे वचन में श्रद्धा करता है इस वास्ते तेरे अर्थ अर्थात् तुझ से + हितकी कामना करके ११ अर्थात् तू मेरा प्यारा है मैं यह चाहता हूं कि तेरा पीछे भलाहो इस वास्ते भी + मैं १२ कहूंगा १३॥ २॥

नमेविदुःसुरगणाःप्रभवंनमहर्षयः॥ अहमादिर्हिदेवानांमहर्षीणांचसर्वशः॥ २॥

मे १ प्रभवम् २ न ३ सुरगणाः ४ विदुः ५ न ६ महर्षयः ७ हि ८ सर्वशः ९ देवानाम् १० महर्षीणाम् ११ च १२ अहम् १३ आदिः १४॥ २॥ उ० + सिवाय मेरे मेरे प्रभाव को कोई नहीं जानता इस वास्ते भी कहूंगा + अ० + मेरे १ प्रभाव को २ न ३ देवतों के समूह ४ जानते हैं ५ न ६ महर्षि ७ क्योंकि ८ सब प्रकार से ९ देवतों का १० और महर्षियों का भी ११। १२ मैं १३ आदि १४ हूं तात्पर्य प्रभु की अचिन्त्य शक्ति और सामर्थ्य को जब देवता नहीं जानते तो फिर मनुष्य कब जानसक्ते हैं क्योंकि कारण का कार्य आदि होजाता है कार्य कारणको नहीं जानसक्ता परंतु कार्य से कारण का अनुमान होसक्ता है तात्पर्य सच्चिदानन्द स्वरूप आत्मा से पृथक् कोई परमेश्वर को नहीं जानसक्ता॥ २॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

योमामजमनादिंच वेत्तिलोकमहेश्वरम् ॥ असं मूढःसमर्त्येषुसर्वपापैःप्रमुच्यते ॥ ३ ॥

यः १ माम् २ अजम् ३ अनादिम् ४ च ५ लोकमहेश्वरम् ६ वेत्ति ७ सः ८ मर्त्येषु ९ असंमूढः १० सर्वपापैः ११ प्रमुच्यते १२ ॥ ३ ॥ उ० +मुझको इसप्रकार जो जानता है सो तो जानताहै और वह ज्ञानी वेसंदेह मुक्त होगा + अ० +जो १ मुझको २ अर्थात् सच्चिदानन्दस्वरूप आत्माको मुझसे अभिन्न + जन्मरहित ३ अनादि ४ । ५ और सच्चिदानन्द सोपाधिक मायोपहित हुआ + लोकों का महेश्वर ६ है इसप्रकार जो मुझको जानता है + सो ८ मनुष्यों में ९ अज्ञान-रहित है १० अर्थात् उसी का अज्ञान दूर हुआ वही + सब पापों करके ११ अर्थात् समस्त कर्मों के फल अगले पिछलों से + मुक्त होगा वेसंदेह १२ जो इस श्लोक का अर्थ ऐसे किया जाय कि मुझ वासुदेव को अज अनादि लोकों का महेश्वर जानता है सो मनुष्यों में ज्ञानी है सब पापों करके मुक्तहोगा इस अर्थ में यह शङ्का है कि श्रीकृष्णचन्द्र महाराज मूर्त्तिमान्को उपासक जन भी अजादि महेश्वर कहते हैं और ज्ञाननिष्ठा वाले भी यही कहते हैं वे कौन कि जो श्री-महाराज की जन्मादि वाला जीव कहता है प्राकृतूर्ख स्त्री बालक नास्तिकों का इस जगह कुछ प्रसंग नहीं कर्मी कर्मही को फलदाता जानते हैं कर्म्म से पृथक् को ईश्वर नहीं मानते + विचारो कि यह उपदेश श्रीभगवान् का किस को है तात्पर्य मायोपहित सच्चिदानन्द को अविद्योपहित सच्चिदानन्द से अर्थात् ईश्वर को जीव से जो लक्ष्यार्थ में अपृथक् समझते हैं कि मायोपहित हुआ यही अविद्योपहित जीव सच्चिदानन्द महेश्वर है इसी हेतुसे अज अनादि है जब ऐसा सच्चिदानन्द आत्मा को जानेंगे तब वे मुक्त होंगे जो ज्ञान इस श्लोक में कहा है वह कुछ सहज नहीं समझना पिछले श्लोक में श्रीभगवान् कह चुके हैं कि मेरे प्रभावको ऋषि देवता भी नहीं जानते मनुष्य तो क्या जानेंगे वेसन्देह ईश्वर से अभिन्न निर्विकार आत्माको सच्चिदानन्द जानेगा वही भगवद्के प्रभावको जानेगा और जो आपको भक्त ऋषि देवता मनुष्य जानेंगे वे नहीं जानेंगे इसप्रकार समझना चाहिये ॥ ३ ॥

बुद्धिर्ज्ञानमसंमोहः क्षमासत्यंदमःशमः ॥ सुखं दुःखंभवोभावोभयंचाभयमेवच ॥ ४ ॥

बुद्धिः १ ज्ञानम् २ असंमोहः ३ क्षमा ४ सत्यम् ५ दमः ६ शमः ७ सुखम् ८ दुःखम् ९

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

भवः १० भावः ११ भयम् १२ च १३ अभयम् १४ एव १५ च १६ ॥ ४ ॥ उ० + अब तीन श्लोकों में सोपाधिक अपने स्वरूप की ईश्वरता प्रकट करते हैं + अ० + सारासार को भले प्रकार जाननेवाली अन्तःकरणकी वृत्ति १ आत्माको निश्चय करनेवाली आत्माकार अन्तःकरण की वृत्ति, २ जिस काम में प्रवृत्त होना विवेकपूर्वक होना और उस जगह चित्त व्याकुल न होना सदा चैतन्य रहना ३ पृथिवीवत् सहनशील होना ४ यथार्थ सन्देहरहित बोलना ५ इन्द्रियों का निरोध ६ अन्तःकरण का निरोध ७ अनुकूल पदार्थ में जो अन्तःकरणकी वृत्ति ८ प्रतिकूल में जो अन्तःकरण की वृत्ति ९ उद्भव होना १० उद्भव न होना ११ त्रास होना १२। १३ त्रास न होना १४। १५। १६ अगले श्लोक के साथ इसका सम्बन्ध है अगले श्लोक में श्रीभगवान् कहेंगे कि यह शमादि पृथक् पृथक् भाव मुझ सोपाधिक ईश्वर से होतेहैं अर्थात् शुद्ध सच्चिदानन्द आत्मा निर्विकार है इसप्रकार निरुपाधिक और सोपाधिक सच्चिदानन्द को जानना भगवत् का जानना है ॥ ४ ॥

अहिंसासमतातुष्टिस्तपोदानंयशोऽयशः ॥ भवन्तिभावाभूतानांमत्तएवपृथग्विधाः ॥ ५ ॥

अहिंसा १ समता २ तुष्टिः ३ तपः ४ दानम् ५ यशः ६ अयशः ७ पृथग्विधाः ८ भावाः ९ भूतानाम् १० मत्तः ११ एव १२ भवन्ति १३ ॥ ५ ॥ अ० + हिंसारहित १ रागद्वेषादिरहित २ दैवयोग से अपने आप जो पदार्थ प्राप्त होना उसी में सन्तोष ३ इन्द्रियों का निग्रह ४ न्यायसे कमाया हुआ अन्न सुपात्रों को देना ५ सत्कीर्त्ति अर्थात् सज्जनों में कीर्त्ति होनी ६ अकीर्त्ति ७ अर्थात् जो लोग भगवत् से विमुख हैं और भगवद्भक्तों से वैर रखते हैं इसहेतु से उनकी बुराई होती है उसको अकीर्त्ति कहतेहैं ये सब कीर्त्ति अकीर्त्ति नानाप्रकार के भाव ८।९ बुद्धि ज्ञानादि + प्राणियों के १० मुझ से ११ ही १२ होतेहैं १३ तात्पर्य सोपाधिक चैतन्यसे ये सब होतेहैं हानि लाभ जीवन मरण यश अपयश विधिहाथ। पुराणों में कथाहै कि पृथिवी पर भगवत्सम्बन्धी स्त्री पुरुषों के मुखसे जब तक जिसका यश श्रवणकरने में आताहै तबतक वे कीर्तिमान् स्वर्ग में निवास करते हैं ॥ ५ ॥

महर्षयःसप्तपूर्वेचत्वारोमनवस्तथा ॥ मद्भावामानसाजातायेषांलोकइमाःप्रजाः ॥ ६ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

पूर्व १ चत्वारः २ सप्त ३ महर्षयः ४ तथा ५ मनवः ६ मद्भावाः ७ मानसाः ८ जाताः ९ येषाम् १० लोके ११ इमाः १२ प्रजाः १३ ॥ ६ ॥ अ० + सि० मैथुनी सृष्टि से + पहिले १ जो हुये + चार १ सनकादि + और + सात ३ भृगु आदि + महर्षि ४ तैसेही ५ मनु ६ स्वायम्भुव आदि मेराही है प्रभाव जिन में ७ मुझ हिरण्यगर्भात्मा के + संकल्पमात्र से ८ उत्पन्न हुये हैं ९ अर्थात् उन के शरीरों को मायामय समझना उनका प्रभाव यह है कि + जिन की १० लोक में ११ यह १२ प्रजा १३ है तात्पर्य्य प्रजा दो प्रकार की हैं निवृत्तिमार्गवाले एक प्रवृत्तिमार्गवाले दूसरे निवृत्तिमार्ग के आचार्य सनकादि प्रवृत्तिमार्ग के आचार्य भृगु आदि हैं ये दोनों मार्ग अनादि हैं सनकादि महाराज ने प्रवृत्तिमार्गकी तरफ़ कभी किसी काल में दृष्टि भी नहीं करी जब से उनका आविर्भाव हुआ तब से ही बाल जितेन्द्रिय ब्रह्मचर्य व्रत में स्थित परमहंस हुये विचरते रहते हैं जिस जगह जाते हैं सब देवता विष्णु महेशादि उन के सामने खड़े होजाते हैं और यह सामर्थ्य रखते हैं चाहें जिस देवता को शाप देदें अनुग्रह करदें यह प्रताप ज्ञाननिष्ठा और निवृत्तिका समझना मोक्षमार्ग निवृत्तिमार्गवाले संन्यासी परमहंसोंसे ही मिलता है जो आप प्रवृत्तिबंध हैं दूसरे को कैसे मुक्त करेंगे ॥ ६ ॥

एतांविभूतिंयोगंच ममयोवेत्तितत्त्वतः ॥ सोविकंपेनयोगेन युज्यतेनात्रसंशयः ॥ ७ ॥

एताम् १ मम २ विभूतिम् ३ योगम् ४ च ५ यः ६ तत्त्वतः ७ वेत्ति ८ सः ९ अविकंपेन १० योगेन ११ युज्यते १२ अत्र १३ न १४ संशयः १५ ॥ ७ ॥ उ० + यथार्थ ज्ञान का मुक्ति फल है सो दिखलाते हैं + अ० + इस १ मेरी २ विभूति को और + योग को ४ जो ५ यथार्थ ६ जानता है ७ सो ८ निश्चल ९ योग करके १० युक्त होजाता है ११ अर्थात् संशयविपर्ययरहित होजाता है + इस में १२ नहीं है १३ संशय १४ ॥ ७ ॥

अहंसर्वस्यप्रभवो मत्तःसर्वंप्रवर्तते ॥ इतिमत्वा भजंतेमां बुधाभावसमन्विताः ॥ ८ ॥

सर्वस्य १ प्रभवः २ अहम् ३ मत्तः ४ सर्वम् ५ प्रवर्तते ६ इति ७ मत्वा ८ भावसमन्विताः ९ बुधाः १० माम् ११ भजन्ते १२ ॥ ८ ॥ उ० + संशयविपर्ययरहित भगवद्भक्त ऐसा भगवत् को मानकर भजन करते हैं यह बात फिर भगवत्की

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

कृपासे उनको आत्मज्ञान होजाताहै यह बात कहते हैं चार श्लोकों में + अ०+ सब की १ उत्पत्ति है जिससे २ सो मन्त्रादि + मैं ३ हूं मुझ से ४ ही बुद्धेर्यादि पदार्थ + सब ५ चेष्टा ६ करते हैं अर्थात् सबका प्रेरक अन्तर्यामी है + यह ७ समझकर ८ श्रद्धापूर्वक ९ विद्वान् १० मुझको ११ भजते हैं १२ ॥ ८ ॥

मच्चित्तामद्गतप्राणाबोधयंतःपरस्परम् ॥ कथयंतश्चमांनित्यं तुष्यन्ति च रमन्ति च ॥ ९ ॥

मच्चित्ताः १ मद्गतप्राणाः २ परस्परम् ३ बोधयंतः ४ नित्यम् ५ माम् ६ कथयन्तः ७ च ८ तुष्यन्ति ९ च १० रमन्ति ११ च १२ ॥ ९ ॥ अ० + प्रीतिपूर्वक भजन करनेवालों का लक्षण यह है कि उत्तरोत्तर उनकी वृत्ति इस प्रकार भगवत्स्वरूप में बढ़ती है एक अंक में प्रथम भूमिका वालों का लक्षण है + अ० + मुझ सच्चिदानन्द में है, चित्त जिनका १ मुझ में लगा दिया है प्राण जिन्हों ने २ अर्थात् अपना जीवना मेरे आधीन समझते हैं परस्पर आपस में ३ बोधन करते हैं ४ अर्थात् दो चार भक्त तत्त्व के जिज्ञासु मिलकर विचार करते हैं श्रुति स्मृति युक्ति प्रमाणों करके परस्पर बोधन करते हैं कोई श्रुति प्रमाण देता है कोई स्मृति कोई युक्ति करके सिद्ध करते हैं जब सब भक्तोंका और श्रुति स्मृति युक्तियों का शङ्का समाधानपूर्वक एक पदार्थ भगवत् तत्त्व में सम्मत हो जाता है उसको जानकर जिज्ञासुओं से + नित्य सदा ५ मुझको ६ कहते हैं ७।८ अर्थात् भक्तोंको भगवत्स्वरूपका उपदेश करते रहते हैं और उसी भगवत् स्वरूप के आनन्द में + सन्तोष करते हैं ९। १० अर्थात् वह निरतिशय आनन्द है उस आनन्द से परे विषयानन्द को तुच्छ समझते हैं सदा उसी आनन्द में + रमते हैं ११। १२ अर्थात् उसमें प्रीति रखते हैं सच्चिदानन्द स्वरूप में मग्न रहते हैं ॥ ९ ॥

तेषांसततयुक्तानांभजतांप्रीतिपूर्वकम् ॥ ददामि बुद्धियोगंतंयेनमामुपयांतिते ॥ १० ॥

सततयुक्तानाम् १ प्रीतिपूर्वकम् २ भजताम् ३ तेषाम् ४ तम् ५ बुद्धियोगम् ६ ददामि ७ येन ८ माम् ९ ते १० उपयान्ति ११ ॥ १० ॥ अ० + निरन्तरयुक्त हुये १ प्रीतिपूर्वक २ जो मेरा + भजन करते हैं ३ उनको ४ वह ५ ज्ञानयोग ६

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

दूंगा मैं ७ कि + जिस करके ८ मुझको ९ वे १० प्राप्त होंगे ११+टी० + सो ज्ञानयोग देता हूं ५। ६ ॥ १० ॥

तेषामेवानुकंपार्थमहमज्ञानजंतमः ॥ नाशयाम्यात्मभावस्थोज्ञानदीपेनभास्वता ॥ ११ ॥

तेषाम् १ एव २ अनुकम्पार्थम् ३ अहम् ४ अज्ञानजम् ५ तमः ६ नाशयामि ७ आत्मभावस्थः ८ भास्वता ९ ज्ञानदीपेन १० ॥ ११ ॥ अ० + तिनके १ ही २ भले के लिये ३ मैं ४ अज्ञानसे उत्पत्ति है जिसकी ऐसा जो तम ५।६ अर्थात् संसार तिसको + नाश कर देता हूं ७ बुद्धिकी वृत्ति में स्थित होकर ८ प्रकाशरूप ज्ञान दीप करके ९।१० तात्पर्य जो निरन्तर पूर्व रीति करके मेरा भजन करतेहैं उनको निरतिशय परमानन्द की प्राप्ति के मूलाज्ञान और तूलाज्ञानको मैं नाश कर देता हूं निर्मल बुद्धिकी वृत्तिमें स्थित होकर ऐसा प्रकाश करताहूं कि सब संसार उसको मिथ्या प्रतीत होने लगताहै और आत्मा शुद्ध स्वरूप सच्चिदानन्द निराकार निर्विकार अपरोक्ष होजाताहै ऐसा ज्ञानरूप दीपक उसके हृदयमें प्रज्वलित करता हूं कि अपने आप सब पदार्थ नित्य अनित्य भले प्रकार फुरने लगते हैं फिर विवेक वैराग्यादि साधन चतुष्टय सम्पन्न होकर आत्मज्ञान द्वारा परमानन्द को प्राप्त होजाताहै ॥ ११ ॥

अर्जुनउवाच ॥ परंब्रह्मपरंधामपवित्रंपरमंभवान् ॥ पुरुषंशाश्वतंदिव्यमादिदेवमजंविभुम् ॥ १२ ॥

अर्जुन उवाच + भवान् १ परम् २ ब्रह्म ३ परम् ४ धाम ५ परमम् ६ पवित्रम् ७ पुरुषम् ८ शाश्वतम् ९ दिव्यम् १० आदिदेवम् ११ अजम् १२ विभुम् १३ ॥ १२ ॥ अ० + आप १ पर २ ब्रह्म ३ पर ४ धाम ५ परम ६ पवित्र ७ हो व्यासादि आपको ऐसा कहते हैं और + पुरुष ८ नित्य ९ दिव्य १० आदिदेव ११ अज १२ व्यापक १३ कहते हैं इस श्लोकका अगले श्लोक के साथ संबन्धहै ॥ १२ ॥

आहुस्त्वामृषयःसर्वेदेवर्षिर्नारदस्तथा ॥ असितोदेवलोव्यासःस्वयंचैवब्रवीषिमे ॥ १३ ॥

सर्वे १ ऋषयः २ देवर्षिर्नारदः ३ तथा ४ असितः ५ देवलः ६ व्यासः ७ त्वाम् ८ आहुः ९ स्वयम् १० च ११ एव १२ मे १३ ब्रवीषि १४ ॥ १३ ॥ अ० +

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

इस श्लोक का पिछले श्लोक के साथ संबन्ध है + अ० + सब १ ऋषि २ देवऋषि नारद जी ३ और असित ४।५ देवल ६ व्यासजी ७ आप को ८ ऐसा + कहते हैं ९ कि जैसा पिछले श्लोकमें परब्रह्मसे लेकर विभूतक निरूपणकिया + और आप भी १०।११।१२ मुझसे १३ अपने आप को वैसाही कहते हो १४ कि जैसा आप को व्यासादि कहते हैं ॥ १३ ॥

सर्वमेतदृतंमन्येयन्मांवदसिकेशव ॥ नहितेभगवन्व्यक्तिंविदुर्देवानदानवाः ॥ १४ ॥

केशव १ यत् २ माम् ३ वदसि ४ एतत् ५ सर्वम् ६ ऋतम् ७ मन्ये ८ भगवन् ९ हि १० ते ११ व्यक्तिम् १२ न १३ देवाः १४ विदुः १५ न १६ दानवाः १७ ॥ १४ ॥ अ० + हे केशव! १ जो २ मुझसे ३ कहते हैं आप ४ यह ५ सब ६ सत्य ७ मानता हूं मैं ८ हे भगवन्! ९ बेसन्देह यथार्थ १० आपके ११ स्वरूपको वा प्रभाव को १२ न १३ देवता १४ जानते हैं १५ न १६ दानव १७ तात्पर्य शुद्धस्वरूप परमात्माका विषयवत् कोई भी नहीं जानसक्ता उपाधिसहित स्वरूप भगवत्का विषयवत् जानाजाता है आत्मा स्वयंप्रकाश है ॥ १४ ॥

स्वयमेवात्मनात्मानंवेत्थत्वंपुरुषोत्तम ॥ भूतभावनभूतेशदेवदेवजगत्पते ॥ १५ ॥

पुरुषोत्तम १ भूतभावन २ भूतेश ३ देवदेव ४ जगत्पते ५ स्वयम् ६ एव ७ आत्मना ८ आत्मानम् ९ त्वम् १० वेत्थ ११ ॥ १५ ॥ अ० + हे पुरुषोत्तम! १ हे भूतभावन! २ हे भूतेश! ३ हे देवदेव! ४ हे जगत्पते! ५ आप ६ ही ७ आत्मा करके ८ आत्माको ९ आप १० जानतेहो ११ तात्पर्य जैसे सूर्य स्वयंप्रकाश है सूर्य के देखने में किसी पदार्थ की इच्छा नहीं ऐसेही शुद्ध स्वरूप सच्चिदानन्द भगवत् का आत्मा करके ही जानाजाता है मन वाणी और उनके देवतों का विषय नहीं फिर मनुष्यों का विषय ये कैसे होसक्ताहै + टी० + भूतों के उत्पन्न करनेवाले २ भूतों के ईश्वर ३ देवतों के भी देवता ४ जगत् के स्वामी ५ ये सब हेतुगर्भित विशेषण हैं ॥ १५ ॥

वक्तुमर्हस्यशेषेण दिव्याह्यात्मविभूतयः ॥ याभिर्विभूतिभिर्लोकानिमांस्त्वंव्याप्यतिष्ठसि ॥ १६ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

आत्मविभूतयः १ दिव्याः २ हि ३ अशेषेण ४ वक्तुं ५ अर्हसि ६ याभिः ७ विभूतिभिः ८ इमान् ९ लोकान् १० व्याप्य ११ त्वम् १२ तिष्ठसि १३॥१६॥ + उ० + जब कि अपने स्वरूप को और अपने ऐश्वर्य्य को आपही जानतेहो इस वास्ते आपसे ही आपकी विभूति सुना चाहताहूं + अ० + अपना ऐश्वर्य्य १ दिव्य २। ३ समस्त ४ कहने को ५ योग्यहो ६ अर्थात् जो जो आपकी दिव्य विभूति हैं वे समस्त मुझसे कहिये + जिन विभूति करके ७। ८ इस लोक को ९। १० व्याप्तकर ११ आप १२ स्थित हो अर्थात् जिन जिन विभूति करके इस लोक में आप व्याप्त होरहेहो मैं उनका चिंतन किया चाहता हूं इस वास्ते मुझ से कहो ॥ १६ ॥

कथंविद्यामहंयोगिंस्त्वांसदापरिचिन्तयन् । केषु केषुचभावेषुचिंत्योसिभगवन्मया ॥ १७॥

योगिन् १ कथम् २ त्वाम् ३ सदा ४ परिचिंतयन् ५ अहम् ६ विद्याम् ७ भगवन् ८ मया ९ केषु १० केषु ११ च १२ भावेषु १३ चिंत्यः १४ असि १५ ॥ १७॥ अ० + हे योगीश्वर! १ किस प्रकार २ आप शुद्ध सच्चिदानन्द को ३ सदा ४ चिंतन करताहुआ ५ मैं ६ जानूं ७ अर्थात् इसप्रकार मुझको उपदेश कीजिये कि जिस प्रकार आपका शुद्ध स्वरूप जाना जाय + हे कृष्णचन्द्र! ८ मुझ करके ९ किन पदार्थों में १०। ११। १२। १३ चिंतन करने के योग्य १४ हो आप १५ अर्थात् किस किस पदार्थ का चिंतन करने से अन्तःकरण शुद्धहोकर आपका यथार्थस्वरूप जानाजाता है उन पदार्थोंको मैं जाना चाहता हूं तात्पर्य्य अन्तःकरण की शुद्धि का उपाय अर्जुन बूझता है ॥ १७ ॥

विस्तरेणात्मनोयोगंविभूतिंचजनार्द्दन ॥ भूयः कथयतृप्तिर्हिशृण्वतोनास्तिमेऽमृतम् ॥ १८ ॥

जनार्दन १ विस्तरेण २ आत्मनः ३ योगम् ४ विभूतिम् ५ च ६ भूयः ७ कथय ८ हि ९ अमृतम् १० शृण्वतः ११ मे १२ तृप्तिः १३ न १४ अस्ति १५ ॥ १८॥ + उ० + जब मेरा चित्त बहिर्मुखहो तब भी आपका चिंतन करताहूं इस वास्ते + अ० + हे प्रभो! १ विस्तार करके २ अपना योग ३। ४ और विभूति ५। ६ फिर ७ कहो ८ क्योंकि ९ अमृतरूप १० आपका वचन + सुनने से ११ मेरी १२ तृप्ति १३ नहीं १४ है १५ टी० + दुष्टजनों को जो दुःखदे

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

वा भक्तजनों को आनन्द दे व भक्तजन जिनसे मोक्ष की याचना करें उसको जनार्दन कहते हैं यह नाम श्रीकृष्णचन्द्र महाराजका है १, सर्वज्ञतादि अचिंत्यशक्तियों को योग कहते हैं ५ ऐश्वर्य्य को विभूति कहते हैं जैसे राजा हाथी घोड़े सेनादि ऐश्वर्य से जाना जाताहै ऐसेही ईश्वर अपनी विभूतियों करके जानेजाते हैं और जैसे राजाके मंत्रियों का आश्रय लेनेसे राजा मिलजाता है इसी प्रकार परमेश्वर जो आगे विभूति वर्णन करेंगे उनके आश्रय से शुद्ध सच्चिदानन्द परमेश्वर प्राप्त होजाते हैं श्रीकृष्णचन्द्र इस अध्यायमें वासुदेव और रामचन्द्रादि को अपनी विभूति कहेंगे इस बातका तात्पर्य्य समझना चाहिये अपनी बुद्धि के अनुसार ॥१८॥

श्रीभगवानुवाच ॥ हन्ततेकथयिष्यामि दिव्या ह्यात्मविभूतयः ॥ प्राधान्यतःकुरुश्रेष्ठ नास्त्यन्तो विस्तरस्यमे ॥ १९ ॥

श्रीभगवानुवाच + हन्त १ प्राधान्यतः २ दिव्याः ३ हि ४ आत्मविभूतयः ५ ते ६ कथयिष्यामि ७ कुरुश्रेष्ठ ८ मे ९ विस्तरस्य १० अन्तः ११ न १२ अस्ति १३ ॥ १९ ॥ + अ० + जिज्ञासु जब प्रश्न करताहै पीछे उनके गुरु जिस समय कृपा करके उत्तर दिया चाहते हैं तो उस प्रश्नके आदरार्थ और जिज्ञासु की प्रसन्नता के लिये ऐसा बोलते हैं कि हन्त अर्थात् हां जो तुमने बूझा यह हम ने अंगीकार किया अच्छा बूझाहै अब उसका उत्तर सुनो १ प्रधान प्रधान २ जो जो + दिव्य ३ । ४ मेरी विभूति ५ हैं तिनको + तुझसे कहूंगा ७ हे अर्ज्जुन ! ८ मेरे ९ विस्तारका १० अर्थात् मेरी विभूतियों के विस्तारका + अन्त ११ नहीं १२ है १३ ॥ १९ ॥

अहमात्मागुडाकेशसर्वभूताशयस्थितः ॥ अहमादिश्चमध्यंचभूतानामन्तएवच ॥ २० ॥

गुडाकेश १ सर्वभूताशयस्थितः २ आत्मा ३ अहम् ४ भूतानाम् ५ आदिः ६ च ७ मध्यम् ८ च ९ अन्तः १० एव ११ च १२ ॥ २० ॥ अ० ॥ इस शब्दका अर्थ घनकेश भी है अर्थात् गुंजान बालहों जिस के उसको घनकेश कहते हैं यह नाम अर्ज्जुन का है १ श्रीभगवान् कहते हैं कि हे अर्ज्जुन ! चैतन्य हो अपनी विभूति सुनाताहूं प्रथम सबसे श्रेष्ठ विभूति को सुन + सब भूतों के हृदयमें विराज-

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

मानं २ आत्मा शुद्ध सच्चिदानन्दरूप ३ मैं ४ हूं सदा इसी का ध्यान करना चाहिये और जो इसमें मन न लगे और समझ में न आवे तो स्थूल विभूति मेरी सुन + भूतोंका ५ आदि ६ और ७ मध्य ८ और ९ अन्त १० मैंही ११ । १२ हूं अर्थात् यह समझ कि ये सबभूत मुझसेही हुये मुझमेंही स्थितहैं मुझमेंही लय होंगे तात्पर्य ऐसा चिंतन करना यही परमेश्वरकी उपासनाहै ॥ २० ॥

आदित्यानामहंविष्णुर्ज्योतिषांरविरंशुमान् ॥ मरीचिर्मरुतामस्मिनक्षत्राणामहंशशी ॥ २१ ॥

आदित्यानाम् १ विष्णुः २ अहम् ३ ज्योतिषाम् ४ अंशुमान् ५ रविः ६ मरुताम् ७ मरीचिः ८ अस्मि ९ नक्षत्राणाम् १० शशी ११ अहम् १२ ॥ २१ ॥ अ० + आदित्यों में १ विष्णुनामवाला आदित्य २ मैं ३ हूं + ज्योतियों में ४ किरणवाले ५ श्रीसूर्यनारायण पूर्णब्रह्म शुद्धसच्चिदानन्द मैं हूं ६ मरुद्गणों में ७ मरीचि ८ मैं हूं ९ नक्षत्रों में १० चन्द्र ११ मैं १२ हूं ॥ २१ ॥

वेदानांसामवेदोस्मिदेवानामस्मिवासवः ॥ इन्द्रियाणांमनश्चास्मिभूतानामस्मिचेतना ॥ २२ ॥

वेदानाम् १ सामवेदः २ अस्मि ३ देवानाम् ४ वासवः ५ अस्मि ६ इन्द्रियाणाम् ७ मनः ८ च ९ अस्मि १० भूतानाम् ११ चेतना १२ अस्मि १३ ॥ २२ ॥ अ० + वेदों में १ सामवेद २ मैं हूं ३ देवतों में ४ इन्द्र ५ मैंहूं ६ इन्द्रियों में ७ मन ८ । ९ मैंहूं १० प्राणियों में ११ ज्ञानशक्ति १२ मैंहूं ॥ २२ ॥

रुद्राणांशंकरश्चास्मिवित्तेशोयक्षरक्षसाम् ॥ वसूनांपावकश्चास्मि मेरुःशिखरिणामहम् ॥ २३ ॥

रुद्राणाम् १ शंकरः २ च ३ अस्मि ४ यक्षरक्षसाम् ५ वित्तेशः ६ वसूनाम् ७ पावकः ८ च ९ अस्मि १० शिखरिणाम् ११ मेरुः १२ अहम् १३ ॥ २३ ॥ अ० + रुद्रों में १ श्रीसदाशिवजी महाराज शङ्कर भगवान् शुद्ध सच्चिदानन्द पूर्णब्रह्म २ मैंहूं ३ । ४ यक्ष राक्षसोंमें ५ कुबेर ६ वसुओं में ७ अग्नि मैंहूं ८ । ९ । १० पर्वतों में ११ सुमेरु १२ मैंहूं १३ ॥ २३ ॥

पुरोधसांचमुख्यंमांविद्धिपार्थबृहस्पतिम् ॥ सेनानीनामहंस्कन्दः सरसामस्मिसागरः ॥ २४ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

पार्थ १ पुरोधसाम् २ बृहस्पतिम् ३ माम् ४ मुख्यम् ५ विद्धि ६ सेनानीनाम् ७ च ८ स्कन्दः ९ अहम् १० सरसाम् ११ सागरः १२ अस्मि १३ ॥ २४॥ अ०+हे अर्जुन! १ पुरोहितों में २ बृहस्पति ३ मुझको ४ मुख्य ५ जान तू ६ और सेनाके सरदारों में ७। ८ देवसेनापति स्वामिकार्तिक ९ मैं १० हूं+स्थित जलों में ११ समुद्र १२ मैंहूं १३ ॥ २४ ॥

महर्षीणांभृगुरहंगिरामस्म्येकमक्षरम् ॥ यज्ञानां जपयज्ञोस्मिस्थावराणांहिमालयः ॥ २५ ॥

महर्षीणाम् १ भृगुः २ अहम् ३ गिराम् ४ एकम् ५ अक्षरम् ६ अस्मि ७ यज्ञानाम् ८ जपयज्ञः ९ अस्मि १० स्थावराणाम् ११ हिमालयः १२॥ २५ ॥ अ०+महर्षियों में १ भृगु २ मैं ३ हूं + वाणी में अर्थात् जो बोलने में आवे उसमें ४ एक ५ अक्षर प्रणव ॐ ६ मैं ७ हूं+यज्ञों में ८ जपयज्ञ ९ मैं १० हूं+स्थावरों में ११ हिमालयपर्वत १२ ॥ २५ ॥

अश्वत्थःसर्ववृक्षाणांदेवर्षीणांचनारदः ॥ गन्धर्वाणांचित्ररथः सिद्धानांकपिलोमुनिः ॥ २६ ॥

सर्ववृक्षाणाम् १ अश्वत्थः २ देवर्षीणाम् ३ च ४ नारदः ५ गन्धर्वाणाम् ६ चित्ररथः ७ सिद्धानाम् ८ कपिलः ९ मुनिः १० ॥ २६ ॥ अ०+सबवृक्षों में १ पीपल २ देवऋषियों में ३ नारदजी ४। ५ गन्धर्वों में ६ चित्ररथ ७ सिद्धों में ८ कपिलदेवजी ९ मुनि १० मैंहूं ॥ २६ ॥

उच्चैःश्रवसमश्वानांविद्धिमाममृतोद्भवम् ॥ ऐरावतंगजेन्द्राणांनराणांचनराधिपम् ॥ २७ ॥

अश्वानाम् १ उच्चैःश्रवसम् २ माम् ३ विद्धि ४ अमृतोद्भवम् ५ गजेन्द्राणाम् ६ ऐरावतम् ७ नराणाम् ८ च ९ नराधिपम् १० ॥ २७ ॥ अ०+घोड़ों में १ उच्चैःश्रवानाम घोड़ा २ मुझको ३ जान तू ४ कैसाहै वह घोड़ा कि जब+अमृतके अर्थ समुद्र मथा गयाथा उससमय समुद्रमें से निकलाहै यह विशेषण उच्चैःश्रवाका भी है और ऐरावतकाभी है ५ हाथियों में ६ ऐरावत को ७ मेरी विभूति जान+और नरोंमें राजाको ८।९।१० मेरी विभूति जान तू ॥ २७ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

आयुधानामहंवज्रं धेनूनामस्मिकामधुक्॥ प्रज
नश्चास्मिकन्दर्पः सर्पाणामस्मिवासुकिः॥ २८॥

आयुधानाम् १ अहम् २ वज्रम् ३ धेनूनाम् ४ कामधुक् ५ अस्मि ६ प्रजनः ७ च ८ कन्दर्पः ९ अस्मि १० सर्पाणाम् ११ वासुकिः १२ अस्मि १३॥ २८॥ अ० + शस्त्र हथियारों में १ मैं २ वज्र ३ हूं + गौओं में ४ कामधेनु ५ मैं हूं ६ प्रजाकी उत्पत्तिका जो हेतु ७। ८ कामदेव ९ सो मैंहूं १० विषवाले सर्पों में ११ वासुकि १२ मैंहूं १३॥ २८॥

अनन्तश्चास्मिनागानांवरुणोयादसामहम्॥
पितॄणामर्यमाचास्मियमःसंयमतामहम्॥ २९॥

नागानाम् १ अनन्तः २ च ३ अस्मि ४ यादसाम् ५ वरुणः ६ अहम् ७ पितॄणाम् ८ अर्यमा ९ च १० अस्मि ११ संयमताम् १२ यमः १३ अहम् १४॥ २९॥ अ० + निर्विष नागों में १ शेषजी २। ३ मैं हूं ४ जलचरों में ५ वरुण ६ मैंहूं ७ पितरों में ८ अर्यमा नाम पितर ९। १० मैंहूं ११ दण्ड देनेवालों में १२ यमराज १३ मैं १४ हूं॥ २९॥

प्रह्लादश्चास्मिदैत्यानां कालःकलयतामहम्॥
मृगाणांचमृगेन्द्रोहं वैनतेयश्चपक्षिणाम्॥ ३०॥

दैत्यानाम् १ प्रह्लादः २ च ३ अस्मि ४ कलयताम् ५ कालः ६ अहम् ७ मृगाणाम् च ९ मृगेन्द्रः १० अहम् ११ पक्षिणाम् १२ वैनतेयः १३ च १४॥ ३०॥ अ० + दैत्यों में १ प्रह्लाद २। ३ मैंहूं ४ संख्यावाले पदार्थों में ५ काल ६ मैं ७ हूं + चौपायों में ८। ९ सिंह १० मैं ११ हूं + पक्षियों में १२ गरुड़जी १३। १४॥ ३०॥

पवनःपवतामस्मिरामःशस्त्रभृतामहम्॥ झषाणां
मकरश्चास्मिस्रोतसामस्मिजाह्नवी॥ ३१॥

पवताम् १ पवनः २ अस्मि ३ शस्त्रभृताम् ४ रामः ५ अहम् ६ झषाणाम् ७ मकरः ८ च ९ अस्मि १० स्रोतसाम् ११ जाह्नवी १२ अस्मि १३॥ ३१॥ अ० + वेगवालों में १ वायु २ मैंहूं ३ शस्त्रधारियों में ४ श्रीरामचन्द्रजी महाराज शुद्ध सच्चिदानन्द पूर्ण ब्रह्म ५ मैं ६ हूं + मछलियों में ७ मकर नामवाली मच्छी ८ मैंहूं ९। १० बहनेवाले जलों में ११ श्रीगङ्गा भागीरथी १२ मैंहूं १३॥ ३१॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

सर्गाणामादिरन्तश्चमध्यंचैवाहमर्जुन॥ अध्यात्मविद्याविद्यानांवादःप्रवदतामहम्॥ ३२॥

अर्जुन १ सर्गाणाम् २ आदिः ३ मध्यम् ४ च ५ अन्तः ६ अहम् ७ विद्यानाम् ८ अध्यात्मविद्या ९ प्रवदताम् १० वादः ११ अहम् १२॥ ३२॥ अ० + हे अर्जुन! १ जगत्का २ आदि ३ और मध्य ४। ५ अन्त ६ मैं ७ हूं + विद्याके बीचमें ८ आत्मविद्या वेदान्तशास्त्र ९ वेदान्तशास्त्र में केवल आत्माके बन्ध मोक्षका विचारहै इसी वास्ते इसको अध्यात्मविद्या कहते हैं मोक्षशास्त्र यही है विना इस शास्त्रके पढ़े सुने आत्मा अनात्माका ज्ञान कभी नहीं होता अज्ञान संशय विपर्यय इसी शास्त्रके पढ़ने सुनने से नाश होतेहैं इस शास्त्रका सेवन करना साक्षात् भगवत्का प्रत्यक्ष सेवन करनाहै + चर्चा करनेवालों में १० वाद ११ मैं १२ हूं + टी० + चर्चा तीन प्रकार की हैं जल्प, वितंडा, वाद, जो केवल अपनेही पक्ष में श्रुत्यादिकों का प्रमाण देकर युक्तियों के सहित अपनेही पक्षको सिद्धकिये जाय दूसरे पक्षपर दृष्टि न दे उसको जल्प कहते हैं और जो दूसरे के पक्षमें दोषही कहता चलाजाय अपने पक्षके दोषोंका स्मरण न करे उसको वितंडा कहते हैं और जो अपने और दूसरे पक्षको शंका प्रमाणों के साथ प्रतिपादन करे गुरु शिष्यको बोधके लिये उसको वाद कहते हैं वाद परमार्थ निर्णय के लिये होताहै उसका फल परमानन्द है जल्प वितंडा वाक्यवाद हैं उनका फल दुःखहै जिसका पक्ष चर्चा में दबजायगा बेसन्देह वह दुःखपावेगा और जिसने विद्याके बलसे झूंठी बातको सिद्धकिया वह बेसन्देह पापका भागी होकर परलोक में दुःख पावेगा न्यायशास्त्रादि विद्या अन्य पदार्थ हैं और परमार्थका यथार्थ निर्णय अन्य पदार्थ है क्याहुआ जो किसीने अनजान के सामने अपना झूंठापक्ष सिद्धकरदिया किसी दिन विद्वानों के सामने दबजायगा चर्चाका सार सत्यार्थ है॥ ३२॥

अक्षराणामकारोस्मिद्वन्द्वःसामासिकस्यच॥ अहमेवाक्षयःकालोधाताहंविश्वतोमुखः॥ ३३॥

अक्षराणाम् १ अकारः २ अस्मि ३ सामासिकस्य ४ द्वन्द्वः ५ च ६ अहम् ७ एव ८ अक्षयः ९ कालः १० धाता ११ विश्वतोमुखः १२ अहम् १३॥ ३३ + अ० अक्षरों में १ अकार २ मैंहूं ३ समासों में ४ द्वंद्व समास ५ मैंहीहूं ६। ७। ८ अक्षय ९ काल १० भी मैंहूं पीछे कालके कहा ११ कि जो संख्या में आताहै पल

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

घड़ी दिन रात्रि वर्ष योगों को क्षतकाल कहते हैं यह अक्षय कालका विशेषण है, अथवा परमेश्वरका नाम कालका भी काल है कर्मफलनिधाता ११ विराट् १२ मैं १३ हूं ॥ ३३ ॥

मृत्युःसर्वहरश्चाहमुद्भवश्चभविष्यताम् ॥ कीर्तिः श्रीर्वाक्चनारीणांस्मृतिर्मेधाधृतिःक्षमा ॥ ३४ ॥

मृत्युः १ सर्वहरः २ च ३ अहम् ४ भविष्यताम् ५ उद्भवः ६ च ७ नारीणाम् ८ कीर्तिः ९ श्रीः १० वाक् ११ च १२ स्मृतिः १३ मेधा १४ धृतिः १५ क्षमा १६॥ ३४ ॥ अ० + मृत्यु १ सबका हरनेवाला २ मैं ३ । ४ हूं + होनेवाले पदार्थों में ५ अर्थात् बड़ाई होने के योग्य जो पदार्थ हैं उनमें मोक्षकी प्राप्तिका हेतु उद्भव उत्कर्ष अभ्युदय ६ । ७ मैं हूं + स्त्रियों में ८ कीर्ति ९ अर्थात् महापुरुषों में शम दम औदार्य दानादि गुणों की ख्याति होनी यह कीर्ति भगवत् की विभूति है + लक्ष्मी वा कान्ति वा शोभा १० मधुरवाणी ११ । १२ बहुत दिनों की बात याद रहनी १३ ग्रंथधारणशक्ति १४ क्षुत्पिपासादि समय चित्तमें क्षोभ न होना १५ अपमानादि समय क्षोभ न होना १६ ये सब कीर्ति श्री वाक् स्मृति मेधा धृति क्षमा परमेश्वर की विभूति हैं जिनके आभासमात्र सम्बन्धसे स्त्री पुरुष श्रेष्ठ कहलाते हैं ॥ ३४ ॥

बृहत्सामतथासाम्नां गायत्रीछन्दसामहम् ॥ मासानांमार्गशीर्षोहमृतूनांकुसुमाकरः ॥ ३५ ॥

साम्नाम् १ तथा २ बृहत्साम ३ छन्दसाम् ४ गायत्री ५ अहम् ६ मासानाम् ७ मार्गशीर्षः ८ अहम् ९ ऋतूनाम् १० कुसुमाकरः ११ ॥ ३५ ॥ + उ० + वेदोंमें सामवेद मैंहूं यह श्रीभगवान् ने पीछे कहा अब कहते हैं कि + सामवेद में १ भी २ बृहत् साम ऋचा ३ मैंहूं + छन्दों में ४ गायत्री ५ मैं ४ हूं + महीनों में ७ मार्गशीर्ष अर्थात् अगहन ८ मैं हूं + ऋतु में १० वसन्त ऋतु ११ मैंहूं मीन और मेष का सूर्य जब तक वर्तता है इनहीं दोनों महीनों को वसन्त कहते हैं इसी ऋतु में यह टीका बनी है ॥ ३५ ॥

द्यूतंछलयतामस्मितेजस्तेजस्विनामहम् ॥ जयोस्मिव्यवसायोस्मिसत्त्वंसत्त्ववतामहम् ॥ ३६ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

छलयताम् १ द्यूतम् २ अस्मि ३ तेजस्विनाम् ४ तेजः ५ अहम् ६ जयः ७ अस्मि ८ व्यवसायः ९ अस्मि १० सत्त्ववताम् ११ सत्त्वम् १२ अहम् १३ ॥ ३६ ॥ अ० + छल करनेवालोंमें १ जुआ २ मैंहूं ३ तेजस्वी पुरुषों में ४ तेज ५ मैं ६ हूं + जीतनेवालों में जय ७ मैं हूं ८ निश्चय करनेवालों में + आत्मनिश्चय ९ मैं हूं १० सतोगुणी पुरुषोंमें ११ सत्त्वगुण १२ मैं हूं १३ टी० + छलिया लोगों के लिये जुआ अपनी विभूति परमेश्वर ने कही है ॥ ३६ ॥

वृष्णीनांवासुदेवोस्मिपाण्डवानांधनंजयः ॥ मुनीनामप्यहंव्यासः कवीनामुशनाःकविः ॥ ३७ ॥

वृष्णीनाम् १ वासुदेवः २ अस्मि ३ पांडवानाम् ४ धनंजयः ५ मुनीनाम् ६ अपि ७ अहम् ८ व्यासः ९ कवीनाम् १० उशना ११ कविः १२ ॥ ३७ ॥ अ० + वृष्णियों में १ वासुदेव २ मैं हूं ३ अर्थात् श्रीकृष्णचन्द्र महाराज शुद्ध सच्चिदानन्द पूर्णब्रह्म मूर्तिमान् वसुदेवजी के पुत्र कि जो अर्ज्जुन को उपदेश करते हैं यही वासुदेव हैं + पाण्डवन में ४ अर्ज्जुन ५ कि जिसको भगवान् उपदेश करते हैं + मुनीश्वरोंमें ६।७ मैं ८ श्रीवेदव्यासजी ९ हूं + कवि पुरुषोंमें १० शुक्राचार्य ११ कवि १२ मैं हूं ॥ ३७ ॥

दण्डोदमयतामस्मि नीतिरस्मिजिगीषताम् ॥ मौनंचैवास्मिगुह्यानांज्ञानंज्ञानवतामहम् ॥ ३८ ॥

दमयताम् १ दण्डः २ अस्मि ३ जिगीषताम् ४ नीतिः ५ अस्मि ६ गुह्यानाम् ७ मौनम् ८ च ९ एव १० अस्मि ११ ज्ञानवताम् १२ ज्ञानम् १३ अहम् १४ ॥ ३८ ॥ अ० + निरोध करनेवालों में १ दण्ड २ मैं हूं ३ जीतनेकी इच्छावालों में ४ नीति ५ मैंहूं ६ गुप्तपदार्थों में चुपरहना ८ । ९ । १० मैंहूं ११ ज्ञानवालों में १२ ब्रह्मज्ञान १३ आत्मज्ञान मैं १४ हूं + दूसरे का स्वरूप और ऐश्वर्य जाननेसे किसी को क्या मिलताहै अपना स्वरूप और अपना ऐश्वर्य जानना चाहिये ॥ ३८ ॥

यच्चापिसर्वभूतानांबीजंतदहमर्जुन ॥ नतदस्तिविनायत्स्यान्मयाभूतंचराचरम् ॥ ३९ ॥

सर्वभूतानाम् १ यत् २ च ३ अपि ४ बीजम् ५ तत् ६ अहम् ७ अर्ज्जुन ८ चराचरम् ९ भूतम् १० मया ११ विना १२ यत् १३ स्यात् १४ तत् १५ न १६ अस्ति

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

१७ ॥ ३९ ॥ अ० + सब भूतोंका १ जो २ । ३ । ४ बीज ५ सो ६ मैं ७ हूं + हे अर्ज्जुन ! ८ चराचर ९ सत्तामात्र १० मेरे ११ बिना १२ जो १३ हो १४ सो १५ नहीं १६ है १७ तात्पर्य ऐसा पदार्थ कोई नहीं कि जिसमें सत् चित् आनन्द ये तीन अंश भगवान् के न हों ॥ ३९ ॥

नान्तोस्तिममदिव्यानांविभूतीनांपरन्तप ॥ एष तूद्देशतःप्रोक्तोविभूतेर्विस्तरोमया ॥ ४० ॥

परन्तप १ मन २ दिव्यानाम् ३ विभूतीनाम् ४ अन्तः ५ न ६ अस्ति ७ एष ८ तु ९ विभूतेः १० विस्तरः ११ उद्देशतः १२ मया १३ प्रोक्तः १४ ॥ ४० ॥ अ० + हे अर्ज्जुन ! १ मेरी २ दिव्य ३ विभूतियों का ४ अन्त ५ नहीं ६ है ७ और जो वर्णन किया + यह ८ तो ९ विभूतियों का १० विस्तार ११ संक्षेप से १२ मैंने १३ कहा है १४ ॥ ४० ॥

यद्यद्विभूतिमत्सत्त्वं श्रीमदूर्जितमेववा ॥ तत्तदेवावगच्छत्वंममतेजोंशसम्भवम् ॥ ४१ ॥

यत् १ यत् २ सत्त्वम् ३ विभूतिमत् ४ श्रीमत् ५ वा ६ ऊर्जितम् ७ एव ८ तत् ९ तत् १० एव ११ मम १२ तेजोंशसंभवम् १३ त्वम् १४ अवगच्छ १५ ॥ ४१ ॥ उ० + जो तू मेरे ऐश्वर्य का विस्तार जानाचाहताहै तो इसप्रकार जान + अ० + जो १ जो २ पदार्थ ३ ऐश्वर्यवान् ४ श्रीमान् ५ वा ६ किसी अन्य गुणकरके + श्रेष्ठ ७ हो ८ कहलाताहै + तिस ९ तिसको १० ही ११ मेरे १२ तेजके अंश से उत्पन्न हुआ १३ तू १४ जान १५ तात्पर्य संसार में जो जो पदार्थ श्रेष्ठहैं सब भगवत् की विभूतिहैं जो जिस गुण करके श्रेष्ठ समझा जाताहै वह गुण भगवत् काही अंश है आनन्दो ब्रह्म इस श्रुतिसे स्पष्ट प्रतीतहोताहै कि आनन्द ब्रह्महै तो फिर जो जो पदार्थ विशेष आनन्दजनक हैं सो भगवत्की विभूति हैं ॥ ४१ ॥

अथवाबहुनैतेनकिंज्ञानेनतवार्जुन ॥ विष्टभ्याहमिदंकृत्स्नमेकांशेनस्थितोजगत् ॥ ४२ ॥

अर्ज्जुन १ अथवा २ एतेन ३ बहुना ४ ज्ञानेन ५ तव ६ किम् ७ अहम् ८ इदम् ९ कृत्स्नम् १० जगत् ११ एकांशेन १२ विष्टभ्य १३ स्थितः १४ ॥ ४२ ॥ अ० + हे अर्ज्जुन ! १ अथवा २ इस ३ बहुत ४ पृथक् पृथक् + ज्ञानकरके ५ तुमको ६ क्या ७ काम है ऐसे समझ कि + मैं ८ इस ९ समस्त १० जगत् को ११ एक

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

अंश से १२ धारण करके १३ स्थितहूं १४ तात्पर्य यह सब जगत् भगवत् के एक अंश में कल्पितहै भगवत् से जुदा नहीं जगत् में जो आनन्द प्रतीत होता है यही प्रभु का अंश है अंश से अंशी का ज्ञान जल्द होताहै ॥ ४२ ॥

इति श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सुब्रह्मविद्यायांयोगशास्त्रेश्रीकृष्णार्जुन संवादेविभूतियोगोनामदशमोऽध्यायः १० ॥

स्वामी आनन्दगिरिकृत परमानन्दप्रकाशिका टीका में दशवां अध्याय समाप्त हुआ १० ॥

ग्यारहवें अध्यायका प्रारम्भ हुआ ॥

श्रीपरमात्मनेनमः ॥ अर्जुनउवाच ॥ मदनुग्रहाय परमं गुह्यमध्यात्मसंज्ञितम् ॥ यत्त्वयोक्तंवचस्तेन मोहोयंविगतोमम ॥ १ ॥

अर्जुनउवाच + मदनुग्रहाय १ परमम् २ गुह्यम् ३ अध्यात्मसंज्ञितम् ४ यत् ५ वचः६त्वया७उक्तम्८तेन९अयम्१०मम११मोहः१२विगतः१३॥१॥उ० + पिछले अध्याय में श्रीभगवान् ने कहा कि यह जगत् समस्त मेरे एक अंशमें कल्पित है यह सुन अर्ज्जुन को इच्छा हुई कि विश्वरूप श्रीभगवान् का देखना चाहिये इस वास्ते अर्ज्जुन श्रीभगवान् की स्तुति करताहुआ बोलाहै चारमन्त्रोंमें + अ० + मेरे अनुग्रह के वास्ते अर्थात् मेरा शोक दूर करनेकेलिये १ परमार्थनिष्ठावाला २ गुप्त ३ आत्मा अनात्मा का ज्ञान हो जिससे ४ ऐसा + जो ५ वचन ६ आपने ७ कहा ८ तिस वचन करके ९ यह १० मेरा ११ मोह १२ गया १३ अर्थात् इन को मैं मारता हूं ये मारे जाते हैं इस प्रकार जो शुद्ध निर्विकार आत्माको कर्त्ता कर्म समझता था यह भ्रांति मेरी आपकी कृपासे दूर हुई मैंने जाना कि आत्मा शुद्ध सच्चिदानन्द निर्विकार है कर्ता कर्म भ्रांति से प्रतीत होताहै जैसे शुक्ति में रजत रज्जु में सर्प आकाश में नीलता नाव में बैठे मंदिरों का चलना प्रतीत होता है इसी प्रकार आत्मा विकारवान् प्रतीत होता है वास्तव आत्मा निर्विकार है यह मैं समझा ॥ १ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

भवाप्ययौहिभूतानांश्रुतौविस्तरशोमया॥ त्वत्तः कमलपत्राक्षमाहात्म्यमपिचाव्ययम् ॥ २ ॥

कमलपत्राक्ष १ त्वत्तः २ मया ३ विस्तरशः ४ भूतानाम् ५ भवाप्ययौ ६ हि ७ श्रुतौ ८ माहात्म्यम् ९ च १० अपि ११ अव्ययम् १२ ॥ २ ॥ अ० + हे भगवन्! १ आपसे २ मैंने ३ विस्तारपूर्वक ४ भूतोंकी ५ उत्पत्ति और लय ६ इन दोनों को + सुना ८ अर्थात् सब भूतोंकी उत्पत्ति आपसे ही है और तुम्हारे ही स्वरूप में लय होजाते हैं सब भूत यह भी मैंने सुना और समझा + और माहात्म्य ९। १० भी ११ आपका + अक्षय १२ सुना तात्पर्य आप जगत्को रचो भी हो और पालन संहार भी करो हो शुभाशुभ कर्म्मोंका फल भी देतेहो बन्ध मोक्ष सब आपके आधीन हैं जैसी भक्तोंकी इच्छा होतीहै उनके वास्ते वैसे ही नानारूप धारण करते हो वैसेही चरित्र करते हो ऐसे विषमव्यवहार में भी आप सदा अकर्ता निर्विकार निर्लेप उदासीन रहते हो यही आपका माहात्म्यहै करने को न करने को और का और करदेने को जो समर्थ उसी को ईश्वर कहतेहैं ऐसे आपहीहैं आपकी कृपासे मैंने अब आपका माहात्म्य सुनकर आपकोजाना॥२॥

एवमेतद्यथात्थत्वमात्मानंपरमेश्वर ॥ द्रष्टुमिच्छामितेरूपमैश्वरंपुरुषोत्तम ॥ ३ ॥

परमेश्वर १ यथा २ आत्मानम् ३ आत्थ ४ त्वम् ५ एतत् ६ एवम् ७ पुरुषोत्तम ८ ते ९ ऐश्वरम् १० रूपम् ११ द्रष्टुम् १२ इच्छामि १३ ॥ ३ ॥ अ० + हे परमेश्वर! १ जैसा २ आत्माको ३ कहते हो ४ आप ५ यह ६ इसी प्रकार है ७ अर्थात् वे सन्देह आप अचिंत्यशक्तिमान् हैं + हे प्रभो! ८ आपके ९ ऐश्वर्य १० रूपके ११ देखने की १२ इच्छा करताहूं १३ अर्थात् आपका ऐश्वर्य और विश्वरूप देखा चाहताहूं ज्ञान ऐश्वर्य बल वीर्य शक्ति तेज इनकरके युक्त आपका रूप देखा चाहता हूं परमार्थदृष्टि में आप निराकार पूर्ण हैं उसी स्वरूप को मूर्त्तिमान् देखा चाहताहूं यद्यपि यह बात असंभव है परन्तु आप समर्थ हो दिखा सक्ते हो ॥ ३ ॥

मन्यसेयदितच्छक्यं मयाद्रष्टुमितिप्रभो ॥ योगेश्वरततोमेत्वं दर्शयात्मानमव्ययम् ॥ ४ ॥

प्रभो १ योगेश्वर २ यदि ३ मया ४ तत् ५ द्रष्टुम् ६ शक्यम् ७ मन्यसे ८ ततः ९

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

मे १० त्वम् ११ अव्ययम् १२ आत्मानम् १३ दर्शय १४ इति १५ ॥ ४ ॥ उ० + यदि आपकी दृष्टि में उस रूपके देखने का मैं अधिकारी हूं तो दिखाइये + अ० + हे समर्थ! १ हे योगेश्वर! २ यदि ३ मुझ करके ४ सो रूप ५ देखनेको ६ समर्थ ७ समझो ८ अर्थात् उस रूप को मैं इन नेत्रों करके देखसक्ता हूं + तो ९ मुझे १० आप ११ निर्विकार १२ आत्माको १३ दिखाइये १४ यह १५ मेरा तात्पर्य है ॥ ४ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ पश्यमेपार्थरूपाणि शतशोथसहस्रशः ॥ नानाविधानिदिव्यानि नानावर्णाकृतीनिच ॥ ५ ॥

श्रीभगवानुवाच + पार्थ १ शतशः २ अथ ३ सहस्रशः ४ दिव्यानि ५ मे ६ रूपाणि ७ पश्य ८ नाना ९ विधानि १० च ११ नाना १२ वर्णाकृतीनि १३ ॥ ५ ॥ अ० + श्रीभगवान् बोले कि + हे अर्जुन! १ सैकरों हजारों २ । ३ । ४ दिव्य ५ मेरे ६ रूपोंको ७ देख ८ नानाप्रकार के ९ भेद हैं १० और ११ नानाप्रकार के १२ वर्ण नील पीतादि और आकृतिहैं जिसमें १३ ऐसा रूप देख वह विश्वरूप एकही था परन्तु नाना प्रकार के जो उसमें भेदथे इसवास्ते श्लोकमें रूपका बहुवचन है रूपाणि इति ॥ ५ ॥

पश्यादित्यान्वसून्रुद्रानश्विनौमरुतस्तथा ॥ बहून्यदृष्टपूर्वाणिपश्याश्चर्याणिभारत ॥ ६ ॥

भारत १ आदित्यान् २ वसून् ३ रुद्रान् ४ अश्विनौ ५ मरुतः ६ पश्य ७ तथा ८ बहूनि ९ अदृष्टपूर्वाणि १० आश्चर्य्याणि ११ पश्य १२ ॥ ६ ॥ अ० + हे अर्जुन! १ बारह सूर्यों को २ आठ वसुओंको ३ ग्यारह रुद्रोंको ४ दोनों अश्विनीकुमारों को ५ उन्चास मरुद्गणों को ६ देख ७ और ८ बहुत ९ पदार्थ जो तुमने और औरों ने कभी + नहीं देखे हैं १० ऐसे + आश्चर्यरूपों को ११ देख १२ अब मैं दिखाता हूं ॥ ६ ॥

इहैकस्थंजगत्कृत्स्नं पश्याद्यसचराचरम् ॥ मम देहेगुडाकेशयच्चान्यद्द्रष्टुमिच्छसि ॥ ७ ॥

गुडाकेश १ इह २ एकस्थम् ३ अद्य ४ मम ५ देहे ६ सचराचरम् ७ कृत्स्नम् ८ जगत् ९ पश्य १० यत् ११ च १२ अन्यत् १३ द्रष्टुम् १४ इच्छसि १५ ॥ ७ ॥ +

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

उ०+समस्त भूत भविष्यत् वर्त्तमानकालकी व्यवस्था तुझको दिखाताहूं जो असंख्यात जन्मोंमें तू या और कोई नहीं देखसक्ता वह सब तनक देरमें दिखाता हूं+ हे अर्ज्जुन! १ इसी जगह २ मुझ एकमें स्थित ३ अभी ४ मेरे ५ देहमें ६ स्थावर जंगम ७ सम्पूर्ण ८ जगत् को ९ अर्थात् कार्य कारण के सहित समस्त जगत् को+देख १० और जो ११ । १२ अन्य पदार्थ के देखने की १३ । १४ इच्छा करता है तू १५ अर्थात् इस जगत्का आसरा क्याहै कैसे उत्पत्ति हुआ है कैसे इसकी स्थिति है कैसे लय होता है उपादान इसका क्या है कैसे कैसे यह रूप बदलताहै इस लड़ाईमें किसकी जीतहोगी हे अर्ज्जुन! जो तेरी इच्छा हो सब देख जो मैं अपनी इच्छा से दिखाताहूं सो देख और जो तेरी इच्छा हो सो भी देखले ऐसा समय मिलना कठिन है+टी०+गुडाका नाम निद्रा का है अर्जुन के निद्रा वश में थी इसहेतुसे गुडाकेश अर्ज्जुन का नाम है॥ ७॥

नतुमांशक्यसेद्रष्टुमनेनैवस्वचक्षुषा॥ दिव्यंददामितेचक्षुः पश्यमेयोगमैश्वरम्॥ ८॥

अनेन १ चक्षुषा २ माम् ३ एव ४ द्रष्टुम् ५ न ६ शक्यसे ७ ते ८ तु ९ दिव्यम् १० चक्षुः ११ ददामि १२ मे १३ योगम् १४ ऐश्वरम् १५ पश्य १६॥ ८॥

उ०+अर्ज्जुन ने कहाथा कि वह रूप मैं देखसक्ताहूं या नहीं श्रीभगवान् कहते हैं कि इन नेत्रों से तो नहीं देखसक्ता दिव्यचक्षु मैं देता हूं तिनकरके देखेगा+ अ०+इन नेत्रों करके १ । २ मुझको ३ बेसन्देह ४ देखने को ५ नहीं ६ समर्थ है तू ७ परन्तु तुझको ८ । ९ दिव्यचक्षु १० । ११ देता हूं १२ मेरे १३ योग १४ ऐश्वर्य्य को १५ देख १६ किसीलोक में जो देखने सुनने में न आवे उसको दिव्य अलौकिक कहते हैं जो बात सम्भव न हो वह बात समझ में आजावे जिस करके उसको योग कहतेहैं जीव से जो बात न हो सके ईश्वरही में वह बात पावे और जिस करके जीव से जुदा ईश्वर पहचाना जावे उसको ऐश्वर्य्य कहते हैं कि जिसको असाधारण लक्षण भी ईश्वर कहते हैं ईश्वर का एक साधारण लक्षण है एक असाधारण साधारण वह कि जो ईश्वर में भी पावे और जीव में भी पावे जैसे कंसादि का मारना गोवर्द्धनका उठालेना बहुरूपहोजाना इत्यादि कर्म तो जीव भी करसक्ता है रावणादि की कथा कैलास का उठालेना इत्यादि बहुत प्रसिद्धहैं परन्तु विश्वरूप जीव नहीं दिखासक्ता यह ईश्वर का असाधारण लक्षण है॥ ८॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

संजयउवाच ॥ एवमुक्त्वाततोराजन्महायोगेश्वरोहरिः॥ दर्शयामासपार्थायपरमंरूपमैश्वरम्॥ ९ ॥

संजयउवाच ॥ राजन् १ महायोगेश्वरः २ हरिः ३ एवम् ४ उक्त्वा ५ ततः ६ पार्थाय ७ परमम् ८ ऐश्वरम् ९ रूपम् १० दर्शयामास ११॥९॥ + उ० + संजय धृतराष्ट्र से कहता है कि + अ० + हे राजन्! १ महायोगेश्वर २ व्रजचन्द्र ३ इस प्रकार ४ पूर्वोक्त + कहकर ५ फिर ६ अर्जुन को ७ परम ८ ऐश्वर्य ९ रूप १० दिखाते भये ११ श्रीभगवान् ने परम अद्भुत रूप अर्जुनको दिखाया ८ ॥ ९ ॥

अनेकवक्त्रनयनमनेकाद्भुतदर्शनम् ॥ अनेकदिव्याभरणंदिव्यानेकोद्यतायुधम् ॥ १० ॥

अनेकवक्त्रनयनम् १ अनेकाद्भुतदर्शनम् २ अनेकदिव्याभरणम् ३ दिव्यानेकोद्यतायुधम् ४ ॥ १० ॥ उ० + उस विश्वरूप के ये विशेषण हैं + अ० + अनेक मुख नेत्र हैं जिसमें १ अनेक अद्भुत आश्चर्य करनेवाले दर्शन हैं जिसमें २ अनेक दिव्य गहने हैं जिसमें ३ अनेक दिव्य शस्त्र उठायेहुये हैं जिसमें ४ ऐसा रूप श्रीमहाराज का था कि जो अर्जुनने देखा ॥ १० ॥

दिव्यमाल्याम्बरधरंदिव्यगन्धानुलेपनम् ॥ सर्वाश्चर्यमयंदेवमनन्तंविश्वतोमुखम् ॥ ११ ॥

दिव्यमाल्याम्बरधरम् १ दिव्यगन्धानुलेपनम् २ सर्वाश्चर्यमयम् ३ देवम् ४ अनन्तम् ५ विश्वतोमुखम् ६ ॥ ११ ॥ अ० + दिव्य माला वस्त्र धारण कर रक्खे हैं जिसने १ दिव्य गंधका लेपनहै जिसके २ सब आश्चर्यरूपहैं ३ प्रकाशरूप ४ नहीं है अन्त जिसका ५ सब ओर हैं मुख जिसमें ॥ ११ ॥

दिविसूर्यसहस्रस्यभवेद्युगपदुत्थिता ॥ यदिभाःसदृशीसास्याद्भासस्तस्यमहात्मनः ॥ १२ ॥

यदि १ दिवि २ सूर्यसहस्रस्य ३ युगपद् ४ उत्थिता ५ भवेत् ६ तस्य ७ महात्मनः ८ भासः ९ सा १० भाः ११ सदृशी १२ स्यात् १३ ॥ १२ ॥ उ० + उस विश्वरूप का प्रकाश ऐसा था + अ० + जो १ आकाश में २ हज़ार सूर्य की ३ एकबारही ४ प्रभा उदय ५ हो ६ तो + तिस ७ महात्मा की ८ प्रभाको ९ सो १० प्रभा ११ बराबर १२ हो १३ न भी हो इत्यभिप्रायः क्योंकि यह अनुपमरूपहै ॥ १२ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

तत्रैकस्थंजगत्कृत्स्नंप्रविभक्तमनेकधा ॥ अपश्य द्देवदेवस्यशरीरेपाण्डवस्तदा ॥ १३ ॥

तत्र १ एकस्थम् २ अनेकधा ३ प्रविभक्तम् ४ कृत्स्नम् ५ जगत् ६ तदा ७ पांडवः ८ देव देवस्य ९ शरीरे १० अपश्यत् ११॥१३॥ अ० + तिस विश्वरूपमें १ एक केही विषे स्थित २ अनेक प्रकार का ३ जुदा जुदा ४ समस्त ५ जगत्को ६ तिस कालमें ७ अर्ज्जुन ८ देवतों के भी जो देवता उन देवदेव के ९ शरीरमें १० देखता भया ११ + टी० + पितर मनुष्य गंधर्वादि को ३ । ४ जगत् में जितने पदार्थ हैं अर्ज्जुन को सब भगवत् के शरीर में देखते थे इत्यभिप्रायः ॥ १३ ॥

ततःसविस्मयाविष्टोहृष्टरोमाधनंजयः ॥ प्रणम्य शिरसादेवंकृतांजलिरभाषत ॥ १४ ॥

ततः १ सः २ धनंजयः ३ विस्मयाविष्टः ४ । ५ हृष्टरोमा ६ कृतांजलिः ७ देवम् ८ शिरसा ९ प्रणम्य १० अभाषत ११ ॥ १४ ॥ उ० + जब अर्ज्जुन ने ऐसा स्वरूप देखा + अ० + पीछे उसके १ अर्ज्जुन आश्चर्य करके युक्त हुआ ४ । ५ अर्थात् आश्चर्य मानता हुआ + ऐसा बली प्रफुल्लित होगये हैं रोम जिस के ६ करी है अंजलि जिसने ७ अर्थात् दोनों हाथ जोड़कर उसी + देव को ८ शिरसे ९ प्रणाम करके १० अर्थात् शिर झुकाकर नमस्कार करके + बोलता भया ११ अर्थात् यह बोला कि जो आगे सत्रह श्लोकों में कहनाहै ॥ १४ ॥

अर्जुनउवाच ॥ पश्यामिदेवांस्तवदेवदेहे सर्वांस्तथाभूतविशेषसंघान् ॥ ब्रह्माणमीशंकमलासनस्थमृषींश्चसर्वानुरगांश्चदिव्यान् ॥ १५ ॥

अर्ज्जुनउवाच ॥ देव १ तव २ देहे ३ सर्वान् ४ देवान् ५ तथा ६ भूतविशेषसंघान् ७ कमलासनस्थम् ८ ईशम् ९ ब्रह्माणम् १० च ११ सर्वान् १२ ऋषीन् १३ दिव्यान् १४ उरगान् १५ च १६ पश्यामि १७ ॥ १५ ॥ उ० + जैसा विश्वरूप अर्ज्जुनको दीखा उसको कहताहै सत्रह श्लोकों में + अ० + हे देव! १ आप के २ शरीरमें ३ सब देवतों को ४ । ५ और भूतोंके विशेष समुदायों को अर्थात् राजादिकोंको ६ । ७ । ८ । ९ । १० । ११ सब १२ वशिष्ठादि + ऋषियोंको १३ दिव्य १४ तक्षकादि + नागों को १५ भी १६ देखताहूं मैं १७ + टी० +

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

आपकी नाभिमें जो कमल उसपर ब्रह्माजी को विराजमान देखताहूं ॥ १५ ॥

अनेकबाहूदरवक्त्रनेत्रं पश्यामित्वांसर्वतोऽनंतरूपम् ॥ नांतंनमध्यंनपुनस्तवादिं पश्यामिविश्वेश्वरविश्वरूप ॥ १६ ॥

विश्वेश्वर १ विश्वरूप २ तव ३ न ४ आदिम् ५ पुनः ६ न ७ मध्यम् ८ न ९ अन्तम् १० पश्यामि ११ सर्वतः १२ अनन्तरूपम् १३ त्वाम् १४ अनेकबाहूदरवक्त्रनेत्रम् १५ पश्यामि ॥ १६ ॥ अ० + हे विश्वके ईश्वर! १ हे विश्वरूप! २ आपका ३ न ४ आदि ५ और ६ न ७ मध्य ८ न ९ अन्त १० देखता हूं ११ सब ओरसे १२ अनन्त रूपवाला १३ आपको १४ अनेक हाथ पेट मुख नेत्रहैं जिसके १५ ऐसा आपको + देखताहूं ॥ १६ ॥

किरीटिनंगदिनंचक्रिणंच तेजोराशिंसर्वतोदीप्तिमन्तम् ॥ पश्यामित्वांदुर्निरीक्ष्यं समन्ताद्दीप्तानलार्कद्युतिमप्रमेयम् ॥ १७ ॥

त्वाम् १ समंततः २ किरीटिनम् ३ गदिनम् ४ चक्रिणम् ५ च ६ तेजोराशिम् ७ सर्वतः ८ दीप्तिमन्तम् ९ दुर्निरीक्ष्यम् १० दीप्तानलार्कद्युतिम् ११ अप्रमेयम् १२ पश्यामि १३ ॥ १७ ॥ अ० + आपको १ सबओरसे २ मुकुटवाला ३ गदावाला ४ चक्रवाला ५ और ६ तेजका पुंज ७ सब ओरसे ८ दीप्तिमान् ९ दुःखकरके देखाजाताहै अर्थात् उसका देखना बहुत कठिन प्रतीत होताहै १० चैतन्य अग्नि सूर्यकीप्रभावत् प्रभाहै उसकी ११ प्रमाण नहीं होसक्ता उसका कि इस स्वरूपकी इतनी चौड़ाई लम्बाई १२ ऐसा आपको + देखताहूं १३ तुमको पश्यामि यह क्रिया सबकेसाथ लगती है जितने त्वाम् एक अंकवाले पदके विशेषणहैं ॥ १७ ॥

त्वमक्षरंपरमंवेदितव्यं त्वमस्यविश्वस्यपरंनिधानम् ॥ त्वमव्ययःशाश्वतधर्मगोप्ता सनातनस्त्वंपुरुषोमतोमे ॥ १८ ॥

त्वम् १ परमम् २ अक्षरम् ३ वेदितव्यम् ४ त्वम् ५ अस्य ६ विश्वस्य ७ परम् ८

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

निधानम् ९ त्वम् १० अव्ययः ११ शाश्वतधर्मगोप्ता १२ सनातनः १३ पुरुषः १४ त्वम् १५ मे १६ मतः १७॥ १८॥ उ० + आपकी यह योगशक्ति देखने से तौ मैं अब यह अनुमान करताहूं कि + अ० + आप १ परम् २ ब्रह्म ३ हो मुमुक्षु करके + जानने के योग्य ४ आप ५ हीहो इस ६ विश्वका ७ परम् ८ आसरा ९ भी आपही हो + और + आप १० नित्य धर्म के पालन करनेवाले १२ सनातन १३ पुरुष १४ आप १५ हीहो + मेरी १६ समझ से १७ वेद भी ऐसाही प्रतिपादन करते हैं॥ १८॥

अनादिमध्यान्तमनन्तवीर्यमनन्तबाहुंशशिसूर्यनेत्रम्॥ पश्यामित्वांदीप्तहुताशवक्त्रं स्वतेजसाविश्वमिदंतपंतम्॥ १९॥

त्वाम् १ पश्यामि २ अनादिमध्यान्तम् ३ अनन्तवीर्यम् ४ अनन्तबाहुम् ५ शशिसूर्यनेत्रम् ६ दीप्तहुताशवक्त्रम् ७ स्वतेजसा ८ इदम् ९ विश्वम् १० तपन्तम् ११॥ १९॥ अ० + आपको १ ऐसा + देखताहूं मैं २ कि जिसके विशेषण ये हैं + नहीं है आदि मध्य अन्त जिसका ३ अनन्त पराक्रमहै जिसका ४ अनन्त भुजाहैं जिसकी ५ चन्द्र सूर्य्य नेत्र हैं जिसके ६ जलतीहुई लपट उठतीहुई अग्नि मुखमें है जिसके ७ अपने तेजकरके ८ इस विश्वको ९।१० तपातेहुये ११ मुझको दीखतेहो॥ १९॥

द्यावापृथिव्योरिदमन्तरंहि व्याप्तंत्वयैकेनदिशश्चसर्वाः॥ दृष्ट्वाद्भुतंरूपमुग्रंतवेदं लोकत्रयंप्रव्यथितंमहात्मन्॥ २०॥

महात्मन् १ द्यावापृथिव्योः २ इदम् ३ अन्तरम् ४ एकेन ५ त्वया ६ हि ७ व्याप्तम् ८ सर्वाः ९ दिशः १० च ११ तव १२ इदम् १३ अद्भुतम् १४ उग्रम् १५ रूपम् १६ दृष्ट्वा १७ लोकत्रयम् १८ प्रव्यथितम् १९॥ २०॥ अ० + हे भगवन्! १ आकाश पृथिवी का २ यह ३ अन्तरिक्ष ४ अकेले ५ आप करके ६ ही ७ व्याप्त ८ है और पूर्वादि दशों दिशा १०। ११ भी आप करके व्याप्त होरही हैं अर्थात् सब जगत् में आपही पूर्ण होरहेहो + आप का १२ यह १३ अद्भुत १४ क्रूर १५ रूप १६ देखकर १७ तीनों लोक १८ भयको प्राप्तहैं १९ ऐसा मैं आपको देखता हूं॥ २०॥

Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

अमीहित्वांसुरसंघाविशन्ति केचिद्भीताःप्रांज-लयोगृणन्ति ॥ स्वस्तीत्युक्त्वामहर्षिसिद्धसंघाःस्तुवंतित्वांस्तुतिभिःपुष्कलाभिः ॥ २१ ॥

अमी १ सुरसंघाः २ त्वाम् ३ हि ४ विशन्ति ५ केचित् ६ भीताः ७ प्रांजलयः ८ स्वस्ति ९ इति १० उक्त्वा ११ गृणंति १२ महर्षिसिद्धसंघाः १३ पुष्कलाभिः १४ स्तुतिभिः १५ त्वाम् १६ स्तुवंति १७ ॥ २१ ॥ अ० + वे १ देवतों के समूह २ तुमको ही ३ । ४ प्रवेश होते हैं ५ अर्थात् आपको देवतों ने अपना आश्रय समझ रक्खाहै आपकी शरणको प्राप्त हैं और उनमें से + कोई ६ भयको प्राप्त हुये ७ दोनों हाथ जोड़ रक्खे हैं जिन्होंने ८ स्वस्ति ९ यह १० शब्द + कहकर ११ अर्थात् आपका कल्याण भलाहो यह कहते हुये आपकी + प्रार्थना कर रहे हैं १२ अर्थात् आपकी जयहो जयहो आप हमारी रक्षाकरो यह कह रहेहैं और + बड़े बड़े ऋषीश्वर सिद्धों के समूह १३ बड़े बड़े १४ स्तोत्रों करके १५ आपकी १६ स्तुति कर रहे हैं १७ ॥ २१ ॥

रुद्राऽऽदित्यावसवोयेचसाध्याविश्वेऽश्विनौमरुतश्चोष्मपाश्च ॥ गन्धर्वयक्षाऽसुरसिद्धसंघा वीक्ष्यंतेत्वांविस्मिताश्चैवसर्वे ॥ २२ ॥

रुद्रादित्यावसवः १ साध्याः २ च ३ ये ४ विश्वे ५ अश्विनौ ६ मरुतः ७ च ८ ऊष्मपाः ९ च १० गंधर्वयक्षासुरसिद्धसंघाः ११ च १२ सर्वे १३ एव १४ विस्मिताः १५ त्वाम् १६ वीक्ष्यंते १७ ॥ २२ ॥ अ० + ग्यारह रुद्र बारह सूर्य्य आठ वसु १ और साध्य देवता २ । ३ जो ४ हैं + विश्वेदेव ५ अश्विनीकुमार ६ और उनचास मरुद्गण ७ । ८ और पितर ९ । १० और गंधर्व हूहू हाहादि यक्षकुबेरादि असुर विरोचनादि सिद्ध कपिलदेवादि इन सबके समूह ११ । १२ कहां तक कहूं सब १३ ही १४ आश्चर्य हुये १५ आप को १६ देखते हैं १७ इस प्रकार का रूप मैं आपका देखताहूं + टी० + ऊष्मपाः पितरों का नाम इस वास्ते है कि वे गरम गरम भोजन के भागी हैं जब तक अन्न गरम रहता है और जब तक ब्राह्मण चुपचाप भोजन करता रहे बोले नहीं तब तकही पितर भोजन करते हैं ॥ तदुक्तं + यावदुष्णंभवेदन्नं यावदश्नन्ति वाग्यताः । पितरस्तावदश्नंतियावन्नोक्ताहविर्गुणाः ॥ २२ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

रूपंमहत्तेबहुवक्त्रनेत्रं महाबाहोबहुबाहूरुपादम् ॥ बहूदरंबहुदंष्ट्राकरालं दृष्ट्वालोकाःप्रव्यथितास्तथाहम् ॥ २३ ॥

महाबाहो १ ते २ महत् ३ रूपम् ४ दृष्ट्वा ५ लोकाः ६ प्रव्यथिताः ७ तथा ८ अहम् ९ बहुवक्त्रनेत्रम् १० बहुबाहूरुपादम् ११ बहूदरम् १२ बहुदंष्ट्राकरालम् १३॥ २३ ॥ अ० + हे महाबाहो ! १ आपका २ बड़ा ३ रूप ४ देखकर ५ लोक ६ भय को प्राप्त हो रहे हैं ७ और जैसे और लोक भयभीत हो रहे हैं + तैसेही ८ मैं ९ भी भयको प्राप्तहूं क्योंकि वह रूपही आपका ऐसा है कि जिसके ये विशेषणहैं + बहुत मुख नेत्र हैं जिसके १० बहुत भुजा जंघा चरण हैं जिसके ११ बहुत पेटहैं जिसके १२ बहुत विकराल कठिन डाढ़ हैं जिसकी १३ ऐसा आपका रूपहै कि जिसको देखकर मैं डरताहूं ॥ २३ ॥

नभःस्पृशंदीप्तमनेकवर्णं व्यात्ताननंदीप्तविशालनेत्रम् ॥ दृष्ट्वाहित्वांप्रव्यथितांतरात्मा धृतिंन विंदामिशमंचविष्णो ॥ २४ ॥

विष्णो १ त्वाम् २ नभःस्पृशम् ३ दीप्तम् ४ अनेकवर्णम् ५ व्यात्ताननम् ६ दीप्तविशालनेत्रम् ७ दृष्ट्वा ८ हि ९ प्रव्यथितांतरात्मा १० धृतिम् ११ शमम् १२ च १३ न १४ विन्दामि १५ ॥ २४ ॥ अ० + हे विष्णो ! १ आपको २ आकाश के साथ स्पर्श करता हुआ अर्थात् समस्त आकाश में व्याप्त ३ तेजरूप ४ अनेकवर्ण वाला ५ फैला हुआ है मुख जिसका ६ प्रज्वलित हो रहे हैं बल रहे हैं बड़े बड़े नेत्र जिसके ७ ऐसा आपको + देखकर ८ ही ९ बहुत भयको प्राप्त हुआहै अन्तःकरण मेरा १० और उपशम को १२ । १३ नहीं १४ प्राप्त होता हूं १५ अर्थात् मुझको न धीरज बँधताहै न मन में संतोष होताहै ऐसा स्वरूप आपका देख मेरा चित्त घबराताहै ॥ २४ ॥

दंष्ट्राकरालानिचतेमुखानि दृष्ट्वैवकालानलसन्निभानि ॥ दिशोनजानेनलभेचशर्म प्रसीददेवेश जगन्निवास ॥ २५ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

देवेश १ जगन्निवास २ ते ३ मुखानि ४ कालानलसन्निभानि ५ दृष्ट्वा ६ एव ७ च ८ दंष्ट्राकरालानि ९ दिशः १० न जाने ११ शर्म १२ च १३ न १४ लभे १५ प्रसीद १६ ॥ २५ ॥ अ० + हे देवतों के ईश्वर ! १ हे जगत् के आश्रय ! २ आपके ३ मुख ४ प्रलयाग्नि की सम ५ देखकर ६ । ७ कैसे को ९ नहीं १० जानता हूँ मैं ११ अर्थात् मुझको यही नहीं प्रतीत होता कि पूर्व किधर उत्तर किधर पृथिवी कहां आकाश कहां है + और सुखको १२ नहीं १३ प्राप्त हूँ मैं १४ अर्थात् मेरा अन्तःकरण विक्षेपको प्राप्त है + प्रसन्न हूजिये १५ आप ॥ २५ ॥

अमीचत्वांधृतराष्ट्रस्यपुत्राःसर्वेसहैवावनिपालसंघैः ॥ भीष्मोद्रोणःसूतपुत्रस्तथासौ सहास्मदीयैरपियोधमुख्यैः ॥ २६ ॥

अमी १ च २ सर्वे ३ धृतराष्ट्रस्य ४ पुत्राः ५ अवनिपालसंघैः ६ सह ७ भीष्मः ८ द्रोणः ९ तथा १० असौ ११ सूतपुत्रः १२ अस्मदीयैः १३ अपि १४ योधमुख्यैः १५ सह १६ त्वाम् १७ एव १८ ॥ २६ ॥ उ० + श्रीभगवान् ने कहा था कि इस संग्राम में जो जीतेगा हे अर्जुन ! सो भी देख वही बात अर्जुन देखताहुआ कहता है पांच श्लोकोंमें + अ० + और वे १ । २ सब ३ धृतराष्ट्रके ४ पुत्र ५ राजों के समूह सहित ६ । ७ भीष्मपितामह ८ द्रोणाचार्य ९ और १० वह ११ कर्ण १२ और + हमारे १३ भी १४ मुख्य योधाओं के साथ १५ । १६ तुमको १७ ही १८ प्रवेशहोते हैं अर्थात् आपके मुखमें प्रवेश होते हैं इस श्लोक का अगले श्लोकके साथ सम्बन्धहै तात्पर्य कुछ यह नहीं कि दुर्योधनादि आप के मुखमें प्रवेश होते हैं किन्तु हमारी ओर के भी सब राजा आपके मुखमें दौड़ दौड़ प्रवेश होते हैं यह आश्चर्य मैं देखता हूँ ॥ २६ ॥

वक्त्राणितेत्वरमाणाविशन्तिदंष्ट्राकरालानिभयानकानि ॥ केचिद्विलग्नादशनान्तरेषु संदृश्यन्तेचूर्णितैरुत्तमाङ्गैः ॥ २७ ॥

त्वरमाणाः १ ते २ वक्त्राणि ३ विशन्ति ४ दंष्ट्राकरालानि ५ भयानकानि ६ केचित् ७ चूर्णितैः ८ उत्तमाङ्गैः ९ दशनान्तरेषु १० विलग्नाः ११ संदृश्यन्ते १२ ॥ २७ ॥ अ० + यह सब योधा + दौड़हुये १ आपके २ मुखों में ३ प्रवेश

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

होते हैं ४ कैसे हैं वे मुख कि+कठिन डाढ़ दांतहैं जिनमें ५ भयानकरूप ६ जो मुखमें प्रवेश होते हैं उनमें+कोई ७ तौ ऐसे हैं कि+चूर्ण होगये हैं शिर जिनके ८ ९ वे+दांतोंके बीचमेंही १० लटकेहुये ११ दीखते हैं १२ तात्पर्य जैसे अन्न भोजनान्त दांतों में रहजाता है जिसको तिनके से निकालते हैं इसप्रकार बहुत शूरवीर श्रीमहाराजके दांतों की सन्धिमें उलझेहुये दीखते हैं ॥ २७ ॥

यथानदीनांबहवोम्बुवेगाः समुद्रमेवाभिमुखाद्रवन्ति ॥ तथातवामीनरलोकवीरा विशन्तिवक्त्राण्यभिविज्वलन्ति ॥ २८ ॥

यथा १ नदीनाम् २ बहवः ३ अम्बुवेगाः ४ समुद्रम् ५ एव ६ अभिमुखाः ७ द्रवन्ति ८ तथा ९ अमी १० नरलोकवीराः ११ तव १२ अभिविज्वलन्ति १३ वक्त्राणि १४ विशन्ति १५ ॥ २८ ॥ उ०+अर्जुन दृष्टान्त देते हैं कि इसप्रकार आपके मुखमें प्रवेश होते हैं+अ०+जैसे १ नदी के २ बहुत ३ जलका वेग ४ समुद्रके ५ ही ६ सम्मुख ७ दौड़ताहै ८ तैसे ९ वे १० नरलोकवीर ११ आपके १२ सबओरसे जरतेहुये १३ मुखों में १४ प्रवेशहोते हैं १५ तात्पर्य आपका मुख तौ सबओरसे प्रज्वलित होरहाहै उसमें दौड़ दौड़ गिरते हैं महाराजके मुखमें सब ओरसे अग्नि जलतीहुई प्रतीत होती है जैसे कहते हैं कि दीपक जलरहाहै ऐसे यहां कहा कि महाराजका मुख प्रज्वलित होरहा है ॥ २८ ॥

यथाप्रदीप्तंज्वलनंपतङ्गा विशन्तिनाशायसमृद्धवेगाः ॥ तथैवनाशायविशन्तिलोकास्तवापिवक्त्राणिसमृद्धवेगाः ॥ २९ ॥

यथा १ समृद्धवेगाः २ पतङ्गाः ३ नाशाय ४ प्रदीप्तम् ५ ज्वलनम् ६ विशन्ति ७ तथा ८ एव ९ समृद्धवेगाः १० लोकाः ११ नाशाय १२ अपि १३ तव १४ वक्त्राणि १५ विशन्ति १६ ॥ २९ ॥ उ०+नदी के दृष्टान्तसे तौ यह प्रकटकिया कि परवशहुये आपके मुखमें प्रवेशहोते हैं अब पतंगके दृष्टान्तसे यह दिखाताहै कि जानबूझ आपके मुख में प्रवेशहोते हैं बहुत शूर+अ०+जैसे १ समृद्ध वेग है जिनका अर्थात् शीघ्रचालहै जिनकी दौड़ते उड़तेहुये २ छोटे २ जानवर ३ मरने के लिये ४ प्रदीप्त ५ अग्निमें ६ अर्थात् जलतीहुई अग्नि या दीपककी अग्निमें+ प्रवेशहोते हैं ७ तैसे ८ ही ९ बड़ा वेग है जिनका १० ऐसे+लोग शूरवीर

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

११ मरतेकेलिये १२ ही १३ आपके १४ मुखमें १५ प्रवेश होते हैं १६ ॥ २९ ॥

लेलिह्यसेग्रसमानः समन्ताल्लोकान्समग्रान्वद नैर्ज्वलद्भिः ॥ तेजोभिरापूर्यजगत्समग्रंभासस्तवोग्राःप्रतपन्तिविष्णो ॥ ३० ॥

ज्वलद्भिः १ वदनैः २ समग्रान् ३ लोकान् ४ समन्तात् ५ ग्रसमानः ६ लेलिह्यसे ७ विष्णो ८ तव ९ उग्राः १० भासः ११ तेजोभिः १२ समग्रम् १३ जगत् १४ आपूर्य १५ प्रतपन्ति १६ ॥ ३० ॥ अ० + दीप्तिमान् १ मुखोंकरके २ सबलोकों को ३ । ४ अर्थात् महा महा इन शूरवीरोंको + सबओरसे ५ ग्रास करतेहुये ६ भलेप्रकार भक्षण करररहेहो ७ हे पूर्णब्रह्म व्यापक! ८ आपकी ९ तीव्र १० प्रभा ११ अपने + तेजसे १२ समस्त १३ जगत्को १४ व्याप्त करके १५ जला रही है १६ अर्थात् आपके तेजकी किरण सब जगत् में फैलकर जलारही है सब जगत् को चटनीकी तरह चाटरही है आप ऐसे मुझको दीखतेहो ॥ ३० ॥

आख्याहिमेकोभगवानुग्ररूपो नमोस्तुतेदेव वरप्रसीद ॥ विज्ञातुमिच्छामिभवन्तमाद्यंनहिप्रजानामितवप्रवृत्तिम् ॥ ३१ ॥

भगवान् १ उग्ररूपः २ कः ३ मे ४ आख्याहि ५ नमः ६ अस्तु ७ देववर ८ प्रसीद ९ भवन्तम् १० आद्यम् ११ विज्ञातुम् १२ इच्छामि १३ तव १४ प्रवृत्तिम् १५ नहि १६ प्रजानामि १७ ॥ ३१ ॥ अ० + आप १ उग्ररूप २ कौन ३ हो यह + मुझसे ४ कहो ५ मेरा आपको + नमस्कार ६ हो ७ हे देवतों में श्रेष्ठ ! ८ प्रसन्न हो ९ आप आद्यहो अर्थात् सबसे पहले आपहो इस बातको १०।११ भलेप्रकार जाननेकी १२ इच्छा करताहूं १३ अर्थात् आदिपुरुष जो आपहो आपको भले प्रकार जाना चाहता हूं + आपकी १४ प्रवृत्ति को १५ नहीं १६ जानताहूं १७ अर्थात् यह ऐसा स्वरूप आपने क्यों धारण कियाहै ॥ ३१ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ कालोऽस्मिलोकक्षयकृत्प्रवृद्धोलोकान्समाहर्तुमिहप्रवृत्तः ॥ ऋतेऽपित्वांनभविष्यन्तिसर्वेयेऽवस्थिताःप्रत्यनीकेषुयोधाः ॥ ३२ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

श्रीभगवानुवाच ॥ लोकक्षयकृत् १ प्रवृद्धः २ कालः ३ अस्मि ४ लोकान् ५ समाहर्तुम् ६ इह ७ प्रवृत्तः ८ त्वाम् ९ ऋते १० अपि ११ ये १२ सर्वे १३ योधाः १४ प्रत्यनीकेषु १५ अवस्थिताः १६ न १७ भविष्यन्ति १८ ॥ ३२॥ + उ० + हे अर्ज्जुन! जो तू बूझता है तो सुन कि जो मैंहूं और जिस वास्ते मैंने यह रूप धारण कियाहै तीन श्लोकों में कहते हैं + अ० + लोकों का नाश करनेवाला १ अतिउग्र २ काल ३ मैंहूं ४ लोकों के नाश करनेको ५। ६ इस लोकमें ७ प्रवृत्त ८ हुआहूं तूने जो बूझाथा कि आप कौनहो और किसवास्ते आपकी यह प्रवृत्तिहै सो समझ और सुन + तेरे ९ विना १० भी ११ ये १२ सब १३ योद्धा १४ दोनों सेना में १५ जो + स्थितहैं १६ नहीं १७ होंगे १८ अर्थात् तू जो यह शङ्का करताहै कि मैं इनका मारने वालाहूं ये सब तेरे विना मारेभी सब मरैंगे जो ये सब दीखते हैं मुझ कालरूप से कोई भी नहीं बचैंगा क्षत्रिय जाति में तू मेरा भक्त है तुझको तो यह एक यश देताहूं ॥ ३२ ॥

तस्मात्त्वमुत्तिष्ठयशोलभस्व जित्वाशत्रून्भुंक्ष्व राज्यंसमृद्धम् ॥ मयैवैतेनिहताःपूर्वमेवनिमित्तमात्रंभवसव्यसाचिन् ॥ ३३ ॥

तस्मात् १ त्वम् २ उत्तिष्ठ ३ यशः ४ लभस्व ५ शत्रून् ६ जित्वा ७ समृद्धम् ८ राज्यम् ९ भुंक्ष्व १० एते ११ एव १२ पूर्वम् १३ एव १४ मया १५ निहताः १६ सव्यसाचिन् १७ निमित्तमात्रम् १८ भव १९ ॥ ३३ + अ० + तिस कारण से १ तू २ खड़ा हो ३ युद्ध के लिये + यश को ४ प्राप्त हो ५ जो भीष्मपितामह द्रोणादि देवतोंसे भी जीते न जावें उनको अर्ज्जुनने जीता इस यशको प्राप्तहो पीछे उसके + वैरियोंको ६ जीतकर ७ पदार्थोंका भराहुआ ८ राज्य ९ भोग १० ये ११ तो १२ पहले १३ ही १४ मैंने १५ मार रक्खे हैं १६ हे अर्ज्जुन! १७ निमित्तमात्र १८ होजा तू १९ अर्थात् इनका तो काल आपहुँचा प्रत्यक्ष देखताहै तू कि यह कालके मुखमें अपने आप दौड़े जाते हैं तूतो केवल एक नाममात्र मारने वालाहो यश लेले + टी० + बायें हाथसे भी अर्ज्जुन धनुष खैंचकर तीर चलाता था इसवास्ते अर्ज्जुनका नाम सव्यसाची है ॥ ३३ ॥

द्रोणंचभीष्मंचजयद्रथंच कर्णंतथान्यानपियो

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

धवीरान् ॥ मयाहतांस्त्वंजहिमाव्यथिष्ठायुद्ध्यस्वजेतासिरणेसपत्नान् ॥ ३४ ॥

द्रोणम् १ च २ भीष्मम् ३ च ४ जयद्रथम् ५ च ६ कर्णम् ७ तथा ८ अन्यान् ९ अपि १० योधमुख्यान् ११ मया १२ हतान् १३ त्वम् १४ जहि १५ माव्यथिष्ठाः १६ युद्ध्यस्व १७ रणे १८ सपत्नान् १९ जेता २० असि २१ ॥ ३४॥ + उ० + पीछे हे अर्ज्जुन! तुमने यह कहाथा कि मैं यह नहीं जानता ये इसको जीतेंगे या हम इनको वह अब सब तूने प्रत्यक्ष देख लिया कि वेसन्देह तूही जीतेगा + अ० + द्रोणाचार्य्य १। २ और भीष्मपितामह ३। ४ और जयद्रथ ५। ६ कर्ण ७ तैसेही ८ औरोंको ९ भी १० कि जो भी + योद्धामुख्य हैं ११ इन सब + मेरे १२ मारेहुओं को १३ तू १४ मार १५ भय मतकर १६ इनके साथ + युद्ध कर १७ रणमें १८ वैरियों को १९ जीतेगा तू २०। २१ ॥ ३४ ॥

संजयउवाच ॥ एतच्छ्रुत्वावचनंकेशवस्यकृतांजलिर्वेपमानःकिरीटी ॥ नमस्कृत्वाभूयएवाहकृष्णंसगद्गदंभीतभीतःप्रणम्य ॥ ३५ ॥

संजयउवाच ॥ किरीटी १ केशवस्य २ एतत् ३ वचनम् ४ श्रुत्वा ५ कृतांजलिः ६ वेपमानः ७ नमः ८ कृत्वा ९ आह १० भूयः ११ एव १२ भीतभीतः १३ सगद्गदम् १४ कृष्णम् १५ प्रणम्य १६ ॥ ३५ ॥ + उ० + संजय धृतराष्ट्र से कहता है कि हे राजन्! + अ० + मुकुटवाला अर्ज्जुन १ भगवान् का २ यह ३ वचन ४ सुनकर ५ करी है अंजलि जिसने ६ अर्थात् दोनों हाथ जोड़ेहुये + कम्पता हुआ ७ नमस्कार ८ करके ९ बोला १० फिर ११ भी १२ बहुत डरताहुआ १३ गद्गद कण्ठ हो रहाहै जिसका १४ श्रीकृष्णजी को १५ प्रणाम करके १६ यह बोला कि जो आगे ग्यारह श्लोकों में कहनाहै तात्पर्य वारंवार नमो नमो नारायणाय यह कहकर स्तुति करताहै ॥ ३५ ॥

अर्ज्जुनउवाच ॥ स्थानेहृषीकेशतवप्रकीर्त्याजगत्प्रहृष्यत्यनुरज्यतेच ॥ रक्षांसिभीतानिदिशोद्रवन्ति सर्वेनमस्यन्तिचसिद्धसंघाः ॥ ३६ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

अर्जुनउवाच + हृषीकेश १ तव २ प्रकीर्त्या ३ जगत् ४ प्रहृष्यति ५ अनुरज्यते ६ च ७ भीतानि ८ रक्षांसि ९ दिशः १० द्रवन्ति ११ सर्वे १२ च १३ सिद्धसंघाः १४ नमस्यन्ति १५ स्थाने १६ ॥ ३६॥ अ० + हृषीक नाम इन्द्रियोंका है इन्द्रियों का जो स्वामी प्रेरक अन्तर्य्यामी उसको हृषीकेश कहते हैं अर्जुन कहता हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्रजी! १ आपकी २ प्रकीर्ति करके ३ अर्थात् आपका माहात्म्य कहने सुनने से + जगत् आनन्द होता है और अनुराग को प्राप्त होताहै अर्थात् आप में जगत् ४ प्रीति करताहै ५।६। ७ और + डरतेहुये ८ राक्षस ९ पूर्वादि दिशाओं को १० दौड़ते हैं ११ कोई पूर्वको कोई उत्तरको भागता है + और सब १२। १३ सिद्धों के समूह १४ आपको + नमस्कार करते हैं १५ यह सब युक्तहै १६ अर्थात् यह बात ऐसे ही चाहिये ॥ ३६ ॥

कस्माच्चतेननमेरन्महात्मन् गरीयसेब्रह्मणोऽप्यादिकर्त्रे ॥ अनन्तदेवेशजगन्निवास त्वमक्षरंसदसत्तत्परंयत् ॥ ३७ ॥

महात्मन् १ अनन्त २ देवेश ३ जगन्निवास ४ कस्मात् ५ ते ६ न ७ नमेरन् ८ ब्रह्मणः ९ अपि १० गरीयसे ११ च १२ आदिकर्त्रे १३ यत् १४ सत् १५ असत् १६ परम् १७ अक्षरम् १८ तत् १९ त्वम् २० ॥ ३७॥ + उ० + आपको नमस्कार करने में ये नव हेतु हैं फिर यह कब हो सक्ता है कि यह सब जगत् आपको नमस्कार न करै + अ० + हे महात्मन्! १ हे अनन्त! २ हे देवेश! ३ हे जगन्निवास! ४ किस हेतुसे ५ आपको ६ नहीं ७ नमस्कार करैं ८ आपके सामने नम्र होने में चार हेतु तो मैंने कहे कि आप महात्मा हो अनन्त देवेश जगत् का आसरा हो और पांच सुनिये प्रथम यह कि आप ब्रह्माजी के ९ भी १० गुरुतर ११ हो दूसरे यह कि ब्रह्माजी के कर्ता भी आपही हो इसी वास्ते १२ आपको + आदिकर्त्ता १३ कहते हैं तुम्हारे अर्थ नमस्कार हो आदिकर्त्रे और गरीयसे ये दोनों + ते + छठें अंकवाले पद के विशेषण हैं तीनों पदों में चतुर्थी विभक्ति है सोई अर्थ समझना चाहिये + तीसरे यह कि + जो १४ सत् व्यक्त १५ असत् अव्यक्त १६ और इन दोनों से + परे १७ जो + अक्षर ब्रह्म १८ सो १९ आप २० ही हो अर्थात् तीसरे यह कि जो व्यक्त मूर्तिमान् हो सो भी आपही चौथे यह कि जो अव्यक्त स्वरूप आपका है सो भी आपही पाचवें यह कि जो व्यक्त और अव्यक्तसे परे अक्षर पूर्णब्रह्म शुद्ध सच्चिदानंदहै सो भी आपही ३७॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

त्वमादिदेवः पुरुषःपुराणस्त्वमस्य विश्वस्यपरं निधानम् ॥ वेत्तासिवेद्यंचपरंचधाम त्वयाततंविश्व मनन्तरूप ॥ ३८ ॥

त्वम् १ आदिदेवः २ पुराणः ३ पुरुषः ४ त्वम् ५ अस्य ६ विश्वस्य ७ परं-निधानम् ८ वेत्ता ९ असि १० वेद्यम् ११ च १२ परम् १३ च १४ धाम १५ त्व-या १६ विश्वम् १७ ततम् १८ अनन्तरूप १९ ॥ ३८ ॥ उ० + और आप के सामने नम्र होनेमें सात हेतु और भी ये हैं प्रथम यह कि + आप १ आदिदेव २ पुराण ३ पुरुष ४ हो दूसरे यह कि + आप ५ इस विश्वके ६ । ७ लयका स्थान ८ हो अर्थात् प्रलयसमय यह सब जगत् मायोपहित आपके स्वरूपमेंही लय हो-जाताहै तीसरे यह कि सब पदार्थों के + जाननेवाले ९ हो आप १० चौथे यह कि + जानने के योग्य ११ भी १२ आपहीहो अर्थात् आपकाही जानना श्रेष्ठहै और सब पण्डिताई तुच्छहै पांचवें यह कि + परमधाम भी १३ । १४ । १५ अर्थात् परम-हंसोंका पद भी आपहीहो छठें यह कि + आप करके १६ यह समस्त + विश्व १७ भास १८ होरहाहै सातवें यह कि आप + अनन्तरूप १९ हो हे अनन्तदेव ! इनहेतु करके आप हमारे पूज्यहो इसवास्ते हम आपको वारंवार नमस्कार करतेहैं ॥ ३८ ॥

वायुर्यमोऽग्निर्वरुणःशशाङ्कः प्रजापतिस्त्वंप्र पितामहश्च ॥ नमोनमस्तेऽस्तुसहस्रकृत्वः पुनश्चभू योपिनमोनमस्ते ॥ ३९ ॥

वायुः १ यमः २ अग्निः ३ वरुणः ४ शशाङ्कः ५ प्रजापतिः ६ प्रपितामहः ७ त्वम् ८ ते ९ नमः १० नमः ११ च १२ अस्तु १३ सहस्रकृत्वः १४ भूयः १५ च १६ अपि १७ पुनः १८ ते १९ नमः २० नमः २१ ॥ ३९ ॥ उ० + अनन्त सातवें हेतुका इस श्लोकमें विस्तार करके कहताहै + अ० + पवन १ यमराज २ अग्नि ३ वरुण ४ चन्द्रमा ५ ब्रह्मा ६ ब्रह्माके भी पितामह ७ आप ८ हो अर्थात् आप असंख्यातरूपहो + आपको ९ वारंवार नमोनमः १० । ११ । १२ हो १३ हजार-वार १४ फिर भी १५ । १६ । १७ वारंवार १८ आपको १९ नमोनमः २० । २१ अर्थात् जैसे आप अनन्तरूपहो वैसेही मेरी अनन्त नमस्कार हैं असंख्यात वारं-वार नमस्कार करनेसे अति श्रद्धाभक्ति श्रीमहाराजमें प्रकट करताहै ॥ ३९ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

नमःपुरस्तादथपृष्ठतस्ते नमोऽस्तुतेसर्वतएवसर्व॥ अनन्तवीर्यामितविक्रमस्त्वं सर्वंसमाप्नोषितलोऽसिसर्वः॥ ४०॥

सर्वम् १ पुरस्तात् २ ते ३ नमः ४ अथ ५ पृष्ठतः ६ ते ७ नमः ८ अस्तु ९ सर्वतः १० एव ११ अनन्तवीर्य १२ त्वम् १३ अमितविक्रम १४ सर्वम् १५ समाप्नोषि १६ ततः १७ सर्वः १८ असि १९॥ ४०॥ उ० + फिर भी और प्रकार से नमस्कार करताहुआ श्रीमहाराजकी स्तुति करताहै + अ० + हे सर्व! १ अर्थात् सर्वरूप सबके आत्मा + पूर्वकी ओरसे २ आपको ३ नमस्कार ४ और ५ पिछली ओरसे ६ आपको ७ नमस्कार ८ हो ९ सबओरसे १० ही ११ आपको नमस्कार करताहूं इत्यभिप्रायः + हे अनन्तवीर्य! १२ आप १३ बेमर्याद पराक्रम वाले १४ हो + सब १५ जगत्में + भले प्रकार आप व्याप्तहो १६ तिस कारण से १७ सर्वरूप १८ हो आप + टी० + कोई कोई वीर्यवान् अर्थात् बलवान् होते हैं परन्तु समयपर पराक्रम नहीं करते वीर्य और विक्रम पराक्रम शब्दों में यह भेद इस जगह समझना तात्पर्य यहहै कि श्रीभगवान् अनन्तवीर्य भी हैं और अनन्त पराक्रमवाले भी हैं॥ ४०॥

सखेतिमत्वाप्रसभंयदुक्तं हेकृष्णहेयादवहेसखेति॥ अजानतामहिमानंतवेदंमयाप्रमादात्प्रणयेनवापि॥ ४१॥

सखा १ इति २ मत्वा ३ प्रसभम् ४ यत् ५ उक्तम् ६ हे कृष्ण ७ हे यादव ८ हे सखे ९ इति १० अजानता ११ तव १२ इदम् १३ महिमानम् १४ मया १५ प्रमादात् १६ वा १७ प्रणयेन १८ अपि १९॥ ४१॥ उ० + अर्जुन श्रीकृष्णचन्द्र महाराजको पहले सदासे अपना सखा समझता हँसी चौहल के समय जो चाहताथा सोई कह देताथा अब श्रीमहाराजकी यह महिमा देख उस अपराध को क्षमा कराताहै दो श्लोकों में + अ० + आपको प्राकृतवत् अपना + सखा १ ही २ समझकर ३ हठपूर्वक ४ जो ५ मैंने + कहा ६ सो आप क्षमा कीजिये क्या क्या कहा मैंने सो सुनो + हे कृष्ण! ७ मेराकहा नहीं मानता इसप्रकार आधा नाम लेकर आपको बोला + हे यादव! ८ यहां नहीं आता + हे सखा! ९ तू क्या करता

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

है इसप्रकार १० प्राकृतों की तरह आपको संबोधन किया + नहीं जाननेवालों में ११ आपकी १२ इस महिमाका १३ । १४ था अर्थात् इस आपकी महिमा को मैं नहीं जानताथा इसहेतुसे + मैंने १५ प्रमाद से १६ आपको ऐसाकहा + अथवा १७ स्नेहसे १८ भी १९ ऐसा कहना बनसक्ताहै ॥ ४१ ॥

यच्चावहासार्थमसत्कृतोऽसि विहारशय्यासन भोजनेषु ॥ एकोथवाप्यच्युततत्समक्षं तत्क्षामये त्वामहमप्रमेयम् ॥ ४२ ॥

भोजनेषु १ एकः २ अथवा ३ तत्समक्षम् ४ अपि ५ अवहासार्थम् ६ यत् ७ च ८ असत्कृतः ९ असि १० अच्युत ११ तत् १२ त्वाम् १३ अहम् १४ क्षामये १५ अप्रमेयम् १६ ॥ ४२ ॥ अ० + विहार शय्या आसन भोजनके समय १ अकेले २ अथवा ३ तिन मित्रोंके सामने ४ भी ५ आपके और अपने हँसानेकेलिये ६ जो ७ जो ८ असत्कार कियाहै ९ । १० मैंने आपका + हे निर्विकार ! ११ सो १२ आपसे १३ मैं १४ क्षमा कराताहूं १५ आप क्षमा कीजिये कैसे हैं आप कि + नहीं है प्रमाण आपका आप अप्रमेय हो १६ आपकी महिमाका वारापार नहीं इत्यभिप्रायः आपकी लीला चरित्रों में जो तर्क करते हैं वे बड़े मूर्ख हैं आप अचिन्त्यशक्तिमान् हो + टी० + सैर करना खेलना इत्यादि क्रियाको विहार कहते हैं पलँगपर लेटना उस समय को शय्याका समय कहते हैं मसनद गद्दी तकिये लगेहुये बिछौने पर बैठना उसको आसन का समय कहते हैं भोजन का समय प्रसिद्ध स्पष्ट है इन समय में अर्जुन व्रजचन्द्र भी औरों के सामने चौपल हँसी किया करताथा श्रीमहाराज कभी चुप होजाते थे कभी आपभी छेड़ छाड़ करने लगतेथे इस भक्तिकी महिमाके प्रतापपर और मेरे इस संक्षेप लिखने पर सोचना चाहिये कि निर्भाग यह माहात्म्य भगवत्का सुनते भी हैं परन्तु संसार से छूटकर नारायण के चरणकमलों में प्रीति नहीं करते न जानिये फिर कौनसा मुहूर्त्त आवेगा जिसदिन भगवत्में ऐसे श्रोताओंकी प्रीति होगी ॥ ४२ ॥

पितासिलोकस्यचराचरस्य त्वमस्यपूज्यश्चगुरुर्गरीयान् ॥ नत्वत्समोऽस्त्यभ्यधिकः कुतोऽन्यो लोकत्रयेऽप्यप्रतिमप्रभाव ॥ ४३ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

अस्य १ चराचरस्य २ लोकस्य ३ त्वम् ४ पिता ५ असि ६ पूज्यः ७ च ८ गुरुः ९ गरीयान् १० त्वत्समः ११ न १२ अस्ति १३ अन्यः १४ अभ्यधिकः १५ कुतः १६ अप्रतिमप्रभाव १७ लोकत्रये १८ अपि १९ ॥४३॥ + उ० + अचिन्त्य प्रभाव श्रीभगवान्का निरूपण करताहै + इस १ चराचर २ लोक के ३ आप ४ जनक ५ हो ६ और पूजनेके योग्य ७ । ८ गुरुः ९ गुरुतर १० भी आप हो जिससे एक अक्षरभी सीखा जावे उसको भी गुरु कहतेहैं या जिससे कोई लौकिक विद्या सीखीजाय पुरोहित संस्कार करानेवाले को भी गुरु कहते हैं एक कुलगुरु होते हैं जैसे इन दिनों में कण्ठी बांधनेका रिवाज प्रचारहै कण्ठीबंधभी गुरु कहलाते हैं और एक सद्गुरु होते हैं कि जो जिज्ञासुका अज्ञान संशय विपर्य्यय अपने ज्ञान के प्रतापसे दूर करके परमानन्दस्वरूप आत्माको प्राप्त करते हैं ऐसे गुरुतर दुर्लभ हैं श्रीसदाशिवजी कहते हैं कि हे पार्वतीजी ! धनके हरनेवाले गुरु बहुत हैं शिष्यका सन्ताप हरनेवाले गुरुतर दुर्लभ हैं + तदुक्तम् + गुरवो बहवः सन्ति शिष्यवित्तापहारकाः । दुर्लभः सगुरुर्देवि शिष्यसन्तापहारकः ॥ अर्जुन कहताहै कि महाराज + आपके समान ११ नहीं १२ है १३ कोई भी फिर + दूसरा १४ अधिक १५ कहांसे १६ हो + हे अनुपमप्रभाववाले ! १७ तीन लोक में १८ भी १९ कोई न आपके सदृश न आपसे अधिक जैसा आपका प्रभावहै ऐसा प्रभाववाला कोई उपमाके वास्ते भी नहीं ॥ ४३ ॥

तस्मात्प्रणम्यप्रणिधायकायं प्रसादयेत्वामहमीशमीड्यम् ॥ पितेवपुत्रस्यसखेवसख्युःप्रियःप्रियायार्हसिदेवसोढुम् ॥ ४४ ॥

तस्मात् १ त्वाम् २ अहम् ३ प्रसादये ४ ईशम् ५ ईड्यम् ६ कायम् ७ प्रणिधाय ८ प्रणम्य ९ पुत्रस्य १० पिता ११ इव १२ सख्युः १३ सखा १४ इव १५ प्रियः १६ प्रियायाः १७ देव १८ सोढुम् १९ अर्हसि २० ॥ ४४॥ + उ० + अनजानमें मुझ से दोषहुआ + अ० + तिस कारणसे १ आपको २ मैं ३ प्रसन्नकर्त्ता हूं ४ आप + ईश्वर ५ स्तुति करने के योग्यहैं ६ इस वास्ते + शरीर को ७ नीचा झुकाकर ८ बहुत नम्र होकर ९ आपसे यह प्रार्थना करताहूं कि + पुत्रका १० अपराध + पिता ११ जैसे १२ मित्रका १३ अपराध + मित्र १४ जैसे १५ पुरुष १६ स्त्रीका १७ अपराध जैसे क्षमा करता है इसीप्रकार + हे देव ! १८ मेरा पिछला अपराध + क्षमा करने को १९ योग्यहो आप २० अर्थात् पीछे मुझ से

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

जो जो दोषहुये आप कृपा करके अब क्षमा कीजिये आपसे मैं इस समय बहुत डरताहूं अब कभी आपकी हँसी नहीं करूंगा न औरोंसे कराऊंगा इत्यभिप्रायः ४४॥

अदृष्टपूर्व्वंहृषितोऽस्मिदृष्ट्वा भयेनचप्रव्यथितं मनोमे ॥ तदेवमेदर्शयदेवरूपं प्रसीददेवेशजगन्निवास ॥ ४५ ॥

देव १ देवेश २ जगन्निवास ३ तत् ४ एव ५ रूपम् ६ मे ७ दर्शय ८ प्रसीद ९ अदृष्टपूर्वम् १० दृष्ट्वा ११ हृषितः १२ अस्मि १३ भयेन १४ च १५ मे १६ मनः १७ प्रव्यथितम् १८ ॥ ४५॥ + उ० + अपराध क्षमा कराके प्रार्थना करता है इसप्रकार अब आज्ञा नहीं करताहै कि मेरे रथको दोनों सेनाके बीचमें खड़ा करो + अ० + हे देव! १ हे देवेश! २ हे जगन्निवास! ३ सोई ४। ५ रूप ६ मुझको ७ दिखाइये ८ कि जो श्यामसुन्दर रूप पहले मैंने देखाथा + आप प्रसन्न होजाइये ९ नहीं देखाथा पहले मैंने १० यहरूप आपका इस वास्ते जो इसको + देखकर ११ आनन्द होताहूं मैं १२। १३ परन्तु इस रूपसे + भय करके १४। १५ मेरा १६ मन १७ डरताहै १८ भय इस वास्ते लगताहै कि आप कालरूप भयंकर मूर्त्तिमान् होरहे हैं ॥ ४५ ॥

किरीटिनंगदिनंचक्रहस्तमिच्छामित्वांद्रष्टुमहं तथैव ॥ तेनैवरूपेणचतुर्भुजेन सहस्रबाहोभवविश्वमूर्त्ते ॥ ४६ ॥

सहस्रबाहो १ विश्वमूर्त्ते २ तथा ३ एव ४ किरीटिनम् ५ गदिनम् ६ चक्रहस्तम् ७ त्वाम् ८ अहम् ९ द्रष्टुम् १० इच्छामि ११ तेन १२ एव १३ चतुर्भुजेन १४ रूपेण १५ भव १६ ॥ ४६ ॥ + उ० + माधुर्यरूप श्रीमहाराजका अर्जुन सदा जो देखा करताथा उसी को देखा चाहताहै + अ० + हे सहस्रबाहो! १ हे विश्वमूर्त्ते! २ तैसे ३ ही ४ किरीटवाला ५ गदावाला ६ चक्रहै हाथमें जिनके ७ ऐसा + आपको ८ मैं ९ देखने की १० इच्छा करताहूं ११ तिस तिसही १२। १३ चतुर्भुज रूपवाले १४। १५ होजाइये १६ अब इस हजारों भुजावाले विश्वरूप को शान्त कीजिये अर्जुन को सदा श्रीकृष्णचन्द्र महाराज चतुर्भुज दीखा करते थे अर्जुन उसीरूपका उपासकहै इसवास्ते अर्जुनको वहीरूप प्यारा लगताहै॥४६॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

श्रीभगवानुवाच ॥ मयाप्रसन्नेनतवार्जुनेदं रूपं परंदर्शितमात्मयोगात् ॥ तेजोमयंविश्वमनन्तमाद्यं यन्मेत्वदन्येननदृष्टपूर्वम् ॥ ४७ ॥

श्रीभगवानुवाच + अर्जुन १ मया २ प्रसन्नेन ३ आत्मयोगात् ४ तव ५ इदम् ६ यत् ७ मे ८ आद्यम् ९ अनन्तम् १० तेजोमयम् ११ परम् १२ विश्वम् १३ रूपम् १४ दर्शितम् १५ त्वदन्येन १६ न १७ दृष्टपूर्वम् १८ ॥ ४७ ॥ + उ० + श्रीभगवान् कहतेहैं कि + अ० + हे अर्जुन ! १ मैंने २ प्रसन्न होकर ३ अपने योग से ४ तुझको ५ यह ६ जो ७ अपना ८ आदि ९ अनन्त १० तेजोमय ११ परम १२ विश्वरूप १३ । १४ दिखाया १५ सिवाय तेरे अर्थात् सिवाय तुझ सदृश भक्तों के १६ नहीं १७ देखाहै पहले १८ किसी अभक्त ने योगमायादि अनेक अचिन्त्य शक्ति हैं श्रीमहाराज व्रजचन्द्र में उन शक्तियोंकरके जब चाहैं विश्वरूप दिखा सक्ते हैं ॥ ४७ ॥

नवेदयज्ञाध्ययनैर्नदानैर्नचक्रियाभिर्नतपोभिरुग्रैः ॥ एवंरूपःशक्यअहंनृलोकेद्रष्टुंत्वदन्येनकुरुप्रवीर ॥ ४८ ॥

कुरुप्रवीर १ नृलोके २ त्वदन्येन ३ एवम् ४ अहम् ५ रूपः ६ द्रष्टुम् ७ न ८ वेदयज्ञाध्ययनैः ९ न १० दानैः ११ नच १२ क्रियाभिः १३ न १४ उग्रैः १५ तपोभिः १६ शक्यः १७ ॥ ४८ ॥ + उ० + यह मेरा विश्वरूप विना मेरी कृपाके वेदोक्त कर्म्मोंका अनुष्ठान करने से कोई नहीं देख सक्ता + अ० + हे अर्जुन ! १ मर्त्यलोक में २ सिवाय तेरे ३ इसप्रकार ४ मेरा ५ रूप ६ देखने को ७ न ८ वेद यज्ञोंका अध्ययन करके ९ न १० दान करके ११ न १२ क्रिया करके १३ न १४ अत्यन्त तप करके १५ । १६ कोई + समर्थ १७ हुआ न होगा + टी० + यज्ञ एक विद्याहै उस विद्याका नाम यज्ञ भी है ॥ ४८ ॥

मातेव्यथामाचविमूढभावोदृष्ट्वारूपंघोरमीदृङ्ममेदम् ॥ व्यपेतभीःप्रीतमनाःपुनस्त्वं तदेवमेरूपमिदंप्रपश्य ॥ ४९ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

ईदृक् १ मम २ इदम् ३ घोरम् ४ रूपम् ५ दृष्ट्वा ६ ते ७ व्यथा ८ मा ९ विमूढभावः १० च ११ मा १२ व्यपेतभीः १३ प्रीतमनाः १४ पुनः १५ त्वम् १६ मे १७ तत् १८ एव १९ रूपम् २० इदम् २१ प्रपश्य २२॥ ४९ ॥+उ०+श्री भगवान्ने विश्वरूपकी बहुत स्तुति भी करी परन्तु अर्ज्जुनका डर न गया तब श्री महाराज ने अर्ज्जुन से कहा कि हे अर्ज्जुन! क्यों डरताहै फिर वही श्यामसुन्दर स्वरूप जो प्यारा लगता है देख+अ०+इस प्रकार १ मेरा २ यह ३ घोर४ रूप ५ देखकर ६ तुझको ७ व्यथा ८ मत ९ हो+और मूढ़ता १०। ११ मत १२ हो+मूढ़तासे दुःख भय होता है+भय दूरकर १३ मन में प्रीतिकर १४ फिर १५ तू १६ मेरा १७ सोई १८। १९ रूप २० यह २१ देख २२ यह कहकर श्रीभगवान् उसी समय श्यामसुन्दर स्वरूप होगये कि जो अर्ज्जुन को प्रिय लगता था॥ ४९ ॥

सञ्जयउवाच ॥ इत्यर्जुनंवासुदेवस्तथोक्त्वा स्वकंरूपंदर्शयामासभूयः ॥ आश्वासयामासचभीतमेनंभूत्वापुनःसौम्यवपुर्महात्मा ॥ ५० ॥

संजयउवाच+वासुदेवः १ इति २ अर्ज्जुनम् ३ उक्त्वा ४ भूयः ५ तथा ६ स्वकम् ७ रूपम् ८ दर्शयामास ९ पुनः १० च ११ महात्मा १२ सौम्यवपुः १३ भूत्वा १४ एनम् १५ भीतम् १६ आश्वासयामास १७॥ ५०॥ +उ०+संजय धृतराष्ट्र से कहताहै कि हे राजन्! श्रीकृष्णचन्द्र महाराजने फिर अपना वही सुन्दरस्वरूप अर्जुनको दिखाया+अ०+वासुदेव १ इस प्रकार २ अर्जुनसे ३ कहकर ४ जैसे पहिले थे किरीटादियुक्त+फिर ५ तैसेही ६ अपना ७ रूप ८ दिखाते भये ९ और फिर करुणाकर १२ शान्त प्रसन्नरूप १३ होकर १४ इस भयवान्को १५। १६ अर्थात् अर्जुन को+आश्वास करते भये १७ तात्पर्य श्रीभगवान्जीने कहा कि हे अर्जुन! अब डर मतकर प्रसन्न हो॥ ५०॥

अर्जुनउवाच ॥ दृष्ट्वेदंमानुषंरूपं तवसौम्यंजनार्दन ॥ इदानीमस्मिसंवृत्तःसचेताःप्रकृतिंगतः॥ ५१॥

अर्जुनउवाच+जनार्दन १ तव २ इदम् ३ सौम्यम् ४ मानुषम्५रूपम् ६ दृष्ट्वा ७ इदानीम् ८ सचेताः ९ संवृत्तः १० अस्मि ११ प्रकृतिम् १२ गतः १३॥५१॥ अ०+अर्जुन श्रीमहाराज से कहता है कि+हे जनार्दन १ आपका २ यह ३

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

बारहवें अध्यायका प्रारम्भ हुआ॥

अर्जुनउवाच॥ एवंसततयुक्तायेभक्तास्त्वांपर्युपासते॥ येचाप्यक्षरमव्यक्तंतेषांकेयोगवित्तमाः॥१॥

अर्जुनउवाच+एवम् १ सततयुक्ताः २ ये ३ भक्ताः ४ त्वाम् ५ पर्युपासते ६ ये ७ च ८ अपि ९ अक्षरम् १० अव्यक्तम् ११ तेषाम् १२ के १३ योगवित्तमाः १४॥ १॥+अ०+अर्जुन कहता है कि हे नारायण!+इसप्रकार १ सदायुक्तहुये २ जो ३ भक्त ४ आपकी ५ उपासना करते हैं ६ और जो ७।८ निश्चय ९ अक्षर १० अव्यक्त की ११ उपासना करते हैं तिन में १२ कौन से १३ योगवित्तम हैं १४+टी०+कोई तौ आपको शिव विष्णु रामकृष्णादि मूर्त्तिमान् समझते हैं और कोई विश्वरूप विराट् हिरण्यगर्भ और कोई कर्मही को आपका रूप समझते हैं कोई अंश अंशीभाव से आपकी उपासना करता है कोई पुरुष ईश्वरादि जानकर जिस प्रकार कि प्रथम अध्याय से लेकर ग्यारहवें तक आपने उपदेश किया इस प्रकार सदा आपके उपदेश का अनुष्ठान करते हैं इसीको उपासना कहते हैं जो भक्त आपकी ऐसी उपासना करते हैं अर्थात् किसीकी सांख्य पातंजल योग में निष्ठा है किसीकी शांडिल्यविद्या में निष्ठा है अनुक्तभी आपकी उपासना के बहुत मार्ग हैं अर्थात् जो मैंने नहीं कहे अब इस अध्याय में और यह भी निश्चय है कि बहुत महात्मा आपकोनिर्गुण नित्यमुक्त अद्वैत समझकर आपकी उपासना करते हैं और चतुर्थादि अध्यायों में आपने श्रीमुख से निर्गुण उपासकों को आर्त्तादि सब भक्तों से विशेष श्रेष्ठकहा और कर्म्मनिष्ठ योगियोंकी सगुण ब्रह्म के उपासकों की भी आपने बहुत स्तुति करी पिछले अध्यायों में अब मैं यह समझा चाहताहूं कि कर्मी योगी सगुण ब्रह्म के उपासक जो भक्त और निर्गुण के जो उपासक इन सब में कौन अच्छी तरह भलेप्रकार योगको जानते हैं योगका अक्षरार्थ एकता है वित्का अर्थ+जानता है+यह है योगको जो जानता है उसको योगवित् कहते हैं तर तम ये दोनों शब्द विशेषार्थ में आते हैं अर्थात् योग के जाननेवालों में विशेष श्रेष्ठ कौन है पूर्व्वोक्त इन सब में इत्यभिप्रायः॥ १॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

श्रीभगवानुवाच ॥ मय्यावेश्यमनोयेमां नित्ययुक्ता उपासते ॥ श्रद्धयापरयोपेतास्तेमेयुक्ततमामताः ॥ २ ॥

श्रीभगवानुवाच + ये १ परया २ श्रद्धया ३ उपेताः ४ मनः ५ मयि ६ आवेश्य ७ नित्ययुक्ताः ८ माम् ९ उपासते १० ते ११ मे १२ युक्ततमाः १३ मताः १४ ॥ २ ॥ + उ० + अर्जुन का प्रश्न और यह उसका उत्तर ऐसे समझो कि जैसी ये दो कथा पुरानी हम लिखते हैं + राजा ने सूरदासजी से बूझा कि कविता आपकी अच्छी है या तुलसीदास जीकी उत्तर दिया कि मेरी, राजाने फिर बूझा कि तुलसीदासजी की कविता कैसी है उत्तर दिया कि तुलसीदास जीकी कविता नहीं मन्त्र हैं आपका प्रश्न कविता के विषय है विचारो इस बोली में बड़ाई किसकी हुई + एक भक्त ने देवी से बूझा कि कवि कालिदास जी श्रेष्ठ हैं या दण्डी स्वामी उत्तर दिया कि दण्डी स्वामी और इस वाक्य को सरस्वतीजीने तीनबार उच्चारण किया ॥ कविर्दण्डी कविर्दण्डी कविर्दण्डी न संशयः ॥ कालिदासजी ने बूझा कि हे देवि ! क्या मैं कवि नहीं देवीजीने कहा कि आप तो मेरा स्वरूपही हो प्रश्न कवि विषय है + इसी प्रकार अर्जुन ने उपासना अनुष्ठान क्रिया विषय प्रश्न किया है ज्ञानी महात्मा क्रियावान् उपासक नहीं होते "ब्रह्मविद् ब्रह्मैव भवति" ब्रह्मका जाननेवाला ब्रह्मही है अर्जुन से श्रीभगवान्ने कहा कि + अ० + जो १ परम श्रद्धा करके २ । ३ युक्त ४ मनको ५ मुझमें ६ प्रवेश करके ७ नित्ययुक्त हुये ८ मुझ सगुण ब्रह्मकी ९ उपासना करते हैं १० वे ११ मुझको १२ युक्ततम १३ सम्मत १४ हैं अर्थात् उनको युक्ततम मानता हूं युक्त योगी का नाम है योगियों में श्रेष्ठ हैं इति तात्पर्यार्थः और जो कोई यह प्रश्नकरे कि निर्गुण ब्रह्म के उपासक युक्ततम हैं या नहीं इसका उत्तर पहलेही दो कथाओं के प्रसंगमें होचुका कि वे युक्त योगी नहीं श्रीभगवान् चौथे मंत्रमें कहेंगे कि वेतो मुझको प्राप्तही हैं उनका यहां क्या प्रसंग है तीसरे चौथे मन्त्रमें और तेरहवें मन्त्र से लेकर अध्याय की समाप्ति पर्यन्त निर्गुण उपासकों के लक्षण कहेंगे सगुण उपासकों को जो कहनाथा सो कहा यह उत्तर सूरदासजी और देवी के उत्तर के सदृश समझना चाहिये इस मन्त्र में यह अर्थ किसी प्रकार नहीं जाना जाता कि निर्गुण उपासकों से सगुण ब्रह्म के उपासकों को श्रेष्ठ श्रीभगवान् ने कहा + श्रेष्ठ वे सन्देह हैं परन्तु किनसे श्रेष्ठ हैं योगियों से कर्मनिष्ठों से विषयी पामरों से श्रेष्ठ हैं इत्यभिप्रायः ॥ २ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

येत्वक्षरमनिर्देश्यमव्यक्तंपर्युपासते ॥ सर्वत्रगमचिंत्यंचकूटस्थमचलंध्रुवम् ॥ ३ ॥ संनियम्येन्द्रियग्रामंसर्वत्रसमबुद्धयः ॥ तेप्राप्नुवन्तिमामेवसर्वभूतहितेरताः ॥ ४ ॥

दो श्लोकों का एक अन्वय है+सर्वत्रसमबुद्धयः १ सर्वभूतहिते २ रताः ३ इन्द्रियग्रामम् ४ संनियम्य ५ ये ६ अनिर्देश्यम् ७ अव्यक्तम् ८ अक्षरम् ९ सर्वत्रगम् १० अचिन्त्यम् ११ च १२ कूटस्थम् १३ अचलम् १४ ध्रुवम् १५ पर्युपासते १६ ते १७ तु १८ माम् १९ प्राप्नुवन्ति २० एव २१ ॥ ३ । ४ ॥ उ०+निर्गुण उपासकोंका माहात्म्यसुन+अ०+सब काल में समान ज्ञान रहता है जिनका १ सब भूतों के भले में २ प्रीति रखते हैं ३ अर्थात् सबका भला चाहते हैं+इन्द्रियोंके समूह को ४ निरोध करके ५ जो ६ महात्मा निर्गुण उपासक+अनिर्देश्य ७ अव्यक्त ८ अक्षर ९ सर्वत्रग १० अचिन्त्य ११ और १२ कूटस्थ १३ अचल १४ ध्रुवकी १५ उपासना करते हैं १६ अर्थात् आत्माको ऐसा जानकर कि जैसा सात के अंक से पन्द्रह के अंक तक कहा और संसार को इन्द्रजालवत् शुक्ति में रजतवत् समझ कर उसी परमानन्द स्वरूप आत्मा में मग्न रहते हैं अपने स्वरूप जान लेना यथार्थ जैसा ऊपर कहा यही उनकी उपासना है जो ऐसी उपासना करते हैं+वे १७ तो १८ मुझको १९ प्राप्त हैं २० ही निश्चय २१ अर्थात् जब कि उनका स्वरूप अनिर्देश्य है कहने में नहीं आता इस हेतु से उनको योगवित्तम और युक्ततम श्रेष्ठादि शब्दों करके निर्देश करना नहीं बनता यही समझना चाहिये कि वे मेरा स्वरूप हैं जैसा मैं मन वाणी का विषय नहीं ऐसे ही वे हैं उनको उपासक कहना यह एक बोली है+टी०+सदा दुःख सुख इष्ट अनिष्टादि की प्राप्ति में आत्माको एकरस जानते हैं ब्रह्मज्ञानी १ कहने में नहीं आता है कि वह ऐसा है ७ रूपरसादिवत् वह प्रकट नहीं ८ कभी कम नहीं होता ९ सब जगह प्राप्त है १० उसका चिन्तन नहीं होसक्ता क्योंकि वह चित्त से भी सूक्ष्म परे है ११ निर्विकार १३ निश्चल १४ नित्य १५ ॥ ३ । ४ ॥

क्लेशोऽधिकतरस्तेषामव्यक्तासक्तचेतसाम् ॥ अव्यक्ताहिगतिर्दुःखंदेहवद्भिरवाप्यते ॥ ५ ॥

अव्यक्तासक्तचेतसाम् १ तेषाम् २ अधिकतरः ३ क्लेशः ४ अव्यक्ता ५ हि ६

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

गतिः ७ देहवद्भिः ८ दुःखम् ९ अवाप्यते १० ॥ ५ ॥ जब कि निर्गुण ब्रह्म के उपासक ब्रह्मरूप होते हैं तो सगुणब्रह्मकी उपासना छोड़कर निर्गुण ब्रह्मकी उपासना करनी चाहिये यह शंका करके श्रीभगवान् कहतेहैं कि + अ० + अव्यक्त में आसक्त है चित्त जिनका १ और उस उपासना के योग्य वे अभी हुये नहीं + तिनको २ बहुत अत्यन्त ३ दुःख ४ होताहै क्योंकि रूप रसादि विषयोंसे प्रीति दूर होनी सहज नहीं + अव्यक्ताहिगतिः अर्थात् अव्यक्त की प्राप्ति ५ । ६ । ७ देहाभिमानियों को ८ अर्थात् जो आत्मा को क्रियावान् समझते हैं शुद्ध सच्चिदानन्द आत्माको पूर्ण ब्रह्म नहीं समझते तिनको + दुःखसे ९ प्राप्तहोती है १० तात्पर्य उनको बहुत प्रयत्न करना पड़ताहै देहाभिमानियों के वास्ते अन्यउपाय श्रीभगवान् अभी इस मन्त्र से आगे सात श्लोकों में बारह के श्लोक तक कहैंगे + उसका अनुष्ठान करने से निर्गुण ब्रह्मकी प्राप्ति उनको सुलभ होजायगी निर्गुण ब्रह्म के उपासकों ने भी पहिले वही अनुष्ठान किया है जब उनको परमानन्दस्वरूप आत्मा की प्राप्ति हुई है आत्मनिष्ठा की क्रिया समझना न चाहिये सगुण ब्रह्मकी उपासनावत् सगुणब्रह्मकी उपासना का फल समझना सगुण ब्रह्म के उपासकका यावत् देह में अध्यास बनारहै देह इन्द्रियादि के साथ ममता तादात्म्यता एकता बनी रहै विवेक वैराग्यादि साधन न हों तब तक वे निर्गुण ब्रह्मकी उपासना के योग्य नहीं जो निर्गुण ब्रह्मकी महिमा सुनकर उस उपासना में चित्तको आसक्त करेंगे उनको प्रथम तो बहुत दुःखहोगा क्योंकि निर्गुणब्रह्म आत्मा अतिसूक्ष्म देहेन्द्रियादि से विलक्षण है देहाभिमानी को उसकी प्राप्ति होनी बहुत कठिन है वह ब्रह्मको आत्मा से जुदा समझता है + इस प्रकरण का अर्थ जो हमने लिखा है सो तो श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य श्रीशङ्कराचार्य महाराजजी के भाष्यानुसार और श्रीस्वामी आनन्दगिरिजीने भाष्यपर जो टीका बनाईहै और श्रीशंकरानन्दी और मधुसूदनी आदि टीकाओं के अनुसार यथामति लिखा है कोई कोई भेदवादी जानकर या भूलकर या आमर्ष ईर्षादि से जो इस प्रकरण का अनर्थ करते हैं सो भी संक्षेप करके लिखाजाता है लीलाविग्रह मूर्तिमान् राम कृष्णादि की उपासना पुराणोक्त है मन्द मध्यम अधिकारियों के लिये अन्तःकरण की शुद्धिका साधन है इसहेतु से साधनों के प्रकरण में जितनी उस उपासनाकी स्तुति महिमा बड़ाई लिखी जावे वह सब सत्य प्रमाण है परन्तु वेलोग निर्गुण उपासना की प्रत्यक्ष निन्दा असूया करते हैं और कोई अर्थ का अनर्थ करते हैं अक्षरों का अर्थ फेर देते हैं क्या अनर्थ करते हैं वे इस प्रकरण का सो

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

सुनो अर्जुन ने श्रीकृष्णचन्द्रजी से प्रश्न किया कि सगुण ब्रह्मके उपासक श्रेष्ठ हैं या निर्गुण ब्रह्म के श्रीभगवान् ने उत्तर दिया कि सगुण ब्रह्मके उपासक श्रेष्ठ हैं यद्यपि निर्गुण ब्रह्म के उपासक भी मुझकोही प्राप्तहोंगे परन्तु उनको उस उपासना में बहुत दुःख होताहैक्योंकि देहधारीसे निर्गुणकी उपासना होनी बहुत कठिन है और जो सगुण ब्रह्म के उपासक हैं उनको जल्दी विनाश्रम संसारसे मैं उद्धार करूंगा यह अर्थ करतेहैं वे लोग तत्र अर्थात् सो नहीं है अर्थ इस प्रकरणका क्यों नहीं सो सिद्धान्त कहते हैं विचारो कि अर्जुनका प्रश्न यहहै कि तिनमें योगवित्तम कौनहै योगवित्तमका अर्थ जो हमने किया उसको विचारो और जो वे कहते हैं उसके विचारो श्रीभगवान्नें उत्तर दिया कि सगुणब्रह्मके उपासक युक्ततमहैं मेरे मतमें और निर्गुण ब्रह्म केउपासक तो मुझको प्राप्तहैं ही निश्चय युक्ततमका अर्थ जो हमने किया सो विचारो और जो वे करते हैं सो विचारो यह अर्थ कैसे निकलता है कि सगुणब्रह्म के उपासक निर्गुण ब्रह्मके उपासकोंसे श्रेष्ठहैं प्राप्नुवन्ति इस वर्तमान क्रियाका अर्थ सगुणोपासक भविष्यत् अर्थ करदेते हैं और + तु + इस शब्दका + भी + यह अर्थ करते हैं अर्थात् वेभी मुझको प्राप्त होंगे अब एक तो इस अर्थ को विचारो कि वे तौ मुझको प्राप्तहैं ही निश्चय और एक इस अर्थ को विचारो कि वेभी मुझको प्राप्तहोंगे कितना अन्तर पड़गया और अर्थ का अनर्थ हुआ या नहीं मुक्त पुरुषों का साधक कहदिया और + तु + इस शब्द का + तो + यह अर्थ छोड़कर + भी + यह अर्थ करदिया कि परमेश्वरकी प्राप्ति में + भी + भी + यह शब्द सन्देह उत्पन्न करता है और उसीजगह + एव + यह शब्दहै उसका अर्थ + निश्चय + और + हि + यह होताहैउसको छोड़देतेहैं उस का कुछ अर्थ करतेही नहीं + प्रकरण का अर्थ स्पष्ट है निर्गुण ब्रह्म के उपासक भगवत् को जीतेजी प्राप्त हैं किसी साधनकी उनको अपेक्षा नहीं और सगुण ब्रह्म के उपासक युक्ततमहैं उत्तम योगी साधक का नाम युक्ततम है साधक योगियों में श्रेष्ठ हैं यह अर्थ है युक्ततम का निर्गुण उपासकों से कभी श्रेष्ठ नहीं होसक्ते क्यों कि ज्ञानीलोग भगवत् रूपहैं चौथेअध्यायमें श्रीभगवान् ने स्पष्ट कहा है कि ज्ञानी मेरा आत्मा है तीसरे अध्याय में यह कहाहै कि मैंने दोनों निष्ठा कही हैं विरक्तों के वास्ते ज्ञाननिष्ठा अज्ञानियों के लिये कर्मनिष्ठा यह जो तू बूझता है कि दोनों में श्रेष्ठ क्या है यह प्रश्नही वे योग है क्योंकि अधिकार प्रति दोनों श्रेष्ठ हैं अर्थात् ज्ञाननिष्ठा के श्रेष्ठ होने में तो कुछ सन्देहहै नहीं क्योंकि वह कर्मनिष्ठा का फल है मोक्षदाता है विषयी बहिर्मुखों की निष्ठासे कर्मनिष्ठा श्रेष्ठ है कर्म-

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

निष्ठामें ही उपासना का अन्तर्भाव है जैसा प्रश्न अर्जुनने तीसरे अध्याय में किया कि ज्ञाननिष्ठा और कर्मनिष्ठा इन दोनों में से कौनसी निष्ठा श्रेष्ठहै ऐसेंही यह प्रश्न किया कि उपासकों में कौन श्रेष्ठहै प्रश्न अनजान में होताहै अर्जुनने ज्ञाननिष्ठा को भी साधन समझा श्रीभगवान् ने यह तो न कहा कि यह प्रश्न वे योग है परन्तु उसी प्रश्न के अनुसार प्रकरण को पृथक् करके ऐसा उत्तर देदिया कि किसीने अपने को निकृष्ट न समझा + पांचवें मन्त्रका वे यह अर्थ करते हैं निर्गुण ब्रह्मके उपासकों को दुःख बहुत होताहै यह भी असत्य है क्योंकि दुःख साधकों को होताहै निर्गुण ब्रह्मके उपासक साक्षात् परमानन्द को प्राप्तहैं श्रीभगवान् ने उसी मन्त्रमें विशेषण दिया कि जिनको देहका अभिमान है उनको दुःख होताहै विचारो देहाभिमानी ज्ञानी होतेहैं या उपासक विना देहाभिमान उपासना नहीं बनसक्ती और विना देहाभिमान गये साक्षात् निर्गुण ब्रह्मकी उपासना नहीं बनसक्ती यह नियमहै और जिसको देहाभिमानहै उसको हम ज्ञानी निर्गुण ब्रह्मका उपासक नहीं कहते यहां प्रसंग सच्चे उपासकों काहै जो कोई वेषधारी में देहाभिमान की शङ्काकरै तो हम तिलक मालाधारी में हज़ार शङ्का अभक्ति पाखण्ड की करसक्ते हैं + विचारो एक तो साक्षात् परमानन्द को प्राप्तहै परमानन्द रूप आत्मा को अपरोक्ष समझ कर उपासना करतेहैं और एक आनन्द की इच्छा करते हुये आनन्दजनक रामकृष्णादि की उपासना करते हैं दृष्टान्तमें समझो कि एक तो भोजनकर रहाहै और एक भोजन बनारहाहै दोनोंमें दुःख किसको है और जो सगुण ब्रह्मके उपासक यह कहैं कि हमारे इष्टदेव श्री राम कृष्णादि आनन्दरूप मूर्त्तिमान् हैं सो नहीं होसक्ता आनन्द पदार्थ सदा निरवयव रहताहै लक्ष्यरूप राम कृष्णादिका आनन्दरूपहै सो उनको परोक्षहै और वह ज्ञानियों को अपरोक्ष है और यही भेद भी है सगुण ब्रह्मकी उपासना और निर्गुण ब्रह्मकी उपासना में और जो वे यह कहैं कि हमको भी आनन्दरूप अपरोक्ष है तो हम उनको ज्ञानी निर्गुण ब्रह्मके उपासक कहैंगे यही सिद्धान्तहै कि जिनको परमानन्द अपरोक्ष नहीं उनको दुःखहै और परमानन्द के अपरोक्षहोने में यही परीक्षाहै कि जिनको देहाभिमान वर्णाश्रम जाति दास स्वामी भावका अभिमान है भेद भाव जिनमें प्रतीत होता है ऐसे देहाभिमानियों को परमानन्द अपरोक्ष कहांहै + सगुणोपासक निर्गुणोपासनाको समूल खण्डन करते हैं क्योंकि परमानन्द की प्राप्ति उन्होंने केवल सगुणोपासना से मानी कि जिसको परमपद भक्ति कहते हैं और निर्गुण उपासना का फल दुःख बताया तो निर्गुणोपासना

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

आपही खण्डन होगई और निर्गुणोपासक सगुण पासनाका + खण्डन नहीं करते न उनको बुरा कहतेहैं जब सगुणोपासक वृथा निर्गुणोपासकों से तकरार वाद करने लगते हैं तब निर्गुणोपासक यथार्थ व्यवस्था कहदेतेहैं इसी हेतुसे यह प्रसंग हमने भी लिखाहै + समझो और विचारो कि जो निर्गुण ब्रह्मकी उपासना में दुःख होता तो वे सगुणोपासनाको छोड़कर क्यों अंगीकारकरते दूसरे यह कि निर्गुणोपासक तो दोनों उपासनाका आनन्द जानते हैं सगुणोपासक एककाही जानते हैं जो अनुभव करीहुई बतीहुई बात कहै उसके वाक्यमें श्रद्धा होतीहै तीसरे यह कि जो ज्ञानी होगा वह बेसन्देह विद्यावान् होगा विना ब्रह्मविद्या भगवत्की पहिचान नहीं होसक्ती चौथे निर्गुण उपासना में प्रवृत्ति नहीं सगुण उपासना में अत्यन्त प्रवृत्ति है जहां प्रवृत्ति होगी और जहां द्रव्य गहने वस्त्रादिका सम्बन्ध होगा वहां सब अनर्थ होंगे पांचवें सगुणोपासक बहुत सगुणोपासनाको छोड़ निर्गुणोपासना करने लगते हैं निर्गुणोपासक कभी न सुना होगा कि उसने अपनी उपासना छोड़कर सगुणोपासना करीहो मूर्खोंका यहां प्रसंग नहीं आनन्दको छोड़कर दुःख में कोई नहीं प्रवृत्त होता दुःखको छोड़ आनन्द में सब प्रवृत्त होतेहैं इस हेतुसे विचार करो कि दुःख किस उपासना में है और आनन्द किस उपासना में है छठें भगवद्गीता अद्वैतामृतवर्षिणीहै इसमें जो द्वैतसिद्धान्तसमझते हैं वे अद्वैतामृतवर्षिणी का अर्थ करें + तात्पर्य सगुणोपासना साधन है निर्गुणोपासना फल है इत्यभिप्रायः ॥ ५ ॥

येतुसर्वाणिकर्माणिमयिसंन्यस्यमत्पराः ॥ अनन्येनैवयोगेनमांध्यायंतउपासते ॥ ६ ॥

सर्वाणि १ कर्माणि २ तु ३ मयि ४ संन्यस्य ५ ये ६ मत्पराः ७ अनन्येन ८ योगेन ९ एव १० माम् ११ ध्यायंतः १२ उपासते १३ ॥ ६ ॥ उ० + सगुण ब्रह्म उपासकों के वास्ते निर्गुणब्रह्म की प्राप्तिका उपाय अधिकार भेदसे कई प्रकार का कहते हैं छः श्लोकों में भगवत् पर जैसी अपनी सामर्थ्य जाने सोई उपाय करै + अ० + सब कर्मोंको १ । २ तो ३ मुझ में ४ संन्यास करके ५ जो ६ मुझ नारायण ७ अनन्ययोग करके ८ । ९ निश्चय १० मेरा ११ ध्यान करतेहुये १२ उपासना करते हैं १३ मेरी तिन का मैं उद्धार करूंगा इस श्लोक का अगले श्लोक के साथ सम्बन्धहै तात्पर्य इस श्लोक में उन भक्तोंका प्रसंगहै कि जिन्होंने इस जन्म में या पिछले जन्मों में अग्निहोत्रादि कर्मोंका अनुष्ठान करके

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

अन्तःकरण शुद्ध कर लिया है उन कर्मोंको तो संन्यास करके दिनरात्रि गंगा-प्रवाहवत् सगुणब्रह्मका ध्यानकरते हैं सिवाय परब्रह्मके और कुछ अपना आश्रय नहीं जानते भगवद्भक्त को ही सार सिद्धांत समझते हैं दूसरे मत को बुरा कहना न भला कहना यह लक्षण उत्तम सगुण ब्रह्मके उपासकों का है ऐसे भक्तोंका ब्रह्मविद्या द्वारा अनायास जल्द परमेश्वर उद्धार करते हैं ॥ ६ ॥

तेषामहंसमुद्धर्तामृत्युसंसारसागरात् ॥ भवामि नचिरात्पार्थमय्यावेशितचेतसाम् ॥ ७ ॥

पार्थ १ मयि २ आवेशितचेतसाम् ३ तेषाम् ४ मृत्युसंसारसागरात् ५ न ६ चिरात् ७ समुद्धर्ता ८ अहम् ९ भवामि १० ॥ ७ ॥ उ० + भक्तोंको धीरज बांधने के लिये अपनी छातीपर हस्तकमल रखकर प्रतिज्ञा करते हैं कि + अ० + हे अर्जुन ! १ मुझमें २ लग रहाहै चित्त जिनका ३ तिनका ४ मृत्यु संसार समुद्र से ५ जल्दी ६ न ७ उद्धार करनेवाला ८ मैं ९ हूं १० तात्पर्य जो श्रीकृष्णचन्द्र रामचन्द्रादि सदाशिवादिके भक्तहैं वे जल्दी संसारसमुद्र से पार होंगे जैसे कोई मणिकी प्रभाको मणि समझकर लेनेके लिये दौड़ता है प्रभा तो मणि न थी परन्तु उस जगहसे सच्ची मणि दीख पड़तीहै जब उस मणिका मिलना सहज हो जाताहै इसीप्रकार सगुण ब्रह्मकी उपासना करते करते शुद्ध सच्चिदानन्दका ज्ञान होजाताहै भगवत्का जानना यही संसार से उद्धार होना है फिर उसको जन्म मरण नहीं होता श्रीभगवान् इस प्रतिज्ञाके पूर्ण होनेके लिये अपना यथार्थ स्वरूप तेरहवें अध्याय में निरूपण करैंगे जिसके जाननेसे जल्द उद्धार होजावे ॥ ७ ॥

मय्येवमनआधत्स्वमयिबुद्धिंनिवेशय ॥ निवि शिष्यसिमय्येवअतऊर्ध्वंनसंशयः ॥ ८ ॥

मयि १ एव २ मनः ३ आधत्स्व ४ मयि ५ बुद्धिम् ६ निवेशय ७ अतः ८ ऊर्ध्वम् ९ मयि १० एव ११ निविशिष्यसि १२ न १३ संशयः १४ ॥ ८ ॥ उ० + जिनका मन मुझमें आसक्त है उनका मैं उद्धार करूंगा यह मैंने प्रतिज्ञा करी है इस वास्ते हे अर्जुन ! तू भी + अ० + मुझमें १ ही २ मनको ३ स्थिरकर ४ मुझमें ५ बुद्धि को ६ प्रवेश कर ७ इससे ८ पीछे ९ मुझमें १० ही ११ वास करेगा तू १२ नहीं १३ संशय १४ इस वाक्य में तात्पर्य वेदकी यह श्रुतिहै देहान्ते देवः परं ब्रह्म तारकं व्याचष्ट इति अर्थात् देहके अन्त समय परंब्रह्म अपने

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

इष्टदेव तारक मंत्र ओंकार का उपदेश करते हैं उसी समय ब्रह्मज्ञान होकर परमानन्द को प्राप्त होजाता है यही परमेश्वर में वास करना है॥ ८॥

अथचित्तंसमाधातुंनशक्नोषिमयिस्थिरम्॥ अभ्यासयोगेनततोमामिच्छाप्तुंधनंजय॥ ९॥

धनंजय १ अथ २ मयि ३ चित्तम् ४ समाधातुम् ५ न ६ शक्नोषि ७ स्थिरम् ८ ततः ९ अभ्यासयोगेन १० माम् ११ आप्तुम् १२ इच्छा १३॥ ९॥ उ०+पूर्वोक्त उपायसे भी सुगम उपाय कहते हैं+अ०+हे अर्जुन! १ और जो २ मुझमें ३ चित्त ४ समाधान करनेको ५ नहीं ६ समर्थ है तू ७ स्थिर ८ नहीं करसक्ता है मनको+तो ९ अभ्यासयोगकरके १० मेरी ११ प्राप्तिकी १२ इच्छाकर १३+ मूर्त्तिमान् परमेश्वर में या विश्वरूप में जो दिन रात्रि चित्त स्थिर न रहै तौ वारंवार यह अभ्यास करना कि जब मन दूसरे पदार्थमें जावे उसी समय वहां से हटाकर उसी स्वरूप में समाधान करै इसी को अभ्यासयोग कहते हैं+तात्पर्य अभ्यास करते करते अवश्य मन एक जगह निश्चल हो जाताहै अभ्यास में जल्दी न करे असंख्यात वर्षोंसे मन भगवत्से विमुख हो रहा है अबभी जो दो चार वर्षमें अभ्यास के बलसे भगवत् के सम्मुख होजा तौ भी बड़ी बात है अभ्यास में प्रथम दुःख प्रतीत होता है दुःख समझ कर अभ्यास नहीं छोड़ देना॥ ९॥

अभ्यासेऽप्यसमर्थोऽसिमत्कर्म्मपरमोभव॥ मदर्थमपिकर्माणिकुर्वन्सिद्धिमवाप्स्यसि॥ १०॥

अभ्यासे १ अपि २ असमर्थः ३ असि ४ मत्कर्मपरमः ५ भव ६ मदर्थम् ७ अपि ८ कर्माणि ९ कुर्वन् १० सिद्धिम् ११ अवाप्स्यसि १२॥ १०॥ उ०+उससे भी सुगम उपाय कहते हैं+अ०+अभ्यास में १ भी २ असमर्थ ३ है तू ४ तो+मत्कर्मपरायण ५ हो तू ६ अर्थात् साधुओं की शिर आंखों से टहल करनी दिन रात्रि उनकी सेवामें लगा रहना शिवालय केशवालय बनाने मन्दिरों में बुहारी देना लीपना ठाकुरसेवाके वर्तन मांजने शुद्धजल अपने हाथसे लाना बहुत क्रियाके साथ रसोई बनाना प्रथम परमेश्वर को भोग लगाना और ढूंढकर साधु को जिमाना ऐसे २ बहुत कर्म्म हैं साधु महात्मा बतासक्ते हैं ऐसे कर्म्मों में तत्पर होना चाहिये श्रीभगवान् कहते हैं कि+मेरे अर्थ ७ भी ८ कर्मोंको ९ करताहुआ १० अन्तःकरणशुद्धिद्वारा ज्ञानको प्राप्त होकर+मोक्षको

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

११ प्राप्तहोगा तू १२ तात्पर्य भगवत् भजन और भगवत्सेवासम्बन्धी जो कर्म्म हैं सब अन्तःकरण को शुद्ध करसक्ते हैं ॥ १० ॥

अथैतदप्यसक्तोऽसि कर्तुमद्योगमाश्रितः ॥ सर्वकर्मफलत्यागं ततः कुरुयतात्मवान् ॥ ११ ॥

अथ १ एतत् २ अपि ३ कर्तुम् ४ असक्तः ५ असि ६ ततः ७ मद्योगम् ८ आश्रितः ९ सर्वकर्मफलत्यागम् १० कुरु ११ यतात्मवान् १२ ॥ ११ ॥ उ० + उससे भी सुगम उपाय कहते हैं + अ० + जो १ यह २ भी ३ करने को ४ असमर्थ ५ है तू ६ तो ७ भक्तियोग को ८ आश्रय करके ९ सब कर्मों के फल का त्याग १० करतू ११ मनको जीतकर १२ अर्थात् अब तू फिर संकल्प विकल्प कुछ मतकर जो कुछ नित्य निमित्त प्रायश्चित्तादि कर्मोंका अनुष्ठान होसके वही कर उसके फल में आसक्ति मत कर यह समझ कि मैं तो तन मन धन करके भगवत् की शरणहूं मैं तो उनका दासहूं वे महाराज अन्तर्यामीहैं जैसा चाहैं मुझसे शुभाशुभ कर्म करावें और जैसा चाहैं उन कर्मों का फल दें मुझको तो सिवाय परमेश्वरके और कुछ किसीतरहका आसरा नहीं परन्तु यह प्रकट है कि धनादि की प्राप्ति के लिये जहां तक होसके राजादि मनुष्योंका दास जान बूझकर न बने व्यवहार का भार तो परमेश्वर को सौंप देना और परमार्थ में मोक्षके लिये जहां तक बनसके प्रयत्न करना चाहिये उलटा ऐसे नहीं समझना कि परलोकका भार तो परमेश्वर को सौंप देना अर्थात् यह समझना कि परमेश्वर जो चाहैं सो करें मेरे करने से क्या होताहै यह मोक्षमार्ग में नहीं समझना व्यवहार में यह समझना कि मेरे करने से कुछ नहीं होता जो प्रारब्ध में लिखा गयाहै वही होगा मोक्षमार्ग में पुरुषार्थ मुख्य है व्यवहार में प्रारब्ध मुख्यहै इत्यभिप्रायः ॥ ११ ॥

श्रेयोहि ज्ञानमभ्यासाज्ज्ञानाद्ध्यानं विशिष्यते ॥ ध्यानात्कर्मफलत्यागस्त्यागाच्छान्तिरनन्तरम् १२

अभ्यासात् १ ज्ञानम् २ श्रेयः ३ हि ४ ज्ञानात् ५ ध्यानम् ६ विशिष्यते ७ ध्यानात् ८ कर्मफलत्यागम् ९ त्यागात् १० अनन्तरम् ११ शान्तिः १२ ॥ १२ ॥ उ० + सब कर्मों के फलका त्याग इस हेतुसे श्रेष्ठहै + अ० + अभ्यास से १ ज्ञान २ श्रेष्ठहै ३ निश्चय ४ शास्त्रीयज्ञानसे ५ ध्यान ६ विशेष है ७ ध्यानसे ८ कर्मोंके फलका त्याग ९ श्रेष्ठहै + त्यागसे १० पीछे ११ शान्ति १२ होतीहै + टी० +

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

विना भलेप्रकार वेदोंका तात्पर्य्य जानेहुये जो किसी कर्मके अनुष्ठानमें अभ्यास करना उससे प्रथम वेदोंका तात्पर्य्य समझना जानना ज्ञान श्रेष्ठ है क्योंकि जिस को परोक्ष ज्ञान यथार्थ होगया वह अवश्यही कभी न कभी उसका अनुष्ठान भी करेगा अविद्यावान् के अनुष्ठान करने से अविद्यावान् विना अनुष्ठान किये भी श्रेष्ठ है क्योंकि वह एक मार्गपर है अविद्यावान् मूर्ख को कहां विचार है कि मुझ को किस कर्मका अधिकार है जो उसको प्रिय लगताहै वही करने लगता है इसी हेतु से कर्मों का फल उनको प्रत्यक्ष नहीं होता + और पण्डित ज्ञानियों से अर्थात् परोक्ष ज्ञानियों से विद्यावान् राम कृष्णादि के ध्यानवाले श्रेष्ठ हैं + मूर्तिमान् परमेश्वर के ध्यान करनेवालों से भी जो विद्यावान् कर्मोंका निष्काम अनुष्ठान करते हैं अर्थात् श्रौत स्मार्त कर्म और भगवत्आराधन और हिरण्यगर्भ सूर्यादि की उपासना और भी भगवत्सम्बन्धी जो कर्म इन सब कर्मों के फल त्याग करते हैं वे श्रेष्ठ हैं क्योंकि शान्ति कर्मों का फल त्यागने से होती है विना त्याग संसार से चित्त उपराम नहीं होता लौकिक वैदिक दोनों कर्मों के फल से जब चित्त उपराम होता है दोनों कर्मों के फलसे जब वैराग्य होता है तब शान्ति उपरति होती है वैराग्य उपरति ये दोनों ज्ञाननिष्ठा के अन्तरंग मुख्य साधन हैं फिर ज्ञाननिष्ठहोकर कृतार्थ होजाताहै अर्थात् परमानन्दको प्राप्त होजाताहै॥ १२॥

अद्वेष्टासर्वभूतानांमैत्रःकरुणएवच ॥ निर्ममोनिरहङ्कारःसमदुःखसुखःक्षमी ॥ १३ ॥

सर्वभूतानाम् १ अद्वेष्टा २ मैत्रः ३ करुणः ४ एव ५ च ६ निर्ममः ७ निरहङ्कारः ८ समदुःखसुखः ९ क्षमी १० ॥ १३ ॥ उ० + शान्त पुरुष ज्ञाननिष्ठ महापुरुषोंके लक्षण श्रीभगवान् सात श्लोकोंमें उत्तरोत्तर श्रेष्ठ कहेंगे + अ० + ज्ञानी जन + सब भूतोंके १ साथ इसप्रकार वर्तते हैं जो कि आपसे जातिरूप धनादिमें बड़े हैं उनके साथ तो + द्वेष नहीं करते २ बहुवचन आदरके लिये लिखते हैं + बराबर के साथ + मित्रता ३ रखते हैं + छोटों पर दया ४ करते हैं यह चाहते हैं कि जैसे हम विद्यावान् धनवाले हैं परमेश्वर करे यह भी वैसेही होजावें और जहांतक होसके यथाशक्ति उनका उपकार करते हैं + और दुष्टजन चोर जार पापीजनों के साथ उपेक्षा रखते हैं अर्थात् उनको बुरा कहना न भला कहना न उनका उपकार करना न अपकार करना। खल परिहरिय श्वान की नाईं + दुष्टों को कुत्तेकी सदृश समझते हैं कुत्तेको टूक डालनेमें क्षति नहीं इत्यभिप्रायः॥ ६

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

पुत्र स्त्री मित्र धन मन्दिरादि में + ममतारहित ७ यह समझते हैं कि शरीर मेरे तो हमारे हैं नहीं पुत्रादि हमारे क्या होंगे ऐसे होकर फिर + अहङ्काररहित ८ कभी वाणी से तो क्या कहना कि हम ऐसे हैं चित्तमें अनुसंधान भी न रखना + और + सम हैं दुःखसुख जिनके ९ यही समझते हैं कि सुख दुःख दोनों अनित्य हैं जैसे दुःख विना संकल्प और विना यत्न आता है ऐसेही सुख आता है और जैसे सुख चला जाता है वैसेही दुःख भी चला जाता है दुःख की निवृत्तिके लिये और सुख की प्राप्तिके लिये कुछ यत्न नहीं करते + और जो कोई वेप्रयोजन भी अपने स्वभाव के अनुसार उनको वाणी शरीरादि करके दुःख देय है उसको + क्षमा करते हैं १० यह समझते हैं कि यह प्रारब्ध का भोग है आध्यात्मिक आधिदैवत आधिभौतिक भी सहने पड़ते हैं जैसे उनको सहते हैं ऐसेही इसको चाहिये उनहीं तीनों ताप में एक यह भी आधिभौतिक ताप है हमारेही कर्मों का फल है कोई दुःख देनेवाला नहीं हमारा मनही कारण है दुःख सुख देने में ऐसे क्षमावान् १० ॥ १३ ॥

सन्तुष्टःसततंयोगीयतात्मादृढनिश्चयः॥ मय्यर्पितमनोबुद्धिर्योमद्भक्तःसमेप्रियः॥ १४ ॥

सततम् १ सन्तुष्टः २ योगी ३ यतात्मा ४ दृढनिश्चयः ५ मयि ६ अर्पितमनोबुद्धिः ७ यः ८ मद्भक्तः ९ सः १० मे ११ प्रियः १२ ॥ १४ ॥ अ० + सदा १ संतुष्टः २ अर्थात् कभी किसीकाल में किसी पदार्थ की चाहना न होनी सदा छके रहना + अष्टांगयोगवान् अर्थात् यम नियमादिपरायण ३ जीता है स्वभाव जिसने पूर्वावस्थामें जो प्राकृतवत् स्वभावथा उसको जीतकर सौम्य शान्तस्वभाव करालिया है जिसने उसको यतात्मा कहते हैं ४ दृढ निश्चयहै जिसका ५ आत्मा में वेद शास्त्रों में कभी जिनको संशय विपर्यय उदय होताही नहीं वेदोक्त आत्मा को शुद्धसच्चिदानन्द बेसन्देह जानते हैं + मुझ आत्मा में ६ अर्पित किया है मन बुद्धि जिसने ७ अर्थात् अन्तःकरणकी वृत्तियोंको आत्माकार करदिया है जिसने ऐसा + जो ८ मेरा भक्त ९ सो १० मुझको ११ प्यारा है १२ चौथे अध्याय में श्रीभगवान्ने कहाथा कि ज्ञानी मुझको बहुत प्यारा है उसीका इन सातश्लोकों में उपसंहार करते हैं जिस श्लोक में प्रिय यह पद नहीं तो भी वहां समझ लेना चाहिये तेरह अठारह के मन्त्र में यह पद नहीं और पांचों मन्त्रों में है ॥ १४ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

यस्मान्नोद्विजतेलोको लोकान्नोद्विजतेचयः ॥ हर्षामर्षभयोद्वेगैर्मुक्तोयःसचमेप्रियः ॥ १५ ॥

यस्मात् १ लोकः २ न ३ उद्विजते ४ यः ५ च ६ लोकात् ७ न ८ उद्विजते ९ हर्षामर्षभयोद्वेगैः १० च ११ यः १२ मुक्तः १३ सः १४ मे १५ प्रियः १६ ॥ १५ ॥ + अ० + जिससे १ जीवमात्र २ + न ३ उद्वेगकरे ४ अर्थात् किसीप्रकार जिससे अपनी हानि समझकर चित्तमें कोई प्राणी क्षोभ न करे + और जो ५ ६ किसी जीवसे ७ न ८ उद्वेगकरे ९ और हर्ष । आमर्ष । भय । उद्वेग इन चारों से १० । ११ जो १२ छूटाहुआ १३ सो १४ मुझको १५ प्रिय १६ है + टी० + इष्ट वस्तु के देखने सुनने में रोमांच का खड़ा होजाना मनमें रञ्ज न होनेलगना इसको हर्ष कहते हैं + दूसरे को विद्यावान् रुपयेवाला देख सुनकर मन मैला उदास हो जाना इसको आमर्ष कहते हैं + किसीप्रकार की मन में शङ्का होनी उसको भय कहते हैं + चित्त का एक जगह स्थिर न होना उसको उद्वेग कहते हैं तात्पर्य ऐसा व्यवहार चाल चलन जिन महापुरुषोंका है कि जिनसे कोई किसी प्रकार बुरा न माने वेही भगवत् के प्यारे हैं ॥ १५ ॥

अनपेक्षःशुचिर्दक्षःउदासीनोगतव्यथः ॥ सर्वारम्भपरित्यागी योमद्भक्तःसमेप्रियः ॥ १६ ॥

अनपेक्षः १ शुचिः २ दक्षः ३ उदासीनः ४ गतव्यथः ५ सर्वारम्भपरित्यागी ६ यः ७ मद्भक्तः ८ सः ९ मे १० प्रियः ११ ॥ १६ ॥ उ० + जो पदार्थ अपनेआप प्राप्त हों उनकी भी + अ० + इच्छा नहीं करनी उपेक्षा करते हैं १ पवित्र २ रहते हैं बाहर भीतरसे जल बाहर मृत्तिकादि करके शुद्ध रहना वस्त्रादि निर्मल रखने भीतर राग द्वेषादि नहीं रखने ३ चतुर ४ व्यवहार परमार्थ की बातों में व्यवहार के समय व्यवहार की बात करनी परमार्थ के समय परमार्थ की प्रथम व्यवहार शुद्ध करना चाहिये तब परमार्थ सिद्ध होता है व्यवहार की जिन को समझ नहीं उनका परमार्थ कभी नहीं सुधरेगा परमार्थ में जीवका कुछ नहीं बिगड़ा व्यवहार बिगड़ गया है उसी को सुधारना चाहिये व्यवहार में परमार्थ परमार्थ में व्यवहार नहीं मिलाते हैं चतुर महात्मा + उदासीन ४ अर्थात् किसी मत पन्थ पक्ष का खण्डन प्रतिपादन नहीं करना आनन्द मत रखना जिसमें सबका सम्मतहै + मनमें किसी प्रकारका खेद नहीं रखते ५ जितने इस लोक

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

परलोक के निमित्त आरंभहैं सबके त्यागी ६ ऐसा + जो ७ मेरा भक्त ८ सो ९ मुझको १० प्यारा ११ है ॥ १६ ॥

योनहृष्यतिनद्वेष्टि नशोचतिनकांक्षति ॥ शुभाशुभपरित्यागी भक्तिमान्यःसमेप्रियः ॥ १७ ॥

यः १ न २ हृष्यति ३ न ४ द्वेष्टि ५ न ६ शोचति ७ न ८ कांक्षति ९ शुभाशुभपरित्यागी १० यः ११ भक्तिमान् १२ सः १३ मे १४ प्रियः १५ ॥ १७ ॥ अ० + जो १ न २ हर्षकरता है ३ न ४ द्वेषकरता है ५ न ६ शोच करता है ७ न ८ इच्छाकरता है ९ शुभ अशुभ दोनों के त्यागने का स्वभावहै जिसका १० ऐसा + जो ११ भक्तिमान् १२ सो १३ मुझको १४ प्यारा है १५ + टी० + इष्टपदार्थके मिलने से आनन्द नहीं होता अनिष्टपदार्थों से द्वेष नहीं करता पिछली बातोंका शोच नहीं करता आगेको कुछ चाहता नहीं शुभ अशुभ पदार्थ ये दोनों अज्ञानके कार्य्य हैं दोनों को अनित्य समझकर दोनों को त्यागकर शुद्ध सच्चिदानन्द स्वरूप आत्मामें भक्ति प्रीति जो रखताहै श्रीभगवान् कहते हैं ऐसा महापुरुष मुझको प्रियहै शुभ वैदिक मार्गका त्याग उनके वास्ते अच्छाहै कि जो आत्मनिष्ठ हैं जैसे लक्षण ऊपर कहे येभी सबहों विना ज्ञान शुभमार्ग त्यागदेना मूर्खोंका कामहै विना ज्ञान कभी शुभमार्ग नहीं त्यागना और ज्ञानहुये पीछे सिवाय आत्माके किसीको उत्तम शुभ श्रेष्ठ समझना नहीं सबको त्यागदेना ॥ १७ ॥

समःशत्रौचमित्रेचतथामानाऽपमानयोः ॥ शीतोष्णसुखदुःखेषु समःसंगविवर्जितः ॥ १८ ॥

शत्रौ १ च २ मित्रे ३ च ४ समः ५ तथा ६ मानापमानयोः ७ शीतोष्णसुखदुःखेषु ८ समः ९ संगविवर्जितः १० ॥ १८ ॥ अ० + शत्रुमें और मित्रमें १ २ । ३ । ४ बराबर ५ तैसेही ६ मान अपमान में ७ समान + शीत गरमी दुःख सुखमें ८ समान ९ शरीर इन्द्रिय प्राण अन्तःकरणका जो + संग उस करके वर्जित १० तात्पर्य्य शरीर इन्द्रिय प्राण अन्तःकरण के साथ जब आत्माका संग होताहै तब आत्मा की शरीरादि में आसक्ति होती है फिर शीतादि में इष्टानिष्ट की भ्रान्ति होती है शत्रु मित्रकी समतामें संगवर्जित यही हेतुहै आत्मनिष्ठ जो महापुरुष हैं वे शरीरादि में अध्यास नहीं रखते इसी हेतुसे शत्रुमित्रादि में उनकी विषमता दूर होजाती है जैसे उनको मानादि वैसेही अपमानादि मानापमानादि

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

यस्मान्नोद्विजतेलोको लोकान्नोद्विजतेचयः ॥ हर्षामर्षभयोद्वेगैर्मुक्तोयःसचमेप्रियः ॥ १५ ॥

यस्मात् १ लोकः२ न ३ उद्विजते ४ यः ५ च ६ लोकात् ७ न ८ उद्विजते९ हर्षामर्षभयोद्वेगैः १० च ११ यः १२ मुक्तः १३ सः १४ मे १५ प्रियः १६ ॥ १५ ॥ + अ० + जिससे १ जीवमात्र २ + न ३ उद्वेगकरे ४ अर्थात् किसीप्रकार जिससे अपनी हानि समझकर चित्तमें कोई प्राणी क्षोभ न करे + और जो५।६ किसी जीवसे ७ न ८ उद्वेगकरे९ और हर्ष। आमर्ष। भय। उद्वेग इन चारों से १०। ११ जो १२ छूटाहुआ १३ सो १४ मुझको १५ प्रिय १६ है + टी० + इष्ट वस्तु के देखने सुनने में रोमांच का खड़ा होजाना मनमें रञ्ज न होनेलगना इसको हर्ष कहते हैं + दूसरे को विद्यावान् रुपयेवाला देख सुनकर मन मैला उदास हो जाना इसको आमर्ष कहते हैं + किसीप्रकार की मन में शङ्का होनी उसको भय कहते हैं + चित्त का एक जगह स्थिर न होना उसको उद्वेग कहतेहैं तात्पर्य ऐसा व्यवहार चाल चलन जिन महापुरुषोंका है कि जिनसे कोई किसी प्रकार बुरा न माने वेही भगवत् के प्यारे हैं ॥ १५ ॥

अनपेक्षःशुचिर्दक्षःउदासीनोगतव्यथः ॥ सर्वारम्भपरित्यागी योमद्भक्तःसमेप्रियः ॥ १६ ॥

अनपेक्षः १ शुचिः २ दक्षः ३ उदासीनः ४ गतव्यथः५सर्वारम्भपरित्यागी ६ यः ७ मद्भक्तः८ सः ९ मे १० प्रियः ११ ॥ १६ ॥ उ० + जो पदार्थ अपनेआप प्राप्त हों उनकी भी + अ० + इच्छा नहीं करनी उपेक्षा करते हैं १ पवित्र २ रहते हैं बाहर भीतरसे जल बाहर मृत्तिकादि करके शुद्ध रहना वस्त्रादि निर्मल रखने भीतर राग द्वेषादि नहीं रखने ३ चतुर ४ व्यवहार परमार्थ को बातों में व्यवहार के समय व्यवहार की बात करनी परमार्थ के समय परमार्थ की प्रथम व्यवहार शुद्ध करना चाहिये तब परमार्थ सिद्ध होता है व्यवहार की जिन को समझ नहीं उनका परमार्थ कभी नहीं सुधरेगा परमार्थ में जीवका कुछ नहीं बिगड़ा व्यवहार बिगड़ गया है उसी को सुधारना चाहिये व्यवहार में परमार्थ परमार्थ में व्यवहार नहीं मिलाते हैं चतुर महात्मा + उदासीन ४ अर्थात् किसी मत पन्थ पक्ष का खण्डन प्रतिपादन नहीं करना आनन्द मत रखना जिसमें सबका सम्मतहै + मनमें किसी प्रकारका खेद नहीं रखते ५ जितने इस लोक

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

परलोक के निमित्त आरंभहैं सबके त्यागी ६ ऐसा + जो ७ मेरा भक्त ८ सो ९ मुझको १० प्यारा ११ है ॥ १६ ॥

योनहृष्यतिनद्वेष्टि नशोचतिनकांक्षति ॥ शुभाशुभपरित्यागी भक्तिमान्यःसमेप्रियः ॥ १७ ॥

यः १ न २ हृष्यति ३ न ४ द्वेष्टि ५ न ६ शोचति ७ न ८ कांक्षति ९ शुभाशुभपरित्यागी १० यः ११ भक्तिमान् १२ सः १३ मे १४ प्रियः १५ ॥ १७ ॥ अ० + जो १ न २ हर्षकरता है ३ न ४ द्वेषकरता है ५ न ६ शोच करता है ७ न ८ इच्छाकरता है ९ शुभ अशुभ दोनों के त्यागने का स्वभावहै जिसका १० ऐसा + जो ११ भक्तिमान् १२ सो १३ मुझको १४ प्यारा है १५ + टी० + इष्टपदार्थके मिलने से आनन्द नहीं होता अनिष्टपदार्थों से द्वेष नहीं करता पिछली बातोंका शोच नहीं करता आगेको कुछ चाहता नहीं शुभ अशुभ पदार्थ ये दोनों अज्ञानके कार्य्य हैं दोनों को अनित्य समझकर दोनों को त्यागकर शुद्ध सच्चिदानन्द स्वरूप आत्मामें भक्ति प्रीति जो रखताहै श्रीभगवान् कहते हैं ऐसा महापुरुष मुझको प्रियहै शुभ वैदिक मार्गका त्याग उनके वास्ते अच्छाहै कि जो आत्मनिष्ठ हैं जैसे लक्षण ऊपर कहे येभी सबहों विना ज्ञान शुभमार्ग त्यागदेना मूर्खोंका कामहै विना ज्ञान कभी शुभमार्ग नहीं त्यागना और ज्ञानहुये पीछे सिवाय आत्माके किसीको उत्तम शुभ श्रेष्ठ समझना नहीं सबको त्यागदेना ॥ १७ ॥

समःशत्रौचमित्रेचतथामानाऽपमानयोः ॥ शीतोष्णसुखदुःखेषु समःसंगविवर्जितः ॥ १८ ॥

शत्रौ १ च २ मित्रे ३ च ४ समः ५ तथा ६ मानापमानयोः ७ शीतोष्णसुखदुःखेषु ८ समः ९ संगविवर्जितः १० ॥ १८ ॥ अ० + शत्रुमें और मित्रमें १ २ । ३ । ४ बराबर ५ तैसेही ६ मान अपमान में ७ समान + शीत गरमी दुःख सुखमें ८ समान ९ शरीर इन्द्रिय प्राण अन्तःकरणका जो + संग उस करके वर्जित १० तात्पर्य्य शरीर इन्द्रिय प्राण अन्तःकरण के साथ जब आत्माका संग होताहै तब आत्मा की शरीरादि में आसक्ति होती है फिर शीतादि में इष्टानिष्ट की भ्रान्ति होती है शत्रु मित्रकी समतामें संगवर्जित यही हेतुहै आत्मनिष्ठ जो महापुरुष हैं वे शरीरादि में अध्यास नहीं रखते इसी हेतुसे शत्रुमित्रादि में उनकी विषमता दूर होजाती है जैसे उनको मानादि वैसेही अपमानादि मानापमानादि

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

यह सब अन्तःकरणका धर्म है आत्मनिष्ठ अपनेको सबसे पृथक् जानते हैं विना आत्मनिष्ठा के देहाभिमानियों से पूर्वोक्त लक्षणोंका अनुष्ठान नहीं होसक्ता यह सब लक्षण ज्ञाननिष्ठाही में बनसक्ते हैं ॥ १८ ॥

तुल्यनिन्दास्तुतिर्मौनी सन्तुष्टोयेनकेनचित् ॥ अनिकेतःस्थिरमतिर्भक्तिमान्मेप्रियोनरः ॥ १९ ॥

तुल्यनिन्दास्तुतिः १ मौनी २ येनकेनचित् ३ सन्तुष्टः ४ अनिकेतः ५ स्थिरमतिः ६ भक्तिमान् ७ नरः ८ मे ९ प्रियः १० ॥ १९ ॥ अ० + समानहै निन्दा स्तुति जिसके १ चुपरहना या वेदान्तशास्त्रका मनन करना उसको मौनी कहते हैं २ जो पदार्थ प्रारब्धवशात् विना यत्न थोड़ा बहुत प्राप्त होजावे उसी करके ३ संतोष करना ४ ऐसे पुरुषको संतुष्ट कहते हैं ४ एक जगह के रहने को नियम नहीं करना उसको अनिकेत कहते हैं ५ + अपने स्वरूपमें + निश्चलहै बुद्धि जिसकी ६ ऐसा + भक्तिमान् ७ पुरुष ८ मुझको ९ प्यारा है १० येनकेनचिदाच्छिन्नो येन केनचिदाशिनः । यत्रकुत्रसयाथीस्यात् तंदेवाब्राह्मणंविदुः + महाभारतका यह श्लोकहै तात्पर्य पूर्वोक्त लक्षण ब्रह्मनिष्ठ ज्ञानी भक्तों के हैं अर्जुनने बूझाथा कि अक्षर ब्रह्म उपासक कैसे हैं श्रीमहाराजने उत्तरदिया कि ऐसा होते वे ऐसे नहींहोते कि रासलीलामें तमाशा तो आप देखें राधा कृष्णको बेसमझलोग अन्यमतवाले बुराकहैं और अच्छे पदार्थोंका मोहनभोग नाम रखकर आपही चटकरजाना साधु अभ्यागतको न देना इस अध्याय में भक्तों के लक्षण जैसे श्रीमहाराजने कहे हैं जिनमें ये होंगे वही भक्त भगवत्को प्राप्तहोगा अन्य नहीं इत्यभिप्रायः ॥ १९ ॥

येतुधर्म्यामृतमिदं यथोक्तंपर्युपासते ॥ श्रद्दधानामत्परमा भक्तास्तेऽतीवमेप्रियाः ॥ २० ॥

मत्परमाः १ ये २ श्रद्दधानाः ३ भक्ताः ४ इदम् ५ धर्म्यामृतम् ६ यथा ७ उक्तम् ८ पर्युपासते ९ ते १० तु ११ अति १२ इव १३ मे १४ प्रियाः १५ ॥ २० ॥ अ० + मैं हूं परेसे परे जिनके ऐसे १ जो २ श्रद्धावान् ३ भक्त ४ इस धर्म करके युक्त अमृतको ५ । ६ जैसे ७ कहाहै ८ पीछे हम उसका + अनुष्ठान करते हैं ९ वे १० भक्त तो + ११ बहुतही १२ । १३ मुझको १४ प्यारे हैं १५ अर्थात् भक्त जिनका नामभी है जो नाममात्र भक्तहैं वेभी भगवत्को प्यारे हैं और अद्वेष्टादि लक्षणों करके जो सम्पन्न हैं वेतौ अत्यन्त प्यारे हैं ॥ प्रियोहि ज्ञानिनोऽत्यर्थमहं

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

सत्त्वमप्रियः ॥ यह जो सातवें अध्याय में उपक्रम किया था उसी का उपसंहार है पुनरुक्ति नहीं सब धर्मों का सार सिद्धान्त अमृतरूप यह उपदेश है विचारना चाहिये कि ये लक्षण अनिकेत मौनादि निवृत्तिमार्ग वाले ज्ञाननिष्ठ संन्यासी महापुरुषों में पाते हैं या जो घण्टा घड़ियाल बजाते हैं नृत्य देखते हैं उनमें पाते हैं वास्ते उदाहरण के श्रीस्वामी पूर्णाश्रमजी महाराज संन्यासी परमहंस ज्ञाननिष्ठ नग्न मौनहुये श्रीभागीरथी गंगाजी के तीरही विचरते रहते हैं जितने लक्षण सात श्लोकों में श्रीभगवान् ने कहे सब उन महाराज में प्रत्यक्ष हैं जो चाहे दर्शनकरो चैत्रसुदी रामनवमी संवत् १९२१ में इस श्लोक का अर्थ मुझ आनन्दगिरि ने लिखा है श्रीमहाराज पूर्वोक्त परमहंसजी विद्यमान हैं और भी बहुत महात्मा हैं सिवाय संन्यासियों के कोई तो बतावे कि ऐसा कौन हुआ है पहले भी और अब आंखों से तो कौन दिखासक्ता है इतने पर भी जो विरक्तों का माहात्म्य न समझेगा तो वह बे सन्देह प्रवृत्त लोकों के पंजे में फँसेगा ॥ २० ॥

इति श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे भक्तियोगोनामद्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

इति श्रीआनन्दगिरिविरचितायां परमानन्दप्रकाशिकायां टीकायांद्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

तेरहवें अध्यायका प्रारम्भ हुआ ॥

अर्जुनउवाच ॥ प्रकृतिंपुरुषंचैवक्षेत्रंक्षेत्रज्ञमेवच ॥ एतद्वेदितुमिच्छामिज्ञानंज्ञेयंचकेशव ॥ १ ॥

अर्जुनउवाच + केशव १ प्रकृतिम् २ पुरुषम् ३ च ४ एव ५ क्षेत्रम् ६ क्षेत्रज्ञम् ७ एव ८ च ९ ज्ञानम् १० ज्ञेयम् ११ च १२ एतत् १३ वेदितुम् १४ इच्छामि १५ ॥ १ ॥ यह श्लोक किसी राजा ने बनाकर श्रीभगवद्गीता की पोथियों में लिखवा दिया है जो अज्ञान हैं वे इस श्लोक को भी व्यासकृत समझते हैं व्यास जीने सातसौ ७०० श्लोक बनाये हैं यह मिलकर सातसौ एक होजातेहैं अर्थ इसका यह है कि + अ० हे केशव ! १ प्रकृति २ और पुरुष ३ । ४ । ५ क्षेत्र ६ और

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

क्षेत्रज्ञ ७। ८। ९ ज्ञान १० और ज्ञेय ११। १२ इनके १३ जाननेकी १४ इच्छा करताहूं मैं १५ तात्पर्य क्षेत्रादि पदों का अर्थ जानाचाहताहूं + इस प्रश्नकी कुछ आकांक्षा न थी क्योंकि श्रीभगवान् ने बारहवें अध्याय में आप यह कहा है कि भक्तों का मैं शीघ्र उद्धार करूंगा जो इस प्रश्न में पद हैं बिना उनके अर्थ जाने ज्ञाननिष्ठा नहीं होसक्ती और बिना ज्ञाननिष्ठा के संसार से उद्धार नहीं होता इस वास्ते ये सब पदार्थ श्रीमहाराज ने बिना प्रश्नकहे जो टीकासहित पोथी हैं उन में यह श्लोक नहीं और बहुत विद्वान् मूल पोथियों में भी नहीं लिखते कोई कोई मूल पोथियों में लिख देते हैं ॥ १ ॥

इस यन्त्र के अनुसार सातसौ श्लोक हैं गीता के अठारह अध्यायों में ॥

अ०	श्लो०	अ०	श्लो०	
१	४७	१०	४२	
२	७२	११	५५	
३	४३	१२	२०	७०० श्लोक
४	४२	१३	३४	
५	२९	१४	२७	
६	४७	१५	२०	समस्तजोड़
७	३०	१६	२४	
८	२८	१७	२८	
९	३४	१८	७८	
जो०	३७२	जो०	३२८	

श्रीभगवानुवाच ॥ इदंशरीरंकौंतेय क्षेत्रमित्यभिधीयते ॥ एतद्योवेत्तिंप्राहुःक्षेत्रज्ञमितितद्विदः ॥ २ ॥

श्रीभगवानुवाच + कौंतेय १ इदम् २ शरीरम् ३ क्षेत्रम् ४ इति ५ अभिधीयते ६ यः ७ एतत् ८ वेत्ति ९ तम् १० तद्विदः ११ क्षेत्रज्ञम् १२ इति १३ प्राहुः १४ ॥ २ ॥ उ० + बारहवें अध्याय में श्रीभगवान् ने कहाथा कि भक्तों का उद्धार संसार से शीघ्र करूंगा मैं जोकि बिना आत्मज्ञान के उद्धार नहीं होता इस वास्ते इस अध्याय में ब्रह्मज्ञान साधनसहित कहते हैं + अ० + हे अर्जुन! १ इस २ शरीर को ३ क्षेत्र ४। ५ कहते हैं ६ जो ७ इसको ८ जानता है ९ तिसको १० तिनके ज्ञाता ११ अर्थात् क्षेत्र क्षेत्रज्ञ के जाननेवाले + क्षेत्रज्ञ १२। १३ कहते हैं १४ तात्पर्य स्थूल शरीर क्षेत्र खेतकी

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

बराबरहै पाप पुण्य इसमें उत्पन्न होतेहैं इसी हेतुसे इसको क्षेत्र कहते हैं जो इसका अभिमानी उसको क्षेत्रज्ञ कहते हैं क्षेत्रज्ञ वास्तव शुद्ध सच्चिदानन्द असंग नित्यमुक्त है अविद्योपहित हुआ व्यष्टि स्थूल सूक्ष्म कारण शरीरोंका अभिमानी बनकर विश्व तैजस प्राज्ञ कहाजाताहै और मायोपहित हुआ समष्टि स्थूल सूक्ष्मकारण शरीरोंका अभिमानी बनकर विराट् हिरण्यगर्भ ईश्वर कहाजाताहै और वह माया अविद्यारहित शुद्ध सच्चिदानन्द नित्यमुक्तहै अध्यारोप अपवाद न्यायकरके सिद्धांत यहीहै२॥

क्षेत्रज्ञंचापिमांविद्धिसर्वक्षेत्रेषुभारत ॥ क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोर्ज्ञानंयत्तज्ज्ञानंमतंमम ॥ ३ ॥

भारत १ सर्वक्षेत्रेषु २ क्षेत्रज्ञम् ३ माम् ४ च ५ अपि ६ विद्धि ७ यत् ८ क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोः ९ ज्ञानम् १० तत् ११ ज्ञानम् १२ मम १३ मतम् १४ ॥ ३ ॥ अ०+ तत् त्वम् पदोंको अर्थ पिछले मंत्रमें पृथक् पृथक् निरूपण किया अब महावाक्यार्थ निरूपण करतेहैं श्रीभगवान् स्पष्ट जीव ईश्वरकी लक्ष्यार्थमें एकता दिखाते हैं+अ०+हे अर्जुन! १ सब क्षेत्रों में २ क्षेत्रज्ञ ३ मुझको ही ४। ५। ६ जानतू ७ और जगह मत ढूंढ इत्यभिप्रायः + इस प्रकार + जो ८ क्षेत्र क्षेत्रज्ञ का ९ ज्ञान १० सो ११ ज्ञान १२ मेरा १३ मत १४ है तात्पर्य्य तत् त्वम् पदोंके लक्ष्यार्थको ग्रहण करके वाच्यार्थ को त्यागकर सामान्याधिकरण्य विशेषण विशेष्यभाव लक्ष्य लक्षणभाव इन तीन सम्बन्ध करके और भागत्याग लक्षणा करके सो यह देवदत्त है इस लौकिक वाक्यवत् क्षेत्रज्ञ और मांपद की लक्ष्यार्थ में एकता है इस बात को इस जगह स्पष्ट करने में बहुत विस्तार होताहै आनन्दामृतवर्षिणीके द्वितीय अध्याय में विशेष लिखाहै वेदान्तशास्त्र के जितने ग्रंथ हैं सब इसी की टीका हैं ऐसा ज्ञान जिसको हुआ वही ज्ञानी परमपद का भागी होगा इस लोकमें अनेक विद्याहैं सब लोक किसी न किसी विद्याके जाननें वाले नाई धोबी वैश्यादि एक प्रकार के ज्ञानी हैं ब्रह्मविद्या के विना सब लौकिक विद्या लोगोंको रिझानेके लिये शिश्नोदर की तृप्ति के लिये वाह वाह के लिये हैं जिनका फल दुःख श्रमहै जो इस शरीर में सच्चिदानन्द क्षेत्रज्ञहै वही वासुदेव है आप श्रीमहाराज अपने मुखारविन्द से कहते हैं ॥ ३ ॥

तत्क्षेत्रंयच्चयादृक्चयद्विकारियतश्चतत् ॥ सचयोयत्प्रभावश्चतत्समासेनमेशृणु ॥ ४ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

तद् १ क्षेत्रम् २ यत् ३ च ४ यादृक् ५ च ६ यद्विकारि ७ यतः ८ च ९ यत् १० स ११ च १२ यः १३ यत्प्रभावः १४ च १५ तत् १६ समासेन १७ मे १८ शृणु १९ ॥ ४ ॥ +उ०+ प्रथम द्वितीय मन्त्रोंमें जो संक्षेप करके कहाहै उसी को विस्तार करके फिर श्रीभगवान् कहा चाहते हैं महाराजने यह जाना कि अभी अर्जुन की समझमें नहीं आया इसवास्ते अर्जुनसे फिर कहते हैं ऋषीश्वरों मुनीश्वरों की अपेक्षा से फिर भी संक्षेप ही करके कहते हैं श्रीभगवान् इस मंत्रमें प्रतिज्ञा करते हैं कि हे अर्जुन! इतने शब्दों का अर्थ तुझसे कहूंगा वे शब्द ये हैं. +अ०+ सो १ स्थूलशरीर २ जड़दृश्य स्वभाववाला ३ और ४ इच्छादि धर्मवाला ५ और ६ इन्द्रियादि विकार करके युक्त ७ प्रकृति पुरुष के संयोग से होताहै ८ और ९ स्थावर जंगम भेद करके भिन्न १० क्षेत्रज्ञ ११। १२ स्वरूप से १३ और अचिंत्य ऐश्वर्य योगशक्ति आदि प्रभावकरकेयुक्त १४। १५ इन सबका अर्थ १६ संक्षेपसे १७ मुझसे १८ सुन १९ ॥ ४ ॥

ऋषिभिर्बहुधागीतंछन्दोभिर्विविधैःपृथक्॥ ब्रह्मसूत्रपदैश्चैवहेतुमद्भिर्विनिश्चितैः ॥ ५ ॥

ऋषिभिः १ बहुधा २ गीतम् ३ छन्दोभिः ४ विविधैः ५ पृथक् ६ हेतुमद्भिः ७ ब्रह्मसूत्रपदैः ८ च ९ एव १० विनिश्चितैः ११ ॥ ५ ॥ उ०+ जो ज्ञान मैं तुझसे कहताहूं यही ज्ञान अनादि वेदोक्तहै विद्वानों ने यही निश्चय कियाहै +अ०+ ऋषीश्वरों ने १ बहुत प्रकारसे २ इसी ज्ञानको + निरूपण कियाहै ३ वे दोनों ४ भी + पृथक् पृथक् करके ५ पृथक् ६ कहाहै और + हेतुवाले ब्रह्मसूत्र पदों करके ७। ८। ९। १० कहागयाहै कैसे हैं वे सूत्रपद कि + बहुत भले प्रकार निश्चय किये गये हैं ११ + टी० + वशिष्ठादि ने ध्यानधारणादि साधनों और प्रकृति पुरुषों के विवेक से ब्रह्मकी प्राप्ति होती है इस प्रकार ऋषियोंने निरूपण कियाहै और कर्मही फलदाताहै यज्ञादि करने से देवतों का पूजन करने से परमपद स्वर्ग की प्राप्ति है बहुत जगह वेदों में इसप्रकार निरूपण कियाहै और व्यासजीने ब्रह्मसूत्र पदोंको संक्षेप करके सूत्र बनाये हैं कि जिनसे यथार्थ प्रभुका स्वरूप जाना जाताहै ब्रह्म जानाजावे तटस्थलक्षणा और स्वरूपलक्षणा करके जिनसे उनको ब्रह्मसूत्र कहते हैं ॥ ५ ॥

महाभूतान्यहङ्कारोबुद्धिरव्यक्तमेवच ॥ इन्द्रियाणिदशैकञ्चपञ्चचेन्द्रियगोचराः ॥ ६ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

महाभूतानि १ अहंकारः २ बुद्धिः ३ अव्यक्तम् ४ एव ५ च ६ इन्द्रियाणि ७ दशैकं ८ एकम् ९ च १० पञ्च ११ च १२ इन्द्रियगोचराः १३ ॥ ६ ॥ उ० + क्षेत्र का लक्षण दो श्लोकों में कहते हैं + अ० + आकाशादि पंच पंचीकृत १ भूतों का कारण २ महत्तत्त्व ३ मूलाज्ञान ४ । ५ । ६ इन्द्रिय ७ दश ८ एक ९ मन १० और पंचतन्मात्रा अपंचीकृत सूक्ष्मभूत ११ । १२ और + इन्द्रियों के विषय शब्दादि पंच १३ इन सबका भेद और अर्थ आनन्दामृतवर्षिणी के द्वितीय अध्याय में लिखा है ॥ ६ ॥

इच्छाद्वेषःसुखंदुःखंसंघातश्चेतनाधृतिः ॥ एतत् क्षेत्रंसमासेनसविकारमुदाहृतम् ॥ ७ ॥

इच्छा १ द्वेष २ सुखम् ३ दुःखम् ४ संघातः ५ चेतना ६ धृतिः ७ एतत् ८ क्षेत्रम् ९ समासेन १० सविकारम् ११ उदाहृतम् १२ ॥ ७ ॥ अ० + इस लोक वा परलोक के पदार्थों की चाह १ अपने इष्ट में जो विघ्नकारी प्रतीत होता हो उसमें जो अन्तःकरण की वृत्ति २ सुख तीन प्रकारका अठारहवें अध्याय में निरूपण होगा ३ चित्त। प्रतिकूल जिसको दुःख कहते हैं ४ स्थूलशरीर ५ ज्ञानात्मिका अन्तःकरण की वृत्ति कि जिसके प्रकट होने से सब अनर्थों की निवृत्ति होजाती है संसार कार्य कारण सहित अत्यन्ताभाव को प्राप्त होजाता है ६ धृति तीन प्रकार की अठारहवें अध्याय में निरूपण होगी ७ यह ८ क्षेत्र ९ संक्षेप करके १० विकारवान् ११ कहा है १२ तात्पर्य क्षेत्र विकारवान् है क्षेत्रज्ञ निर्विकार है मूलाज्ञान से क्षेत्रज्ञ भी विकारवान् प्रतीत होता है ॥ ७ ॥

अमानित्वमदम्भित्वमहिंसाक्षान्तिरार्जवम् ॥ आचार्योपासनंशौचंस्थैर्यमात्मविनिग्रहः ॥ ८ ॥

अमानित्वम् १ अदंभित्वम् २ अहिंसा ३ क्षान्तिः ४ आर्जवम् ५ आचार्योपासनम् ६ शौचम् ७ स्थैर्य्यम् ८ आत्मविनिग्रहः ९ ॥ ८ ॥ उ० + आगे क्षेत्रज्ञका लक्षण कहना है उसके समझने के लिये सतोगुणी अन्तर्मुख सूक्ष्मवृत्ति चाहिये इसवास्ते उसका साधन कहते हैं पांच श्लोकों में जिसके ये बीस साधन होंगे उसकी समझ में क्षेत्रका स्वरूप आवेगा प्रथम इन साधनों में प्रयत्न करना योग्य है + अ० + मानरहित १ दंभरहित २ हिंसारहित ३ क्षमा ४ कोमलता ५ सद्गुरु की सेवा ६ पवित्र बाहर भीतर ७ सन्मार्ग में + स्थिरता ८ शरीर का निग्रह ९ इन

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

सब साधनों का अर्थ आनन्दामृतवर्षिणी के चतुर्थ अध्यायमें भलेप्रकार लिखा है और उनका पृथक् पृथक् माहात्म्य फल जैसा शास्त्रों में लिखा है वह प्रत्यक्ष होताहै इन साधनोंका ऐसा फल नहीं कि जैसा एकादशीका फल परोक्षहै और ये साधन साधारणहैं ब्राह्मण से लेकर चांडालपर्यन्त इनमें सबका अधिकारहै ॥ ८॥

इन्द्रियार्थेषुवैराग्यमनहंकारएवच ॥ जन्ममृत्यु जराव्याधिदुःखदोषानुदर्शनम् ॥ ९ ॥

इन्द्रियार्थेषु १ वैराग्यम् २ अनहङ्कारः ३ एव ४ च ५ जन्ममृत्युजराव्याधिदुःखदोषानुदर्शनम् ६ ॥ ९ ॥ अ०+इन्द्रियों के अर्थों में १ वैराग्य २ अहंकार रहित ३ । ४ । ५ जन्म मृत्यु जरा व्याधि इन चारों में दुःख और दोषों को सदा देखते रहना ६ ॥ ९ ॥

असक्तिरनभिष्वङ्गःपुत्रदारगृहादिषु ॥ नित्यंच समचित्तत्वमिष्टानिष्टोपपत्तिषु ॥ १० ॥

पुत्रदारगृहादिषु १ असक्तिः २ अनभिष्वङ्गः ३ इष्टानिष्टोपपत्तिषु ४ नित्यम् ५ समचित्तत्वम् ६ च ७ ॥ १० ॥ अ०+पुत्र स्त्री गृहादि में १ सक्त न होना २ पुत्रादि के दुःख सुख में अपने को सुखी दुःखी नहीं मानना ३ इष्ट अनिष्टकी प्राप्ति में ४ सदा ५ समचित्तरहना ६ । ७ ॥ १० ॥

मयिचानन्ययोगेनभक्तिरव्यभिचारिणी ॥ विविक्तदेशसेवित्वमरतिर्जनसंसदि ॥ ११ ॥

मयि १ च २ अनन्ययोगेन ३ अव्यभिचारिणी ४ भक्तिः ५ विविक्तदेशसेवित्वम् ६ जनसंसदि ७ अरतिः ८ ॥ ११ ॥ अ०+मुझमें १ । २ अनन्य योग करके ३ अव्यभिचारिणी ४ भक्ति ५ विविक्तदेशमें रहनेका स्वभाव ६ प्राकृतजनोंकी सभामें ७ प्रीतिरहित ८ ॥ ११ ॥

अध्यात्मज्ञाननित्यत्वंतत्त्वज्ञानार्थदर्शनम् ॥ एतज्ज्ञानमितिप्रोक्तमज्ञानंयदतोऽन्यथा ॥ १२ ॥

अध्यात्मज्ञाननित्यत्वम् १ तत्त्वज्ञानार्थदर्शनम् २ एतत् ३ ज्ञानम् ४ इति ५ प्रोक्तम् ६ यत् ७ अतः ८ अन्यथा ९ अज्ञानम् १० ॥ १२ ॥ अ० + वेदान्तशास्त्र

CC-0. Digitized by eGangotri, Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

को नित्य देके सुने विचारे १ तत्त्व पदोंके अर्थ जानने में सदा निष्ठा रखनी २ यह ३ ज्ञान ४ यहां तक ५ कहा ६ जो ये भी साधन कहे उनको ज्ञान कहते हैं इस जगह ज्ञानका अर्थ यह है कि सच्चिदानन्द स्वरूप जाना जावे जिस करके उनको ज्ञान कहते हैं ब्रह्मज्ञान के ये अन्तरङ्ग साधन हैं इस वास्ते उनको भी ज्ञान कहा + जो ७ इससे ८ उलटा है ९ तिसको + अज्ञान १० कहते हैं अर्थात् जिसमें ये साधन नहीं वह अज्ञानी है मान दम्भादि को अञ्जन का कार्य होनेसे उसको भी अज्ञानही कहते हैं॥ १२॥

ज्ञेयंयत्तत्प्रवक्ष्यामियज्ज्ञात्वामृतमश्नुते ॥ अनादिमत्परंब्रह्मनसत्तन्नासदुच्यते॥ १३॥

यत् १ ज्ञेयम् २ तत् ३ प्रवक्ष्यामि ४ यत् ५ ज्ञात्वा ६ अमृतम् ७ अश्नुते ८ अनादिमत् ९ परम् १० ब्रह्म ११ तत् १२ न १३ सत् १४ न १५ असत् १६ उच्यते १७॥ १३॥ उ० + ज्ञेयज्ञ परमानन्दस्वरूप ब्रह्म आत्मा का लक्षण कहते हैं + अ० + जो १ पूर्वोक्त साधनों करके + जानने के योग्य २ तिस को ३ भले प्रकार कहूंगा ४ जिसको ५ जानकर ६ अमृत को ७ प्राप्त होताहै ८ अर्थात् जन्म मरण से छूट सच्चिदानन्द स्वरूप को प्राप्त होता है + फल निरूपण करके स्वरूप का वर्णन करते हैं + अनादि ९ परे से परे १० बड़ों से बड़ा ११ सो १२ न १३ सत् १४ न १५ असत् १६ कहाजाता है १७ तात्पर्य जो उसको सत् कहैं तो असत् एक पदार्थ अर्थ से प्रतीत होताहै और मन वाणी का विषय भी प्रतीत होताहै जो जो पदार्थ मन वाणी के विषयहैं सत् अनित्य हैं यह दोष ब्रह्म में भी आताहै और इस बोली से अद्वैत सिद्ध नहीं होता और जो असत् कहैं तो यह अनर्थ है क्योंकि उनकी सत्तासे झूठे से झूठे पदार्थ सच्चे प्रतीत होवे हैं और जो कुछ भी न कहै तो अज्ञानियों का संसार कैसे निवृत्त हो तात्पर्य्य वह ऐसा अचिन्त्य शक्तिमान् है कि वास्तव मन वाणी का विषय नहीं परन्तु उसके भक्त तो उसको निरूपण करते हैं॥ १३॥

सर्वतःपाणिपादंतत्सर्वतोऽक्षिशिरोमुखम् ॥ सर्वतःश्रुतिमल्लोकेसर्वमावृत्यतिष्ठति ॥ १४॥

तत् १ सर्वतःपाणिपादम् २ सर्वतोक्षिशिरोमुखम् ३ सर्वतःश्रुतिमत् ४ लोके ५ सर्वम् ६ आवृत्य ७ तिष्ठति ८॥ १४॥ उ० + अचिन्त्य अद्भुत शक्ति ब्रह्मकी

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

निरूपण करते हैं + अ० + सो १ ब्रह्म ऐसा है कि + सब तरफ हाथ पैर हैं जिसके २ सब ओर आंख शिर मुख हैं जिस के ३ सब ओर कान हैं जिस के ४ जगत् में ५ सबको ६ व्याप्तकर ७ स्थित है ८ अर्थात् सब प्राणियों की अन्तःकरण की वृत्तिमें प्राणादि की क्रिया में नखसे शिखा पर्य्यन्त व्याप्त है जिसको कूटस्थ कहतेहैं हस्त चरणादि से जो क्रिया कीजातीहैं यह उसीकी सत्ता है आंख कान नाक से जो देखा सुना सूंघा जाता है यह उसीकी चैतन्यता है अन्तःकरण में जो सुख प्रतीत होताहै यह उसी आनन्द की छाया है जैसे दर्पण में अपना मुख देखकर अपना ज्ञान होताहै ऐसेही अन्तःकरण की वृत्ति में उस आनन्द की छाया देख वास्तव सच्चिदानन्दका ज्ञान होताहै इस प्रकार वह विषय भी है ॥ १४ ॥

सर्वेन्द्रियगुणाभासंसर्वेन्द्रियविवर्जितम् ॥ असक्तंसर्वभृच्चैवनिर्गुणंगुणभोक्तृच ॥ १५ ॥

सर्वेन्द्रियगुणाभासम् १ सर्वेन्द्रियविवर्जितम् २ असक्तम् ३ सर्वभृत् ४ च ५ एव ६ निर्गुणम् ७ गुणभोक्तृ ८ च ९ ॥ १५ ॥ + अ० + सब इन्द्रियोंके शब्दादि विषयों में विषयाकार होकर प्रतीत होता है १ और वास्तव + सब इन्द्रियों करके रहित २ वास्तव + असक्त ३ है परन्तु + सबका आधार पालने वाला ४ । ५ । ६ कहाजाता है + वास्तव + सत्त्वादि गुणों करके रहित ७ है परन्तु + गुण का भोक्ता ८ । ९ प्रतीत होता है विषयजन्य सुख दुःखादि को अनुभव करताहुआ प्रतीत होताहै ॥ १५ ॥

बहिरन्तश्चभूतानामचरंचरमेवच ॥ सूक्ष्मत्वात्तदविज्ञेयंदूरस्थंचांतिकेचतत् ॥ १६ ॥

भूतानाम् १ अन्तः २ बहिः ३ च ४ अचरम् ५ चरम् ६ एव ७ च ८ सूक्ष्मत्वात् ९ तत् १० अविज्ञेयम् ११ च १२ अन्तिके १३ दूरस्थम् १४ च १५ तत् १६ ॥ १६ ॥ अ० + भूतों के १ भीतर २ और बाहर ३ । ४ भी है जैसे चांदनी सब जगह व्याप्त है उपाधि के सम्बन्ध से किसी किसी जगह दीख पड़ती है कहीं नहीं दीखती इसी प्रकार ज्ञानचक्षुरहित पुरुषों को नहीं प्रतीत होता है ज्ञानियों को प्रतीत होता है + अचर ५ भी है और + चर ६ भी ७ । ८ है जङ्गमों के साथ सम्बन्ध होने से चर प्रतीत होताहै स्थावरों के साथ सम्बन्ध होने

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

से अचर प्रतीत होता है यह वह वास्तव अचर है ऐसे कहो+सूक्ष्म होने से ९ अविकार प्रमेय नहीं इस हेतु से+सो १० नहीं जानने के योग्य है ११। १२ बहिर्मुख स्थूलबुद्धिवालों को+समीप १३ भी है+और दूर स्थित है १४। १५ सो १६ क्षेत्रज्ञ परमात्मा जो उसको अपना आत्माही जानतेहैं कि क्षेत्रज्ञ परमानन्द स्वरूप हमारा आत्माहीहै आत्मासे पृथक् कोई पदार्थ नहीं उनको समीप है और जो बहिर्मुख विषयी उसको रूपादि मात्र वा बुद्ध्यादि का विषय अपने से पृथक् जानकर उसकी प्राप्तिके लिये दौड़ धूप करतेहैं उनको कभी नहीं मिलैगा जैसे मृग कस्तूरीकी गंधके वास्ते भटकता फिरतारहताहै वैसेही अज्ञानी भटकते रहेंगे॥१६॥

अविभक्तंचभूतेषुविभक्तमिवचस्थितम् ॥ भूतभर्तृचतज्ज्ञेयंग्रसिष्णुप्रभविष्णुच ॥ १७ ॥

तत् १ ज्ञेयम् २ अविभक्तम् ३ च ४ भूतेषु ५ विभक्तम् ६ इव ७ च ८ स्थितम् ९ भूतभर्तृ १० च ११ ग्रसिष्णु १२ च १३ प्रभविष्णु १४॥१७॥+अ०+सो १ क्षेत्रज्ञ २ वास्तव+पृथक् नहीं ३ और ४ भूतों में ५ पृथक्-पृथक् ६ वत् ७। ८ स्थित ९ है+भूतों का पालनेवाला १० स्थितिकाल में विष्णुरूप होकर और ११ प्रलयकाल में+नाश करनेवाला १२ रुद्ररूप होकर+और १३ उत्पत्ति काल में+उत्पत्ति करनेवाला १४ ब्रह्मारूप होकर तात्पर्य सो क्षेत्रज्ञ सब भूतों में एक है उपाधि के सम्बन्ध से पृथक् पृथक् प्रतीत होता है वास्तव सो निर्विकार है ॥ १७ ॥

ज्योतिषामपितज्ज्योतिस्तमसःपरमुच्यते ॥ ज्ञानंज्ञेयंज्ञानगम्यंहृदिसर्वस्यधिष्ठितम् ॥ १८ ॥

तत् १ ज्योतिषाम् २ अपि ३ ज्योतिः ४ तमसः ५ परम् ६ उच्यते ७ ज्ञानम् ८ ज्ञेयम् ९ ज्ञानगम्यम् १० सर्वस्य ११ हृदि १२ धिष्ठितम् १३॥१८॥अ०+सो १ ज्योतिका २ भी ३ ज्योति ४ है अर्थात् चन्द्र सूर्य्यादि का भी प्रकाशक आत्माही है इसी हेतु से+अज्ञान से ५ परे ६ कहा है ७ अज्ञान का कार्य बुद्ध्यादि का विषय नहीं अज्ञान के कार्य से जानने में नहीं आता है वह अपनेआप+ज्ञान स्वरूप है ८ और अमानित्वादि साधनों करके+जानने योग्य है ९ तत्त्वज्ञान सेही जाना जाता है १० सबके ११ हृदय में १२ विराजमान है १३ ॥ १८ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

इतिक्षेत्रंतथाज्ञानंज्ञेयंचोक्तंसमासतः ॥ मद्भक्त एतद्विज्ञायमद्भावायोपपद्यते ॥ १९ ॥

इति १ क्षेत्रम् २ तथा ३ ज्ञानम् ४ ज्ञेयम् ५ च ६ समासतः ७ उक्तम् ८ मद्भक्तः ९ एतत् १० विज्ञाय ११ मद्भावाय १२ उपपद्यते १३ ॥ १९ ॥ अ० + यह १ क्षेत्र २ और ३ ज्ञान ४ और ज्ञेय ५ । ६ संक्षेप करके ७ तुझ से + कहा ८ मेरा भक्त ९ इसको १० जानकर ११ मेरे भावको १२ प्राप्त होताहै १३ तात्पर्य अमानादि साधन सम्पन्न तत् त्वम् पदों के अर्थ को जान कृतार्थ होकर सच्चिदानन्द अपने स्वरूप को प्राप्त होजाता है ॥ १९ ॥

प्रकृतिंपुरुषंचैवविद्ध्यनादीउभावपि ॥ विकारांश्चगुणांश्चैवविद्धिप्रकृतिसंभवान् ॥ २० ॥

प्रकृतिम् १ पुरुषम् २ च ३ एव ४ उभौ ५ अपि ६ अनादी ७ विद्धि ८ विकारान् ९ च १० गुणान् ११ च १२ एव १३ प्रकृतिसंभवान् १४ विद्धि १५ ॥ २० ॥ अ० + ईश्वर की अचिन्त्य शक्ति माया १ और सच्चिदानन्द ब्रह्म आत्मा २ ३ ये ४ दोनों ५ ही ६ अनादि ७ हैं यह + जानतू ८ देह इन्द्रियादि ९ और सुख दुःख मोहादि को १० । ११ । १२ । १३ प्रकृति से उत्पन्नहुआ १४ जानतू १५ यह सृष्टिप्रकार आनन्दाश्रमवर्षिणीके द्वितीय अध्यायमें भलेप्रकार लिखाहै ॥ २० ॥

कार्यकारणकर्तृत्वेहेतुःप्रकृतिरुच्यते ॥ पुरुषःसुखदुःखानांभोक्तृत्वेहेतुरुच्यते ॥ २१ ॥

कार्यकारणकर्तृत्वे १ हेतुः २ प्रकृतिः ३ उच्यते ४ सुखदुःखानाम् ५ भोक्तृत्वे ६ हेतुः ७ पुरुषः ८ उच्यते ९ ॥ २१ ॥ अ० + कार्यकारण के करने में १ अर्थात् शरीरादि की उत्पत्ति में + हेतुः २ प्रकृतिः ३ कही है ४ सुख दुःखों के ५ भोगने में ६ हेतु ७ पुरुष ८ कहा है ९ + टी० + अन्तःकरण विशिष्ट चैतन्यपुरुष भोक्ता कहाजाता है यद्यपि प्रकृति जड़ है उसको शरीरादि की उत्पत्ति में केवल हेतु कहना वेयोग है परन्तु चैतन्यके सम्बन्धसे उसको जगत्का उपादान कारण कहते हैं और पुरुष निर्विकार है उसको सुखादि के भोगमें हेतु कहना वेयोग है परन्तु प्रकृतिसम्बन्ध से वह भोक्ता प्रतीत होता है जैसे चुम्बककी सन्निधि से लोहा चेष्टा करता है ऐसेही प्रकृति पुरुषकी व्यवस्थाहै और जैसे मित्र पुत्रादि के साथ स्नेह ममता करने से उनके सुख दुःखमें आपभी सुख

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

दुःख का भोक्ता होजाता है ऐसेही जीव पुरुष देह इन्द्रियादि के साथ अध्यास आसक्ति करके दुःखादि का भोक्ता प्रतीत होने लगता है वास्तव शुद्ध परमानन्दरूप है ॥ २१ ॥

पुरुषः प्रकृतिस्थो हि भुंक्ते प्रकृतिजान्गुणान् ॥ कारणंगुणसंगोऽस्यसदसद्योनिजन्मसु ॥ २२ ॥

पुरुषः १ प्रकृतिस्थः २ हि ३ प्रकृतिजान् ४ गुणान् ५ भुंक्ते ६ सदसद्योनिजन्मसु ७ अस्य ८ कारणम् ९ गुणसंगः १० ॥ २२ ॥ अ० + आत्मा १ देहादि के साथ तादात्म्य अध्यास करके २ ही ३ प्रकृति से उत्पन्नहुये ४ सुख दुःखादि को ५ भोक्ता है ६ वास्तव अभोक्ता है + देवता मनुष्यादि योनियों के विषय जो इसका जन्म ७ इसका ८ कारण ९ गुणोंका संग १० सतोगुण के सम्बन्धसे देवता रजोगुण के सम्बन्ध से मनुष्य तमोगुण के सम्बन्ध से पशु कहा जाताहै ॥ २२ ॥

उपद्रष्टाऽनुमंताच भर्ताभोक्तामहेश्वरः ॥ परमात्मेतिचाप्युक्तोदेहेऽस्मिन्पुरुषःपरः ॥ २३ ॥

अस्मिन् १ देहे २ पुरुषः ३ परः ४ उपद्रष्टा ५ अनुमन्ता ६ च ७ भर्त्ता ८ भोक्ता ९ महेश्वरः १० परमात्मा ११ इति १२ च १३ अपि १४ उक्तः १५ ॥ २३ ॥ उ० + जो आत्मा है वह परमात्मा है और जिस को परमात्मा परमेश्वर कहते हैं वह यही आत्माहै जीव ब्रह्मकी एकता स्पष्ट श्रीब्रजराज इस श्लोक में दिखाते हैं + अ० + इस १ देहमें २ जो + जीव ३ है सोई + परे से परे ४ द्रष्टा इव द्रष्टा ५ है साक्षात् द्रष्टा नहीं क्योंकि दृश्य पदार्थ जब सच्चे हों तब उसको द्रष्टा सो वास्तव कहाजाय दृश्य पदार्थ आविद्यक हैं इस वास्ते मायोपहित होने से उस को उपद्रष्टा कहते हैं + और कर्मजन्य सुख में सुख मानकर आनन्द को प्राप्त होताहै वास्तव आप आनन्दस्वरूपहै इस वास्ते उसको अनुमन्ता कहते हैं ६ । ७ और मायोपहित हुआ यही सच्चिदानन्द अविद्योपहित सच्चिदानन्द जीव का + पालन पोषण करनेवाला है ८ और वही + भोक्ता है ९ महेश्वर १० और परमात्मा यह भी ११ । १२ । १३ । १४ कहा जाता है १५ तात्पर्य्य शुद्ध सच्चिदानन्द की माया अविद्या के सम्बन्ध से जीव ईश्वर कहते हैं जब दोनों उपाधि ब्रह्मज्ञान से नाश होजाती हैं फिर केवल शुद्ध सच्चिदानन्द एकही रह जाता है ॥ २३ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

यएवंवेत्तिपुरुषंप्रकृतिंचगुणैःसह ॥ सर्वथावर्त्तमानोऽपिनसभूयोऽभिजायते ॥ २४ ॥

यः १ एवम् २ पुरुषम् ३ वेत्ति ४ प्रकृतिम् ५ च ६ गुणैः ७ सह ८ सः ९ सर्वथा वर्तमानः १० अपि ११ भूयः १२ न १३ अभिजायते १४ ॥ २४ ॥ अ० + जो १ इस प्रकार २ आत्मा को ३ जानता है ४ और प्रकृतिको ५।६ गुणों के साथ ७।८ जानता है अर्थात् प्रकृतिके स्वरूप को सत्त्वादिगुण और इन्द्रियार्थ के सहित जो जानता है + सो ९ सर्वथा वर्तमान १० भी ११ फिर १२ नहीं १३ जन्मजेता १४ + टी० + वेदोक्त मार्गपर चलो अथवा प्रारब्धवशात् जैसी उसकी इच्छाहो वह तो मुक्तिमें सन्देह नहीं यह बात आनन्दामृतवर्षिणी के तीसरे अध्याय में स्पष्ट लिखी है ॥ २४ ॥

ध्यानेनात्मनिपश्यन्ति केचिदात्मानमात्मना ॥ अन्येसांख्येनयोगेनकर्मयोगेनचापरे ॥ २५ ॥

केचित् १ आत्मानम् २ आत्मना ३ आत्मनि ४ ध्यानेन ५ पश्यन्ति ६ अन्ये ७ सांख्येन ८ योगेन ९ च १० अपरे ११ कर्मयोगेन ॥ १२ ॥ २५ ॥ अ० + कोई १ आत्माको २ अन्तर्मुख निर्मल अन्तःकरणकी वृत्ति करके ३ इस देहमें ४ आत्माकारवृत्तिकरके ५ अर्थात् अहंब्रह्मास्मि इसका गंगावत् प्रवाह सदा बनारहे इसको ध्यान कहते हैं इस ध्यान करके + देखते हैं ६ कोई ७ सांख्ययोग करके ८ अर्थात् प्रकृति पुरुष विवेकद्वारा अथवा वेदान्तशास्त्रद्वारा + और कोई अष्टांगयोग करके ९ । १० अर्थात् यम नियम आसन प्राणायाम प्रत्याहार धारणा ध्यान समाधि द्वारा + और + कोई ११ कर्म्मयोग करके १२ देखते हैं यह क्रिया सब के साथ लगती है कर्म्म दो प्रकार के हैं गौण मुख्य स्नान श्राद्धादि बहिरंग कर्म्म गौण हैं शम दमादि अन्तरंग कर्म्म मुख्य हैं मुख्य साधनों में सब का अधिकार है ॥ २५ ॥

अन्येत्वेवमजानन्तःश्रुत्वाऽन्येभ्यउपासते ॥ तेऽपिचाऽतितरन्त्येवमृत्युंश्रुतिपरायणाः ॥ २६ ॥

अन्ये १ तु २ एवम् ३ अजानन्तः ४ अन्येभ्यः ५ श्रुत्वा ६ उपासते ७ ते ८ अपि ९ च १० मृत्युम् ११ अतितरन्ति १२ एव १३ श्रुतिपरायणाः १४ ॥ २६ ॥ अ० +

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

और कोई १।२ इस प्रकार ३ अर्थात् ध्यानरहित आत्मा को + नहीं जानते हुये ४ सद्गुरु महापुरुषों से ५ श्रवण करके ६ उपासना करते हैं ७ अर्थात् आत्मा को साक्षात् अपरोक्ष तौ नहीं जानते परन्तु वेद शास्त्र सद्गुरु द्वारा यह सुना है कि मैं ब्रह्म हूं अहंब्रह्मास्मि यही जप करतेहुये आत्मा की उपासना करते हैं + वे ८ भी ९।१० संसार को ११ उल्लंघ जाते हैं १२ निश्चय १३ क्योंकि + श्रवणपरायण हैं १४ कम समझ यह कहा करते हैं कि विना ब्रह्म के जाने आपको ब्रह्म कहना चाहिये इस में पाप होता है तुम्हारे में ब्रह्म की क्या शक्ति है प्रतीत होता है कि ये लोग या तो ईर्षा आमर्ष से कहते हैं या भगवत् वाक्य में उनकी किञ्चित् श्रद्धा नहीं या मूर्ख हैं क्योंकि इस मन्त्र में श्रीभगवान् स्पष्ट कहते हैं कि अनजान ब्रह्म का उपासक जो अहंब्रह्मास्मि यह उपासना करता है वह परंगति को प्राप्त होता है फिर न जानिये मूर्ख इस श्लोक का क्या अनर्थ करते हैं जब कि अनजान अवस्था में यह उपासना न करी तौ ज्ञान अवस्था में वे क्यों करेंगे उपासना साधन है फल की प्राप्ति के वास्ते करते हैं मूर्ख साधन से पहिलेही फल चाहते हैं यह कहते हैं कि जब हम को ब्रह्म साक्षात् अपरोक्ष होगा तब अहम्ब्रह्मास्मि यह कहैंगे विचारना चाहिये कि विना साधन कहीं फल मिलता है कर्म और भेद उपासना ज्ञान के गौण साधन हैं मुख्य साधन ज्ञाननिष्ठा का यही है कि अहम्ब्रह्मास्मि यह महावाक्य श्रवण करके इसी का सदा जप किया करे वेदवाक्य भी इस में प्रमाण है ॥ २६ ॥

यावत्संजायतेकिञ्चित्सत्त्वंस्थावरजंगमम् ॥ क्षेत्रक्षेत्रज्ञसंयोगात्तद्विद्धिभरतर्षभ ॥ २७ ॥

यावत् १ किञ्चित् २ सत्त्वम् ३ स्थावरजङ्गमम् ४ सञ्जायते ५ भरतर्षभ ६ तत् ७ क्षेत्रक्षेत्रज्ञसंयोगात् ८ विद्धि ९ ॥ २७ ॥ अ० + जहांतक १ जो कुछ २ पदार्थ ३ स्थावर जङ्गम ४ उत्पन्न होता है ५ हे अर्ज्जुन ! ६ तिस को ७ क्षेत्र क्षेत्रज्ञ के संयोग से ८ जान तू ९ ॥ २७ ॥

समंसर्वेषुभूतेषुतिष्ठंतंपरमेश्वरम् ॥ विनश्यत्स्व विनश्यंतंयःपश्यतिसपश्यति ॥ २८ ॥

सर्वेषु १ भूतेषु २ विनश्यत्सु ३ परमेश्वरम् ४ समम् ५ अविनश्यन्तम् ६ तिष्ठन्तम् ७ यः८ पश्यति९ सः१० पश्यति ११ ॥ २८ ॥ उ० + विना विवेक सं-

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

सारहै यह पीछे कहा अब उसकी निवृत्ति के लिये विवेक बुद्धि बतलाते हैं कि ऐसे आत्माका स्वरूप जानना चाहिये तब जानना कि अब ज्ञान हुआ +अ०+ सब भूतों में १ । २ भूतों का + नाश होत सन्ते भी ३ आत्मा को ४ सम ५ अविनाशी ६ स्थित ७ जो ८ देखताहै ९ सो १० देखता है ११ तात्पर्य्य आत्मा को जो अविनाशी पूर्णब्रह्म परमेश्वर जानते हैं देहादि के नाश में भी उसको अविनाशी जानते हैं वे आत्मा को यथार्थ जानते हैं ॥ २८ ॥

समंपश्यन्हिसर्वत्रसमवस्थितमीश्वरम् ॥ न हिनस्त्यात्मनात्मानंततोयातिपरांगतिम् ॥ २९ ॥

ईश्वरम् १ समवस्थितम् २ सर्वत्र ३ समम् ४ पश्यन् ५ हि ६ आत्मना ७ आत्मानम् ८ न ९ हिनस्ति १० ततः ११ पराम् १२ गतिम् १३ याति १४ ॥ २९ ॥ +अ०+ ईश्वर को १ निश्चल २ सर्वत्र ३ सम देखताहुआ ४ । ५ । ६ आत्मा करके ७ आत्मा को ८ नहीं ९ मारता है १० फिर ११ परम् १२ गतिको १३ प्राप्त होताहै १४ तात्पर्य्य जो ईश्वर को या जीव को विकारवान् विषम देखताहै सो भेदवादी अपने आप अपना नाश करता है और ईश्वरको भी आत्मासे जुदा समझकर परिच्छिन्न अल्प प्रमेय करता है और आत्मा को भी इस हेतु से महाहत्या आत्महत्या में जो पाप होताहै सो पाप भी भेदवादीको लागता है इसी अर्थको व्यतिरेक मुख्य करके भगवत् ने इस में कहाहै अर्थात् जो ईश्वर आत्मा को सर्वत्र देखता है सो आत्महत्यारा नहीं जो आत्माको विषम प्रमेय अल्प देखता है वह आत्महा है इत्यभिप्रायः ॥ २९ ॥

प्रकृत्यैवचकर्माणिक्रियमाणानिसर्वशः ॥ यःपश्यतितथात्मानमकर्तारंसपश्यति ॥ ३० ॥

सर्वशः १ क्रियमाणानि २ कर्माणि ३ प्रकृत्या ४ एव ५ च ६ यः ७ पश्यति ८ तथा ९ आत्मानम् १० अकर्तारम् ११ सः १२ पश्यति १३ ॥ ३० ॥ अ०+ सब प्रकार १ क्रियमाण २ कर्मों को ३ प्रकृति करके ४ ही ५ । ६ जो ७ देखता है ८ तैसेही ९ आत्मा को १० अकर्ता ११ देखता १२ है १३ तात्पर्य्य सब कर्म बुरे भले शरीर इन्द्रिय अन्तःकरण करके किये जाते हैं आत्मा अकर्ता है इस प्रकार जो आत्माको अकर्ता देखताहै वह आत्माको भलेप्रकार पहचानताहै ॥ ३० ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

यदाभूतपृथग्भावमेकस्थमनुपश्यति ॥ अतएव च विस्तारं ब्रह्मसंपद्यतेतदा ॥ ३१ ॥

यदा १ भूतपृथग्भावम् २ एकस्थम् ३ अनुपश्यति ४ अतः ५ एव ६ च ७ विस्तारम् ८ तदा ९ ब्रह्म १० सम्पद्यते ११ ॥ ३१ ॥ अ० + जिसकालमें १ भूतोंके पृथग्भाव को २ आत्मा के विषय ३ देखता है ४ और तिससे ही ५ । ६ । ७ विस्तार ८ तिस काल में ९ ब्रह्मको १० प्राप्तहोता है ११ तात्पर्य अपने अज्ञान सेही सब जगत् विस्तार प्रतीत होता है और जब आत्माकार वृत्ति होती है उस काल में सब जगत् अत्यन्त अभावको प्राप्त होजाताहै एक जीववाद को जो जानते हैं वे इस बात को समझ सक्ते हैं कि अपना अज्ञान नाशहुये समस्त जगत्का अभाव होजाता है ॥ ३१ ॥

अनादित्वान्निर्गुणत्वात्परमात्माऽयमव्ययः ॥ शरीरस्थोऽपिकौंतेय नकरोतिनलिप्यते ॥ ३२ ॥

कौन्तेय १ अयम् २ परमात्मा ३ शरीरस्थः ४ अपि ५ अनादित्वात् ६ निर्गुणत्वात् ७ अव्ययः ८ न ९ करोति १० न ११ लिप्यते १२ ॥ ३२ ॥ अ + हे अर्जुन! १ यह २ परमात्मा ३ शरीर में ४ भी ५ अनादि होने से ६ निर्गुण होने से ७ निर्विकार ८ है + न ९ करता है १० न ११ लिपायमान होता है १२ तात्पर्य देहादि की क्रिया में आत्मा कर्ता नहीं और कर्मोंके न करनेसे अज्ञानीवत् पापके साथ स्पर्श नहीं करता ॥ ३२ ॥

यथासर्वगतंसौक्ष्म्यादाकाशंनोपलिप्यते ॥ सर्वत्रावस्थितोदेहेतथात्मानोपलिप्यते ॥ ३३ ॥

यथा १ आकाशम् २ सर्वगतम् ३ सौक्ष्म्यात् ४ न ५ उपलिप्यते ६ तथा ७ आत्मा ८ सर्वत्र ९ देहे १० स्थितः ११ न १२ उपलिप्यते १३ ॥ ३३ ॥ अ० + जैसे १ आकाश २ सर्व जगह व्याप्त है ३ सूक्ष्म होनेसे ४ किसीजगह + नहीं ५ लिपायमान होता है ६ तैसे ७ आत्मा ८ सब जगह ९ देह में १० स्थित है ११ कर्मों के साथ और कर्मों के फल के साथ + नहीं १२ लिपायमान होताहै १३ ॥ ३३ ॥

यथाप्रकाशयत्येकःकृत्स्नंलोकमिमंरविः ॥ क्षेत्रंक्षेत्रीतथाकृत्स्नं प्रकाशयतिभारत ॥ ३४ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

यथा १ एकः २ रविः ३ इमम् ४ कृत्स्नम् ५ लोकम् ६ प्रकाशयति ७ तथा ८ क्षेत्री ९ कृत्स्नम् १० क्षेत्रम् ११ प्रकाशयति १२ भारत १३॥३४॥अ० + जैसे १ एक २ सूर्य्य ३ इस ४ सम्पूर्ण ५ लोक को ६ प्रकाश कररहा है ७ तैसे ही ८ क्षेत्रज्ञ ९ समस्त क्षेत्रको १० प्रकाश कर रहा है ११ तात्पर्य जो ज्ञान आनन्द देहमें प्रतीत होता है सब उसी ज्ञानानन्द की छाया है ॥ ३४ ॥

क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोरेवमंतरंज्ञानचक्षुषा ॥ भूतप्रकृतिमोक्षंच येविदुर्यांतितेपरम् ॥ ३५ ॥

ये १ एवम् २ क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोः ३ अन्तरम् ४ ज्ञानचक्षुषा ५ भूतप्रकृतिमोक्षम् ६ च ७ विदुः ८ ते ९ परम् १० यान्ति ११ ॥ ३५ ॥ अ० + जो १ इस प्रकार २ पूर्वोक्त रीति करके + क्षेत्र क्षेत्रज्ञका ३ भेद ४ ज्ञानचक्षु करके ५ देखते हैं + और भूतोंकी जो प्रकृति ध्यान विवेकादि तिनके सकाशते मोक्षको ६ । ७ जानते हैं ८ वे ९ परमानन्दस्वरूप आत्माको १० प्राप्तवत् + प्राप्तहोतेहैं ११ तात्पर्य बंध का हेतुभी प्रकृति और मोक्षका हेतु भी प्रकृतिहै तमोगुण रजोगुणके साथ सम्बन्ध करने से बन्ध को प्राप्त होताहै सतोगुणके साथ सम्बन्ध करनेसे मोक्षको प्राप्तहोता है इसी अर्थको चतुर्दश अध्याय में श्रीभगवान् स्पष्ट निरूपण करते हैं ॥ ३५ ॥

इति श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सुब्रह्मविद्यायांयोगशास्त्रेश्रीकृष्णार्जुनसंवादे क्षेत्रक्षेत्रज्ञनिर्देशयोगोनामत्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

इति श्रीस्वामीआनन्दगिरिविरचितायांपरमानन्दप्रकाशिकायां टीकायां त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

चौदहवें अध्यायका प्रारम्भ हुआ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ परंभूयःप्रवक्ष्यामि ज्ञानानां ज्ञानमुत्तमम् ॥ यज्ज्ञात्वामुनयःसर्वेपरांसिद्धिमितोगताः ॥ १ ॥

श्रीभगवान् उवाच + भूयः १ ज्ञानानाम् २ उत्तमम् ३ ज्ञानम् ४ परम् ५ प्रवक्ष्यामि ६ यत् ७ ज्ञात्वा ८ सर्वे ९ मुनयः १० पराम् ११ सिद्धिम् १२ इतः १३ गताः १४ ॥ १ ॥ उ० + सतोगुण के बढ़ाने से रजोगुण तमोगुण कम करने से ज्ञानद्वारा परमानन्द की प्राप्ति होती है इस वास्ते इस अध्याय में सत्त्वादि का भेद कहते हैं + अ० + हे अर्जुन! + फिरभी + ज्ञानी में २ जो + उत्तम ३ ज्ञान ४ परमार्थनिष्ठ ५ तिसको मैं कहूंगा ६ इस अध्याय में तुझसे + जिसको ७ जानकर ८ सब मुनीश्वर ९। १० परमसिद्धिको ११। १२ इस देहसे पीछे १३ प्राप्तहुये १४ तात्पर्य ज्ञान के प्रकारकाहै कर्म उपासनादिका अर्थ जाना जाताहै जिन ज्ञान करके उनको भी ज्ञान कहते हैं और परमानन्द परमस्वरूप आत्मा का साक्षात् अपरोक्ष होता है जिस ज्ञानकरके एक यह उत्तम आत्मज्ञानहै सब ज्ञानोंमें आत्मज्ञान उत्तम है क्योंकि साक्षात् मुक्ति का मुख्य हेतुहै और परब्रह्मकी निष्ठा प्राप्त करनेवालाहै इसी ज्ञान करके बहुत साधु महात्मा स्थूल देहको त्यागकर परमानन्द स्वरूप आत्माको प्राप्तहुये हैं हे अर्जुन! तू मेरा प्याराहै इस वास्ते यह उत्तम ज्ञान फिर भी तुझसे कहूंगा यद्यपि पहले कहाहै परन्तु अब अन्य रीतिसे कहूंगा कि जो शीघ्र समझ में आजावे ॥ १ ॥

इदंज्ञानमुपाश्रित्य ममसाधर्म्यमागताः ॥ सर्गेपिनोपजायंते प्रलयेनव्यथंतिच ॥ २ ॥

इदम् १ ज्ञानम् २ उपाश्रित्य ३ मम ४ साधर्म्यम् ५ आगताः ६ सर्गे ७ अपि ८ न ९ उपजायंते १० प्रलये ११ च १२ न १३ व्यथंति १४ ॥ २ ॥ + अ० + इस १ ज्ञानको २ आश्रय करके ३ अर्थात् ये जो ज्ञान साधनसहित इस अध्याय में कहते हैं तिसका अनुष्ठान करके + मेरे ४ स्वरूप को प्राप्तहुये ६ अर्थात् शुद्ध सच्चिदानन्द स्वरूप हुये + सृष्टि समय ७ भी ८ अर्थात् जब यह जगत् प्रलय

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

होकर फिर उत्पन्न होगा उस समय भी + नहीं ९ उत्पन्न होंगे १० अर्थात् मायाके सम्बन्धी स्थूलादि देहोंको नहीं प्राप्त होंगे क्योंकि मायाके संबन्धसे दुःख होताहै मायाका ज्ञानसे नाश होजाता है ॥ २ ॥

ममयोनिर्महद्ब्रह्मतस्मिन्गर्भंदधाम्यहम् ॥ संभवःसर्वभूतानां ततोभवतिभारत ॥ ३ ॥

मम १ योनिः २ महद्ब्रह्म ३ तस्मिन् ४ गर्भम् ५ दधामि ६ अहम् ७ भारत ८ ततः ९ सर्वभूतानाम् १० संभवः ११ भवति १२॥३॥उ० + श्रोताको सम्मुख करके सोई ज्ञान कहते हैं + अ० + मेरी १ योनि बीज धारण करने का स्थान सब भूतों का कारण २ प्रकृतिमाया ३ तिसमें अर्थात् उस त्रिगुणात्मिका माया में ४ चिदाभासको ५ धारण करताहूं मैं ६ । ७ हे अर्ज्जुन ! ८ मायोपहित ब्रह्मसे ९ सब भूतोंका १० आविर्भाव ११ होताहै १२ अर्थात् माया में जब सच्चिदानन्द की छायावत् छाया पड़ती है तब सब भूत सूक्ष्म स्थूल प्रकट होते हैं तात्पर्य प्रभु जगत्के अभिन्ननिमित्तोपादान कारण है नहीं है भिन्न निमित्त और उपादान कारण जिन्होंसे ॥ ३ ॥

सर्वयोनिषुकौंतेय मूर्तयःसम्भवंतियाः ॥ तासां ब्रह्ममहद्योनिरहंबीजप्रदःपिता ॥ ४ ॥

कौन्तेय १ सर्वयोनिषु २ याः ३ मूर्तयः ४ सम्भवन्ति ५ तासाम् ६ योनिः ७ महद् ८ ब्रह्म ९ अहम् १० बीजप्रदः ११ पिता १२ ॥४॥ अ० + हे अर्जुन! १ सब भूतों में २ जो ३ मूर्त्ति ४ उत्पत्ति होती हैं ५ तिनकी ६ योनि ७ प्रकृति ८ । ९ है और + मैं १० बीज देनेवाला ११ पिता १२ तात्पर्य जो जो मूर्त्ति ब्रह्मा जी से ले चींटी पर्य्यन्त जंगम स्थावर जिस जिस जगह उत्पन्न होती हैं तिनकी प्रकृति उपादान कारण है ईश्वर निमित्त कारण है ॥ ४ ॥

सत्त्वंरजस्तमइतिगुणाःप्रकृतिसम्भवाः॥निबध्नन्तिमहाबाहोदेहेदेहिनमव्ययम् ॥ ५ ॥

सत्त्वम् १ रजः २ तमः ३ इति ४ गुणाः ५ प्रकृतिसम्भवाः ६ महाबाहो ७ देहे ८ अव्ययम् ९ देहिनम् १० निबध्नंति ११ ॥ ५ ॥ उ० + सत्त्वादि गुणोंने आत्मा को बंधन कररक्खाहै यह कहते हैं + अ० सत्त्व १ रज २ तम ३ यह ४ गुण ५

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

प्रकृति से प्रकट होते हैं ६ हे अर्जुन! ७ इस + देह में ८ निर्विकार ९ जीवको १० बन्धन करते हैं ११ तात्पर्य जीवके स्वरूप को भुला देते हैं आनन्द को अपने से जुदा पदार्थ जन्य जानकर जीव भ्रान्त होजाता है गुणों के सम्बन्ध से आनन्द स्वरूप अपने स्वरूप को भूल जाता है ॥ ५ ॥

तत्रसत्त्वंनिर्मलत्वात्प्रकाशकमनामयम् ॥ सुखसंगेनबध्नाति ज्ञानसंगेनचानघ ॥ ६ ॥

अनघ १ तत्र २ सत्त्वम् ३ निर्मलत्वात् ४ प्रकाशकम् ५ अनामयम् ६ सुखसंगेन ७ ज्ञानसंगेन ८ च ९ बध्नाति १० ॥ ६ ॥ + उ० + सतोगुणका लक्षण और बन्धन प्रकार कहते हैं + हे अर्जुन! १ तीनों गुणों में २ सतोगुण ३ निर्मल होनेसे ४ प्रकाशरूप ५ शान्तरूप ६ है + सुख के साथ ७ और ज्ञान के साथ ८ । ९ बन्धन करता है १० आत्मा को सत्त्वगुण + तात्पर्य सुख और ज्ञान ये दोनों अन्तःकरण की वृत्तिहैं मिथ्या अनात्मा माया की कार्यहैं मैं सुखी मैं ज्ञानी यह समझकर जीव वृथा भ्रान्ति में फँसता है जिस काल में सतोगुण तिरोभाव होजाताहै तमोगुण रजोगुण प्रकट होजातेहैं तब यह ज्ञान सुखभी जाता रहता है दुःख शोकादि में फँस जाता है ॥ ६ ॥

रजोरागात्मकंविद्धितृष्णासंगसमुद्भवम् ॥ तन्निबध्नातिकौन्तेयकर्मसंगेनदेहिनम् ॥ ७ ॥

कौन्तेय १ रजः २ रागात्मकम् ३ विद्धि ४ तृष्णासंगसमुद्भवम् ५ तत् ६ देहिनम् ७ कर्मसंगेन ८ निबध्नाति ९ ॥ ७ ॥ + उ० + रजोगुणका लक्षण और बन्धन प्रकार कहते हैं + अ० + हे अर्जुन! १ रजोगुणको २ रागात्मक ३ जानतू ४ अर्थात् जिस समय स्त्री मित्रादि पदार्थों का श्रवण स्मरण दर्शनादि करके अन्तःकरणकी वृत्ति में स्नेह उत्पन्न होताहै और मन रंजन होने लगताहै इसीको रागात्मक कहते हैं रजोगुण का यही स्वरूप है और + तृष्णा संगकी उत्पत्ति है जिसमें ५ अर्थात् जब रजोगुणका आविर्भाव होताहै तब जो जो पदार्थ देखने सुननेमें आताहै सब में अभिलाषा होने लगती है मनमें ये संकल्प विकल्प उत्पन्न होने लगते हैं कि अमुक पदार्थ जो हमको मिलैगा तो उसमें हमको यह आनन्द मिलैगा जब वह पदार्थ मिलजाता है तब उसमें आसक्ति होजाती है उसके वियोगमें दुःख होताहै ऐसे ऐसे रजोगुणके कार्यसे रजोगुणका ज्ञान होताहै + सो ६ रजोगुण + जीव

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

को ७ कर्मों में आसक्त करके ८ बन्धन करता है ९ वेदोक्त कर्मोंमें और उनके फल में फँसजाता है जीव रजोगुण ज्ञान के सम्मुख नहीं होने देता है ॥ ७ ॥

तमस्त्वज्ञानजंविद्धिमोहनंसर्वदेहिनाम् ॥ प्रमादालस्यनिद्राभिस्तन्निबध्नातिभारत ॥ ८ ॥

भारत १ तमः २ तु ३ अज्ञानजम् ४ सर्वदेहिनाम् ५ मोहनम् ६ विद्धि ७ तत् ८ प्रमादालस्यनिद्राभिः ९ निबध्नाति १० ॥ ८ ॥ + उ० + तमोगुणका लक्षण और बन्धनप्रकार कहते हैं + अ० + हे अर्जुन ! १ तमोगुणको २ । ३ आवरणशक्ति प्रधान ४ सब जीवनको ५ भ्रान्ति करनेवाला ६ जानतू ७ सो ८ निद्रा आलस्य प्रमाद करके ९ बन्धन करता है ॥ १० ॥ ८ ॥

सत्त्वंसुखेसंजयतिरजःकर्म्मणिभारत ॥ ज्ञानमावृत्यतुतमः प्रमादेसंजयत्युत ॥ ९ ॥

भारत १ सत्त्वम् २ सुखे ३ संजयति ४ रजः ५ कर्मणि ६ तमः ७ तु ८ ज्ञानम् ९ आवृत्य १० प्रमादे ११ संजयति १२ उत १३ ॥ ९ ॥ उ० + सत्त्वादि अपने अपने आविर्भाव में जो करते हैं उनकी सामर्थ्य दिखाते हैं + अ० + हे अर्जुन ! १ सतोगुण २ सुखमें ३ लगाता है ४ अर्थात् जिससमय सतोगुण आविर्भाव होताहै उससमय सुखके सम्मुख करता है और + रजोगुण ५ कर्मोंमें ६ लगाता है + और तमोगुण ७ । ८ ज्ञानको ९ ढूंढ़कर १० प्रमाद में ११ जोड़ताहै १२ आनन्दामृतवर्षिणी के पांचवें अध्याय में ये सब अर्थ स्पष्ट लिखे हैं ॥ ९ ॥

रजस्तमश्चाभिभूयसत्त्वंभवतिभारत ॥ रजःसत्त्वंतमश्चैवतमःसत्त्वंरजस्तथा ॥ १० ॥

रजः १ तमः २ च ३ अभिभूय ४ सत्त्वम् ५ भवति ६ भारत ७ सत्त्वम् ८ तमः ९ च १० एव ११ रजः १२ सत्त्वम् १३ रजः १४ तथा १५ तमः १६ ॥ १० ॥ उ० + एकगुण प्रकट रहताहै दो तिरोभाव रहते हैं यह नियम है सोई इस मन्त्रमें कहते हैं + अ० + रज १ और तमको २ । ३ दबाकर ४ सत्त्व ५ प्रकट होताहै ६ हे अर्जुन ! ७ सत्त्व ८ और तमको ९ । १० । ११ दबाकर + रजोगुण १२ प्रकट होताहै + और सत्त्व रजको १३ । १४ । १५ दबाकर + तमोगुण १६ प्रकटहोता है + जिससमय जो गुण प्रकटहोगा उससमय वैसेही बात प्यारी लगेगी दूसरे

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

गुणका कार्य उससमय अच्छा नहीं लगेगा जैसे रजोगुण के आविर्भावमें नाच तमाशा स्त्री शब्दादि प्रिय लगते हैं निद्रा आलस्य शम दमादि अच्छे नहीं लगते सतोगुण के आविर्भाव में स्त्री आदि पदार्थ अच्छे नहीं लगते सत्य दया संतोषादि अच्छे लगते हैं ॥ १० ॥

सर्वद्वारेषुदेहेस्मिन्प्रकाशउपजायते॥ ज्ञानंयदा तदाविद्याद्विवृद्धंसत्त्वमित्युत ॥ ११ ॥

यदा १ अस्मिन् २ देहे ३ सर्वद्वारेषु ४ प्रकाशः ५ ज्ञानम् ६ उपजायते ७ तदा ८ सत्त्वम् ९ विवृद्धम् १० विद्यात् ११ इति १२ उत १३ ॥ ११ ॥ उ० + जब शरीरमें सतोगुण बढ़ारहताहै उसका लक्षण यहहै + अ० + जिसकालमें १ इस देहके विषय २ । ३ सर्वद्वार श्रोत्रादि में प्रकाश अज्ञानात्मक ६ उत्पन्न होताहै ७ तिस कालमें ८ सतोगुण ९ बढ़ाहुआ १० जान ११ इत्यभिप्रायः १२ । १३ ॥ ११ ॥

लोभःप्रवृत्तिरारंभःकर्मणामशमःस्पृहा ॥ रजस्येतानिजायंतेविवृद्धेभरतर्षभ ॥ १२ ॥

कुरुनन्दन १ रजसि २ विवृद्धे ३ एतानि ४ जायन्ते ५ लोभः ६ प्रवृत्तिः ७ आरम्भः ८ कर्मणाम् ९ अशमः १० स्पृहा ११ ॥ १२ ॥ + उ० + जब शरीरमें रजोगुण बढ़ा रहताहै उसका लक्षण यह है + उ० + जब शरीर में रजोगुण २ बढ़ने में ३ ये ४ लोभादि + उत्पन्न होतेहैं ५ ज्यों ज्यों धनादिकी प्राप्ति हो त्यों त्यों अभिलाषा बढ़ती है ६ धनादिकी प्राप्तिके लिये ऐसे तन्मय होकर प्रयत्न करते रहना कि स्वप्नमें भी चित्त शान्त न हो ७ मन्दिर उपवनादि का जो प्रारम्भकर रक्खा है सो तो पूराहुआ नहीं दूसरा और प्रारम्भ करदिया ८ कर्मोंका ९ अशम १० अर्थात् यह काम करके वह काम करूंगा + बुरा भला कुछ न स्मरण करना जैसे बने यही इच्छा रखनी किसी प्रकार धनादि प्राप्त हों ११ ॥ १२ ॥

अप्रकाशोप्रवृत्तिश्चप्रमादोमोहएवच ॥ तमस्येतानिजायंतेविवृद्धेकुरुनन्दन ॥ १३ ॥

कुरुनन्दन १ तमसि २ विवृद्धे ३ एतानि ४ जायन्ते ५ अप्रकाशः ६ अप्रवृत्तिश्च ७ । ८ प्रमादः ९ मोहः १० एव ११ च १२ ॥ १३ ॥ + उ० + जब शरीरमें तमोगुण बढ़ा रहताहै उसका लक्षण यहहै + अ० + हे अर्जुन ! तमोगुण

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

बढ़ने में २ । ३ ये ४ अप्रकाशादि + उत्पन्न होतेहैं ५ अविवेक ६ और इसलोक परलोक के निमित्त प्रयत्न न करना ७ । ८ और करना तौ यह करना कि + द्यूतादि खेल खेलने ९ और अपनी जल्दी समझ से ऐसे काम करने कि उसका न इस लोकमें फल न परलोक में क्रोधादि अन्यकी हानिके लिये यत्नकरना किसी को बुरा कहना इत्यादि १० । ११ । १२ ॥ १३ ॥

यदा सत्त्वेप्रवृद्धेतुप्रलयंयातिदेहभृत् ॥ तदोत्तमविदांलोकानमलान्प्रतिपद्यते ॥ १४ ॥

सत्त्वे १ प्रवृद्धे २ तु ३ यदा ४ देहभृत् ५ प्रलयम् ६ याति ७ तदा ८ अमलान् ९ उत्तमविदाम् १० लोकान् ११ प्रतिपद्यते १२ ॥ १४ ॥ + उ० + मरण समय जो गुण बढ़ा होवेगा + उसका फल होगा कि जो अब दो श्लोकों में कहते हैं + अ० + सतोगुण बढ़ेहुये सन्ते १ । २ । ३ जिस काल में ४ जीव ५ मृत्युको ६ प्राप्त होताहै ७ तिस कालमें ८ निर्मल उत्तम उपासकों के ९ । १० लोकों को ११ प्राप्त होताहै १२ तात्पर्य्य हिरण्यगर्भादि के उपासक जिन निर्मल लोकोंमें जाते हैं उसी लोक को वह प्राप्त होता है कि जिसके अन्तकाल में सतोगुण बढ़ा रहै ॥ १४ ॥

रजसिप्रलयंगत्वा कर्मसंगिषुजायते ॥ तथाप्रलीनस्तमसिमूढयोनिषुजायते ॥ १५ ॥

रजसि १ प्रलयम् २ गत्वा ३ कर्मसंगिषु ४ जायते ५ तथा ६ तमसि ७ प्रलीनः ८ मूढयोनिषु ९ जायते १० ॥ १५ ॥ + अ० + रजोगुण में १ मृत्युको २ प्राप्तहोकर ३ कर्मसंगी मनुष्यों में ४ उत्पन्न होताहै ५ तैसेही ६ तमोगुण में ७ मराहुआ ८ पशु पक्षी मूढ़योनियोंमें ९ जन्म लेताहै १० ॥ १५ ॥

कर्मणःसुकृतस्याहुः सात्त्विकंनिर्मलंफलम् ॥ रजसस्तुफलंदुःखमज्ञानंतमसःफलम् ॥ १६ ॥

सुकृतस्य १ कर्मणः २ निर्मलम् ३ सात्त्विकम् ४ फलम् ५ आहुः ६ रजसः ७ तु ८ फलम् ९ दुःखम् १० तमसः ११ फलम् १२ अज्ञानम् १३ ॥ १६ ॥ + उ० + इस देहमें अपने आप विनायत्न सत्त्वादि जिस हेतुसे वर्तते हैं उसका कारण यह है + अ० + सतोगुणी कर्म का १ । २ कि जिसका लक्षण अठारहवें अध्याय

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

में कहेंगे अर्थात् पिछले जन्म में जो सतोगुणी कर्म किये हैं उन शुभ कर्मोंका + निर्मल ३ सतोगुण ४ फल ५ कहते हैं ६ और रजोगुणी का फल ७ । ८ । ९ दुःख १० है + तमोगुणका फल ११ । १२ अज्ञान १३ है तात्पर्य कोई प्रयत्न करके सतोगुण को बढ़ाते हैं किसी के स्वाभाविक शमदमादि देखने में आते हैं सो पिछले सतोगुणी कर्म का फल समझना चाहिये इस प्रकार रजोगुण तमोगुणकी व्यवस्था है ॥ १६ ॥

सत्त्वात्संजायतेज्ञानं रजसोलोभएवच ॥ प्रमाद मोहौतमसो भवतोऽज्ञानमेवच ॥ १७ ॥

सत्त्वात् १ ज्ञानम् २ संजायते ३ रजसः ४ लोभः ५ एव ६ च ७ प्रमादमोहौ ८ तमसः ९ भवतः १० अज्ञानम् ११ एव १२ च १३ ॥ १७ ॥ अ० + सतोगुणसे १ ज्ञान २ उत्पन्न होताहै ३ रजोगुणसे ४ लोभ ५ उत्पन्न होताहै ६ । ७ प्रमाद मोह ८ तमोगुणसे ९ होते हैं १० और अज्ञानभी ११ । १२ । १३ तमोगुणसे होताहै + तात्पर्य ज्ञान लोभ अज्ञान प्रमाद मोहके उपलक्षण हैं ज्ञानादि कहने में सत्त्वादि तीनों गुणोंका समस्त कार्य समझलेना चाहिये ॥ १७ ॥

ऊर्ध्वंगच्छंतिसत्त्वस्था मध्येतिष्ठंतिराजसाः ॥ जघन्यगुणवृत्तिस्था अधोगच्छंतितामसाः ॥ १८ ॥

सत्त्वस्थाः १ ऊर्ध्वम् २ गच्छन्ति ३ राजसाः ४ मध्ये ५ तिष्ठंति ६ जघन्यगुणवृत्तिस्थाः ७ तामसाः ८ अधः ९ गच्छन्ति १० ॥ १८ ॥ उ० + मरकर सत्त्वादि गुणों की तारतम्यता के लेख से फल होताहै इस मन्त्र में यह कहते हैं + अ० + सतोगुणी १ ऊपर के लोकोंको २ प्राप्त होते हैं ३ रजोगुणी ४ मध्यमें ५ स्थित रहते हैं ६ निकृष्ट गुणमें बर्तनेवाले ७ तमोगुणी ८ अधः नीचे को ९ प्राप्त होते हैं १० इस जगह तारतम्यता का जो विचार है सो आनन्दामृतवर्षिणी के पंचम अध्याय में लिखा है ॥ १८ ॥

नान्यंगुणेभ्यःकर्तारंयदाद्रष्टाऽनुपश्यति ॥ गुणेभ्यश्चपरंवेत्तिमद्भावंसोऽधिगच्छति ॥ १९ ॥

यदा १ द्रष्टा २ गुणेभ्यः ३ अन्यम् ४ कर्त्तारम् ५ न ६ अनुपश्यति ७ गुणेभ्यः ८ च ९ परम् १० वेत्ति ११ सः १२ मद्भावम् १३ अधिगच्छति १४ ॥ १९ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

अ० + गुणों के सम्बन्ध में ऐसा है यह बात पीछे कही अब यह कहते हैं कि विवेकी गुणों के पृथक् हैं + अ० + जिस काल में १ विवेकी २ गुणों से ३ पृथक् ४ कर्त्ता को ५ नहीं ६ देखताहै ७ अर्थात् गुणही कर्त्ता है आत्मा साक्षी-मात्रहै जो + गुणों से ८। ९ परे १० आत्मा को + जानता है ११ सो १२ मेरे भावको १३ प्राप्तहोताहै १४ अर्थात् शुद्ध सच्चिदानन्दस्वरूप को प्राप्तहोताहै॥१९॥

गुणानेतानतीत्यत्रीन्देहीदेहसमुद्भवान् ॥ जन्म मृत्युजरादुःखैर्विमुक्तोऽमृतमश्नुते ॥ २० ॥

देही १ देहसमुद्भवान् २ एतान् ३ त्रीन् ४ गुणान् ५ अतीत्य ६ जन्ममृत्यु-जरादुःखैः ७ विमुक्तः ८ अमृतम् ९ अश्नुते १० ॥ २० ॥ अ० + जीव १ देहा-कार को प्राप्त हुये २ इन ३ तीन ४ गुणों को ५ उल्लंघकर ६ जन्ममृत्युजरा-व्याधि से ७ छुटा हुआ ८ नित्यानन्दस्वरूप को ९ प्राप्त होताहै १० तात्पर्य यही तीनों गुण देहाकार हो रहे हैं इनके साथ ममता संग अभ्यास छोड़ देना यही इनका उल्लंघन करना है जन्म मृत्यु जरा व्याधि इनके ही सम्बन्ध से होते हैं और इनके सम्बन्ध में अपने शुद्ध सच्चिदानन्द स्वरूप को भूल जाता है इनके त्याग में प्रयत्नहै परमानन्द की प्राप्ति में कुछ यत्न नहीं ॥ २० ॥

अर्ज्जुनउवाच ॥ कैर्लिंगैस्त्रीन्गुणानेतानतीतो भवतिप्रभो ॥ किमाचारःकथंचैतांस्त्रीन्गुणानति वर्त्तते ॥ २१ ॥

अर्ज्जुनउवाच + प्रभो १ कैः २ लिंगैः ३ एतान् ४ त्रीन् ५ गुणान् ६ अतीतः ७ भवति ८ किमाचारः ९ कथम् १० च ११ एतान् १२ त्रीन् १३ गुणान् १४ अतिवर्तते १५ ॥ २१ ॥ अ० + अर्ज्जुन प्रश्न करता है कि + हे समर्थ ! १ किन चिह्न करके २। ३ इन तीन गुणों से ४। ५। ६ अतीत ७ होताहै ८ यह लक्षण प्रश्नहै अर्थात् कैसे प्रतीत हो कि अमुक गुणातीत है वा मैं गुणातीत हूं वे कौन से लक्षण हैं और + क्या आचार है उसका ९ अर्थात् उसका व्यवहार चाल चलन कैसा होताहै यह आचारप्रश्न है + और किस प्रकार १०। ११ इन तीन गुणों को १२। १३। १४ उल्लंघन करता है १५ यह उपायप्रश्न है अर्थात् वह क्या साधन है कि जिस करके पुरुष गुणातीत होजावे ॥ २१ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

श्रीभगवानुवाच॥ प्रकाशंचप्रवृत्तिंचमोहमेवचपाण्डव॥ नद्वेष्टिसंप्रवृत्तानिननिवृत्तानिकांक्षति॥२२॥

श्रीभगवानुवाच + प्रकाशम् १ च २ प्रवृत्तिम् ३ च ४ मोहम् ५ एव ६ इति ७ पांडव ८ संप्रवृत्तानि ९ न १० द्वेष्टि ११ निवृत्तानि १२ न १३ कांक्षति १४ ॥ २२ ॥ उ० + द्वितीय अध्याय में भी अर्जुन ने यही प्रश्न किया अन्य रीतिकर के और श्रीमहाराजने उत्तर भी दिया भलेप्रकार अब श्रीमहाराज ने यह समझा कि उस रीति से अर्जुन की समझ में नहीं आया अब अन्य रीति से कहनाचाहिये इस वास्ते इस बातको संक्षेप करके अन्य रीति से कहते हैं श्रीभगवान् कि जिससे जल्दी समझमें आजावे ऐसे करुणाकरको छोड़ जो अन्य उपायसे मोक्ष चाहते हैं उनके अन्तःकरणमें रजोगुणी तमोगुणी वृत्ति बढ़ी हुई हैं + अ० + प्रकाश १ और प्रवृत्ति २।३ और मोह ४।५।६।७ ये तीन तीनोंगुणों के कार्य हैं ये तीनों उपलक्षण हैं अर्थसे सत्त्वादि गुणोंका जितना कार्य है सब समझ लेना जो ये अपने आप + हे अर्जुन! ८ भलेप्रकार वर्तरहे हों ९ तो इनसे + नहीं १० वैर करता है ११ अर्थात् उनकी प्रवृत्तिका कुछ उपाय नहीं करताहै + और फिर जब अपने आप दूर होजाते हैं तब + निवृत्तों की १२ नहीं १३ चाह करताहै १४ यह लक्षणप्रश्नका उत्तर है तात्पर्य ब्रह्मज्ञानी ने किसी गुण में प्रीति करता है न वैर करताहै सतोगुणमें प्रीति रजोगुण तमोगुण में द्वेष जिज्ञासुका होता है यह लक्षण स्वसंवेद्यहै परसंवेद्य नहीं अर्थात् ऐसे महात्माको दूसरा नहीं पहचानसक्ता क्योंकि वे आप आपेको छिपाये रखते हैं ॥ २२ ॥

उदासीनवदासीनो गुणैर्योनविचाल्यते॥ गुणा वर्तंतइत्येवंयोऽवतिष्ठतिनेंगते॥ २३ ॥

यः १ उदासीनवत् २ आसीनः ३ गुणैः ४ न ५ विचाल्यते ६ गुणाः ७ वर्तंते ८ इति ९ एवम् १० यः ११ अवतिष्ठति १२ न १३ इङ्गते १४॥ २३॥ उ० + गुणातीतका क्या आचारहै इस प्रश्नका उत्तर देते हैं यह लक्षण ज्ञानीका परसंवेद्यभी है + अ० + जो १ उदासीनवत् २ स्थित ३ गुणों करके ४ नहीं ५ विचलताहै ६ गुण वर्तरहे हैं ७। ८ यह ९ समझता है कि मेरा गुणों से क्या सम्बन्ध है + इसप्रकार १० जो ११ स्थित १२ अपने स्वरूपसे + नहीं १३ चलताहै १४ उसको गुणातीत कहते हैं ॥ २३ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

समदुःखसुखःस्वस्थःसमलोष्टाश्मकाञ्चनः॥ तुल्यप्रियाप्रियोधीरस्तुल्यनिन्दात्मसंस्तुतिः॥२४॥

समदुःखसुखः १ स्वस्थः २ समलोष्टाश्मकाञ्चनः ३ तुल्यप्रियाप्रियः ४ धीरः ५ तुल्यनिन्दात्मसंस्तुतिः ६ ॥ २४ ॥ अ० + सुख दुःख में सम १ अर्थात् सुख दुःखका प्रतीत होना यह अन्तःकरणका धर्म है यावत् अन्तःकरण है तावत् वे संदेह धर्मोंको अपना धर्म प्रतीत होगा जिस धर्म से वह धर्मी कहा जाताथा जो वह धर्म न वर्ते तो फिरि उसको उस धर्मवाला क्योंकहेंगे दुःख सुख ज्ञानीको अवश्य प्रतीत होताहै समताका यह अर्थ नहीं कि दुःख सुख प्रतीत न होवे तात्पर्य यह है कि दुःख सुख परमानन्द स्वरूप आत्माको कम सिवाय नहीं करसक्ते + अपने स्वरूपमें स्थित २ सम है लोहा पत्थर सोना जिसके ३ सम हैं प्रिय अप्रिय जिस के ४ धैर्यवाला ५ समहै अपनी निन्दा स्तुति जिसके ६ उसको गुणातीत कहते हैं + टी० + जो आत्माकी निन्दा करताहै वह अपनी पहले करताहै और जो शरीरोंकी करता है तो सहाय करताहै और जो निन्दा करता है वह अवगुणोंकी करताहै इस हेतुसे उसको सहायक जानना योग्यहै क्योंकि अवगुणोंको सब बुरा कहते हैं सिवाय इसके अवगुण कहने से दूर होजाता है इस बातको इतिहास से स्पष्ट कहते हैं एक राजाने बहुत ब्राह्मणों को एकदिन जिमाया भोजन किये पीछे वे ब्राह्मण सब मर गये मरजाने का कारण यह हुआ कि मैदान में खीर होरही थी आकाश में चील सर्पको लिये जातीथी सर्प के मुखमें से विष टपक खीर में जो पड़ा किसीने न देखा नगर में यह चर्चाहुई कि राजाने ब्राह्मणों को विष दे दिया बहुत लोगोंका इसमें सम्मत न हुआ तब एक दुष्टने यह बारीकी निकाली कि राजा अमुक ब्राह्मणकी स्त्री से प्रीति रखता है अकेला उस ब्राह्मण को मरवाना राजा ने योग्य न समझ बहुतों के साथ उसको भी न्यौतकर विष दे दिया इस बात में बहुत लोगों को निश्चय होगया जगह जगह यही चर्चा होनेलगी राजा बिचारा अकृतदोष इस निन्दाका मारा नगर छोड़ वनमें चला वनमें आकाशवाणी हुई कि हे राजन्! तेरा कुछ दोष नहीं यह व्यवस्था ऐसे है चील सर्प विषकी सब कथा सुनाई कि इस कथाको उन निन्दक दुष्टों ने भी सुना वह हत्या राजाको छोड़ परमेश्वर के पास पहुँची कहा कि मुझको अब जगह बतलाइये प्रभुने कहा कि जिन्होंने राजाको दोष लगाया और कहा या सुना तुझको वहां रहना योग्यहै इसमें न राजाका दोष न चील का न सर्प का न रसो-

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

हुआ का राजा इसमें निमित्त था सो उसको फल होगया राजा अपछू घर आया और हत्या निन्दकोंके मुखपर पहुँची उस दिनसे हत्या निन्दकों के मुखपर और जो किसी की बुराई मन लगाकर सुनते हैं उनके मुखपर वास करती है प्रत्यक्ष देखलो कि जिस समय किसी की कोई निन्दा करता हो या सुनता हो दोनोंकी सूरत हत्यारों कीसी होगी ॥ २४ ॥

मानापमानयोस्तुल्यस्तुल्योमित्रारिपक्षयोः ॥
सर्वारम्भपरित्यागी गुणातीतःसउच्यते ॥ २५ ॥

मानापमानयोः १ तुल्यः २ तुल्यः ३ मित्रारिपक्षयोः ४ सर्वारम्भपरित्यागी ५ गुणातीतः ६ सः ७ उच्यते ८ ॥ २५ ॥ +अ०+ मान अपमान में १ सम २ मित्र अरि के पक्ष में सम ३ । ४ सब शुभ अशुभ कर्म्मों के आरम्भ का त्यागी ५ सो+गुणातीत ६ । ७ कहा है ८ जीवन्मुक्त ज्ञानी को गुणातीत कहते हैं ॥ २५ ॥

मांचयोव्यभिचारेण भक्तियोगेनसेवते ॥ सगुणा
न्समतीत्यैतान् ब्रह्मभूयायकल्पते ॥ २६ ॥

यः १ च २ माम् ३ अव्यभिचारेण ४ भक्तियोगेन ५ सेवते ६ सः ७ एतान् ८ गुणान् ९ समतीत्य १० ब्रह्मभूयाय ११ कल्पते १२ ॥ २६ ॥ +उ०+ गुणातीत होनेका उपाय श्रीभगवान् कहते हैं +अ०+ जो १ । २ मुझको ३ अव्यभिचारी भक्तियोग करके ४ । ५ सेवन करताहै ६ अर्थात् परमेश्वरकी ऐसी उपासना करे कि वह दिन दिन बढ़े कभी न होनेपावे कोई अन्य काम बीचमें न हो उसको अव्यभिचारिणी भक्ति कहते हैं+सो ७ इन गुणों को ८ । ९ उल्लंघ करके १० ब्रह्मभाव को ११ प्राप्त होते हैं १२ तात्पर्य परमानन्द स्वरूप आत्मा की प्राप्तिका उपाय जैसा भक्तिहै और विशेष इस समयमें ऐसा अन्य उपाय शीघ्र प्रत्यक्ष जीतेजी फलका देनेवाला नहीं यह अवतार श्री व्रजचन्द्र महाराजका इसी समय के लोगोंके उद्धार करने के लिये हुआहै जैसे इससमय के पाप बलवान् हैं ऐसेही श्रीभगवान् का यह अवतार इन पापों के नाश करने में समर्थ है ॥ २६ ॥

ब्रह्मणोहिप्रतिष्ठाहममृतस्याव्ययस्यच ॥ शा
श्वतस्यचधर्मस्य सुखस्यैकांतिकस्यच ॥ २७ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

अव्ययस्य १ अमृतस्य २ ब्रह्मणः ३ हि ४ अहम् ५ प्रतिष्ठा ६ च ७ शाश्वतस्य ८ च ९ धर्मस्य १० च ११ एकांतिकस्य १२ सुखस्य १३ ॥ २७॥ अ०+निर्विकार १ अविनाशी २ ब्रह्मकी ३ हीं ४ मैं ५ मूर्त्ति ६। ७ हूं+ और सनातन धर्म की ८। ९। १० भी ११ अखंडसुख की १२। १३ भी मैं मूर्त्ति हूं तात्पर्य जो निराकारब्रह्मको और अधर्म को और परमानन्द को नहीं जानते हैं श्रीकृष्णचन्द्र महाराजकी उपासना दिन रात्रि करते हैं वे ब्रह्मको अवश्य प्राप्त होते हैं गुणातीत होनेका उपाय अर्जुनने जो बूझाथा उसका उत्तर यह दो श्लोकों करके दिया अर्थात् श्रीव्रजचन्द्र की भक्ति करनी गुणातीत होनेका उपाय है यावत् निराकार निर्गुण परमानन्दस्वरूप आत्माका साक्षात्कार न हो तावत् साकार मूर्त्तिका आश्रय रखना चाहिये इत्यभिप्रायः ॥ २७॥

इति श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सुब्रह्मविद्यायांयोगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे गुणत्रयविभागोनामचतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

इति श्रीआनन्दगिरिविरचितायां परमानन्दप्रकाशिकायां टीकायां चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

पन्द्रहवें अध्यायका प्रारम्भहुआ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ ऊर्ध्वमूलमधःशाखमश्वत्थंप्राहुरव्ययम् ॥ छन्दांसियस्यपर्णानियस्तंवेदसवेदवित् १

श्रीभगवानुवाच+ऊर्ध्वमूलम् १ अधःशाखम् २ अश्वत्थम् ३ अव्ययम् ४ प्राहुः ५ यस्य ६ छन्दांसि ७ पर्णानि ८ यः ९ तम् १० वेद ११ सः १२ वेदवित् १३॥ १॥ +उ०+वैराग्य विना ज्ञान नहीं होता इस वास्ते संसार को वृक्षवत् वर्णन करते हैं+अ०+मायोपहित ब्रह्ममूल है जिसकी १ क्योंकि मायोपहित से अन्य पदार्थ संसार में ऊर्ध्व ऊंचा बड़ा परे नहीं और शुद्ध ब्रह्म तो संसारसे पृथक् है सो मन वाणी का विषय नहीं+हिरण्यगर्भादि शाखा हैं जिसकी २ क्योंकि हिरण्यगर्भादि मायोपहित ब्रह्मसे नीचे पीछे हैं संसारको+अश्वत्थ ३ अव्यय ४ कहते हैं ५ विना ज्ञान इसका नाश नहीं होता इस वास्ते तो इसको अव्यय कहते हैं भगवत् की कृपासे जो ज्ञान होजाता तो यह ऐसा भी नहीं कि

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

कल तक ठहरा रहै अश्वत्थ में अकार नकार की जगह है श्व इस शब्द का अर्थ कलका है जो कल तक न ठहरे उसको अश्वत्थ कहते हैं अश्वत्थका अर्थ इस जगह पीपल नहीं समझना और यह भी नहीं समझना कि इस की जड़ ऊपर को है वृक्षवत् और शाखा नीचे हैं ऐसे अर्थ समझना चाहिये कि जो ऊर्ध्व अधःका अर्थ ऊपर लिखाहै + जिस के ६ वेद ७ पत्र ८ हैं क्योंकि वृक्षकी शोभा पत्रों से ही होती और पत्रों को ही देख वृक्ष में राग उत्पन्न होता है ऐसे वेदोक्त कर्मों के फल सुन सुन संसारमें राग बढ़ता चलाजाता है तात्पर्य वेदोंका समझमें नहीं आता रोचक वाक्योंको सिद्धान्त समझ बैठते हैं + जो ९ तिसको १० जानताहै ११ सो १२ वेदका जाननेवाला है १३ अर्थात् जो वेदमार्ग को एक साधन समझता है और फल उसका परमानन्दस्वरूप आत्मा है सो वेदका अर्थ जानता है द्वितीय अध्याय में श्रीभगवान् कहचुके हैं कि वेद अज्ञानियों के वास्ते हैं कि सत्त्वादि गुणों में मोहको प्राप्त होरहे हैं ॥ १ ॥

अधश्चोर्ध्वंप्रसृतास्तस्यशाखा गुणप्रवृद्धाविषयप्रवालाः ॥ अधश्चमूलान्यनुसंततानि कर्मानुबन्धीनिमनुष्यलोके ॥ २ ॥

तस्य १ शाखाः २ अधः ३ च ४ ऊर्ध्वम् ५ प्रसृताः ६ गुणप्रवृद्धाः ७ विषयप्रवालाः ८ अधः ९ च १० मनुष्यलोके ११ कर्मानुबन्धीनि १२ मूलानि १३ अनुसन्ततानि १४ ॥ २ ॥ अ० + तिस संसार वृक्षकी १ शाखा २ नीचे ३ और ऊपर ४ । ५ फैलरही हैं सत्त्वादि गुणों करके बढ़ती हुई हैं ७ विषय इस लोक परलोकके पत्ते हैं उस वृक्षके ८ नीचे ९ । १० भी + मनुष्यलोक में ११ कर्मोंके फल रागद्वेषादि १२ उसकी जड़ १३ फैल रही है १४ अर्थात् बहुत दृढ़ होरही है जैसे रज्जुसे गठरी को पेंचपर पेंच देकर बांधते हैं चारोंओरसे तैसेही संसार की जड़ मनुष्यलोक में नीचे ऊपर अनुस्यूत ओतप्रोत होरही है तात्पर्य कर्म करनेका अधिकार मनुष्यलोकमें ही है और कर्मोंका जो अनुबन्ध अर्थात् पश्चात्त्रि राग द्वेषादि कर्मोंका फल यह भी संसारकी जड़है वास्तव संसारकी जड़ मायोपहित ब्रह्महै इस हेतुसे उसको ऊर्ध्वजड़ कहा मनुष्यलोक में कर्म इसकी जड़है मायोपहित ब्रह्मकी अपेक्षामें मर्त्यलोक नीचाहै इस वास्ते इस जगह कहा कि इसके नीचे मध्यलोकमें भी कर्मकाण्ड जड़है + ब्रह्मलोक वैकुण्ठादि और मा-

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

योपहित ब्रह्म सूक्ष्म उपाधि करके उपहित हिरण्यगर्भ स्थूल उपाधि करके उपहित विराट् और उसके अन्तर्गत ब्रह्मादि देवता यह तौ ऊपरको संसारकी शाखा फैलरही हैं और मर्त्यलोकमें पशु पक्षी मनुष्यादि यज्ञादि कर्म यह नीचे संसारकी शाखा फैलरही हैं जैसे जैसे सत्त्वादि गुणोंमें प्रीति करते हैं तैसेही तैसे शाखा में से शाखा बढ़ती चलीजाती हैं इसी हेतुसे न कुछ परलोक सावयव लोकों का पता लगताहै कि चौदह लोकहैं या वैकुण्ठादि कितने लोकहैं और एक एक देवताकी उपासनामें अनेक अनेक भेद असंख्यातहैं और अबतक अनेक भेद शाखा निकलती चलीजाती हैं और नीचे मनुष्योंका जो व्यवहारहै इसका कुछ प्रमाण नहीं न जातिका प्रमाण न कुलके व्यवहारों का प्रमाणहै संसारवृक्ष में शब्दादि विषय कोमल सुन्दर पत्र लगरहे हैं देवता मनुष्य पश्वादि सब प्राणियों ने विषयोंका आश्रय लेरक्खाहै सोई साक्षात् भोगते हैं कोई उनके लिये वेदोक्त कर्म कररहे हैं इस संसारकी व्यवस्था इस जगह बहुत संक्षेपकरके लिखीगई है वैराग्यवान् पुरुषोंसे और योगवाशिष्ठादि ग्रन्थोंसे इसकी व्यवस्था श्रवण करनी योग्यहै कि यह कैसे अनर्थोंका मूलहै ॥ २ ॥

नरूपमस्येहतथोपलभ्यतेनांतोनचादिर्नचसंप्रतिष्ठा ॥ अश्वत्थमेनंसुविरूढमूलमसंगशस्त्रेणदृढेनछित्त्वा ॥ ३ ॥

इह १ अस्य २ रूपम् ३ तथा ४ न ५ उपलभ्यते ६ न ७ अन्तम् ८ नच ९ आदिः १० च ११ न १२ संप्रतिष्ठा १३ सुविरूढमूलम् १४ एनम् १५ अश्वत्थम् १६ दृढेन १७ असंगशस्त्रेण १८ छित्त्वा १९ ॥ ३ ॥ अ० + संसार में १ जैसा + इस संसारका २ रूप ३ वर्णन करते हैं + तैसा ४ वेसन्देह + नहीं ५ प्रतीत होता है ६ इसका न ७ अन्त ८ और न आदि ९ । १० । ११ न १२ स्थिति १३ इस की प्रतीत होती है कि यह कैसे उत्पन्नहुआ कैसे लयहोगा कैसे ठहररहाहै क्षणभंगुर स्वप्न इन्द्रजालवत् इसके पदार्थ प्रतीत होते हैं अनर्थोंका मूल दुःखोंका स्थान है जो पदार्थ नरकका कारण उसके विना निर्वाह नहीं होता जो उसको अशेष त्याग दियाजावे तौ यह असम्भवहै इस प्रकार बँधीहुईहै भलेप्रकार जड़ जिसकी १४ इस अश्वत्थको १६ दृढ़ असंग शस्त्रसे १७।१८ छेदनकरके १९ परमपद परमानन्द स्वरूप आत्माको ढूंढ़नाचाहिये अगले मंत्रके साथ इस मंत्रका संबन्धहै तात्पर्यइस

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

संसारकी व्यवस्था सब मतवाले जुदी जुदी कहते हैं अपने मतको सब बड़ा कहते हैं दूसरे को बुरा कहते हैं कोई बेसन्देह समन्वय नहीं करता कि वास्तव संसार की यह व्यवस्थाहै और अमुक अमुक जो यह कहते हैं उनका तात्पर्य यह है कि मुमुक्षुको कैसे निश्चयहो कि अमुक मत सच्चाहै जो निर्णयकरो तौ एकघटका निर्णय नहीं होसक्ता है एक घटकी चर्चा में समस्त अवस्था समाप्तहोजावें परन्तु घटका निर्णय न हो न्यायशास्त्रवाले चर्चा के बलसे कुछ का कुछ सिद्धकरदें विद्याकी तौ यह व्यवस्था है एक मत नहीं कि जिसपर निश्चय बना रहै तात्पर्य यह है कि सब प्रकार संसार दुःखरूप है इसका भी निर्णय न करे इसके दूर होने का यत्नकरै कभी इसमें प्रीति न करे सदा संसार से ग्लानि बनी रहै तब परमानन्दस्वरूप आत्मा की प्राप्ति होती है ॥ ३ ॥

ततःपदंतत्परिमार्गितव्यंयस्मिन्गतानानिवर्तन्ति भूयः ॥ तमेवचाद्यंपुरुषंप्रपद्येयतःप्रवृत्तिःप्रसृता पुराणी ॥ ४ ॥

ततः १ तत् २ पदम् ३ परिमार्गितव्यम् ४ यस्मिन् ५ गताः ६ भूयः ७ न ८ निवर्तन्ति ९ तम् १० एव ११ च १२ आद्यम् १३ पुरुषम् १४ प्रपद्ये १५ यतः १६ पुराणी १७ प्रवृत्तिः १८ प्रसृता १९ ॥ ४ ॥ उ० + असंगशस्त्र से संसार को छेदन करके + अ० + पीछे १ सो २ पद ३ ढूंढ़ना योग्यहै ४ जिसमें ५ प्राप्त होकर ६ फिर ७ न ८ लौटना पड़े ९ उसके ढूंढ़ने का भक्तिमार्ग कहते हैं + तिसही १० । ११ । १२ आदिपुरुष की १३ । १४ मैं शरण हूं १५ कि + जिस से १६ अनादि १७ प्रवृत्ति १८ फैली है १९ तात्पर्य संसार के किसी पदार्थ में नीचे ऊपर प्रीति न करे वैराग्य के पीछे वह पद ढूंढ़े कि जहां जाकर फिर जन्म लेना न पड़े यत्न उस पदकी प्राप्ति का यह है कि तटस्थ लक्षण जो परमात्मा का है उस लक्षण से उसको लक्ष्य करके उसकी भक्ति करनी चाहिये स्वरूप भक्ति का यह है कि जिस परमात्मा से यह अनादि अनिर्वाच्य संसारवृक्ष नीचे ऊपर फैलाहै सोई आदिपुरुष मेरा आश्रय है उसकी मैं शरणहूं वह मेरी रक्षा करनेवाला है वह अन्तर्यामी सब के हृदय में विराजमान समर्थ है इस संसार वन के पार मुझको वही लगावेगा ऐसा चिंतन सदा बना रहै इसी को भक्ति कहते हैं ॥ ४ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi.

निर्मानमोहाजितसंगदोषा अध्यात्मनित्याविनिवृत्तकामाः॥ द्वन्द्वैर्विमुक्ताःसुखदुःखसंज्ञैर्गच्छन्त्यमूढाःपदमव्ययंतत् ॥ ५ ॥

निर्मानमोहाः १ जितसंगदोषाः २ अध्यात्मनित्याः ३ विनिवृत्तकामाः ४ सुखदुःखसंज्ञैः ५ द्वन्द्वैः ६ विमुक्ताः ७ मूढाः ८ तत् ९ अव्ययम् १० पदम् ११ गच्छन्ति १२ ॥ ५ ॥ उ० + औरभी आत्माकी प्राप्तिके साधन कहते हैं + अ० + दूर हो गये हैं मान मोह जिनके १ जीताहै संग का दोष जिन्हों ने २ वेदांतशास्त्र के श्रवण मनन विचार में नित्य लगे रहते हैं ३ समस्त कामना इस लोक परलोक की जातीरही है जिनकी ४ सुख दुःख यह है नाम जिनका ५ इत्यादि + द्वन्द्व करके ६ छूटे हुये ७ ज्ञानी आत्मतत्त्व के जाननेवाले ८ तिस ९ निर्विकार १० पदको ११ प्राप्त होते हैं १२ कि जिस पदके विशेषण अगले मंत्रमें हैं तात्पर्य मुमुक्षु को चाहिये कि प्रवृत्ति मार्गवालों का संग न करे और जिन ग्रन्थों में प्रवृत्तिमार्ग का विशेष निरूपण है उनका भी श्रवण न करे जिस पदार्थ को जिह्वासे कहेगा कानों से सुनेगा अवश्य उसके गुण संस्कार अन्तःकरण में प्रवेश होंगे प्रवृत्तिशास्त्र में स्त्री पुत्र राजसंयोग वियोगादि पदार्थों का वर्णन विशेष है इस हेतु से मुमुक्षु को कहना सुनना निषेधहै ब्रह्मविद्या में केवल वैराग्य उपरति शान्ति शम दमादि साधनोंका निरूपणहै स्त्रीआदि पदार्थोंका सम्बन्ध ऐसा अनर्थ नहीं करता कि जैसा जो उनकेगुण वर्णन करताहै उनका संग अनर्थ करता है॥५॥

नतद्भासयतेसूर्योनशशांकोनपावकः ॥ यद्गत्वानानिवर्तन्तेतद्धामपरमंमम ॥ ६ ॥

तत् १ सूर्यः २ न ३ भासयते ४ न ५ शशांकः ६ न ७ पावकः ८ यत् ९ गत्वा १० न ११ निवर्तन्ते १२ तत् १३ मम १४ परम् १५ धाम १६ ॥ ६ ॥ उ० + पूर्वोक्त पद के विशेषण कहते हैं + अ० + जिसको १ सूर्य २ नहीं ३ प्रकाश करसक्ता है ४ न ५ चन्द्रमा ६ न ७ अग्नि ८ और + जिसको ९ प्राप्त होकर १० नहीं ११ लौटकर आते हैं १२ जन्म मरण में + सो १३ मेरा १४ परं १५ धाम १६ है तात्पर्य्य सूर्यादि जड़ पदार्थ अज्ञान का कार्य ज्ञानस्वरूप आत्माको कैसे प्रकाश करसक्ते हैं आत्माही को परंपद परंधाम कहते हैं तैजस सावयव मन्दिरों को वैकुण्ठादि नाम हैं जिनके उनको धाम इस जगह नहीं

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

समझना क्योंकि वहां सूर्यादि सब प्रकाश करसक्ते हैं जैसे सूर्यादि तेजका कार्य है ऐसेही वे लोक हैं प्रभुका धाम प्रभु से जुदा नहीं यह बात आठवें अध्याय में स्पष्ट कर चुके हैं ॥ ६ ॥

ममैवांशोजीवलोकेजीवभूतःसनातनः ॥ मनःषष्ठानीन्द्रियाणि प्रकृतिस्थानिकर्षति ॥ ७ ॥

जीवलोके १ सनातनः २ जीवभूतः ३ मम ४ एव ५ अंशः ६ प्रकृतिस्थानि ७ इन्द्रियाणि ८ कर्षति ९ मनःषष्ठानि १० ॥ ७ ॥ + अ० + संसार में १ अनादि २ जीव ३ मेरा ४ ही ५ अंशवत् + अंश ६ है जैसे महाकाशका अंश घटाकाश + पर्वतवत् चिद्घनका अंश चिद्कण जीवको समझना न चाहिये क्योंकि परमात्मा निरवयव आकाशवत् है सावयव पर्वतवत् नहीं जैसे पर्वत का अंश पत्थरका टूक होताहै ऐसा जीव अंश नहीं आकाशका दृष्टान्त या बिम्ब प्रतिबिम्बका दृष्टान्त समझना चाहिये सो जीव सुषुप्तिकाल और प्रलयकाल में + प्रकृति में स्थित रहता है ७ जो इन्द्रिय तिन + इन्द्रियों ८ को खैंचताहै ९ कैसी हैं वे इन्द्रिय + मन है छठां जिनमें १० अर्थात् पंचज्ञानेन्द्रिय पंचकर्मेन्द्रिय पंच प्राण अन्तःकरण चतुष्टय ये सब कारण अविद्या में सूक्ष्म अविद्यारूप हुये रहते हैं सुषुप्ति प्रलयमें से इन सब को वही अविद्योपहित चिदाभास जीव स्थूल सूक्ष्म भोगों के लिये अपने साथ ले लेताहै ॥ ७ ॥

शरीरंयदवाप्नोति यच्चाप्युत्क्रामतीश्वरः ॥ गृहीत्वैतानिसंयाति वायुर्गंधानिवाशयात् ॥ ८ ॥

ईश्वरः १ यत् २ शरीरम् ३ अवाप्नोति ४ यत् ५ च ६ अपि ७ उत्क्रामति ८ एतानि ९ गृहीत्वा १० संयाति ११ वायुः १२ गन्धान् १३ आशयात् १४ इव १५ ॥ ८ ॥ + अ० + देहका स्वामी जीव १ जिसकाल में २ देहको ३ प्राप्त होता है ४ और जिस कालमें ५।६।७ एक देहसे दूसरे देहमें जाताहै ८ तिस कालमें + इस को ९ ग्रहण करके १० प्राप्त होताहै ११ दूसरे देहमें दृष्टान्त कहते हैं + वायु १२ गंधको १३ पुष्पादि से १४ जैसे १५ लै जाताहै तात्पर्य्य इन्द्रियादि को साथ लेकर जाताहै ॥ ८ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

श्रोत्रंचक्षुःस्पर्शनंच रसनंघ्राणमेवच ॥ अधिष्ठा
यमनश्चायं विषयानुपसेवते ॥ ९ ॥

श्रोत्रम् १ चक्षुः २ स्पर्शनम् ३ च ४ रसनम् ५ घ्राणम् ६ एव ७ च ८ मनः ९ च १० अयम् ११ अधिष्ठाय १२ विषयान् १३ उपसेवते १४॥ ९॥ + अ० + श्रोत्र १ चक्षुः २ त्वक् ३ और ४ रसना ५ और नासिका ६ । ७ । ८ और मन को ९ । १० यह ११ जीव + आश्रय करके १२ विषयों को १३ भोगताहै १४ तात्पर्य बुद्धिमें प्रतिबिम्ब जो चैतन्यका सो भोक्ता जीव मन में प्रतिबिम्ब जो उसी चैतन्य का सो अन्तःकरण इन्द्रियों में प्रतिबिम्ब जो चैतन्यका सो वह करण शब्दादि विषयों में प्रतिबिम्ब चैतन्यका सो कर्म्म कर्त्ता को प्रमाता चैतन्य कर्म्म को प्रमेय चैतन्य कहते हैं प्रमाता प्रमेय जब ये दोनों चैतन्य एक होते हैं उस को प्रत्यक्ष भोग कहते हैं ॥ ९ ॥

उत्क्रामन्तंस्थितंवापिभुञ्जानंवागुणान्वितम् ॥
विमूढानानुपश्यन्तिपश्यन्तिज्ञानचक्षुषः ॥ १० ॥

विमूढाः १ उत्क्रामन्तम् २ स्थितम् ३ वा ४ अपि ५ भुञ्जानम् ६ वा ७ गुणान्वितम् ८ न ९ अनुपश्यन्ति १० ज्ञानचक्षुषः ११ पश्यन्ति १२॥ १०॥ + उ० + यथार्थ जीवका स्वरूप ज्ञानीही जानते हैं बहिर्मुख विषयी नहीं जानते हैं + अ० + बहिर्मुख १ जीवको + एक देहसे दूसरे देहमें जाते हुयेको २ और देहमें स्थितहुये को ३ । ४ भी ५ और भोगतेहुये को ६ और इन्द्रियादि के साथ संयुक्त हुये को ७ । ८ नहीं ९ देखते हैं १० ज्ञान नेत्रवाले ११ देखते हैं १२ तात्पर्य्य अविवेकी यह भी नहीं जानते कि जीव किसप्रकार विषयों को भोगता है अकेलाही भोगता है या इन्द्रियादि के सम्बन्ध से भोगताहै और यह शरीरों में कैसे स्थितहै शरीरादि इसका आश्रयहै या आत्मा देहादिका आश्रयहै या कुछ अन्यप्रकार है यह कैसे इस देहमें से छूट दूसरे देहमें जाताहै ॥ १० ॥

यजन्तोयोगिनश्चैनं पश्यन्त्यात्मन्यवस्थितम् ॥
यतन्तोप्यकृतात्मानोनैनंपश्यन्त्यचेतसः ॥ ११ ॥

यजन्तः १ योगिनः २ च ३ एनम् ४ आत्मनि ५ अवस्थितम् ६ पश्यन्ति ७ अचेतसः ८ अकृतात्मानः ९ यतन्तः १० अपि ११ एनम् १२ न १३ पश्यन्ति १४॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

११॥ + उ० + यह नहीं समझना कि आत्माको तो सब ही जानते हैं ऐसा कौन है कि जो आपको न जाने अपना जानना यही ज्ञानकी अवधि है सब प्राणी तो आत्माको क्या जानेंगे बहुत विद्यावान् वेदोक्त अनुष्ठान करनेवाले भी नहीं जानते + अ० + ज्ञानयोग में यत्न करनेवाले १ योगी २। ३ आत्मा को ४ देहमें ५ स्थित ६ और देहसे विलक्षण + देखते हैं ७ मन्दमति ८ मलिन अन्तःकरणवाले ९ यत्न करतेहुये १० भी ११ आत्मा को १२ नहीं १३ देखते १४ तात्पर्य्य वैदिक मार्गवाले भी कोई कोई जो आत्माको नहीं जानते उसमें हेतु यहहै कि वे वेदान्तमें श्रद्धा नहीं करते जीवको परिच्छिन्न समझते हैं और एक यह बड़ा आश्चर्य्य है कि वेदकी दृष्टि से अदृष्ट सूतकादि उनको लगजावें और आत्मा में यह निश्चय न हो कि मैं ब्रह्म हूँ॥ ११॥

यदादित्यगतंतेजो जगद्भासयतेखिलम्॥ यच्च न्द्रमसियच्चाग्नौ तत्तेजोविद्धिमामकम्॥ १२॥

आदित्यगतम् १ यत् २ तेजः ३ अखिलम् ४ जगत् ५ भासयते ६ यत् ७ चन्द्रमसि ८ यत् ९ च १० अग्नौ ११ तत् १२ तेजः १३ मामकम् १४ विद्धि १५॥ १२॥ अ० + सूर्य में १ जो २ तेज ३ समस्त ४ जगत् को ५ प्रकाश करता ६ जो ७ चन्द्रमा में ८ और जो ९। १० तेज + अग्नि में ११ सो १२ तेज १३ मेराही १४ जान १५॥ १२॥

गामाविश्यचभूतानि धारयाम्यहमोजसा॥ पुष्णामिचौषधीःसर्वाःसोमोभूत्वारसात्मकः॥ १३॥

गाम् १ आविश्य २ च ३ भूतानि ४ धारयामि ५ अहम् ६ ओजसा ७ रसात्मकम् ८ च ९ सोमः १० भूत्वा ११ सर्वाः १२ ओषधीः १३ पुष्णामि १४॥ १३॥ अ० + पृथिवी में १ प्रवेश करके २। ३ भूतोंको ४ धारण करताहूँ ५ मैं ६ बलकरके ७ और रसवाला ८। ९ चन्द्र १० होकर ११ सब ओषधियों को १२। १३ पुष्ट करताहूं १४॥ १३॥

अहंवैश्वानरोभूत्वा प्राणिनांदेहमाश्रितः॥ प्राणापानसमायुक्तः पचाम्यन्नंचतुर्विधम्॥ १४॥

प्राणिनाम् १ देहम् २ आश्रितः ३ अहम् ४ वैश्वानरः ५ भूत्वा ६ प्राणापानसमायुक्तः ७ चतुर्विधम् ८ अन्नम् ९ पचामि १०॥ १४॥ + अ० + जीवनके १

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

शरीरमें २ स्थितहुआ ३ मैं ४ जठराग्नि ५ होकर ६ प्राणापानादि के साथ मिल कर ७ चारप्रकार के ८ अन्न को ९ पचाताहूँ १० + टी० + पूरी आदिको भक्ष्य खीर आदिको भोज्य चटनी आदिको लेह्य पौंड़े आदिको चोष्य कहते हैं तात्पर्य सूर्य चन्द्रमा पृथिवी आदि पदार्थों में जो जो गुणहैं यह सब चैतन्य देव की सत्ताहै वे सब जड़हैं चैतन्य सबका प्रेरक है ॥ १४ ॥

सर्वस्यचाहंहृदिसन्निविष्टोमत्तःस्मृतिर्ज्ञानमपोहनं च॥ वेदैश्चसर्वैरहमेववेद्योवेदांतकृद्वेदविदेवचाहम् १५

सर्वस्य १ हृदि २ अहम् ३ सन्निविष्टः ४ मत्तः ५ च ६ स्मृतिः ७ ज्ञानम् ८ अपोहनम् ९ च १० सर्वैः ११ वेदैः १२ च १३ अहम् १४ एव १५ वेद्यः १६ वेदांतकृत् १७ च १८ वेदवित् १९ एव २० अहम् २१ ॥ १५ ॥ अ० + सबकी १ बुद्धिमें २ मैं ३ प्रवेशहूँ ४ और मुझसे ५ । ६ स्मृतिः ७ ज्ञान ८ और इनदोनों का + भूल जाना ९ भी १० मुझसे होताहै + और सब वेदोंकरके ११।१२।१३ मैं १४ ही १५ जानने के योग्य १६ हूं अर्थात् सब वेद मुझको ही प्रतिपादन करते हैं + वेदांत करनेवाला १७ और वेदों को जाननेवाला भी १८।१९।२० मैं २१ ही हूँ तात्पर्य्य जहां जहां प्रभु अपनी विभूति कहते हैं उनका अभिप्राय जीव ब्रह्मकी एकता पूर्णता में है ज्ञान शक्ति क्रिया करके उपहित जो चैतन्य उससे ज्ञान स्मृति होती है आवरणशक्ति प्रधान जो चैतन्य उससे भूल अज्ञान होताहै ॥ १५ ॥

द्वाविमौपुरुषौलोकेक्षरश्चाक्षरएवच ॥ क्षरःसर्वाणिभूतानि कूटस्थोक्षरउच्यते ॥ १६ ॥

इमौ १ द्वौ २ पुरुषौ ३ लोके ४ क्षरः ५ च ६ अक्षरः ७ एव ८ च ९ सर्वाणि १० भूतानि ११ क्षरः १२ कूटस्थः १३ अक्षरः १४ उच्यते १५ ॥ १६ ॥ उ० + कहे हुये पिछले अर्थको फिर संक्षेपकर कहते हैं कि जिससे जल्द समझ में आजाय + अ० + ये १ दो २ पुरुष ३ लोक में ४ प्रसिद्ध हैं + क्षर ५ और अक्षर ६ । ७ । ८ । ९ सब भूतों को १० । ११ क्षर १२ कूटस्थ को १३ अक्षर १४ कहते हैं १५ + टी० + लौकिक बोली में देहको भी पुरुष कहते हैं इसवास्ते दोनोंको पुरुष कहा देह इन्द्रियादि पदार्थों को क्षर कहते हैं और इस जगह मायाका नाम अक्षर है कूट कपट में जिसकी स्थिति है सो माया

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

कूटस्थ का अर्थ इस जगह अक्षरार्थ से माया समझना यावत् ब्रह्मज्ञान नहीं होता तावत् माया अक्षर स्पष्ट प्रतीत होती है इत्यभिप्रायः ॥ १६ ॥

उत्तमःपुरुषस्त्वन्यः परमात्मेत्युदाहृतः ॥ योलो कत्रयमाविश्यबिभर्त्यव्ययईश्वरः ॥ १७ ॥

उत्तमः १ पुरुषः २ तु ३ अन्यः ४ परमात्मा ५ उदाहृतः ६ इति ७ यः ८ अव्ययः ९ ईश्वरः १० लोकत्रयम् ११ आविश्य १२ बिभर्ति १३ ॥ १७ ॥ उ० + शुद्ध सच्चिदानन्द परमात्मा नित्यमुक्त क्षर अक्षर दोनोंसे विलक्षणहै यहसमझ इसको आत्मज्ञान कहते हैं + अ० + उत्तम १ पुरुष २ तो ३ अन्य ४ ही है घट-पटवत् अन्य भेदवाला नहीं बिम्ब प्रतिबिम्बवत् अन्य है उसी को + परमात्मा ५ कहाहै ६ यह ७ समझ अर्थात् वह यही आत्मा है कि जिसको वेदों में ऋषीश्वर मुनीश्वरोंने परमात्मा कहाहै + जो ८ निर्विकार ९ ईश्वर १० त्रिलोक में ११ प्रवेशहोकर १२ धारण करताहै १३ अर्थात् उसकी ऐसी अचिंत्यशक्तिहै कि वह वास्तव निर्विकार ईश्वर है परन्तु त्रिलोकको धारण कररहाहै ॥ १७ ॥

यस्मात्क्षरमतीतोहमक्षरादपिचोत्तमः ॥ अतो स्मिलोकेवेदेचप्रथितःपुरुषोत्तमः ॥ १८ ॥

यस्मात् १ क्षरम् २ च ३ अक्षरात् ४ अपि ५ अहम् ६ उत्तमः ७ अतीतः ८ अस्मि ९ अतः १० लोके ११ वेदे १२ च १३ पुरुषोत्तमः १४ प्रथितः १५ ॥ १८ ॥ + अ० + जिस हेतुसे १ क्षर अक्षर से २।३।४ भी ५ मैं ६ उत्तम मन वाणीका अविषय ७ और इन दोनों से + अतीत नित्यमुक्त ८ हूं ९ इसी हेतु से १० शास्त्रमें ११ और वेदमें १२।१३ मुझको + पुरुषोत्तम १४ कहा है १५ तात्पर्य नित्यमुक्त शुद्ध सच्चिदानन्द परिपूर्ण आत्माको पुरुषोत्तम कहते हैं कभी किसीकालमें जहां बन्ध मोक्ष सत् असत् शब्दोंका कुछ प्रसंगभी नहीं ॥ १८ ॥

योमामेवमसंमूढोजानातिपुरुषोत्तमम् ॥ ससर्व विद्भजतिमांसर्वभावेनभारत ॥ १९ ॥

भारत १ यः २ असंमूढः ३ एवम् ४ माम् ५ पुरुषोत्तमम् ६ जानाति ७ सः ८ सर्ववित् ९ सर्वभावेन १० माम् ११ भजति १२ ॥ १९ ॥ + उ० + जो आत्मासे अभिन्न परमात्मा कोही पुरुषोत्तम जानताहै उसका माहात्म्य कहते हैं + अ० +

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

हे अर्ज्जुन! १ जो २ मूलाज्ञानरहित विद्वान् ३ इस प्रकार ४ कि मैं क्षर अक्षर दोनों से अन्य नित्यमुक्त शुद्ध सच्चिदानन्द हूं+मुझ ५ पुरुषोत्तमको ६ जानताहै ७ सो ८ सर्वज्ञ विज्ञान ९ सर्वभाव करके १० मुझको ११ भजता है १२ तात्पर्य जिसको आत्मज्ञान हुआ वह सदा भजनही करता रहताहै ॥ १९ ॥

इतिगुह्यतमंशास्त्रमिदमुक्तंमयानघ ॥ एतद्बुद्ध्वाबुद्धिमान्स्यात्कृतकृत्यश्चभारत ॥ २० ॥

अनघ १ मया २ इदम् ३ गुह्यतमम् ४ शास्त्रम् ५ उक्तम् ६ इति ७ भारत ८ एतत् ९ बुद्ध्वा १० बुद्धिमान् ११ कृतकृत्यः १२ च १३ स्यात् १४ ॥ २० ॥ उ०+ इस अध्यायमें समस्त शास्त्र वेदोंका सिद्धान्त श्रीनारायण ने निरूपण करदिया जो इस अध्याय के अर्थको जानगया वह कृतकृत्यहुआ उसको कुछ कर्तव्य नहीं रहा और जिसका मन पाप पुण्य में खटकता है आत्माको असंग अकर्त्ता नहीं समझा उसने इस अध्याय के अर्थ को भी नहीं समझा क्योंकि श्रीमहाराज स्पष्ट कहते हैं कि इस अध्यायके अर्थ को जानकर कृतकृत्य होजाता है+अ०+ हे अर्ज्जुन! १ मैंने २ यह ३ गुप्ततम ४ शास्त्र ५ कहा ६ इति इस शब्द का यह तात्पर्य्यार्थ है कि समस्त गीताशास्त्र गुप्ततम है और गीताही को शास्त्र कहते हैं परन्तु इस जगह शास्त्रशब्द का तात्पर्य इसी अध्यायमें है ७ हे अर्ज्जुन! ८ इस को ९ अर्थात् इसी अध्याय के अर्थ को+जानकर १० ब्रह्मज्ञानी ११ और कृतकृत्य १२। १३ होजाताहै १४+फिर उसको कुछ कर्त्तव्य नहीं वह कर्म्म बन्धन से मुक्तहुआ ॥ २० ॥

इति श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे पुरुषोत्तमयोगोनामपञ्चदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥

इति श्रीआनन्दगिरिविरचितायां परमानन्दप्रकाशिकायां टीकायांपञ्चदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

अथ षोडशअध्यायकाप्रारम्भहुआ॥

श्रीभगवानुवाच॥ अभयंसत्त्वसंशुद्धिर्ज्ञानयोगव्यवस्थितिः॥ दानंदमश्चयज्ञश्चस्वाध्यायस्तपआर्जवम्॥ १॥

अभयम् १ सत्त्वसंशुद्धिः २ ज्ञानयोगव्यवस्थितिः ३ दानम् ४ दमः ५ च ६ यज्ञः ७ च ८ स्वाध्यायः ९ तपः १० आर्जवम् ११॥ १॥ + उ० + दैवीसम्पत्के २६ लक्षण कहते हैं ढाई श्लोकों में + अ० + भय न होना १ अन्तःकरण में राग द्वेषादि का न होना २ ज्ञानयोगमें स्थित रहना ३ दान करना सतोगुणी कि जो सत्रहवें अध्याय में कहेंगे ४ और इन्द्रियों को दमन करना ५। ६ और यज्ञ करना सतोगुणी इसका लक्षणभी सत्रहवें अध्यायमें कहेंगे ७। ८ वेद शास्त्रों का पढ़ना पाठ करना ९ तप दो प्रकारका है एक सदा नित्यानित्य पदार्थों का विचार करना दूसरा चान्द्रायणादि व्रत करना १० सीधापन ११॥ १॥

अहिंसासत्यमक्रोधस्त्यागःशान्तिरपैशुनम्॥ दयाभूतेष्वलोलुप्त्वम्मार्दवंह्रीरचापलम्॥ २॥

अहिंसा १ सत्यम् २ अक्रोधः ३ त्यागः ४ शान्तिः ५ अपैशुनम् ६ भूतेषु ७ दया ८ अलोलुप्त्वम् ९ मार्दवम् १० ह्रीः ११ अचापलम् १२॥ २॥ अ० + मन वाणी शरीर करके किसी को दुःख नहीं देना १ सत्य बोलना २ क्रोध न करना ३ त्याग समस्त पदार्थों का ४ अन्तःकरण का उपशम निरोध ५ पीछे किसी का अवगुण नहीं कहना ६ यथार्थ पापका कहने वाला बराबर का पापी होता है और जो बढ़ाकर कहे तो दूना पापी होता है + प्राणियों में ७ दया ८ नीचों के सामने दीनता न करनी ९ कोमलता १० लज्जा रखनी खोटे कामों में ११ चपल न होना १२॥ २॥

तेजःक्षमाधृतिःशौचमद्रोहोनातिमानिता॥ भवन्तिसम्पदंदैवीमभिजातस्यभारत॥ ३॥

तेजः १ क्षमा २ धृतिः ३ शौचम् ४ अद्रोहः ५ अतिमानिता ६ न ७ भारत ८ दैवीम् ९ सम्पदम् १० अभिजातस्य ११ भवन्ति १२॥ ३॥ अ० + प्राग-

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

लभ्यता अर्थात् दृष्टिमात्र से दूसरा दब जाय बालक स्त्री मूर्खादि सहसा हँसी-बोल न कर बैठें जैसे राजा की दृष्टि रहती है ऐसेही पुरुषों को तेजस्वी कहते हैं १ सहना २ धैर्य ३ पवित्र रहना ४ वैर नहीं करना ५ अतिमानी ६ नहीं होना ७ हे अर्जुन ! ८ दैवी ९ सम्पत् के १० जो सम्मुख + जन्माहै ११ तिस में ये लक्षण + होते हैं १२ कि जो पीछे ढाई श्लोकों में कहे तात्पर्य देवतोंका पद जिस को प्राप्त होता है उसके ये लक्षण होते हैं जिस में ये लक्षण स्वाभाविक न हों उसको यत्न करना चाहिये ॥ ३ ॥

दम्भोदर्पोऽभिमानश्चक्रोधःपारुष्यमेवच ॥ अ
ज्ञानञ्चाभिजातस्यपार्थसम्पदमासुरीम् ॥ ४ ॥

दम्भः १ दर्पः २ अभिमानः ३ च ४ क्रोधः ५ पारुष्यम् ६ एव ७ च ८ अज्ञानम् ९ च १० पार्थ ११ आसुरीम् १२ सम्पदम् १३ अभिजातस्य १४ ॥ ४ ॥ उ० + इस मन्त्र में तो असुरों के लक्षण संक्षेप करके कहतेहैं अभी आगे फिर विस्तारसहित कहेंगे + अ० + जो अपने में कोई तनकसा भी गुण हो तो उस को एक भाग का अनेक भाग बनाकर वारंवार लोगों के सामने अनेक युक्तियों के साथ प्रकट करना १ धन विद्या जाति वर्णाश्रमादिका मनमें घमंड रहना २ और महात्मा साधु हरिभक्तों के सामने नम्र न होना ३ । ४ द्वेष वैर करना ५ और कठोरता ६ । ७ । ८ अर्थात् आप तो छिप छिप मेवा मिश्री खावे घर के लोगों को गुड़ भी नहीं साधु हरिभक्तों को देखकर दुष्टों का हृदय भस्म होजाय और वाणी से दुर्वाक्य कहने लगें ऐसा कठोर + और मूर्खाज्ञान ९ । १० हे अर्जुन ! ११ आसुरीसम्पत् को १२ । १३ जो प्राप्त होगा आसुरपदके सामने मुख करके जो + उत्पन्न हुआ है १४ इस में ऐसे २ लक्षण होते हैं कि दम्भादि जो इस मन्त्र में कहे ऐसे प्राणी पदको प्राप्त होंगे ॥ ४ ॥

दैवीसम्पद्विमोक्षायनिबन्धायासुरीमता ॥ मा
शुचःसम्पदंदैवीमभिजातोऽस्यपाण्डव ॥ ५ ॥

दैवीसम्पत् १ विमोक्षाय २ आसुरी ३ निबन्धाय ४ मता ५ पाण्डव ६ माशुचः ७ दैवीम् ८ सम्पदम् ९ अभिजातः १० असि ११ ॥ ५ ॥ उ० + दैवी सम्पत् आसुरीसम्पत् का फल कहते हैं + अ० + दैवीसम्पत् १ मोक्ष के लिये २ आसुरी ३ निबन्धनके लिये ४ मानी ५ हैं महात्मा महापुरुषों ने + हे

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

अर्जुन! ६ तू मत शोचकर ७ दैवीसम्पत् के सम्मुख ८। ९ जन्मा १० है तू ११ दैवीसम्पत् के लक्षणों की ओर तेरी दृष्टि है देवतों के पद को तू प्राप्त होगा तात्पर्य ज्ञानद्वारा मोक्ष होगा दैवीसम्पत् के लक्षण जिनमें हैं उनकाही ज्ञान में अधिकार है असुरों का नहीं ॥ ५ ॥

द्वौभूतसर्गौलोकेऽस्मिन्दैवआसुरएवच ॥ दैवो विस्तरशःप्रोक्तआसुरम्पार्थमेशृणु ॥ ६ ॥

अस्मिन् १ लोके २ भूतसर्गौ ३ द्वौ ४ दैवः ५ आसुरः ६ एव ७ च ८ पार्थ ९ दैवः १० विस्तरशः ११ प्रोक्तः १२ आसुरम् १३ मे १४ शृणु १५ ॥ ६ ॥ अ०+इस जगत् में १ । २ भूतों की सृष्टि ३ दो प्रकार की ४ है+एक +दैव ५ देवसम्बन्धिनी+दूसरी+आसुर ६ । ७ । ८ असुरसम्बन्धिनी हे अर्जुन ! ९ दैव १० अर्थात् देवतों का लक्षण तो+विस्तारपूर्वक ११ मैंने+कहा १२ असुरोंका लक्षण १३ मुझसे १४ विस्तारपूर्वक अब+सुन १५ असुरस्वभाव को त्यागना चाहिये इत्यभिप्रायः ॥ ६ ॥

प्रवृत्तिंचनिवृत्तिंचजनानविदुरासुराः ॥ नशौचं नापिचाचारोनसत्यंतेषुविद्यते ॥ ७ ॥

प्रवृत्तिम् १ च २ निवृत्तिम् ३ च ४ असुराः ५ जनाः ६ न ७ विदुः ८ तेषु ९ न १० शौचम् ११ न १२ अपि १३ च १४ आचारः १५ न १६ सत्यम् १७ विद्यते १८ ॥ ७ ॥ अ०+प्रवृत्ति को १ । २ और निवृत्ति को ३।४ असुरजन ५।६ नहीं ७ जानते हैं ८ तिनमें ९ न १० शौच ११ और न आचार १२।१३।१४।१५ न १६ सत्य १७ होताहै १८ कोई प्रवृत्ति ऐसी होतीहै कि उसका फल निवृत्तिहै और कोई निवृत्ति ऐसी होतीहै कि उसका फल प्रवृत्तिहै यहसमझ असुरोंको नहीं और वेदोक्त आचार तो पृथक् रहा दुष्ट स्नान तक नहीं करते बिना हाथ पैर धोये भोजन करने लगते हैं कोई कोई यह कहते हैं कि बिना झूठ व्यवहार चलताही नहीं जैसे जूठन खाने में उनको ग्लानि नहीं ऐसे झूठ बोलना भी एक व्यवहार समझ रक्खा है सत्य सम धर्म नहीं असत्य सम अधर्म नहीं इति सिद्धान्तः ॥ ७ ॥

असत्यमप्रतिष्ठन्तेजगदाहुरनीश्वरम् ॥ अपरस्परसंभूतंकिमन्यत्कामहेतुकम् ॥ ८ ॥

ते १ जगत् २ अनीश्वरम् ३ आहुः ४ असत्यम् ५ अप्रतिष्ठम् ६ अपरस्परसंभूत

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

म् ७ कामहेतुकम् ८ अन्यत् ९ किम् १० ॥ ८ ॥ अ० + वे असुर १ जगत् को २ अनीश्वर ३ कहते हैं ४ अर्थात् कर्मोंके फलका देनेवाला कोई भी नहीं सब + झूंठ ५ है जैसे आप झूंठे हैं ऐसेही जगत् को झूंठा समझते हैं कि जगत् की कुछ व्यवस्था नहीं ऐसेही गोल मोल चला आताहै वेदपुराणादि धर्मकी + प्रतिष्ठा नहीं ६ समझते वेदादि को घड़ा नहीं समझते यह जानते हैं जैसे विद्या मनुष्यों की बनाई हुईहै वेद भी किसी मनुष्य के बनाये हुये हैं धर्म के उपदेश को बहकाना समझते हैं इस प्रकार जगत् को अप्रतिष्ठ अव्यवस्थित कहते हैं असत्यं अप्रतिष्ठं ये दोनों जगत् के विशेषण हैं, जो कोई उन्हों से बूझे कि क्यों जी यह जगत् कैसे उत्पन्न हुआहै इसका क्या हेतुहै तो उत्तर यह देते हैं कि अजी + परस्पर स्त्री पुरुषों के सम्बन्ध से हुआ है ७ कामदेव इसका हेतुहै ८ अन्य ९ क्या १० हेतु होता ॥ ८ ॥

एतां दृष्टिमवष्टभ्य नष्टात्मानोऽल्पबुद्धयः ॥ प्रभवन्त्युग्रकर्माणः क्षयाय जगतोऽहिताः ॥ ९ ॥

नष्टात्मानः १ अल्पबुद्धयः २ उग्रकर्माणः ३ अहिताः ४ एताम् ५ दृष्टिम् ६ अवष्टभ्य ७ जगतः ८ क्षयाय ९ प्रभवन्ति १० ॥ ९ ॥ अ० + मलिन चित्तवाले १ मन्दमति २ हिंसात्मक कर्मवाले ३ वैरी ४ धर्म के + इस दृष्टि को ५ । ६ आश्रय करके ७ जगत् को ८ भ्रष्ट करने के लिये ९ हुये हैं १० + टी० + जगतः अहिताः अर्थात् जगत् के वैरी हैं यह भी अर्थ होसक्ताहै दुष्ट लोग साधु हरिभक्तों के वैरी होतेहैं साधु जगत् के रक्षक हैं जब कि उन से वैर किया तो सब जगत् से उनका वैर हुआ + जो लौकिक व्यवहारहै सोई सत्यहै यह दृष्टि रखतेहैं ॥ ९ ॥

कामं आश्रित्य दुष्पूरं दम्भमानमदान्विताः ॥ मोहाद्गृहीत्वासद्ग्राहान्प्रवर्त्तन्तेऽशुचिव्रताः ॥ १० ॥

दम्भमानमदान्विताः १ दुष्पूरम् २ कामम् ३ आश्रित्य ४ अशुचिव्रताः ५ मोहात् ६ असद्ग्राहान् ७ गृहीत्वा ८ प्रवर्त्तते ९ ॥ १० ॥ अ० + दम्भ मान मद करके युक्त १ जिसका पूरण होना कठिन ऐसी २ कामना को ३ आश्रय करके ४ अपवित्र आचार है जिनका ५ देहदेपनसे ६ दुराग्रह को ७ अंगीकार करके ८ निन्दित मार्ग में + वर्त्तते हैं ९ तात्पर्य यह मंत्र जपकर अमुक भूत प्रेत को सिद्ध करेंगे फिर उससे यह काम लेंगे इसप्रकार वेहूदीवातें सुनसुन सीखसीख कि जिन वातोंमें सिवाय दुःखविक्षेपके कभी कुछ अन्य सुखादि फल नहीं दम्भादिकरके अन्धेहोरहे

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

हैं किसी की सुनतें भी नहीं जो अंगीकार कर लिया उस में कितनी ही निन्दा होति हो त्यागना नहीं और यही आशा रखनी कि यह कर्तव्य हमारा हमको अवश्य सुख देगा ॥ १० ॥

चिन्तामपरिमेयांचप्रलयान्तामुपाश्रिताः ॥ कामोपभोगपरमाएतावदितिनिश्चिताः ॥ ११ ॥

अपरिमेयाम् १ च २ प्रलयान्ताम् ३ चिन्ताम् ४ उपाश्रिताः ५ कामोपभोगपरमाः ६ एतावत् ७ इति ८ निश्चिताः ९ ॥ ११ ॥ अ० + बेप्रमाण १ और २ मरण है अन्त जिसका ३ ऐसी + चिन्ता का ४ आश्रय कियेहुये ५ अर्थात् सदा ऐसी चिन्ता में लगेहुये कि जो मरने से तो समाप्ति हो जीते जी सदा बनी रहे + काम और भोगों से श्रेष्ठ कुछ अन्य नहीं + यह ८ निश्चय है जिनका ९ ऐसे लोग अन्याय करके पदार्थों को संचय करते हैं अगले मंत्र के साथ इस मंत्र का अन्वय है ॥ ११ ॥

आशापाशशतैर्बद्धाःकामक्रोधपरायणाः ॥ ईहन्तेकामभोगार्थमन्यायेनार्थसंचयान् ॥ १२ ॥

आशापाशशतैः १ बद्धाः २ कामक्रोधपरायणाः ३ अन्यायेन ४ अर्थसंचयान् ५ कामभोगार्थम् ६ ईहन्ते ७ ॥ १२ ॥ अ० + आशाकी सैकड़ों फांसीकरके १ बँधे हुये हैं २ अर्थात् असंख्यात आशामें फँसेहुये हैं छूट नहीं सक्ते + काम क्रोध को ही परमस्थान बनारक्खा है अर्थात् सदा कामक्रोधपरायण रहते हैं ३ अनीति करके ४ द्रव्य मकान गांव इकट्ठे करते हैं ५ भोगों के लिये ६ यही सदा + चेष्टा करते रहते हैं ७ तात्पर्य पदार्थों के छीन लेने में तत्पर रहते हैं जैसे बने हत्यादि अनीति करके अपने भोग के अर्थ पराया माल छीन लेना और फिर भी असंख्यात आशा में फँसे रहना सदा काम क्रोध बनेई रहने ऐसे पुरुष नरक में पड़ेंगे वहां इस श्लोक का अन्वय है ॥ १२ ॥

इदमद्यमयालब्धमिदं प्राप्स्ये मनोरथम् ॥ इदमस्तीदमपिमेभविष्यतिपुनर्धनम् ॥ १३ ॥

अद्य १ इदम् २ मया ३ लब्धम् ४ इदम् ५ प्राप्स्ये ६ मनोरथम् ७ इदम् ८ मे ९ अस्ति १० इदम् ११ अपि १२ धनम् १३ पुनः १४ भविष्यति १५ ॥ १३ ॥ दुष्ट जनोंका मनोराज्य चार मंत्रोंमें कहते हैं + अ० + अब १ यह २ तो + मुझ

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

को ३ मारा है ४ और + यह ५ मारूंगा ६ यह मेरा + मनोरथ ७ है + यह ८ धनतो + मेरा ९ है १० और + यह ११ भी १२ धन १३ फिर १४ अवश्यही + प्राप्तहोगा १५ ऐसे पुरुष अपवित्र नरक में पड़ेंगे सोलहवें मंत्र में श्रीमहाराज यहकहेंगे ॥ १३ ॥

असौमयाहतःशत्रुर्हनिष्येचापरानपि ॥ ईश्वरोऽहमहंभोगीसिद्धोऽहंबलवान्सुखी ॥ १४ ॥

मया १ असौ २ शत्रुः ३ हतः ४ च ५ अपरान् ६ अपि ७ हनिष्ये ८ अहम् ९ ईश्वरः १० अहम् ११ भोगी १२ अहम् १३ सिद्धः १४ बलवान् १५ सुखी १६ ॥ १४ ॥ अ० + मैंने १ वह २ शत्रु ३ तो + मारा ४ । ५ और अमुक अमुक + औरों को ६ भी ७ मारूंगा ८ मैं ९ समर्थ १० मैं ११ भोगी १२ मैं १३ सिद्ध १४ बलवाला १५ सुखी १६ हूं + टी० + लोगों के मारने में समर्थ हूं १० अच्छा खाता पीताहूं १२ कृतकृत्य हूं मैंने बड़े बड़े काम किये हैं कि वे मेरेही करने के योग्य थे अन्य से नहीं होसके ॥ १४ ॥

आढ्योऽभिजनवानस्मिकोऽन्योस्तिसदृशोमया॥ यक्ष्येदास्यामिमोदिष्यइत्यज्ञानविमोहिताः ॥१५॥

आढ्यः १ अभिजनवान् २ अस्मि ३ मया ४ सदृशः ५ कः ६ अन्यः ७ अस्ति ८ यक्ष्ये ९ दास्यामि १० मोदिष्ये ११ इति १२ अज्ञानविमोहिताः १३ ॥ १५ ॥ अ० + धनवान् साहूकार १ कुलीन २ हूं मैं ३ मेरी ४ बराबर ५ कौन ६ अन्यदूसरा ७ है ८ अबमैं एक + यज्ञकरूंगा ९ उसमें बहुत कुछ + दूंगा १० आनन्द को प्राप्त हूंगा ११ इस प्रकार १२ अज्ञान करके मोहित हुये १३ झूंठे वृथा मनोराज्य करतेहुये अवस्था व्यतीत करते हैं धन जाति के अभिमान में जले ही जाते हैं यज्ञकरने का जो मनोराज्य है उसमें उनका यह तात्पर्य है कि थोड़ा बहुत रजोगुणी तमोगुणी अन्न ऐसे वैसे ब्राह्मणों को जिमा कर औरोंकी बुराई किया करैंगे और दो चार पैसे देने कोही बड़ा दान समझते हैं जब कभी किसी फकीर को वा खुशामदी लोगों को या नट बेश्यादिको अपनी बड़ाई के लिये कुछ देते हैं तो अपने को बड़ा दाता समझते हैं बहुत प्रसन्न होते हैं ॥ १५ ॥

अनेकचित्तविभ्रान्तामोहजालसमावृताः ॥ प्रसक्ताःकामभोगेषु पतन्तिनरकेशुचौ ॥ १६ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

अनेकचित्तविभ्रान्ताः १ मोहजालसमावृताः २ कामभोगेषु ३ प्रसक्ताः ४ अशुचौ ५ नरके ६ पतन्ति ७ ॥ १६ ॥ + उ० + ऐसे लोगों की जो गति होतीहै उसको सुन + अ० + अनेक मनोराज्य में चित्त विभ्रांत होरहा है जिनका १ मोहके जाल में फँसेहुये २ कामभोगों में ३ आसक्त ४ है जो सो + अपवित्र ५ नरकों में ६ पड़ेंगे ॥ १६ ॥

आत्मसम्भाविताःस्तब्धाधनमानमदान्विताः ॥ यजन्तेनामयज्ञैस्तेदम्भेनाविधिपूर्वकम् ॥ १७ ॥

आत्मसंभाविताः १ स्तब्धाः २ धनमानमदान्विताः ३ ते ४ दंभेन ५ अविधिपूर्वकम् ६ नामयज्ञैः ७ यजन्ते ८ ॥ १७ ॥ अ० + अपने आपही आपको बड़ा समझकर अपनेको बड़ा प्रतिष्ठित जानतेहैं १ अनम्र २ किसी महात्माके सामने नम्र नहीं होते + धन करके जो उनका मान होताहै उस मान के मदमें भरे रहते हैं ३ अर्थात् धनकी चाह वाले मूर्ख धनी लोगोंका भी मान किया करते हैं + जो ऐसे उन्मत्त हैं + वे ४ दम्भ करके ५ शास्त्रविधिरहित ६ नाम यज्ञ करके ७ यजन करते हैं ८ अर्थात् वास्तव यह यज्ञ नहीं कि जो वे करते हैं उसका यज्ञ नाम बना रक्खाहै या नामके वास्ते यज्ञ करते हैं विधिरहित इत्यभिप्रायः ॥ १७ ॥

अहंकारंबलंदर्पं कामंक्रोधंचसंश्रिताः ॥ मामात्मपरदेहेषुप्रद्विषन्तोऽभ्यसूयकाः ॥ १८ ॥

अहङ्कारम् १ बलम् २ दर्पम् ३ कामम् ४ क्रोधम् ५ च ६ संश्रिताः ७ आत्मपरदेहेषु ८ माम् ९ प्रद्विषंतः १० अभ्यसूयकाः ११ ॥ १८ ॥ अ० + अहङ्कार १ बल २ दर्प ३ काम ४ क्रोध को ५ । ६ आश्रय किये हुये ७ अपने देहके विषय और दूसरे देह के विषय ८ जो मैं सच्चिदानन्द विराजमानहूं + मुझसे ९ द्वेष करते हैं १० मेरी + निन्दा करते हैं ११ अपनी देह या पराई देह में जो आत्मा को पूर्णब्रह्म नहीं समझते वे भगवत् के निन्दक हैं और जो दूसरे से द्वेष करते हैं वे भी प्रभु के द्वेषी हैं और जो मनुष्यदेह पाकर आत्मज्ञान के लिये यत्न नहीं करते वे भी प्रभु के वैरी हैं इत्यभिप्रायः ॥ १८ ॥

तानहंद्विषतःक्रूरान्संसारेषुनराधमान् ॥ क्षिपाम्यजस्रमशुभानासुरीष्वेवयोनिषु ॥ १९ ॥

संसारेषु १ नराधमान् २ द्विषतः ३ क्रूरान् ४ तान् ५ अहम् ६ अशुभान् ७

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

आसुरीषु ८ योनिषु ९ एव १० अजस्रम् ११ क्षिपामि १२ ॥ १९ ॥ उ० + ऐसे दुष्टों को जो मैं दण्ड देताहूं सो सुन दो मन्त्रों में + अ० + संसार में १ आदमियों के विषय जो अधम नर २ साधु महापुरुषों से वैर रखते हैं ३ निर्दयी दयारहित ४ तिन को ५ मैं ६ अशुभलोकों में ७ अर्थात् रौरवादि नरक में + और + आसुरी योनियों में ८ । ९ निश्चय १० सदा के लिये ११ फेंकूंगा १२ अर्थात् पहिले जो बड़े बड़े नरकों में डालूंगा ऐसे दुष्टोंको कि जो मेरे भक्त साधुजनों को दुर्वाक्य बोलते हैं और जिन के लक्षण ऊपर कहे उनको सदा इसी चक्र में रक्खूंगा ॥ १९ ॥

आसुरीयोनिमापन्ना मूढाजन्मनिजन्मनि ॥ मामप्राप्यैवकौन्तेयततोयांत्यधमांगतिम् ॥ २० ॥

मूढाः १ आसुरीम् २ योनिम् ३ आपन्नाः ४ जन्मनि ५ जन्मनि ६ माम् ७ अप्राप्य ८ एव ९ कौन्तेय १० ततः ११ अधमाम् १२ गतिम् १३ यान्ति १४ ॥ २० ॥ उ० + ऐसे दुष्टों को मेरी प्राप्ति का मार्ग भी नहीं मिलेगा क्योंकि मेरी प्राप्ति का मार्ग मेरे भक्त साधु जानते हैं वे ऐसे दुष्टों को न दर्शन देते हैं न संभाषण करते हैं और जो लालच से ऐसे दुष्टों को उपदेश करते हैं वे साधु भक्त नहीं वर्णसंकर कपीन कोई नीच जाति हैं + अ० + मूढ़ १ आसुरी २ योनियों को ३ प्राप्तहुये ४ जन्म जन्ममें ५ । ६ मुक्तिको ७ नहीं प्राप्त होकर ८ निश्चय ९ हे अर्जुन ! १० पीछे ११ अधम १२ गति को १३ प्राप्त होंगे १४ तात्पर्य हे अर्जुन ! किसी जन्म किसी युगमें भी मेरे भक्तों की कृपा विना मेरी प्राप्ति नहीं होती जो मुझ को बुरा कहतेहैं वह तो मैं सहजाता हूं परन्तु जो मेरे भक्त साधुका अपराध करे वह मुझसे नहीं सहाजाता उसको मैं तुरन्त कठिन से कठिन तीव्र दण्ड देता हूं हिरण्यकशिपु ने बहुत मुझसे द्वेष किया परन्तु मुझको क्षोभ न हुआ जिस काल में प्रह्लाद मेरे भक्त के साथ द्वेष किया एक पल न सहसका जो कुछ कि मैंने किया सो भारतादि में प्रसिद्ध है इत्यभिप्रायः ॥ २० ॥

त्रिविधंनरकस्येदंद्वारंनाशनमात्मनः ॥ कामः क्रोधस्तथालोभस्तस्मादेतत्त्रयंत्यजेत् ॥ २१ ॥

कामः १ क्रोधः २ तथा ३ लोभः ४ इदम् ५ त्रिविधम् ६ नरकस्य ७ द्वारम् ८ आत्मनः ९ नाशनम् १० तस्मात् ११ एतत् १२ त्रयम् १३ त्यजेत् १४ ॥ २१ ॥ उ० +

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

जितने दोष आसुरीसम्पद्वाले पुरुषोंके कहे उनमें काम क्रोध लोभ ये तीन सबके कारण हैं प्रथम उनको त्यागना अवश्य चाहिये + अ० + काम १ क्रोध २ और ३ लोभ ४ यह ५ तीन प्रकार का ६ नरक की ७ द्वार ८ आत्मा को ९ नरक में और पशुआदि दुष्टयोनियों में प्राप्त करनेवाला १० है + तिसकारण से ११ इन १२ तीन को १३ त्यागना १४ चाहिये तात्पर्य्य कामादि तीनोंही नरकके द्वार हैं इनमें से जो एक भी होगा तो वह नरक को प्राप्त करैगा और जिसमें ये तीनों होंगे वह तो जीते जी नरकमें है मरकर उसको नरक प्राप्त हो तो इसमें क्या कहना है ॥ २१ ॥

एतैर्विमुक्तः कौंतेय तमोद्वारैस्त्रिभिर्नरः ॥ आचरत्यात्मनः श्रेयस्ततो याति परां गतिम् ॥ २२ ॥

कौन्तेय १ एतैः २ त्रिभिः ३ तमोद्वारैः ४ विमुक्तः ५ नरः ६ आत्मनः ७ श्रेयः ८ आचरति ९ ततः १० पराम् ११ गतिम् १२ याति १३ ॥ २२ ॥ + उ० + कामादि के त्यागका फल कहते हैं + अ० + हे अर्जुन ! १ इन तीन नरक के द्वारों से २ । ३ । ४ छूटाहुआ ५ जो + पुरुष ६ आत्मा का ७ भला ८ करता है ९ अर्थात् कामादि को प्रथम त्यागकर पीछे आत्मा की प्राप्तिके लिये शुभाचरण करता है + तब १० परमगतिको ११ । १२ प्राप्त होता है १३ जैसे औषध जब गुणकरै है कि प्रथम खटाई मिठाई आदि पदार्थों का त्याग करदे तैसे ही शुभ कर्म जप पाठादि जब फल देंगे प्रथम कामादिका त्याग करैगा कामादि के त्यागने से अन्तर्मुख वृत्ति होती है विना अन्तर्मुख हुये विचार नहीं होसक्ता विना विचार ज्ञान नहीं होता विना ज्ञान मुक्ति नहीं इसवास्ते कामादि का त्यागना अवश्य है ॥ २२ ॥

यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते कामकारतः ॥ न स सिद्धिमवाप्नोति न सुखं न परां गतिम् ॥ २३ ॥

यः १ शास्त्रविधिम् २ उत्सृज्य ३ कामकारतः ४ वर्तते ५ सः ६ न ७ सिद्धिम् ८ अवाप्नोति ९ न १० सुखम् ११ न १२ पराम् १३ गतिम् १४ ॥ २३ ॥ + उ० + कामादि का त्याग जो लोगों से नहीं होसक्ता उसमें हेतु यह है कि शास्त्रविधि को छोड़ इच्छापूर्व्वक वर्तते हैं + अ० + जो १ शास्त्रविधि को २ उल्लंघन करके ३ इच्छापूर्वक ४ वर्तता है ५ सो ६ न ७ सिद्धिको ८ प्राप्त होता है ९

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

न १० सुखको ११ न १२ परमगतिको १३। १४ प्राप्तहोता है अर्थात् उसको न इस लोक में सुख होता है न सद्गति मुक्ति होती है और इसलोक में किसीप्रकार की उसको सिद्धि भी नहीं होती इस जगह उन लोगों का प्रसंग है कि जिनका शास्त्र में अधिकार है जान बूझ शास्त्र की विधिका उल्लंघन करते हैं ज्ञानी जन कृतकृत्य हैं उनका यहां प्रसंग नहीं और अनजानलोग या अन्यद्वीपनिवासी या शास्त्र से अन्य मतवाले शास्त्रविधिको उल्लंघन करके अपने मत के अनुसार या स्वाभाविक इच्छापूर्वक वर्तते हैं उनका भी यहां प्रसंग नहीं क्योंकि उनके लिये अर्जुन सत्रहवें अध्याय में प्रश्न करैंगे और श्रीमहाराज स्पष्ट उत्तर देंगे ॥ २३ ॥

तस्माच्छास्त्रम्प्रमाणंते कार्याकार्यव्यवस्थितौ ॥
ज्ञात्वाशास्त्रविधानोक्तंकर्मकर्तुमिहार्हसि ॥ २४ ॥

तस्मात् १ कार्याकार्यव्यवस्थितौ २ ते ३ शास्त्रम् ४ प्रमाणम् ५ शास्त्रविधानोक्तम् ६ कर्म ७ ज्ञात्वा ८ इह ९ कर्तुम् १० अर्हसि ११ ॥२४॥ + अ० + तिस कारण से १ यह करना चाहिये और यह न करना चाहिये इस व्यवस्था में २ मुझको ३ शास्त्र ४ प्रमाण ५ है + शास्त्र में जो करना कहा है उस कर्म को ६। ७ जान करके ८ इस कर्मकी अधिकारभूमि में ९ अर्थात् इस मनुष्य देह से मर्त्यलोक में + कर्म + करनेको १० योग्य है तू ११ तात्पर्य जो शास्त्र ने कहा सोई कर और जिस कर्म्मको बुरा कहा सो न कर यहां शास्त्रही प्रमाण है बुद्धि का काम नहीं इत्यभिप्रायः ॥ २४ ॥

इति श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सुब्रह्मविद्यायांयोगशास्त्रेश्रीकृष्णार्जुनसंवादेदेवासुर सम्पतिवर्णनयोगोनामषोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

इति श्रीआनन्दगिरिविरचितायांपरमानन्दप्रकाशिकायां टीकायांषोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

अथ सत्रहवें अध्यायका प्रारम्भहुआ॥

उ०+सोलहवें अध्याय में श्रीभगवान् ने कहा जो शास्त्रकी विधिको उल्लंघन करके वर्तते हैं अपनी इच्छापूर्वक उनको न इसलोकमें सुख होताहै न उनकी सद्गति होती है इसमें यह शङ्का प्रतीत होती है, कमसमझों को कि जिन्हों, वे श्रीमहाराज का तात्पर्य नहीं समझा वह शंका यह है कि असंख्यात अन्यद्वीप के लोग और इसी द्वीप में भी वेदोक्त मत से अन्य मतवाले और ग्रामनिवासी बहुत अनजान लोग शास्त्रकी विधिको उल्लंघन करके वर्तते हैं, उनको इनमें तो जैसा सुख अपने कर्मों के अनुसार वेदोक्त कर्म्म करनेवालों को होताहै वैसाही उनको अपने अपने कर्मों के अनुसार प्रत्यक्ष दीखता है और परलोक में सबकी दुर्गति होय यह बात अयुक्तहै क्योंकि सब प्रजा एक ईश्वरकी है वह ईश्वर ऐसा नहीं अन्यद्वीपनिवासियोंकी सबकी दुर्गतिकरे यह शंका एक नाममात्र संक्षेपकरके लिखीगई है उत्तर भी इसका संक्षेप करके लिखा जाताहै प्रथम यह कि श्रीभगवान्ने चौदहवें अध्यायमें स्पष्ट कहाहै कि सतोगुणी ऊपरके लोकोंमें प्राप्त होते हैं रजोगुणी मध्यमें स्थिर रहते हैं तमोगुणी अधोगति को प्राप्त होते हैं, ये तीनों गुण यत्न करनेसे भी वर्तते हैं और स्वाभाविक भी वर्तते हैं सबलोग अपने गुणोंकी तारतम्यता से सद्गति दुर्गति को प्राप्तहोंगे वे किसी जाति वा किसी मतमें वा अनजानहों शास्त्रोक्त जो कर्म करते हैं जिनकी शास्त्रमें श्रद्धाहै जो वे यत्नकरें तो रजोगुणी तमोगुणी अपने स्वभाव को पलट सक्ते हैं और जिनकी वेद शास्त्रमें श्रद्धा नहीं वे नहीं पलटसक्ते अपने स्वभाव के अनुसार रहेंगे वैदिक अवैदिक मतमें इतना अन्तरहै दूसरे एक सूक्ष्म बात यह है कि जो वेदोक्त कर्म धर्म ईश्वराराधनादि सब अध्यारोपहैं और जो शास्त्रकी विधिको उल्लंघन करके अपने मतके अनुसार कर्म करते हैं वह अध्यारोपहैं विद्वानोंकी दृष्टिमें अध्यारोप कल्पितहै विनाज्ञान सब समहैं ज्ञानमें सतोगुणी का अधिकारहै सो सतोगुण स्वाभाविकहो वा प्रयत्नकरके किसीने सम्पादनकिया हो ज्ञानी सतोगुण को देखकर ज्ञानका उपदेश वे सन्देह करैंगे कि जिससे परम गति होती है सोलहवें अध्याय में श्रीमहाराजने उन लोगों के वास्ते ऐसे कहाहै उनको न इस लोकमें सुख होगा न परलोक में कि जिनका शास्त्रमें अधिकार है और वे शास्त्रार्थ को जान बूझ शास्त्रकी विधिको उल्लंघन करते हैं क्योंकि उनको कुछभी आश्रय न रहा ज्ञाननिष्ठों का यहां प्रसङ्ग नहीं वे विधि निषेधसे मुक्तहैं॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

अर्जुनउवाच ॥ येशास्त्रविधिमुत्सृज्य यजन्ते श्रद्धयान्विताः ॥ तेषांनिष्ठातुकाकृष्णसत्त्वमाहोरजस्तमः ॥ १ ॥

कृष्ण १ ये २ श्रद्धया ३ अन्विताः ४ शास्त्रविधिम् ५ उत्सृज्य ६ यजन्ते ७ तेषाम् ८ निष्ठा ९ तु १० का ११ सत्त्वम् १२ रजः १३ आहो १४ तमः १५ ॥ १ ॥ उ० + यह पूर्वोक्त शङ्का करके अर्जुन प्रश्न करताहै + हे भगवन्! १ बहुत लोग + २ श्रद्धाकरके ३ युक्त ४ शास्त्रकी विधिको ५ उल्लंघनकर ६ अपनी बुद्धिके अनुसार व वेदशास्त्ररहित अपने गुरुमतके अनुसार ईश्वराराधनादि कर्म + करते हैं ७ तिन की ८ निष्ठा ९ । १० क्या है ११ अर्थात् उनका तात्पर्य सिद्धान्त क्याहै उनकी निष्ठा + सतोगुणी १२ व + रजोगुणी १३ व १४ तमोगुणी १५ तात्पर्य जो लोग शास्त्रके अर्थको जानकर शास्त्रोक्त अनुष्ठान नहीं करते प्रत्युत अनादर करते हैं उनका और ज्ञानियोंका तो यहां प्रसंग नहीं अनजान पुरुष जो देखा देखी वा नास्तिकादि जो शास्त्रकी विधिको उल्लंघनकर वर्तते हैं उनकी क्या निष्ठा समझनीचाहिये उनकी क्या गति होती है यह अर्जुन के प्रश्नका तात्पर्य है ॥ १ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ त्रिविधाभवतिश्रद्धादेहिनांसास्वभावजा ॥ सात्त्विकीराजसीचैवतामसीचेतितांशृणु ॥ २ ॥

देहिनाम् १ स्वभावजा २ त्रिविधा ३ श्रद्धा ४ भवति ५ सा ६ सात्त्विकी ७ राजसी ८ च ९ एव १० तामसी ११ च १२ इति १३ ताम् १४ शृणु १५ ॥ २ ॥ अ० + जीवन के १ स्वाभाविक २ अर्थात् अपने आप पूर्व संस्कारसे ही + तीनप्रकार की ३ श्रद्धा ४ है ५ सो ६ श्रद्धा + सतोगुणी ७ और रजोगुणी ८ । ९ । १० और तमोगुणी ११ । १२ । १३ तिनको १४ सुन १५ कहते हैं अगले श्लोकमें और कार्य भेद से और भी आगे बहुत श्लोकों में कहेंगे तात्पर्य्य शास्त्र में जिनकी श्रद्धा है यथाशक्ति शास्त्रोक्त जो अनुष्ठान करते हैं उनकी श्रद्धा निष्ठा केवल सतोगुणी समझनी क्योंकि शास्त्र में यह सामर्थ्य है कि स्वभाव को पलटसक्ताहै जिनकी शास्त्रमें श्रद्धा नहीं उनकी श्रद्धा तीनप्रकारकी समझनी पूर्व संस्कारसे वे रजोगुणी तमोगुणी हैं तो विना वेदोक्त कर्मकिये उनका स्वभाव नहीं पलटेगा ॥ २ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

सत्त्वानुरूपासर्वस्यश्रद्धाभवतिभारत ॥ श्रद्धामयोयंपुरुषोयोयच्छ्रद्धःसएवसः ॥ ३ ॥

भारत १ सर्वस्य २ सत्त्वानुरूपा ३ श्रद्धा ४ भवति ५ अयम् ६ पुरुषः ७ श्रद्धामयः ८ यः ९ यच्छ्रद्धः १० सः ११ एव १२ सः १३ ॥ ३ ॥ उ० + तीन प्रकारकी श्रद्धा ऐसे जानो जैसे अब कहते हैं + हे अर्जुन ! १ सब को २ अन्तःकरणके अनुसार ३ श्रद्धा ४ है ५ यह ६ जीव ७ श्रद्धावान् है ८ जो ९ जिसकी जैसी श्रद्धा है अर्थात् जो जिस श्रद्धा करके युक्त है १० सो ११ निश्चय १२ सोई १३ है तात्पर्य जिसकी श्रद्धा जैसे कर्मों में सतोगुणी आदि में है उस को वैसाही समझना चाहिये आगे आहाराद्धिकाभेद सत्त्वादिकहेंगे उस निष्ठा और अनुमानसे जानलेना कि यह पुरुष ऐसाहै और इसकी यह निष्ठाहै यह इसकी गति होगी ऐसा कोई पुरुष नहीं कि जिसकी किसी जगह श्रद्धा न हो इसवास्ते सब को श्रीभगवान् ने श्रद्धावान् कहा जिनके अन्तःकरण शुद्ध हैं उनकी सतोगुणी-श्रद्धा है जिनके मलिन अन्तःकरण हैं उनकी तमोगुणी रजोगुणी श्रद्धा है पुरुष के सम्बन्ध से श्रद्धाको भी तीन प्रकारका कहा मोक्ष में जो हेतु है और साधन चतुष्टयमें जिसकी संख्याहै वह केवल सतोगुणी वृत्ति श्रद्धाहै परमार्थमें उसीको श्रद्धा कहते हैं यह व्यवहार में तीनप्रकारकी श्रद्धाहै कि जो कहीं ज्ञान में अधिकार सतोगुणी श्रद्धावान् का है ॥ ३ ॥

यजन्तेसात्त्विकादेवान्यक्षरक्षांसिराजसाः ॥ प्रेतान्भूतगणांश्चान्येयजन्तेतामसाजनाः ॥ ४ ॥

सात्त्विकाः १ देवान् २ यजन्ते ३ राजसाः ४ यक्षरक्षांसि ५ तामसाः ६ जनाः ७ प्रेतान् ८ भूतगणान् ९ च १० एव ११ यजन्ते १२ ॥ ४ ॥ उ० + सत्त्वादिगुणोंको कार्यभेद करके दिखाते हैं + सतोगुणी १ देवतोंका २ यजन करते हैं ३ रजोगुणी ४ यक्षराक्षसों को ५ पूजते हैं + तमोगुणी ६ जन ७ प्रेत ८ और भूतगणों को ९ । १० । ११ पूजते हैं १२ ॥ ४ ॥

अशास्त्रविहितंघोरंतप्यन्तेयेतपोजनाः ॥ दम्भाऽहंकारसंयुक्ताःकामरागबलाऽन्विताः ॥ ५ ॥

ये १ जनाः २ अशास्त्रविहितम् ३ घोरम् ४ तपः ५ तप्यन्ते ६ दम्भाहंकारसं-

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

युक्ताः ७ कामरागबलान्वितः ८ ॥ ५ ॥ अ० + जो १ जन २ शास्त्रविधिरहित ३ मैला ४ तप ५ करते हैं ६ उसमें कारण यह है कि + दंभ अहंकार करके युक्त हैं ७ फिर कैसेहैं कि + कामरागबल करके युक्तहैं ८ तात्पर्य कोई कोई ऐसे तपकरते हैं कि वह कर्म्म स्वरूपसेही मैला है अर्थात् उस कर्मके करने में ग्लानि आतीहै और उसके करनेमें शास्त्रकी विधिभी कोई नहीं उस कर्मका नाम तप रखकर वृथा तपते हैं हेतु इसमें यह है प्रथम यह कि लोगों को दिखानेके लिये दूसरे यह कि जैसा हम कर्म करतेहैं किसी से कब होसक्ताहै तीसरे किसी कामना के लिये चौथे रजोगुण के वशसे उस कर्म्म में प्रीति होगई है त्याग नहीं सक्ता हा पुत्र मित्रादि की प्रीति से मित्रादि के रिझाने के लिये करता है पांचवें बलवाला है जो चाहता है सो करता है ॥ ५ ॥

कर्षयन्तःशरीरस्थंभूतग्राममचेतसः ॥ मांचैवा ऽन्तःशरीरस्थंतान्विद्ध्यासुरनिश्चयान् ॥ ६ ॥

अचेतसः १ शरीरस्थम् २ भूतग्रामम् ३ कर्षयन्तः ४ च ५ अन्तः ६ शरीरस्थम् ७ माम् ८ एव ९ तान् १० आसुरनिश्चयान् ११ विद्धि १२ ॥ ६ ॥ अ० + अज्ञानी १ शरीर में जो स्थित २ इन्द्रियादि ३ तिनको + पीड़ा देतेहैं ४ और ५ भीतर ६ शरीरके स्थित ७ जो मैं हूं + मुझको ८ भी ९ दुःख देते हैं + तिनको १० असुरवत् ११ जान १२ तात्पर्य जो विना विचार इन्द्रियादिको दुःख देतेहैं और पूर्णब्रह्म शुद्ध सच्चिदानन्द आत्माको दास और अस्थि चर्मादि का पुतला समझते हैं वे लोग असुरवत् हैं जो असुरों का निश्चयहै सो उनके प्रसिद्धहै तपका फल शान्तिहै शान्ति के लिये उपवासादि तप करते हैं जिस कर्म करने से उलटा तमोगुण रजोगुण बढ़े और उस कर्म का नाम तप कहा जावे यह कभी कपटी पुरुषों का काम है ॥ ६ ॥

आहारस्त्वपिसर्वस्यत्रिविधोभवतिप्रियः ॥ यज्ञस्तपस्तथादानंतेषांभेदमिमंशृणु ॥ ७ ॥

आहारः १ तु २ अपि ३ सर्वस्य ४ त्रिविधः ५ प्रियः ६ भवति ७ तथा ८ यज्ञः ९ तपः १० दानम् ११ तेषाम् १२ भेदम् १३ इमम् १४ शृणु १५ ॥ ७ ॥ अ० + सतोगुण बढ़ाने के लिये और रजोगुण तमोगुण कर्म करने के लिये आहार तप यज्ञ दानको सत्त्वादि तीन तीन भेद करके कहते हैं और इस भेद से सतोगुणी

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

आदिपुरुषोंकी परीक्षाभी होसक्ती है अर्थात् जो सतोगुणी आहार यज्ञ तप दान करता है उसको सतोगुणी जानना चाहिये इसीप्रकार तमोगुण रजोगुण में कल्पना करनी + अ० + आहार १ भी २। ३ सबको ४ तीन प्रकारका ५ प्रिय ६ है ७ और ८ यज्ञ ९ तप १० दान ११ भी सबको तीनप्रकार का प्रिय है, हे अर्जुन! + तिनका १२ भेद १३ यह १४ है कि जो अगले श्लोकों में कहूंगा + सुन १५ जो तुझमें रजोगुणी तमोगुणी वृत्तिहों उनको त्याग सतोगुणी वृत्ति बढ़ाव कि जिससे तेरी ज्ञाननिष्ठा दृढ़हो ॥ ७॥

आयुःसत्त्वबलारोग्यसुखप्रीतिविवर्द्धनाः। रस्याः स्निग्धाःस्थिराहृद्या आहाराःसात्त्विकप्रियाः ॥ ८ ॥

आयुःसत्त्वबलारोग्यसुखप्रीतिविवर्द्धनाः १ रस्याः २ स्निग्धाः ३ स्थिराः ४ हृद्याः ५ आहाराः ६ सात्त्विकप्रियाः ७ ॥ ८ ॥ उ० + सतोगुणी आहार का लक्षण और फल भी एकही श्लोकमें कहते हैं + अ० + अवस्था चित्तकी स्थिरता व वीर्य व उत्साह बल आरोग्यता उपशमात्मक सुख प्रभु में प्रीति इन छः पदार्थ का बढ़ानेवाला १ रसवाला २ कोमलतर ३ खाने के पीछे शरीरमें उसका रस चिरकाल ठहरे ४ जिसके देखनेसेही मन प्रसन्न होजाय ५ यह चार प्रकार का + आहार ६ सतोगुणी को प्रिय लगता है ७ जैसे मोहनभोग तस्मै इत्यादि ॥ ८ ॥

कट्वम्ललवणात्युष्णतीक्ष्णरूक्षविदाहिनः ॥ आहाराराजसस्येष्टादुःखशोकामयप्रदाः ॥ ९ ॥

कट्वम्ललवणात्युष्णतीक्ष्णरूक्षविदाहिनः १ आहाराः २ राजसस्य ३ इष्टाः ४ दुःखशोकामयप्रदाः ५ ॥ ९ ॥ + उ० + रजोगुणी आहारको कहते हैं + अ० अति चर्फरा खट्टा नमका गरम तीक्ष्ण रूखा दाह करनेवाला १ आहार २ रजोगुणी को ३ प्रिय है ४ दुःख शोक रोग देनेवालाहै अति शब्द सबके साथ लगाना अति खट्टा अति नमका अति गरम अति तीक्ष्ण अति रूखा अति दाह करनेवाला भोजन रजोगुणी को प्रियहै ५ ॥ ९ ॥

यातयामङ्गतरसंपूतिपर्युषितंचयत् ॥ उच्छिष्टमपिचामेध्यंभोजनंतामसप्रियम् ॥ १० ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

यातयामम् १ गतरसम् २ पूति ३ पर्युषितम् ४ च ५ यत् ६ उच्छिष्टम् ७ च ८ अमेध्यम् ९ अपि १० भोजनम् ११ तामसप्रियम् १२ ॥ १० ॥ + उ० + तमोगुणी आहारका लक्षण कहते हैं + अ० + जिसको बनेहुये एक पहर बीतजावे १ ठण्ढा होजावे सूखजावे २ दुर्गन्ध जिसमें आवे ३ बासी ४ और ५ जो ६ जूठा ७ और ८ अभक्ष्य ९ भी १० भोजन ११ तमोगुणी को प्रिय है १२ ॥ १० ॥

अफलाकांक्षिभिर्यज्ञोविधिदृष्टोयइज्यते ॥ यष्टव्यमेवेतिमनःसमाधायससात्त्विकः ॥ ११ ॥

अफलाकांक्षिभिः १ यः २ यज्ञः ३ विधिदृष्टः ४ इज्यते ५ यष्टव्यम् ६ एव ७ इति ८ मनः ९ समाधाय १० सः ११ सात्त्विकः १२ ॥ ११ ॥ उ० + सतोगुणी यज्ञ कहते हैं + फलकी इच्छारहित पुरुष १ जो २ यज्ञ ३ विधि देखकर ४ करते हैं ५ यज्ञका करना अवश्य है ६ निश्चय ७ इसप्रकार ८ मनको ९ समाधान करके १० करते हैं + सो ११ यज्ञ + सतोगुणी १२ ॥ ११ ॥

अभिसंधायतुफलंदम्भार्थमपिचैवयत् ॥ इज्यते भरतश्रेष्ठतंयज्ञंविद्धिराजसम् ॥ १२ ॥

भरतश्रेष्ठ १ फलम् २ अभिसंधाय ३ तु ४ दम्भार्थम् ५ अपि ६ च ७ एव ८ यत् ९ इज्यते १० तम् ११ यज्ञम् १२ राजसम् १३ विद्धि १४ ॥ १२ ॥ उ० + रजोगुणी यज्ञ कहते हैं + हे अर्जुन ! १ फलको २ अन्तःकरणमें धारण करके ३ व ४ लोगोंके दिखाने के लिये ५ भी ६ । ७ । ८ जो ९ यज्ञ + किया जाता है १० तिस ११ यज्ञको १२ रजोगुणी १३ जानतू १४ ॥ १२ ॥

विधिहीनमसृष्टान्नंमन्त्रहीनमदक्षिणम् ॥ श्रद्धाविरहितंयज्ञंतामसंपरिचक्षते ॥ १३ ॥

विधिहीनम् १ असृष्टान्नम् २ मन्त्रहीनम् ३ अदक्षिणम् ४ श्रद्धाविरहितम् ५ यज्ञम् ६ तामसम् ७ परिचक्षते ८ ॥ १३ ॥ + उ० + तमोगुणी यज्ञ कहते हैं + अ० + वेदविधिरहित १ सुन्दर अन्न नहीं है जिसमें २ मंत्ररहित ३ दक्षिणारहित ४ श्रद्धारहित ५ यज्ञ ६ तमोगुणी ७ कहाहै ८ तात्पर्य देखादेखी लोकोंकी लौकिक एक रीति समझकर प्रसिद्धके लिये कुपात्रोंको न्योतकर ठण्ढा बासी अन्न कच्चा पक्का जिमा देना न उसके सामने खड़ा होना न उनके चरणों को स्पर्श करना न

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

सुन्दर प्रकार बोलना न पीछे दक्षिणा देनी ऐसा यज्ञ तमोगुणी कहलाता है जो निर्भाग्यों के घर जो साधु ब्राह्मण भोजन करने जाते हैं वे इससे भी निर्भाग्य हैं क्योंकि सेरभर आटेके लिये मूर्खोंको दाता लालाजी कहना पड़ता है ॥ १३ ॥

देवद्विजगुरुप्राज्ञपूजनंशौचमार्जवम् ॥ ब्रह्मचर्य्यमहिंसाचशारीरंतपउच्यते ॥ १४ ॥

देवद्विजगुरुप्राज्ञपूजनम् १ शौचम् २ आर्जवम् ३ ब्रह्मचर्य्यम् ४ अहिंसा ५ च ६ शारीरम् ७ तपः ८ उच्यते ९ ॥ १४ ॥ उ० + शरीर का तप कहते हैं + अ० + देवता ब्राह्मण गुरु प्राज्ञ कोई जाति विद्वान् भक्त ज्ञानीका पूजनकरना १ पावन रहना २ नम्र रहना ३ ब्रह्मचर्य्य रहना ४ ब्रह्मचर्य्य का लक्षण आनन्दामृतवर्षिणी के पांचवें अध्याय में लिखा है आठ प्रकार का मैथुन है उस से वर्जित रहना ५ हिंसा न करना ६ इस को + शरीरका ७ तप ८ कहते हैं ९ तात्पर्य्य देश मकान वस्त्र पात्र सब पवित्र हों जब शरीर की पवित्रता है और अन्न जल वीर्य्य कुलादि भी पवित्र हों ॥ १४ ॥

अनुद्वेगकरंवाक्यंसत्यंप्रियहितंचयत् ॥ स्वाध्यायाभ्यसनंचैववाङ्मयन्तपउच्यते ॥ १५ ॥

यत् १ वाक्यम् २ अनुद्वेगकरम् ३ सत्यम् ४ प्रियम् ५ च ६ हितम् ७ च ८ स्वाध्यायाभ्यसनम् ९ एवम् १० वाङ्मयम् ११ तपः १२ उच्यते १३ ॥ १५ ॥ उ० + वाणी का तप यह है + अ० + जो १ वाक्य २ अन्य को + उद्वेग न करे ३ सत्य ४ प्रिय ५ और ६ हित करनेवाला ७ और ८ वेद शास्त्र पढ़नेका अभ्यास ९ भी १० वाणी का ११ तप १२ कहा है १३ तात्पर्य्य जो बात सच्ची शास्त्रविहित और हित करनेवालीहै परन्तु जो कहतेसमय किसी को प्रिय न लगे ऐसी बातके कहने में भी दोष है और ऐसी बात के सुननेमें भी दोषहै कि श्रवण समय तो प्रिय प्रतीत हो परन्तु वेदविरुद्ध हो अनुद्वेगकरम् सत्यम् प्रियम् हितम् और चकार से मितम् अर्थात् बहुत अर्थ को संक्षेप करके थोड़े अक्षरों में कहना यह पांचवां विशेषण वाक्य का चकार से जानना चाहिये ॥ १५ ॥

मनःप्रसादःसौम्यत्वंमौनमात्मविनिग्रहः ॥ भावसंशुद्धिरित्येतत्तपोमानसमुच्यते ॥ १६ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

मनःप्रसादः १ सौम्यत्वम् २ मौनम् ३ आत्मविनिग्रहः ४ भावसंशुद्धिः ५ इति ६ एतत् ७ तपः ८ मानसम् ९ उच्यते १० ॥१६॥ उ० + मन का तप कहते हैं + अ० + मन प्रसन्न रहना १ सतोगुणी वृत्ति में मन प्रसन्न रहता है तमोगुणी रजोगुणी वृत्तिमें विक्षेप और मोह को प्राप्त होता है + सरलता सीधापन २ मनन करना ३ विषयों से मनको रोकना ४ व्यवहार में छल नहीं करना बाहर भीतर समवृत्ति रखनी ५ यह ६ ७ तप ८ मनका ९ कहा है १०॥१६॥

श्रद्धयापरयातप्तंतपस्तत्त्रिविधंनरैः ॥ अफलाकांक्षिभिर्युक्तैःसात्त्विकंपरिचक्षते ॥ १७ ॥

अफलाकांक्षिभिः १ युक्तैः २ नरैः ३ परया ४ श्रद्धया ५ तत् ६ त्रिविधम् ७ तपः ८ तप्तम् ९ सात्त्विकम् १० परिचक्षते ११ ॥ १७ ॥ उ० + शरीर मन वाणी करके तीन प्रकार का तप है यह भेद तो पीछे कहा अब तप के सात्त्विकादि भेद करके तीन प्रकार का कहते हैं इस मन्त्र में सतोगुणी तप का लक्षण है + अ० + फलकी इच्छारहित १ एकाग्रचित्तवाले २ पुरुषोंने ३ परम ४ श्रद्धा करके ५ सो ६ तीन प्रकार का ७ तप ८ अर्थात् मन वाणी शरीर करके जो तप + किया है ९ सो तप + सतोगुणी १० कहाहै ११ तात्पर्य परमश्रद्धा के साथ चित्तको भलेप्रकार एकाग्र करके फलकी इच्छारहित पुरुषोंने शरीर मन वाणी करके जो तप किया है सो सतोगुणी है ॥ १७ ॥

सत्कारमानपूजार्थंतपोदम्भेनचैवयत् ॥ क्रियते तदिहप्रोक्तंराजसंचलमध्रुवम् ॥ १८ ॥

यत् १ दम्भेन २ सत्कारमानपूजार्थम् ३ च ४ एव ५ तपः ६ क्रियते ७ तत् ८ इह ९ राजसम् १० प्रोक्तम् ११ चलम् १२ अध्रुवम् ॥ १३ ॥ १८ ॥ अ० + जो १ दम्भ करके २ अथवा ३।४ सत्कार मान पूजाके लिये ५ तप ६ किया है ७ सो ८ शास्त्रमें ९ रजोगुणी १० कहाहै ११ क्योंकि + अचल नहीं १२ अनित्य है १३ तात्पर्य अच्छे कर्म अपनी स्तुति करानें के वास्ते लोगों के दिखाने के वास्ते अपने सन्मान पूजाके लिये धनादि की प्राप्ति के लिये स्वर्गादि पुत्र मित्रादि की प्राप्ति के लिये जो करते हैं वे पुरुष भी रजोगुणी हैं ऐसे कर्मोंका फल तुच्छ अनित्य होगा ॥ १८ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

मूढग्राहेणात्मनोयत्पीडयाक्रियतेतपः॥ परस्यो त्सादनार्थंवातत्तामसमुदाहृतम्॥ १९॥

यत् १ तपः २ मूढग्राहेण ३ आत्मनः ४ पीडया ५ क्रियते ६ परस्य ७ उत्सादनार्थम् ८ वा ९ तत् १० तामसम् ११ उदाहृतम् १२॥ १९॥ अ० + जो १ तप २ दुराग्रह करके ३ अविवेकपूर्वक + इन्द्रियों को ४ दुःख देकर ५ किया है ६ दूसरेके ७ नाशार्थ ८ वा ९ सो १० तमोगुणी ११ कहाहै १२॥ १९॥

दातव्यमितियद्दानंदीयतेऽनुपकारिणे॥ देशेका लेचपात्रेचतद्दानंसात्त्विकंस्मृतम्॥ २०॥

दातव्यम् १ इति २ यत् ३ दानम् ४ दीयते ५ देशे ६ काले ७ च ८ पात्रे ९ च १० अनुपकारिणे ११ तत् १२ दानम् १३ सात्त्विकम् १४ स्मृतम् १५॥ २०॥ उ० + दान तीन प्रकार का है प्रथम सतोगुणी दान कहते हैं + अ० + देना चाहिये १ अवश्य हमको दान + इस प्रकार २ मन में विचार कर + जो ३ दान ४ दिया है ५ सुन्दर + देशमें ६ और उत्तम कालमें ७।८ सुपात्र अनुपकारी को ९।१०। ११ सो १२ दान १३ सात्त्विकी १४ कहा है १५ + टी० + गंगादि तीर्थों में सुन्दर जगह लिपीपुतीहुई में जिस जगह बैठे हुये बुरी वस्तु न दीखे दुर्गन्ध न आवे ६ पूर्णमासी व्यतीपातादि में भूख के समय वा किसी सज्जनका काम अटक रहा है उस समय भोजन कराना मध्याह्न से पहिले ७ जिसको देना उससे उपकार किसी प्रकारका न चाहना जहां तक बन सके अनजान पुरुषको छिपाकर देना ११ विद्वान् साधु ब्राह्मण दानपात्र हैं वा भूखा कोई जाति हो ९ इस दान की व्यवस्था में एक पोथी जिसका नाम राजदूतों की कथा है नागरी अक्षरों में मुंशी शिवनारायण कायस्थ माथुर कि जो आगरेमें श्रीमान् ऐश्वर्य्यवान् सद्गुणों की खानि ब्रह्मविद्या और अंगरेजी फ़ारसी छापाकी तसवीर अद्भुत बनानी इत्यादि लौकिक विद्या में नागर प्रभुता पाकर अमानी दयावान् परोपकारी प्रसिद्ध हैं उनकी बनाई हुई है और प्राकृत उर्दू विद्यामें भी उन्होंनेही बनाई है जिसका नाम कासदान शाही है उस पोथीके पढ़ने सुनने विचारने से दानकी व्यवस्था भलेप्रकार प्रतीत होतीहै तात्पर्य जो नौकरी खेती बनज करते हैं वा जिनके पास किसी प्रकार द्रव्यहै उनको अवश्य दान करना चाहिये क्योंकि पन्द्रह अनर्थ द्रव्य में रहते हैं जो वह वेदोक्त दान न किया गया तो पन्द्रह अनर्थोंमें जो पाप होता है

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

सो द्रव्यग्राही को लगेगा दान करने से उस पाप की निवृत्ति होती है और दान करने के लिये द्रव्य संचय करना यह शास्त्रकी आज्ञा नहीं उसका यह फलहै कि जैसे कीचमें हाथ साना फिर धोया इस समयमें दान देना तो पृथक् रहा जो किसी को देता देखते सुनते हैं तो जहांतक उनसे यत्न होसक्ता है हँसी तर्क करके उसको भी वर्जित करते हैं मुमुक्षुको चाहिये कि ऐसे दुष्टोंका मुख भी न देखे यह विचार करले कि दिन महीने वर्षकी कमाई में से इतना भाग पुण्य करूंगा उसी द्रव्य को वा अन्नवस्त्रादि मोल लेकर दिन दिन प्रति वा वर्ष महीने में जहांतक होसके गुप्त सुपात्र को देदिया करें जो प्रवृत्ति में रहकर दान नहीं करते केवल माला तिलक घंटा घड़ियाल से मुक्ति चाहते हैं परमेश्वर उन पर कभी प्रसन्न न होंगे ॥२०॥

यत्तुप्रत्युपकारार्थंफलमुद्दिश्यवापुनः ॥ दीयतेच परिक्लिष्टंतद्राजसमुदाहृतम् ॥ २१ ॥

यत् १ तु २ प्रत्युपकारार्थम् ३ पुनः ४ वा ५ फलम् ६ उद्दिश्य ७ परिक्लिष्टम् ८ च ९ दीयते १० तत् ११ राजसम् १२ उदाहृतम् १३ ॥२१॥ उ० + रजोगुणी दान कहते हैं + अ० + जो १ प्रत्युपकारके लिये २।३ वा ४।५ फलका ६ उद्देश करके ७ वा + क्लेश कलह सहित ८।९ दिया है १० सो ११ रजोगुणी १२ कहा है १३ टी० + दानपात्रसे यह इच्छा रखनी कि किसी समय किसीप्रकार यह हमारी सहाय करेगा ३ यह चिंतन करके कि सन्त महन्तोंकी टहल करनेसे धन पुत्रादि मिलते हैं ६।७ क्या करें जी हमारे आज पिताका श्राद्धहै एक ब्राह्मण तो अवश्य ही न्यौतना चाहिये इस प्रकार लौकिक लज्जासे दान करके मनमें दुःख मानना तात्पर्य महात्मा जो यह कहते हैं कि दाता कलियुगमें नहीं हैं यदि हैं भी तो सेवा कराकर देतेहैं तदुक्तम् ॥ दातारोपि न सन्ति सन्ति यदि चेत्सेवानुकूलाःकलौ ॥ तात्पर्य उनका यहहै कि कालेयुगमें सतोगुणी दाता कमहैं विशेष रजोगुणी हैं बहुत लोग दाता प्रसिद्ध हैं उनके दान की यह व्यवस्था है कि एक पुरुष राजा का नौकर है प्रजा पर उसका हुक्म है किसी की कथा कहला देनी वा शुभ कामके नाम से चन्दा करके कुछ उनको देदेना कुछ आप रखलेना कोई कोई सुपात्रों को भी देतेहैं अपने सुयश के लिये कोई साधु को अपने मकान पर ठहराय रखते हैं मकान की रक्षाके लिये कोई साधु ब्राह्मण की टहल करतेहैं दूसरे साधु ब्राह्मण को दुःख देनेके लिये कोई लौकिक लज्जासे देखा देखी करतेहैं कोई इस प्रकार दान करते हैं कि ब्राह्मण को नौकर रख लेते हैं वह उसके ब्राह्मण को जिमा

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

देता है और उसके ब्राह्मण को वह जिमा देता है और खिचरी वस्त्रादि भी इसीप्रकार बांटते हैं कोई ऐसे दानी प्रसिद्ध हैं कि छल दम्भ पाखण्ड करके किसी का द्रव्य दबा लिया उस दोष के दबने के लिये दान करते हैं उनकी वह अवस्था है॥ अहरन की चोरी करैं करैं सुई की दान। ऊंचे चढ़के देखन लागे कितनीं दूर विमान॥ ऐसे दाता सद्गति की कदाचित् आशा न रक्खें॥ ३१॥

अदेशकालेयद्दानमपात्रेभ्यश्चदीयते॥ असत्कृतमवज्ञातंतत्तामसमुदाहृतम्॥ २२॥

यत् १ दानम् २ अपात्रेभ्यः ३ अदेशकाले ४ च ५ दीयते ६ असत्कृतम् ७ अवज्ञातम् ८ तत् ९ तामसम् १० उदाहृतम् ११ ॥२२॥ अ०+जो १ दान २ कुपात्रों को ३ और निषिद्ध देशकाल में ४। ५ दिया है ६ अथवा सुपात्रों को भी जो + असत्कारपूर्वक ७ अवज्ञापूर्वक ८ दिया है + सो ९ तमोगुणी १० कहा है ११ + टी० + जिस समय महात्मा दैवयोगसे अपने घर आवे हाथ जोड़कर अभ्युत्थान न करे और ऐसा न बोले कि आपने बड़ी कृपाकरी ७ किसीआदमी से कहदेना कि फ़क़ीर आया है रोटी आटा देकर टालो ८ चौके से बाहर बैठा कर अपवित्र जगहमें न्योतकर मध्याह्न से पीछे जिमाना ९ नट बाजीगर वेश्यादि को देना इत्यादि तमोगुणी दान हैं ३ तात्पर्य्य द्रव्य बड़े बड़े दुःख पापों से प्राप्त होताहै बन्ध काभी यही साधनहै मोक्षका भी यही साधन है इसको पाकर मोक्ष सम्पादन करे एक दिन इससे अवश्य वियोग होगा यातो द्रव्य पहिले छोड़देगा या द्रव्य रक्खाही रहेगा आप चलेजावेंगे श्रीभगवान् ने यह तीनप्रकार का भेद इसीवास्ते कहा है कि दान सतोगुणी करना चाहिये क्योंकि उससे परम्परा करके मोक्षकी प्राप्ति होती है जो यह कहते हैं कि अजी वेदोक्त साधु ब्राह्मण कहां हैं यह उनकी समझ और श्रद्धा पुरुषार्थ यत्न और मान बड़ाईमें दोष है कि जो उसे सुपात्र नहीं मिलते महात्मा जो यह कहते हैं कि पृथ्वीपर असंख्यात अमोल रत्न प्रसिद्ध हैं जिनमें किसी की ममता नहीं निर्भाग्यों को नहीं दीखते उनका तात्पर्य्य सुपात्रों सेही है घर से बाहर पैर नहीं रखते कौवे कीसी दृष्टि है महात्माके भजन पाठ पूजा विवेक विद्यादि सहस्रों उनमें जो गुण हैं उनको तो देखते नहीं कहते हैं कि अजी महात्मा किसी के घर क्योंजातेहैं उस निर्भाग्य से बूझनाचाहिये कि जो घर आवें वे तो असाधुहैं और तू मलमूत्र के पात्र स्त्री पुत्र दि को

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

छोड़कर बाहर पैर न रक्खे तो फिर सुपात्र कैसे मिलें निर्भाग्यों के घर महात्मा नहीं जाते यह बात सत्य है ॥ २२ ॥

ॐतत्सदितिनिर्देशोब्रह्मणस्त्रिविधःस्मृतः ॥ ब्राह्मणास्तेनवेदाश्च यज्ञाश्चविहिताःपुरा ॥ २३ ॥

ॐम् १ तत् २ सत् ३ इति ४ ब्रह्मणः ५ निर्देशः ६ त्रिविधः ७ स्मृतः ८ तेन९ ब्राह्मणाः १० वेदाः ११ च १२ यज्ञाः १३ च १४ पुरा १५ विहिताः १६ ॥ २३ ॥ उ०+जो मुमुक्षु यह चाहते हैं कि प्रभु की आज्ञा से यज्ञ दानादि कर्म्म वेदोक्त सतोगुणी करें परन्तु देशकाल वस्तुके सम्बन्ध से वा किसी अन्य प्रतिबन्ध से सतोगुणी वेदोक्त अनुष्ठान नहीं होसक्ता इस हेतु से दुःख पाते हैं उनके लिये परम करुणाकर व्रजचन्द्र उत्तम उपाय परम पवित्र गुप्त बतलातेहैं इस मन्त्र में+ अ०+ॐम् १ तत् २ सत् ३ यह४ब्रह्मका५उच्चारण ६ तीनवेर ७ कहाहै ८ ब्रह्मविदों ने+तिसने ९ अर्थात् ॐ तत् सत् इस मन्त्र मेंही + ब्राह्मण १० और वेद ११। १२ और यज्ञ १३। १४ पहले १५ उत्तम पवित्र कियेहैं १६ तात्पर्य्य स्नान दान भोजन पाठादि करने से पहले और पीछे यह मन्त्र ॐ तत् सत् तीन वार कहे अङ्गहीन क्रिया भी सतोगुणी होके वेदोक्त फलदेगी यह विधि अनादि है महात्मा जानते हैं इसके प्रतापसे सदा निर्दोष रहतेहैं श्रीभगवान् अगले मन्त्रों में ॐ तत् सत् इन तीनों नामों का माहात्म्य पृथक् पृथक् कहेंगे यह एक एक नाम परमात्मा का पवित्र करके ब्रह्मको प्राप्त करता है जो तीनों नाम उच्चारण करेगा उसके पवित्र होने में क्या सन्देह है इससे यही कैमुतिकन्याय है वेदों में यह मन्त्र आदिसार है जिस मन्त्रमें इन तीनों नामों में से एक भी नाम होगा उस मन्त्रका फल शीघ्र अवश्य होगा मन्त्रों में इन्हीं नामों की शक्तिहै पोथियों के और मन्त्रों के आदि में इन तीनों नामोंमें से एक दो नाम अवश्य होताहै जब कि वेद ब्राह्मणादि की बड़ाई इस मन्त्र के प्रताप से है फिर बिना इस मन्त्रके जपे कोई क्रिया कब श्रेष्ठ होसक्ती है इस हेतु से क्रिया के आदि अन्त में इस मन्त्रको तीनवेर अवश्य उच्चारण करना योग्य है ॥ २३ ॥

तस्मादोमित्युदाहृत्ययज्ञदानतपःक्रियाः ॥ प्रवर्त्तन्तेविधानोक्ताःसततंब्रह्मवादिनाम् ॥ २४ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

तस्मात् १ ॐम् २ इति ३ उदाहृत्य ४ यज्ञदानतपःक्रियाः ५ विधानोक्ताः ६ सततम् ७ ब्रह्मवादिनाम् ८ प्रवर्तन्ते ९॥२४॥उ०+अब पृथक् पृथक् नामकी माहात्म्य कहते हैं इस मंत्रमें ॐम् इस मंत्रका माहात्म्य है जब कि वेदादि इन नामों से ही श्रेष्ठ पवित्र कियेगये हैं+अ०+तिस हेतु से १ ॐम् २ यह नाम ३ उच्चारण करके ४ यज्ञ दान तप रूप क्रिया ५ वेदोक्त ६।७ ब्रह्मनिष्ठोंके ८ होती हैं ९ ॥२४॥

तदित्यनभिसंधायफलंयज्ञतपःक्रियाः ॥ दानक्रियाश्चविविधाःक्रियन्तेमोक्षकांक्षिभिः ॥ २५ ॥

मोक्षकांक्षिभिः १ तत् २ इति ३ फलम् ४ अनभिसंधाय ५ यज्ञतपःक्रियाः ६ दानक्रियाः ७ च ८ विविधाः ९ क्रियन्ते १० ॥ २५ ॥ अ०+मोक्ष की इच्छावाले १ तत् २ यह ३ नाम उच्चारण करके और+फल का ४ नहीं चिंतन करके ५ यज्ञ तप रूप क्रिया ६ और दानक्रिया ७। ८ नानाप्रकारकी ९ करतेहैं १० महावाक्य में यही नाम है ॥ २५ ॥

सद्भावेसाधुभावेचसदित्येतत्प्रयुज्यते ॥ प्रशस्तेकर्मणितथासच्छब्दःपार्थयुज्यते ॥ २६ ॥

पार्थ १ सद्भावे २ साधुभावे ३ च ४ सत् ५ इति ६ एतत् ७ प्रयुज्यते ८ तथा ९ प्रशस्ते १० कर्मणि ११ सत् १२ शब्दः १३ युज्यते १४॥ २६ ॥ अ०+हे अर्जुन! १ सद्भावमें २ और साधुभावमें ३।४ सत् ५ यह ६।७ नाम+कहा जाता है ८ और ९ विवाहादि+मंगलकर्म में १०। ११ सत् १२ शब्द १३ कहा जाता है १४ ॥ २६ ॥

यज्ञेतपसिदानेचस्थितिःसदितिचोच्यते॥ कर्मचैवतदर्थीयंसदित्येवाभिधीयते ॥ २७ ॥

यज्ञे १ तपसि २ दाने ३ च ४ स्थितिः ५ सत् ६ इति ७ च ८ उच्यते ९ तदर्थीयम् १० कर्म ११ च १२ एव १३ सत् १४ इति १५ एव १६ अभिधीयते १७॥ २७ ॥ उ०+इसमंत्र में भी सत् नामका माहात्म्य है+अ०+यज्ञ में १ तप में २ और दान में ३। ४ जो+स्थिति ५ उसको+सत् ६ ऐसा ७। ८ कहते हैं ९ ईश्वरार्थ १० कर्म को ११ भी १२। १३ सत्ही १४।१५।१६ कहते हैं १७

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

तात्पर्य जो पुरुष यज्ञादि परमेश्वरार्थ सदा करते रहते हैं उनको सत्फल प्राप्त होगा जो कभी नाश न हो ॥ २७ ॥

अश्रद्धयाहुतंदत्तंतपस्तप्तंकृतंचयत् ॥ असदित्युच्यतेपार्थनचतत्प्रेत्यनोइह ॥ २८ ॥

अश्रद्धया १ हुतम् २ दत्तम् ३ तपः ४ तप्तम् ५ च ६ यत् ७ कृतम् ८ इति ९ असत् १० उच्यते ११ पार्थ १२ तत् १३ प्रेत्य १४ न च १५ नो १६ इह १७ ॥ २८ ॥ उ० + श्रद्धापूर्वक जो दानादि नहीं करते केवल लौकिक लज्जा से करते हैं उनको फल न यहां होता है न मरकर परलोक में यह अर्थ इस मंत्र में प्रकट करते हुये अश्रद्धावान् की निन्दा करते हैं + अ० + अश्रद्धा से १ हवन किया २ दिया ३ तप ४ किया ५ और जो किया ६ । ७ । ८ यह ९ सब + असत् १० कहाहै ११ अर्थात् निष्फल निन्दित झूठा वृथा है + हे अर्जुन ! १२ सो १३ न मर करके १४ । १५ न १६ इस लोक में १७ मोक्षमार्ग में सब कर्मों से प्रथम श्रद्धा है जिसकी वेद ब्राह्मणादि में श्रद्धा है सो मोक्ष होगा इत्यभिप्रायः ॥२८॥

इति श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सुब्रह्मविद्यायांयोगशास्त्रेश्रीकृष्णार्जुनसंवादे श्रद्धात्रयविभागोनामसप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥

इति श्रीआनन्दगिरिविरचितायांपरमानन्दप्रकाशिकायां टीकायां सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

अथ अठारहवें अध्यायका प्रारम्भ हुआ॥

अर्जुन उवाच ॥ संन्यासस्य महाबाहो तत्त्वमिच्छामि वेदितुम् ॥ त्यागस्य च हृषीकेश पृथक् केशिनिषूदन ॥ १ ॥

महाबाहो १ हृषीकेश २ केशिनिषूद ३ संन्यासस्य ४ च ५ त्यागस्य ६ तत्त्वम् ७ पृथक् ८ वेदितुम् ९ इच्छामि १० ॥ १ ॥ अ० + उ० + इस अध्याय में समस्त गीताका सार संक्षेपहै + हे महाबाहो! १ हे हृषीकेश! २ हे केशिनिषूदन! ३ संन्यास ४ और ५ त्याग के ६ तत्त्वको ७ पृथक् ८ जाननेकी ९ मैं इच्छा करताहूं १० + टी० + १। २। ३ ये तीनों नाम श्रीकृष्णचन्द्र के हैं + तात्पर्य हे भगवन्! त्याग शब्दका और संन्यास शब्दका अर्थ मुझसे कहो दोनों पदोंका अर्थ पृथक् पृथक् मैं जानाचाहता हूं + त्याग और संन्यास इन दोनों पदोंका अर्थ श्री भगवान् भलेप्रकार अगले मन्त्र में कहैंगे प्रसंग से चतुर्थाश्रम संन्यासका अर्थ संक्षेप करके यहां लिखे देते हैं त्याग और संन्यास का अर्थ वास्तव एकही है संन्यास दो प्रकार का है अन्तरङ्ग १ बहिरङ्ग २ और संन्यास ज्ञाननिष्ठाका अङ्गहै अन्तरङ्ग संन्यास का अर्थ तो श्रीभगवान् भलेप्रकार इस अध्याय में कहैंगे बहिरङ्ग संन्यासका अर्थ यहां लिखा जाता है सो बहुत प्रकारका है + कुटीचर १ हंस २ बहूदक ३ विविदिषा ४ विद्वत् ५ हंस ६ परमहंस ७ और भी बहुत भेद हैं + इनका अर्थ अङ्क के क्रम से लिखते हैं + वाणिज्यादि व्यवहार छोड़ ग्राम से बाहर शरीरयात्रामात्र कुटी में बैठ भगवत् भजन ब्रह्मविचार करना अपने सम्बन्धी और औरोंको सम समझना कोई घरका और बाहरका भोजन दे जावे उसीसे देह निर्वाह करलेना यह कुटीचरसंन्यासीका लक्षणहै और कनिष्ठ अंग उसका यह भी है कि देहयात्रामात्र कुछ आजीविकाका यत्न करके एकान्त में निवास करना १ जैसे कुटीचरका लक्षण कहा वैसेही कुटी शब्द की जगह क्षेत्र समझलेना चाहिये क्षेत्र में देहयात्रा के लिये मधुकरी मांग खाने में दोष नहीं २ घरको त्यागकर विचरता रहै एक जगह न रहै ३ वेदान्तशास्त्र श्रवण करनेके लिये गृहस्थाश्रम को त्यागना और त्याग के पीछे दिन रात्रि सदा श्रवण मनन निदिध्यासन करते रहना ४ जीवन्मुक्तिका जो आनन्द उसकेलिये

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri Dr. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

गृहस्थाश्रम का त्यागकरना इसी संन्यास को वे धारण करते हैं जिनको गृहस्थाश्रम में संशय विपर्यय रहित साक्षात्कार ब्रह्मज्ञान होजाताहै ५ जिस प्रकार हंस दूध और पानी को जुदा करके दूधही पान करता है इसीप्रकार परमहंस महात्मा देहादि पदार्थों से अपने स्वरूपको पृथक् विलक्षण समझकर सदा स्वरूप ही में निष्ठ रहना इसीको हंस संन्यास कहते हैं ६ वस्त्रादिको भी त्याग करके मौन रहना इसको परमहंस संन्यास कहते हैं ७ यह अर्थ भी संन्यास का एक नाममात्र लिखदियाहै जो किसीको कुटीचरादि संन्यास करना हो तो वह उसी की विधि मन्वादि धर्मशास्त्र और उपनिषदों में से श्रवणकरके संन्यास करै दंडधारणपूर्वक संन्यास में तो कर्मकाण्ड की विधि से ब्राह्मण शरीर को ही अधिकार है क्योंकि कर्मकाण्ड में वेदोक्त कर्म करनेवाले ब्राह्मण जाति को ही बड़ा कहते हैं और उपासक भगवद्भक्त कोही बड़ा कहते हैं भगवद्भक्त व्यवहारमें कोई जातिहो सब से बड़ाहै और जो व्यवहार में भी ब्राह्मणजाति हो तो क्या ही कहना है विदुरजी सूतजी गुह निषाद शबरी से आदि लेकर सहस्रशः हज़ारों कथा साक्षी हैं और ज्ञानी ब्रह्मवित् को बड़ा कहते हैं ब्राह्मण शब्दका अर्थ यही है "ब्रह्मजानाति ब्राह्मणः" जो व्यवहारमें ब्राह्मणजाति कहेजातेहैं उनको वैराग्य न भी हो तो भी अवस्था के चतुर्थभाग में उनको गृहस्थाश्रम छोड़ना चाहिये नहीं तो पाप प्रायश्चित्तका भागी होना पड़ेगा और जो वैराग्य हो तो वह कोई जातिहो व्यवहारमें सब अवस्था में उसको संन्यास का अधिकारहै "यदहरेव विरज्येत तदहरेवप्रव्रजेत्" अर्थ इस श्रुतिका यहहै कि जिस दिन वैराग्यहो उसीदिन संन्यास करे त्याग संन्यासमें सब को अधिकारहै हज़ारों विरक्त महात्मा कि जो व्यवहार में ब्राह्मणजाति नहीं ब्रह्मवित् ज्ञानी दर्शनीय हैं और हज़ारों होगये विना संन्यास और विरक्त के मुक्ति न होगी परमेश्वर का अनुग्रह और पूर्व्व संस्कार दूसरी बात है गृहस्थाश्रम में जिसको ज्ञान हुआ यह पूर्व्व संस्कार और परमेश्वर की कृपा समझनी चाहिये नहीं तो निवृत्तिमार्ग की बड़ाई क्या हुई प्रवृत्तिमार्ग और निवृत्तिमार्ग दोनों बराबर होगये साधु महात्मा विरक्तों का माहात्म्य वेदशास्त्र और अवतारों ने क्या वृथाही कहा है तात्पर्य विरक्त अवश्य होना चाहिये विरक्त और निवृत्ति में सबको अधिकार है देश काल वस्तु का नियम प्रवृत्तिमार्ग में है निवृत्तिमार्ग में नहीं ॥ १ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ काम्यानांकर्मणांन्यासंसं

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

न्यासंकवयोविदुः ॥ सर्वकर्मफलत्यागंप्राहुस्त्यागं विचक्षणाः ॥ २ ॥

कवयः १ काम्यानाम् २ कर्मणाम् ३ न्यासम् ४ संन्यासम् ५ विदुः ६ विचक्षणाः ७ सर्वकर्मफलत्यागम् ८ त्यागम् ९ प्राहुः १० ॥ २ ॥ + अ० + कोई कोई + पण्डित १ काम्य २ कर्मोंके ३ न्यासको ४ संन्यास ५ जानते हैं ६ और कोई कोई + पण्डित ७ सब कर्मोंके फलत्यागको ८ त्याग ९ कहतेहैं १० + टी० + काम्य शब्दका अर्थ कोई तो ऐसा करते हैं कि स्त्री धनादिके निमित्त जो कर्म्म वह त्यागना योग्य है नित्य प्रायश्चित्त कर्म्म करनाचाहिये इसीका नाम संन्यास है और कोई महात्मा काम्य शब्दका अर्थ यह करते हैं कि समस्त कर्मोंका त्यागना योग्य है इसका नाम संन्यास है सकाम कर्मोंके त्यागमें दोनों सम्मत हैं और कुछ न करने से सकाम कर्म भी अच्छाहै पुत्र स्वर्गादिकी इच्छावाला यज्ञ करे ऐसा वेदमें सुना जाताहै परन्तु इस जगह काम्य शब्दका अर्थ यही है कि सब कर्मोंके त्यागका नाम संन्यासहै नहीं तो दोनों जगह कर्मकी विधि रहती है जब कि एक कर्मकी विधि है और वह किसी हेतुसे न बना तो कर्त्ताको प्रायश्चित्त भी आवश्यक है और जब कि उसको पापलगा और प्रायश्चित्त करना पड़ा फिर मुक्त कैसे होगा सदा बन्धन में रहा इस हेतु से अधिकार भेद करके इस श्लोकका तात्पर्य यह समझना चाहिये कि शुद्धान्तःकरणवाले निष्काम पुरुष सब कर्मोंके त्यागको संन्यास जानते हैं और इस भूमिका की इच्छावाले सब कर्मों के केवल फलत्यागको संन्यास जानते हैं सब कर्मोंके फलका त्याग इसीका नाम जो संन्यास कहते हैं तो चतुर्थाश्रम जो संन्यास है उसकी विधि क्या वृथाहीरही तात्पर्य सब कर्मोंके फलका त्याग करना और कर्म्म करना इसको कोई कोई पण्डित त्याग कहते हैं और सब कर्मों को स्वरूपसे त्यागदेना इसको पण्डित संन्यास कहते हैं जबतक अन्तःकरण शुद्ध न हो तबतक कर्मकरना उसका फल त्यागदेना और जब अन्तःकरण शुद्धहोजाय तब सब कर्मोंका त्यागदेना इत्यभिप्रायः ॥ २ ॥

त्याज्यंदोषवदित्येके कर्मप्राहुर्मनीषिणः ॥ यज्ञदानतपःकर्म न त्याज्यमितिचापरे ॥ ३ ॥

एके १ मनीषिणः २ इति ३ प्राहुः ४ दोषवत् ५ कर्म ६ त्याज्यम् ७ च ८ अपरे ९ इति १० यज्ञदानतपःकर्म ११ न १२ त्याज्यम् १३ ॥ ३ ॥ अ० + एक

CC-0. Digitized by eGangotri. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

पण्डित २ यह ३ कहते हैं ४ कि + दोषवाला ५ कर्म ६ त्यागना योग्य है ७ और ८ अपर अर्थात् कोई एक पण्डित ९ यह १० कहते हैं + कि + यज्ञ दान तपकर्म ११ नहीं १२ त्यागना चाहिये १३ तात्पर्य सब कर्मों के त्याग में अन्य मतवालोंका भी सम्मत है इसी बातके दृढ़ करने के लिये सांख्यशास्त्रवालों का मत दिखाया सांख्यशास्त्रवाले कहते हैं कि यज्ञादिकर्मों में हिंसा असमतादि दोष हैं इस वास्ते उनका त्यागना योग्य है और पूर्व मीमांसावाले यह कहते हैं कि वेदकी आज्ञा में शङ्का करनी न चाहियें यज्ञादि कर्म करना योग्य है जो वेदोंने कहा यदि उसमें हिंसा भी प्रतीत होती तो भी वह कर्म श्रेष्ठ है अधिकार प्रति दोनोंका कहना सत्य है प्रवृत्तिमार्गवाला अवश्य यज्ञादि कर्म्म करे और निवृत्तिमार्गवाला कर्मों में विक्षेप समझ कर त्यागदे शम दमादि का अनुष्ठान करे ॥ ३ ॥

निश्चयंशृणुमेतत्र त्यागेभरतसत्तम ॥ त्यागोहि पुरुषव्याघ्र त्रिविधःसंप्रकीर्त्तितः ॥ ४ ॥

भरतसत्तम १ तत्र २ त्यागे ३ निश्चयम् ४ मे ५ शृणु ६ पुरुषव्याघ्र ७ हि ८ त्यागः ९ त्रिविधः १० संप्रकीर्तितः ११ ॥४॥ अ० + उ० + आस्तिक मार्गवालों में भी जो भेद प्रतीत होता है कि जो पिछले श्लोक में कहा इसकी निवृत्ति के लिये दोनोंका सिद्धान्त तात्पर्यार्थ कहते हैं + हे अर्जुन! १ तिस २ त्यागके विषय ३ निश्चय ४ मेरे ५ वचनसे + सुन ६ हे पुरुषोंमें श्रेष्ठ अर्जुन! ७ त्यागका अर्थ जानना कठिन है + क्योंकि ८ त्याग ९ तीन प्रकारका १० कहा है ११ तात्पर्य हे अर्जुन! त्याग तीनप्रकारका है इस हेतुसे त्यागका अर्थ कठिन है त्याग और संन्यास इन दोनों शब्दोंका एकही अर्थ है मुझसे सुन प्रवृत्तिमार्ग और निवृत्तिमार्ग ये दोनों अनादि हैं वेदों में जहां कर्म का त्याग कहा है वह निवृत्ति विरक्त महापुरुषोंके लिये कहाहै और जहां कर्म का अनुष्ठान कहा है वह प्रवृत्त रागीजनों के लिये कहाहै ऐसा ऐसा तात्पर्य वेदोंका सत्पुरुषोंकी कृपासे जाना जाताहै शास्त्रोंमें किंचिन्मात्र भेद नहीं अपनी समझका भेदहै ॥४॥

यज्ञदानतपःकर्मनत्याज्यंकार्य्यमेवतत् ॥ यज्ञो दानंतपश्चैव पावनानिमनीषिणाम् ॥ ५ ॥

यज्ञः १ च २ दानम् ३ तपः ४ एव ५ मनीषिणाम् ६ पावनानि ७ एव ८

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

तत् ९ यज्ञदानतपःकर्म १० न ११ त्याज्यम् १२ कार्यम् १३ ॥५॥ अ० + उ० + तीन प्रकार का त्याग श्रीभगवान् अभी आगे कहेंगे प्रथम दो श्लोकों में अपना सिद्धान्त कहते हैं + यज्ञ १ और २ दान ३ तप ४ निश्चय ५ पण्डितों को ६ पवित्र करनेवाले हैं ७ इस वास्ते ८ सोई ९ यज्ञ दान तपकर्म १० नहीं ११ त्यागना योग्य है १२ करने योग्य हैं तात्पर्य यज्ञदानादि कर्म अन्तःकरण को शुद्ध करते हैं इस वास्ते ज्ञानकी प्रथम भूमिकावालों को कर्म त्यागना न चाहिये स्पष्टार्थ है कि पवित्र की विधि अपवित्र वस्तु में होती है पवित्र वस्तु में पवित्र विधि नहीं होती जिनको संसार में वैराग्य नहीं और भगवद्भक्त जिनको प्राणों की बराबर प्यारे नहीं वे निश्चय करें कि हमारा अन्तःकरण शुद्ध नहीं विरक्तों की सेवा पूजासे हमारा अन्तःकरण शुद्ध होगा ॥ ५ ॥

एतान्यपितुकर्माणि संगंत्यक्त्वाफलानिच ॥ कर्त्तव्यानीतिमेपार्थनिश्चितंमतमुत्तमम् ॥ ६ ॥

पार्थ १ एतानि २ कर्माणि ३ संगम् ४ च ५ फलानि ६ त्यक्त्वा ७ अपि ८ तु ९ कर्त्तव्यानि १० इति ११ मे १२ निश्चितम् १३ उत्तमम् १४ मतम् १५ ॥६॥ अ० + हे अर्जुन ! १ ये २ तप दानादि + कर्म ३ आसक्ति ४ और ५ फलको ६ त्याग करके ७ निश्चय ८ । ९ करने योग्य हैं १० यह ११ मेरा १२ निश्चय १३ उत्तम १४ मत १५ है तात्पर्य हे अर्जुन ! तपदानादि अन्तःकरण को शुद्ध करते हैं इस वास्ते मुमुक्षु को अवश्य करने चाहिये मेरा भी यही उत्तम मत है और औरों का भी कर्म की विधिमें यही तात्पर्य है विना अन्तःकरण शुद्ध हुये जो वेदोक्त बहिरङ्ग कर्मों का त्याग कर देते हैं अवैदिक मार्गवालों की बात सुनकर या निवृत्ति मार्गवालों को श्रुति स्मृति प्रमाण देकर वे पापके भागी होते हैं क्योंकि शास्त्रार्थ उन्हों ने उलटा समझा ॥ ६ ॥

नियतस्यतुसंन्यासःकर्मणोनोपपद्यते ॥ मोहात्तस्यपरित्यागस्तामसःपरिकीर्त्तितः ॥ ७ ॥

नियतस्य १ कर्मणः २ संन्यासः ३ न ४ उपपद्यते ५ तु ६ मोहात् ७ तस्य ८ परित्यागः ९ तामसः १० परिकीर्त्तितः ११ ॥ ७ ॥ उ० + पीछे भगवान् ने कहा था कि त्याग तीन प्रकार का है उसको कहते हैं + अ० + नित्य संध्यादि १ कर्म का २ त्याग ३ नहीं ४ करना चाहिये ५ और ६ मोहसे ७ तिसका ८ त्याग ९

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

करदेना+तमोगुणी त्याग १० कहा है ११ तात्पर्य जिज्ञासु मुक्ति की इच्छा वाला नित्य कर्मोंका त्याग न करे और जो भूल या मूर्खता से त्याग करेगा तो वह त्याग तमोगुणी कहा जायगा ऐसे त्यागका फल मोक्ष नहीं पीछे ऐसा त्याग महाक्लेश देताहै ॥ ७ ॥

दुःखमित्येवयत्कर्मकायक्लेशभयात्त्यजेत् ॥ स कृत्वाराजसंत्यागंनैवत्यागफलंलभेत् ॥ ८ ॥

यत् १ कर्म २ कायक्लेशभयात् ३ त्यजेत् ४ दुःखम् ५ इति ६ एव ७ सः ८ राजसम् ९ त्यागम् १० कृत्वा ११ त्यागफलम् १२ न १३ लभेत् १४ एव १५॥ ८ ॥ अ०+जो १ कर्म २ कायाक्लेशके भयसे ३ त्यागता है ४ उसमें + दुःख ५ । ६ । ७ समझ कर+सो ८ रजोगुणी ९ त्याग को १० करके ११ त्यागके फलको १२ नहीं १३ प्राप्त होताहै १४ निश्चय १५ तात्पर्य रजोगुणी पुरुष मैले अन्तःकरण होने से स्नान दानादि कर्मोंको दुःखरूप जानता है यह नहीं समझता कि इन कर्मों से मेरा अन्तःकरण शुद्ध होकर मुझको ज्ञान प्राप्त होगा कि जिससे सबदुःखों की निवृत्ति और परमानन्द की प्राप्ति होती है इस वास्ते विना आत्मबोध हुये ही या कायाक्लेश के भयसे कर्मों को त्याग देताहै विना अन्तःकरण शुद्धहुये त्यागका फल ज्ञाननिष्ठा उसको प्राप्त नहीं होती ॥ ८ ॥

कार्यमित्येवयत्कर्मनियतंक्रियतेऽर्जुन ॥ संगं त्यक्त्वाफलंचैव सत्यागःसात्त्विकोमतः ॥ ९ ॥

अर्जुन १ यत् २ नियतम् ३ कर्म ४ कार्यम् ५ इति ६ एव ७ संगम् ८ च ९ फलम् १० त्यक्त्वा ११ क्रियते १२ सः १३ त्यागः १४ एव १५ सात्त्विकः १६ मतः १७ ॥ ९ ॥ उ०+सतोगुणी त्याग यह है+हे अर्जुन! १ जो २ नित्य ३ कर्म ४ है सो+करना चाहिये ५ यह निश्चय है ६ । ७ संग ८ और ९ फल को १० त्याग करके ११ जो कर्म+किया जाता है १२ सो १३ त्याग १४ निश्चय १५ सतोगुणी १६ माना है १७ तात्पर्य हे अर्जुन! जो नित्यकर्म है उस को ब्रह्मजिज्ञासु अवश्य करे परन्तु उसमें संग न करे और उसके फलका त्याग करे सो त्याग सतोगुणी है इस प्रकार जो कर्म करते हैं उनका अन्तःकरण शुद्ध होताहै फिर साधन चतुष्टय संपन्न होकर ब्रह्मविद्या का श्रवण करके अपने स्वरूप को जानकर कृतकृत्य होजाते हैं उनको फिर कुछ कर्तव्य नहीं रहता ॥ ९ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

नद्वेष्ट्यकुशलंकर्मकुशलेनानुषज्जते ॥ त्यागी सत्त्वसमाविष्टोमेधावीछिन्नसंशयः ॥ १० ॥

अकुशलम् १ कर्म २ न ३ द्वेष्टि ४ कुशले ५ न ६ अनुषज्जते ७ त्यागी ८ सत्त्वसमाविष्टः ९ मेधावी १० छिन्नसंशयः ११ ॥ १० ॥ उ० + जिसका शुद्ध अन्तःकरण होजाताहै उसका लक्षण यहहै + बुरा १ जो + कर्म २ उसके साथ + नहीं ३ वैर करता है ४ अच्छेकर्म में ५ नहीं ६ प्रीति करता है ७ बुरे भले दोनों कर्मोंका फल त्यागदेताहै ८ आत्मा और अनात्माका जो विवेक उस करके युक्त अर्थात् विचारवान् ९ आत्मनिष्ठ १० संदेहरहित ११ तात्पर्य जबतक प्राणीको इच्छारहती है तबतक अच्छेकर्मों में प्रीति रखता है औरउसके वास्ते नानाप्रकारके यत्न करता है अच्छे कर्म्म और बुरे कर्मों का साथहै बुरेकर्म परवश होजाते हैं इच्छा पुरुष को बुरा भला कर्म नहीं लगता जो भले कर्मोंका फल चाहैगा उसको बुरे कर्म्मों का फल परवशहोगा विवेकी विचारवान् शुद्धान्तःकरणवाला सन्देहरहित सदा आत्मनिष्ठ रहता है परमानन्द स्वरूप आत्माके सामने सब कर्म्मों के फल तुच्छ प्रतीत होते हैं ज्ञानी को ॥ १० ॥

नहिदेहभृताशक्यंत्यक्तुंकर्माण्यशेषतः ॥ यस्तु कर्मफलत्यागीसत्यागीत्यभिधीयते ॥ ११ ॥

देहभृता १ अशेषतः २ कर्माणि ३ त्यक्तुम् ४ नहि ५ शक्यम् ६ यः ७ तु ८ कर्मफलत्यागी ९ सः १० त्यागी ११ इति १२ अभिधीयते १३ ॥ ११ ॥ + उ० + जो कोई यह समझे कि कर्म्मोंका फल त्यागनेसे कर्म्मोंका ही त्यागदेना अच्छा है इस वास्ते श्रीभगवान् कहते हैं कि अज्ञानी जीव समस्त कर्म्मों को नहीं त्याग सक्ता फलही का त्याग करसक्ता है कर्मोंका फल त्यागने से अन्तःकरण शुद्ध होता है यह परमफल है और इसीसे ज्ञान होता है ज्ञानी समस्तकर्म त्याग सक्ता है क्योंकि कर्मों का फल जो अज्ञान की निवृत्ति थी सो दूर हुई जबतक अज्ञान दूर न हो तबतक कर्मों का त्याग न चाहिये + अ० + वर्णाश्रमाभिमानी अज्ञानी जीव १ समस्त २ कर्म ३ त्यागने को ४ नहीं ५ समर्थ है ६ जो ७ । ८ कर्म के फल का त्यागी ९ है + सो १० त्यागी ११ । १२ कहा है १३ तात्पर्य अज्ञानी जीव कर्मोंके त्यागनेसे बन्धनको प्राप्त होताहै क्योंकि अन्तःकरण की शुद्धिका उपाय उसने छोड़दिया और ज्ञानी कर्मकर्ताहुआ भी अकर्ताही है

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

क्योंकि आत्मा सदा असङ्ग अक्रियहै इस ज्ञानके प्रतापसे मुक्त होता है ॥ ११॥

अनिष्टमिष्टंमिश्रंचत्रिविधंकर्मणःफलम् ॥ भवत्यत्यागिनांप्रेत्यनतुसंन्यासिनांक्वचित् ॥ १२ ॥

अनिष्टम् १ च २ इष्टम् ३ मिश्रम् ४ त्रिविधम् ५ कर्मणः ६ फलम् ७ प्रेत्य ८ अत्यागिनाम् ९ भवति १० तु ११ संन्यासिनाम् १२ क्वचित् १३ न १४ ॥ १२॥ + उ० + जो कर्मोंका फल त्याग करते हैं उनका अन्तःकरण शुद्धहोकर परमानन्द परमफल की प्राप्ति उनको होती है और जो सकाम कर्म करते हैं उनको इष्ट और अनिष्ट और इष्टानिष्ट अर्थात् मिलाहुआ यह तीन प्रकार फल होता है और जो विना अन्तःकरण शुद्धहुये कर्म छोड़ देते हैं वे सदा नरक और पशु पक्षियों की योनियोंमें जन्म ले लेकर बारंबार मरते हैं इसवास्ते श्रीभगवान् बारंबार जिज्ञासुको निष्काम कर्म का उपदेश फल के सहित करतेहैं + अ० + नरकादि १ और २ स्वर्गादि ३ और + मर्त्यलोक में मनुष्यादि देहों की प्राप्ति ४ यह + तीन प्रकार कर्म का ६ फल ७ मर करके ८ सकामों को ९ होता है १० और ११ संन्यासियों को १२ कभी १३ नहीं १४ होताहै + तात्पर्य स्वर्गादि अनित्य और दुःखदायी पदार्थ हैं भगवद्भजन करके जो अनित्य फलकी प्राप्ति हुई तो क्या हुआ नित्य एकरस परमानन्दकी प्राप्ति होनी चाहिये सो संन्यासियोंको ही होती है स्पष्ट प्रकट श्रीभगवान् बेसन्देह कहते हैं ॥ १२॥

पंचैतानिमहाबाहोकारणानिनिबोधमे ॥ सांख्येकृतांतेप्रोक्तानिसिद्धयेसर्वकर्मणाम् ॥ १३ ॥

महाबाहो १ सर्वकर्मणाम् २ सिद्धये ३ एतानि ४ पंच ५ कारणानि ६ सांख्ये ७ कृतान्ते ८ प्रोक्तानि ९ मे १० निबोध ११ ॥ १३ ॥ + उ० + कर्म और कर्मों के फलका तब त्याग होसक्ता है कि जब कर्मों की जड़का ज्ञानहो इस वास्ते कर्मोंके जो कारण हैं तिनको बताते हैं + अ० + हे अर्जुन ! १ सब कर्मों की २ सिद्धि के वास्ते ३ ये ४ पंच ५ कारण ६ सांख्य ७ कृतान्त में ८ कहे हैं ९ मुझसे १० सुन ११ तिनको + टी० + भले प्रकार परमात्मा का स्वरूप जाना जावे जिस शास्त्रमें उसको सांख्य कहते हैं ब्रह्मविद्या वेदान्त शास्त्र का नाम सांख्य है और कर्मों का अन्तहै जिसमें उसको कृतान्त कहते हैं यह उसी सांख्य का विशेषण है ॥ १३ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

अधिष्ठानंतथाकर्त्ताकरणंचपृथग्विधम् ॥ विविधाश्चपृथक्चेष्टादैवंचैवात्रपञ्चमम् ॥ १४ ॥

अधिष्ठानम् १ तथा २ कर्त्ता ३ करणम् ४ च ५ पृथग्विधम् ६ विविधाः ७ च ८ पृथक्चेष्टाः ९ दैवम् १० च ११ एव १२ अत्र १३ पञ्चमम् १४ ॥ १४ ॥ + उ० + कर्म करने में ये पांच हेतु हैं + अ० + स्थूल शरीर भौतिक इन्द्रियादि का आश्रय १ चैतन्य और जड़ की ग्रन्थि अहङ्कार अर्थात् सोपाधिक चैतन्य २। ३ और इन्द्रिय ४। ५ पृथक् स्वरूपवाली ६ और कैमकार की ७। ८ ये दोनों चौथे पद करण इन्द्रियों के विशेषण हैं मूलमें करणम् यह पद है चौथा + और प्राणापानादि ९ और दैव १०। ११। १२ इन में १३ पांचवां १४ अर्थात् इन्द्रियों के देवता + तात्पर्य शरीर इन्द्रिय प्राण + अन्तःकरण अज्ञान इन के साथ मिलाहुआ चैतन्य कर्त्ता है पृथक् अकर्त्ता है ॥ १४ ॥

शरीरवाङ्मनोभिर्यत्कर्मप्रारभतेनरः ॥ न्याय्यंवाविपरीतंवापञ्चैतेतस्यहेतवः ॥ १५ ॥

नरः १ शरीरवाङ्मनोभिः २ यत् ३ कर्म ४ प्रारभते ५ वा ६ न्याय्यम् ७ वा ८ विपरीतम् ९ तस्य १० एते ११ पञ्च १२ हेतवः १३ ॥ १५ ॥ + अ० + प्राणी १ शरीर मन वाणी करके २ जो ३ कर्म ४ प्रारम्भ करता है ५ या ६ अच्छा ७ या ८ बुरा ९ तिसके १० ये ११ पांच १२ हेतु १३ हैं जो पिछले श्लोक में शरीरादिक हैं + शरीर १ सोपाधिचैतन्य २ इन्द्रिय ३ प्राण ४ दैव ५ अर्थात् आदित्यादि देवता यही पञ्च कारण हैं केवल आत्मा कारण कर्त्ता नहीं अगले मन्त्र में भगवान् स्पष्ट कहैंगे ॥ १५ ॥

तत्रैवंसतिकर्त्तारमात्मानंकेवलंतुयः ॥ पश्यत्यकृतबुद्धित्वान्नसपश्यतिदुर्मतिः ॥ १६ ॥

तत्र १ एवम् २ सति ३ तु ४ यः ५ आत्मानम् ६ केवलम् ७ कर्त्तारम् ८ पश्यति ९ अकृतबुद्धित्वात् १० सः ११ दुर्मतिः १२ न १३ पश्यति १४ ॥ १६ ॥ उ० + जब कि सब कर्मोंमें ये पञ्च हेतु हैं फिर केवल आत्माको कर्त्ता समझना मूर्खता है + अ० + तहां अर्थात् सब कर्मों में १ इसप्रकार २ हुये सन्ते ३ फिर ४ जो ५ आत्मा को ६ केवल ७ कर्त्ता ८ देखता है ९ इसमें हेतु यह है

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

कि + सत् शास्त्र सद्गुरु उपदेश रहित होनेसे अर्थात् गुरु ने उसको ब्रह्मज्ञान उपदेश नहीं किया इस वास्ते अकृतबुद्धि होने से अर्थात् ब्रह्मज्ञान न होने से १० सो ११ मन्दमति १२ आत्माको यथार्थ + नहीं १३ देखताहै १४ + टी० + जैसे पिछले मन्त्र में कहा इसप्रकार तात्पर्य्य वास्तव आत्मा शुद्ध सच्चिदानन्द निर्विकार अक्रिय है शरीरेन्द्रियादि भ्रान्तिके सम्बन्ध से जलचन्द्रवत् आत्मा कर्त्ता प्रतीत होता है अज्ञानियों को जिन्हों ने वेदान्तशास्त्र श्रद्धापूर्व्वक नहीं श्रवण किया ॥ १६ ॥

यस्यनाहंकृतोभावोबुद्धिर्यस्यनलिप्यते ५ हत्वा पिसइमाँल्लोकान्नहन्तिननिबध्यते ॥ १७ ॥

यस्य १ अहंकृतः २ भावः ३ न ४ यस्य ५ बुद्धिः ६ न ७ लिप्यते ८ सः ९ इमान् १० लोकान् ११ अपि १२ हत्वा १३ न १४ हन्ति १५ न १६ निबध्यते १७ ॥ १७ ॥ उ० + सुमति शुद्धान्तःकरणवाले जो आत्मा को अक्रिय जानते हैं वे कर्म करतेहुये भी अकर्त्ताही हैं इस बातको कैमुतिकन्याय से श्रीभगवान् दृढ़ करते हैं अर्थात् जब बुरे कर्म हिंसादि उसको बन्धन नहीं करते तो भले कर्म यज्ञादि उसको कैसे बन्धन करैंगे + अ० + जिसके १ अहंकृत २ भाव ३ नहीं ४ अर्थात् यह कर्म मैंने नहीं किया इस कर्म करने में शरीरादि पञ्च हेतु हैं मैं शुद्ध असङ्ग अविद्या रहित हूं ऐसे जो समझता है और + जिस की ५ बुद्धि ६ नहीं ७ लिपायमान होती है ८ अर्थात् किसीप्रकार का कर्म शुभाशुभ प्रारब्धवशात् होजावे किंचिन्मात्र हर्ष शोक न होवे जिसको + सो ९ इन १० लोकों को ११ भी १२ मार करके १३ नहीं १४ मारता है १५ न १६ बन्धन को प्राप्त होता है १७ तात्पर्य्य जो मुमुक्षु दिन रात मुक्तिके लिये यथाशक्ति यत्न करते हैं जहांतक होसके देशकाल वस्तु के अनुसार भगवद्भजन पूजा पाठ जप तीर्थ स्नानादि कर्म्म करते रहते हैं परलोक में आस्तिक्य बुद्धि है और शुभ कर्मों के प्रतापसे शुद्धान्तःकरण होकर आत्मज्ञान प्राप्तहुआ है जो कदाचित् किसी पिछले पाप के उदय होनेसे प्रारब्धवशात् कोई कर्म जाने वा विनाजाने बुरा बन जावे ऐसे मुमुक्षु से कि जिसका लक्षण ऊपर कहा तो उस कर्म का दोष कभी उस महात्मा को नहीं लगेगा जो उसको दोष समझेंगे वह फल उनको होगा वेद शास्त्र ईश्वर का इस बात में सम्मत है ॥ १७ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

ज्ञानंज्ञेयंपरिज्ञातात्रिविधाकर्मचोदना ॥ करणंकर्मकर्तेतित्रिविधःकर्मसंग्रहः ॥ १८ ॥

परिज्ञाता १ ज्ञानम् २ ज्ञेयम् ३ त्रिविधा ४ कर्मचोदना ५ कर्त्ता ६ कर्म ७ करणम् ८ इति ९ त्रिविधः १० कर्मसंग्रहः ११ ॥ १८ ॥ उ० + अब अन्य प्रकार से आत्माको अकर्त्ता सिद्ध करते हैं + अ० + ज्ञाता १ ज्ञान २ ज्ञेय ३ तीन प्रकार ४ कर्म की प्रेरणा है ५ और + कर्त्ता ६ कर्म ७ करण ८ यह ९ तीन प्रकार १० कर्मसंग्रह ११ है + टी० + जाननेवाला १ जिस करके जाना जावे २ ज्ञ[illegible] के योग्य ३ कर्मकी प्रवृत्ति में हेतु ४ क्रियाका आश्रय ११ तात्पर्य चिदाभास और अन्तःकरणकी वृत्ति और श्रोत्रादि इन्द्रिय यही कर्म की प्रवृत्ति में हेतु हैं आत्मा कूटस्थ निर्विकार है बन्ध मोक्ष चिदाभास वही है आत्मा बन्ध मोक्ष शब्दों का विषय भी नहीं ॥ १८ ॥

ज्ञानंकर्मचकर्त्ताचत्रिधैवगुणभेदतः ॥ प्रोच्यतेगुणसंख्यानेयथावच्छृणुतान्यपि ॥ १९ ॥

कर्ता १ च २ कर्म ३ च ४ ज्ञानम् ५ गुणभेदतः ६ गुणसंख्याने ७ त्रिधा ८ एव ९ प्रोच्यते १० तानि ११ अपि १२ यथावत् १३ शृणु १४ ॥ १९ ॥ उ० + कर्ता कर्मादि सब त्रिगुणात्मक हैं आत्मा त्रिगुणरहित है + कर्ता १ और २ कर्म ३ और ४ कर्म ज्ञान ५ गुणों के भेद से ६ सांख्यशास्त्र में ७ तीन प्रकार के ८ । ९ कहेहैं १० तिनको ११ । १२ यथार्थ १३ सुन १४ तात्पर्य कर्तादिमें तीन तीन भेद हैं यह सत्त्व रज तम और यह तीनों गुण अज्ञान करके कल्पित हैं अज्ञानके दूर होने से परमानन्दस्वरूप नित्यप्राप्त आत्माकी प्राप्ति होतीहै तमोगुणको रजोगुणसे दूरकरे रजोगुण को सत्त्वगुण से सत्त्वगुण को ब्रह्मविद्या से दूर करे इसी वास्ते यह तीन प्रकार का भेद दिखाकर आत्मा का इन तीनों गुणों से पृथक् दिखलाया है ॥ १९ ॥

सर्वभूतेषुयेनैकंभावमव्ययमीक्षते ॥ अविभक्तंविभक्तेषुतज्ज्ञानंविद्धिसात्त्विकम् ॥ २० ॥

विभक्तेषु १ सर्वभूतेषु २ येन ३ अविभक्तम् ४ एकम् ५ भावम् ६ अव्ययम् ७ ईक्षते ८ तत् ९ ज्ञानम् १० सात्त्विकम् ११ विद्धि १२ ॥ २० ॥ उ० + सात्त्विकी ज्ञान

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

गह है +अ०+पृथक् पृथक् सब भूतोंमें १।२ जिस ज्ञान करके ३ अनस्यूत ४ एक ५ भाव ६ निर्विकार ७ परमात्मा को +देखता है ८ सो ९ ज्ञान १० सतोगुणी ११ जान तू १२ तात्पर्य जैसे वस्त्र में सूत अनस्यूत हैं इसी प्रकार ब्रह्मा जीसे ले चींटी तक सब भूतों में सच्चिदानन्दस्वरूप शुद्ध निर्विकार परमात्मा एकही है देहोंकी उपाधिसे पृथक् पृथक् देवता मनुष्य पश्वादि कहा जाताहै इसी प्रकार जो आत्मा को जानते हैं जिस ज्ञान करके सो ज्ञान सतोगुणी है अद्वैतवादियों का यही ज्ञान है ॥ २० ॥

पृथक्त्वेनतुयज्ज्ञानंनानाभावान्पृथग्विधान् ॥
वेत्तिसर्वेषुभूतेषुतज्ज्ञानंविद्धिराजसम् ॥ २१ ॥

पृथक्त्वेन १ तु २ यत् ३ ज्ञानम् ४ तत् ५ ज्ञानम् ६ राजसम् ७ विद्धि ८ सर्वेषु ९ भूतेषु १० नाना ११ भावान् १२ पृथक् १३ विधान् १४ वेत्ति १५ ॥ २१ ॥ +उ०+ भेदवादियों के रजोगुणी ज्ञान को कहते हैं +अ०+ पृथग्भाव करके १।२ जो ३ ज्ञान ४ तिस ज्ञान को ५।६ रजोगुणी ७ तू जान ८ इसी बातको फिर स्पष्ट करके कहते हैं +सब भूतों में ९।१० नाना प्रकार के ११ पदार्थों को १२ पृथक् १३ प्रकार १४ जो जानता है १५ जिस ज्ञान करके तिस ज्ञानको रजोगुणी जान तू तात्पर्य निरवयव पदार्थ सच्चिदानन्द स्वरूप परमात्मा से आत्मा को पृथग्भाव करके जानना अर्थात् परमात्मा चिद्घन है और आत्मा चित्कण है इस प्रकार भेदवादी आत्मदृष्टि करके भी अर्थात् निरवयव आत्मामें भी भेदको सिद्धान्त जानते हैं अविद्या की उपाधि से देहदृष्टि करके भ्रान्तिजन्य भेद व्यवहार में प्रतीत होता है कि जिसको रजोगुणी भेदवादी सिद्धान्त समझते हैं इसी हेतुसे यह ज्ञान रजोगुणी भेदवादियोंका है ॥ २१ ॥

यत्तुकृत्स्नवदेकस्मिन्कार्य्येसक्तमहैतुकम् ॥ अ
तत्त्वार्थवदल्पंचतत्तामसमुदाहृतम् ॥ २२ ॥

यत् १ तु २ एकस्मिन् ३ कार्ये ४ कृत्स्नवत् ५ सक्तम् ६ अहैतुकम् ७ च ८ अतत्त्वार्थवत् ९ अल्पम् १० तत् ११ तामसम् १२ उदाहृतम् १३ ॥ २२ ॥ उ०+ तमोगुणी ज्ञान को कहते हैं +अ०+जो १।२ ज्ञान एक ३ कार्य में ४ सम्पूर्णवत् ५ सक्त ६ है अर्थात् एक कार्य में सम्पूर्णवत् जो ज्ञान है जैसे आपको ब्राह्मण संन्यासी देहदृष्टि से इतनेही स्थूल शरीर को जानना और पाषाण की मूर्त्ति

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

ही को और श्रीरामचन्द्रादि सावयव मूर्ति कोही परमार्थ में परमात्मा जानना अर्थात् इनसे परे कुछ अन्य निरवयव सच्चिदानन्द शुद्धतत्त्व नहीं है मूर्तिमान्ही परमात्माहै यह शरीरही ब्राह्मण संन्यासी है यह मूर्ति पाषाण की परमेश्वर है यह ज्ञान + हेतुरहित ७ अर्थात् ऐसे ज्ञानमें कोई युक्ति नहीं + और ८ परमार्थ सिद्धान्त नहीं है ९ परमतत्त्व सिद्धान्तकी प्राप्तिका एक साधन है फिर कैसा है + तुच्छ है १० क्योंकि इसका फल अल्पहै वैराग्यादि साधनोंकी अपेक्षा करके इस ज्ञानसे चिरकाल में अन्तःकरण शुद्ध होता है इस प्रकार का जो ज्ञान + सो ११ तमोगुणी १२ कहा है १३ तात्पर्य यह है कि ज्ञानी भी तीनप्रकारके हैं विना सात्त्विकज्ञान हुये रजोगुणी तमोगुणी ज्ञानमें अटक जाना इसी ज्ञान से मोक्ष समझ लेनी मूर्खताहै जो साधनको सिद्धान्त समझते हैं जिस समझ से वह तमोगुणी ज्ञान है ॥ २२ ॥

नियतंसंगरहितमरागद्वेषतःकृतम् ॥ अफलप्रेप्सुनाकर्मयत्तत्सात्त्विकमुच्यते ॥ २३ ॥

अफलप्रेप्सुना १ यत् २ नियतम् ३ कर्म ४ संगरहितम् ५ अरागद्वेषतः ६ कृतम् ७ तत् ८ सात्त्विकम् ९ उच्यते १० ॥ २३ ॥ + उ० + कर्म तीनप्रकार का है प्रथम सतोगुणी कहते हैं + अ० + नहीं फलकी चाहहै जिसको तिसने १ जो २ नित्य ३ कर्म ४ संगरहित ५ विना रागद्वेष के ६ किया ७ सो ८ सतोगुणी ९ कहा है १० तात्पर्य स्नान ध्यान पाठ पूजा तीर्थ साधुसेवादि कर्म करना शास्त्र की आज्ञा है कर्म में आसक्ति प्रीति करने से फलकी चाह करनेसे बन्धन होता है इस वास्ते कर्म में प्रीति द्वेष आसक्ति त्याग करनी कि जो वह कर्म अन्तःकरण को शुद्ध करके परमानन्दस्वरूप आत्मा को प्राप्त करे आसक्ति प्रीति उस पदार्थ में चाहिये कि जो नित्य एकरस हो और ऐसेही फल चाहना करनी फल प्राप्त होनेके पीछे भी साधनों से राग द्वेष न चाहिये ॥ २३ ॥

यत्तुकामेप्सुनाकर्मसाहंकारेणवापुनः ॥ क्रियते बहुलायासंतद्राजसमुदाहृतम् ॥ २४ ॥

कामेप्सुना १ यत् २ कर्म ३ साहंकारेण ४ क्रियते ५ वा ६ तु ७ पुनः ८ बहुलायासम् ९ तत् १० राजसम् ११ उदाहृतम् १२ ॥ २४ ॥ उ० + रजोगुणी कर्म कहते हैं + फलकी कामना वालेने १ जो २ कर्म ३ अहंकारके सहित ४ किया है ५ और ६ । ७ । ८ बहुत श्रम हो जिसमें ९ सो १० कर्म + रजो-

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

गुणी ११ कहा है १२ तात्पर्य पुत्र स्त्री धन स्वर्गादि भोगों के निमित्त वा यह अहंकार करके कि हमारी बराबर अग्निहोत्री कौन है जितने हमने तीर्थ किये किसी से होसक्ते हैं ब्रह्मज्ञान से क्या होता है जो है सो कर्म ही है अब हम चारों धाम करचुके कृतकृत्य हैं और कर्म करनेमें इतना श्रम करना कि विचार किञ्चित् न होसके जैसे कि तीर्थयात्रा में चार सौ कोस चलना चाहिये प्रातः काल से सायंकाल तक ब्राह्मी मुहूर्त्त और प्रदोषकाल में भी रास्ता नापना इस प्रकारके कर्म सब रजोगुणी हैं ॥ २४ ॥

अनुबन्धंक्षयंहिंसामनवेक्ष्यचपौरुषम् ॥ मोहादारभ्यतेकर्मतत्तामसमुदाहृतम् ॥ २५ ॥

अनुबन्धम् १ क्षयम् २ हिंसाम् ३ च ४ पौरुषम् ५ अनवेक्ष्य ६ मोहात् ७ कर्म ८ आरभ्यते९तत् १० तामसम् ११ उदाहृतम् १२ ॥२५॥ + उ० + तमोगुणी कर्म कहते हैं + अ० + पश्चात्भावि १ द्रव्यादि का खर्च २ हिंसा ३ और ४ पुरुषार्थ ५ इन चारोंको + नहीं विचारकर ६ मोहसे ७ जो + कर्म ८ आरम्भ किया ९ सो १० तमोगुणी ११ कहा है १२ तात्पर्य औरोंकी देखा देखी या सुनकर विना विचारके अर्थात् जो मैं यह कर्म करूंगा तो मुझको पीछे इसका फल क्या होगा कितना इस कर्ममें द्रव्य व्यय होगा मुझको या औरोंको कितना दुःख होगा यह काम मुझसे होसकेगा वा नहीं यह न विचार कर मूर्खता से कर्मका प्रारम्भ करदेना तमोगुणी कहा है क्योंकि विना विचारके शब्द बोलने में भी किसी जगह न्योता वैर होजाता है इसी प्रकार विना विचार तीर्थ व्रत मन्दिरादि के आरम्भ करदेने में सिवाय दुःख और पापके कुछ नहीं मिलता खोटेकर्मों का तो कुछ प्रसंग नहीं वे तो विचारपूर्वक और विना विचार किये हुये अनर्थ के मूलहैं ॥ २५ ॥

मुक्तसंगोऽनहंवादीधृत्युत्साहसमन्वितः ॥ सिद्ध्यसिद्ध्योर्निर्विकारःकर्त्तासात्त्विकउच्यते ॥ २६ ॥

मुक्तसंगः १ अनहंवादी २ धृत्युत्साहसमन्वितः ३ सिद्ध्यसिद्ध्योः ४ निर्विकारः ५ कर्त्ता ६ सात्त्विकः ७ उच्यते ८ ॥ २६ ॥ उ० + कर्ता तीन प्रकार का है प्रथम सतोगुणी कर्त्ता कहते हैं + अ० + संगरहित १ अहंकाररहित २ धैर्य्य उत्साह करके युक्त ३ सिद्धिअसिद्धि में ४ निर्विकार ५ ऐसा + कर्त्ता ६

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

सतोगुणी ७ कहा है ८ तात्पर्य कर्मों में आसक्त न होना चाहिये क्योंकि अन्तः करण शुद्धि के पीछे कर्मों का त्यागना होगा जिसपदार्थ से एक दिन जुदाहोना है उसमें प्राप्तिसमय भी प्रीति न रखनी अथवा संगरहित का अर्थ यह समझना चाहिये कि मैं असंग हूं अहंकार न करना कि मैं ऐसा वेदोक्त कर्म करता हूं कर्म करने में धैर्य उत्साह रखना जो धैर्य उत्साह न होगा तो कभी कर्म में प्रवृत्ति स्थिति न होगी उत्साह से कर्म में प्रवृत्ति होती है धैर्य से कर्म में स्थिति रहती है और कर्म की सिद्धि असिद्धि में निर्विकार रहना दैवयोगसे जो कर्म प्रत्यक्ष फल देवे कि जैसा फल शास्त्र में लिखाहै या वैसा फल न हो तो दोनों में निर्विकार रहना जो पदार्थ नाशवान् है वह हुआ न हुआ सम है प्रत्युत होकर नाश होने से न होना श्रेष्ठ है परमफल अन्तःकरण शुद्ध द्वारा परमानन्दस्वरूप आत्मा पर दृष्टि चाहिये सतोगुणी कर्म जो सतोगुणीकर्त्ता पुरुष करेगा तो बेसन्देह उसका अन्तःकरण शुद्ध होगा ॥ २६ ॥

रागीकर्मफलप्रेप्सुर्लुब्धोहिंसात्मकोऽशुचिः ॥ हर्षशोकान्वितःकर्त्ताराजसःपरिकीर्त्तितः ॥ २७ ॥

रागी १ कर्मफलप्रेप्सुः २ लुब्धः ३ हिंसात्मकः ४ अशुचिः ५ हर्षशोकान्वितः ६ कर्त्ता ७ राजसः ८ परिकीर्त्तितः ९ ॥ २७ ॥ उ० + रजोगुणी कर्त्ता को कहते हैं + अ० + प्रीतिवाला १ अर्थात् पुत्रादि की प्रीत्यर्थ कर्म करना + कर्मों के फल के चाहवाला २ लोभी पराये धनकी इच्छा वाला ३ दूसरे को दुःख देनेवाला ४ अपवित्र ५ हर्ष शोक करके युक्त ६ ऐसा + कर्त्ता ७ रजोगुणी ८ कहाहै ९ तात्पर्य जो पुरुष पुत्र मित्रादिकनके प्रसन्नार्थ अर्थात् यह जो मैं कर्म करता हूं इस कर्मके देखने सुनने से मेरे मित्रादि आनन्द होंगे इस दृष्टिसे कर्म करना कर्मों में राग रखना फल को चाहना पराई स्त्री धनादिकी इच्छा रखनी अर्थात् हमको अच्छा कर्म करताहुआ देख सुन कर राजा पूजा दान देंगे कर्म करनेके समय दूसरेके दुःख पर दृष्टि न देनी भीतर बाहर से अपवित्र रहना कर्म की सिद्धि में हर्ष करना असिद्धिमें शोक करना इस प्रकार का कर्त्ता रजोगुणी है जो इस प्रकार वेदोक्त कर्म भी करताहै वह कर्म मोक्ष का हेतु न होगा ॥ २७ ॥

अयुक्तःप्राकृतःस्तब्धःशठोनैष्कृतिकोऽलसः ॥ विषादीदीर्घसूत्रीचकर्त्तातामसउच्यते ॥ २८ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

अयुक्तः १ प्राकृतः २ स्तब्धः ३ शठः ४ नैष्कृतिकः ५ अलसः ६ विषादी ७ दीर्घसूत्री ८ च ९ कर्ता १० तामसः ११ उच्यते १२ ॥ २८ ॥ उ० + तमोगुणी कर्ता को कहते हैं + अ० + कर्म करने के समय कर्म में चित्त न रखना १ विवेकरहित २ अर्थात् यह न समझना कि कर्म करनेका यथार्थ फल क्या है + अज्ञ ३ मायावी ४ अर्थात् कर्म तो वेदोक्त करना और मनमें यह रखना कि दूसरे को धोखा देकर उसका धन छीनलेना चाहिये इस बातका छिपानेवाला + दूसरे की आजीविका नाश करनेवाला अपमान करनेवाला ५ आलसी ६ सदा रोती सूरत अप्रसन्न रहना ७ जो काम घड़ीके करनेका है दोचार पहर लगादे तात्पर्य तनक से काम का बहुत विस्तार करदे ८ । ९ ऐसा + कर्ता तमोगुणी ११ कहाहै १२ + टी० + अपने को कर्मनिष्ठ समझ कर ज्ञाननिष्ठ भगवद्भक्तों को शूद्रादि समझ कर उनको नमस्कार न करना ॥ २८ ॥

बुद्धेर्भेदंधृतेश्चैवगुणतस्त्रिविधंशृणु ॥ प्रोच्यमानमशेषेणपृथक्त्वेनधनंजय ॥ २९ ॥

धनंजय १ बुद्धेः २ धृतेः ३ च ४ भेदम् ५ गुणतः ६ त्रिविधम् ७ पृथक्त्वेन ८ प्रोच्यमानम् ९ अशेषेण १० शृणु ११ एव १२ ॥ २९ ॥ अ० + हे अर्जुन ! १ बुद्धि का २ और धीरज का ३ । ४ भेद ५ गुणों से ६ तीन प्रकार का ७ जुदा जुदा ८ कहना है ९ जो अगले छः श्लोकोंमें उसको + समस्त १० सुन ११ निश्चय १२ तात्पर्य संसार में रजोगुणी तमोगुणी बुद्धिवाले भी बुद्धिमान् कहे जातेहैं सो वह समझ उनकी मोक्ष के लिये नहीं परमार्थ की बात तमोगुणी रजोगुणी बुद्धिवाले नहीं जानते उनको बुद्धिमान् समझकर परमार्थ में उनकी समझके ऊपर अनुष्ठान करना न चाहिये इसीवास्ते बुद्धि का भेद श्रीभगवान् दिखाते हैं ॥ २९ ॥

प्रवृत्तिंचनिवृत्तिंचकार्याकार्येभयाऽभये ॥ बन्धंमोक्षंचयावेत्तिबुद्धिःसापार्थसात्त्विकी ॥ ३० ॥

पार्थ १ या २ बुद्धिः ३ प्रवृत्तिम् ४ च ५ निवृत्तिम् ६ च ७ कार्याकार्ये ८ भयाभये ९ बन्धम् १० च ११ मोक्षम् १२ वेत्ति १३ सा १४ सात्त्विकी १५ ॥ ३० ॥ उ० + बुद्धि तीन प्रकार की प्रथम सतोगुणी बुद्धि को कहते हैं + अ० + हे अर्जुन ! १ जो २ बुद्धि ३ प्रवृत्ति ४ और ५ निवृत्तिको ६ और ७ कार्य अकार्य ८ भय अभय ९ बन्ध १० और ११ मोक्ष को १२ जानती है १३ सो १४

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

बुद्धिः + सतोगुणी १५ तात्पर्य प्रवृत्ति बन्ध का हेतु है निवृत्ति मोक्ष में हेतु है इस देशकाल में ऐसे पुरुष का यही करना योग्य है यह अयोग्य है खोटे काम करने में भय होगा भगवद्भजन विवेक वैराग्यादि शुभकर्मों में भय नहीं इसप्रकार कर्म करनेमें बन्ध होता है इस प्रकार कर्मोंके करनेसे मोक्ष होताहै ऐसी जिसकी बुद्धि है वह सतोगुणी है बहुत कर्म ऐसे हैं वे किसी के लिये अच्छे हैं किसी के लिये बुरे हैं एककाम किसी देशकाल में कोई करसक्ता है किसी देशकालमें वह काम नहीं होसक्ता किसी को एक कर्म्म करने का अधिकार है किसीको उसी के त्यागनेका अधिकारहै ऐसी बहुत बातें हैं निवृत्ति सतोगुणी महापुरुष जानते हैं केवल वेद शास्त्र के पढ़ने सुनने से तात्पर्यार्थ नहीं जानाजाता है एक बात समझाने की नाना प्रक्रिया रीति हैं महात्मा अनेक दृष्टान्त युक्तियों से समझा सके हैं यदि वे प्रसन्न होजावें ॥ ३० ॥

यया धर्ममधर्मं च कार्यं चाकार्यमेव च ॥ अयथावत्प्रजानाति बुद्धिः सा पार्थ राजसी ॥ ३१ ॥

पदार्थ १ यया २ धर्मम् ३ अधर्मम् ४ च ५ कार्यम् ६ च ७ अकार्यम् ८ एव ९ च १० अयथावत् ११ प्रजानाति १२ सा १३ बुद्धिः १४ राजसी १५ ॥ ३१ ॥ उ० + रजोगुणी बुद्धि को कहते हैं + अ० + हे अर्जुन! १ जिस बुद्धि करके २ धर्म ३ अधर्म को ४ । ५ कार्य और अकार्य को ६ । ७ । ८ । ९ । १० संदेह सहित ११ जानता है १२ अर्थात् यथावत् जैसे का तैसा नहीं जानता है + सो १३ बुद्धि १४ रजोगुणी १५ तात्पर्य धर्माधर्म कार्याकार्य में जिसको संदेह बनाही रहता है उसकी बुद्धि रजोगुणी है यह जीव सच्चिदानन्द स्वरूप पूर्णब्रह्म है वा नहीं वेदशास्त्र में अद्वैत सिद्धान्त सत्य है वा नहीं कर्मों के संन्याससे मोक्षहोताहै वा नहीं निष्काम कर्म करने से अन्तःकरण शुद्धहोताहै वा नहीं वेद शास्त्र प्रमाण है वा नहीं इसप्रकार सन्देह रहना रजोगुणी बुद्धिका दोषहै ॥ ३१ ॥

अधर्मं धर्ममिति या मन्यते तमसावृता ॥ सर्वार्थान्विपरीतांश्च बुद्धिः सा पार्थ तामसी ॥ ३२ ॥

सर्वार्थान् १ या २ बुद्धिः ३ तमसावृता ४ अधर्मम् ५ धर्मम् ६ इति ७ मन्यते ८ च ९ सर्वार्थान् १० विपरीतान् ११ सा १२ तामसी १३ ॥ ३२ ॥ + उ० + तमोगुणी बुद्धि कहते हैं + अ० + हे अर्जुन! १ जो २ बुद्धि ३ तमोगुण करके

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

ढकीहुई ४ ऐसी बुद्धि करके अधर्मकोही धर्म ५।६।७ मानता है ८ और ९ सब अर्थों का १० विपरीत ११ जिस बुद्धि करके समझता है + सो १२ तमोगुणी १३ बुद्धि है तात्पर्य जो पुरुष सनातन मार्ग और स्मार्त्तको छोड़ इस कलियुग में जीवनने जो सम्प्रदाय और पन्थ अपने नामसे चलाये हैं उसको धर्म समझकर उस रस्तेपर चलते हैं विचार करना चाहिये कि श्रौत स्मार्त्त मार्ग में क्या दोष था जो उसको त्यागकर कल्पित मार्गको धर्म समझा यही तमोगुणी बुद्धिका दोषहै और श्रुति स्मृतियों का अर्थ अपने मतके अनुसार करना यही विपरीत अर्थ है तात्पर्य यह है कि श्रुति स्मृति प्रतिपाद्य मार्ग सनातन धर्म है और कलियुगमें जो मत चले हैं वे श्रुति स्मृति से विरुद्धहैं क्योंकि जो वे श्रुति स्मृति के अनुसार होते तो उस सम्प्रदाय और पंथका जुदा एक नाम क्यों बनाया स्पष्ट प्रतीत होताहै कि कुछ श्रुति स्मृतियों का आशय लिया कुछ श्रुति स्मृतियोंका अर्थ उलटा किया कुछ अपनी बुद्धिसे लिख दिया और कहदिया कि यह ग्रन्थ श्रुति स्मृतियों के अनुसार है यही दोष तमोगुणी बुद्धिका है॥ ३२॥

धृत्याययाधारयतेमनःप्राणेंद्रियक्रियाः॥ योगेनाव्यभिचारिण्याधृतिःसापार्थसात्त्विकी॥ ३३॥

पदार्थ १ यया २ धृत्या ३ मनःप्राणेन्द्रियक्रियाः ४ धारयते ५ सा ६ धृतिः ७ सात्त्विकी ८ योगेन ९ अव्यभिचारिण्या १० ॥ ३३॥ + उ० + अन्तःकरण की वृत्ति सत्त्वादि भेदसे तीन तीन प्रकार की हैं उनसब वृत्तियों में से एक वृत्ति धृतिको सत्त्वादि भेदसे तीन प्रकारकी दिखाते हैं प्रथम सत्त्वगुणी धीरजको कहते हैं + अ० + हे अर्जुन! १ जिस धृतिकरके २। ३ मन प्राण इन्द्रियोंकी क्रिया को ४ धारण करताहै ५ सो ६ धृति ७ सतोगुणी ८ कैसी वह धृति + कर्मयोग करके ९ अव्यभिचारिणी १० तात्पर्य स्वभावके वश से अन्तःकरणादि अपने धर्ममें प्रवृत्त होते हैं धीरजसे सबको वशकरना चाहिये क्षुत्पिपासादि समय व्याकुल न होसके न कि कर्म योग में अभी कचाई है अभी अन्तःकरण की वृत्ति सतोगुणी नहींहुई सतोगुण प्रधान वृत्तिकी परीक्षाके लिये यह धृतिभेद श्रीभगवान् ने दिखाया है जबतक इन्द्रिय प्राण अन्तःकरणका निरोध न होसके तब तक रज तम प्रधानवृत्ति को जानना और उसकी निवृत्ति के लिये कर्म्मयोग का अनुष्ठान करना चाहिये केवल जानलेने से कि धृति तीन प्रकारकी है मुक्ति न होगी॥ ३३॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

यया तु धर्मकामार्थान्धृत्या धारयतेऽर्जुन ॥ प्रसंगेन फलाकांक्षी धृतिः सा पार्थ राजसी ॥ ३४ ॥

अर्ज्जुन १ यया २ धृत्या ३ धर्मकामार्थान् ४ धारयते ५ तु ६ पार्थ ७ प्रसंगेन ८ फलाकांक्षी ९ सा १० धृतिः ११ राजसी १२ ॥ ३४ ॥ उ० + रजोगुणी धृतिको कहते हैं + हे अर्ज्जुन! १ जिस धृति करके २। ३ धर्म-काम अर्थ को ४ धारण करता है ५ अर्थात् धर्म अर्थ कामही में तत्पर रहताहै मोक्षमें वृत्ति नहीं करता + और ६ हे अर्ज्जुन! ७ धर्मादिकें प्रसंग करके धृति + चाहवाली है ९ सो १० धृति ११ रजोगुणी १२ तात्पर्य शास्त्रश्रवणसे तो यह निश्चयकिया कि निष्काम कर्म करनाचाहिये फिर उस कर्मके प्रसंग से पुत्र धन स्वर्ग वैकुंठादि की इच्छा करनेलगे तो जानना चाहिये कि अन्तःकरण की वृत्ति रजप्रधान है जबतक कर्मयोगका फल स्वर्गादि समझता रहेगा परम्परा करके आत्मा को फल न समझेगा तब तक वृत्ति को रजप्रधान जानना चाहिये ॥ ३४ ॥

यया स्वप्नं भयं शोकं विषादं मदमेव च ॥ न विमुंचति दुर्मेधा धृतिः सा पार्थ तामसी ॥ ३५ ॥

पार्थ १ दुर्मेधा २ यया ३ स्वप्नम् ४ च ५ भयम् ६ शोकम् ७ विषादम् ८ मदम् ९ एव १० न ११ विमुञ्चति १२ सा १३ धृतिः १४ तामसी १५ ॥ ३५ ॥ उ० + तमोगुणी धृतिको कहते हैं + अ० + हे अर्ज्जुन! १ तमोगुणी बुद्धिवाला २ जिस धृतिकरके ३ स्वप्न ४ और ५ भय ६ शोक ७ विषाद ८ मदको ९। १० न ११ त्याग सक्ता है १२ सो १३ धृति १४ तमोगुणी १५ तात्पर्य जागने के समय ब्राह्मी मुहूर्त्तादि में भी न जागे सोताही रहे और कर्म करने के समय भी भय शोक विषाद मद बनाही रहे तो जानना चाहिये कि अन्तःकरण की वृत्ति तम प्रधान है यावत् वृत्ति तमोगुणी रहै तावत् स्नान ध्यान साधुसेवादि कर्म्मों को अवश्य करै ॥ ३५ ॥

सुखं त्विदानीं त्रिविधं शृणु मे भरतर्षभ ॥ अभ्यासाद्रमते यत्र दुःखान्तं च निगच्छति ॥ ३६ ॥

भरतर्षभ १ इदानीम् २ तु ३ सुखम् ४ त्रिविधम् ५ मे ६ शृणु ७ यत्र ८ अभ्यासात् ९ रमते १० दुःखांतम् ११ च १२ निगच्छति १३ ॥ ३६ ॥ उ + कर्त्ता

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

कर्म करणादि का भेद सत्त्वादि भेद से तीन प्रकार का कहा अब उन सबका फल तीनप्रकार कहते हैं + चतुर्दश अध्यायमें जो सत्त्व रज तमका भेद कहा तो वहां यह दिखाया कि ये तीनों गुण, आत्मा को बन्धन करते हैं और सत्रहवें अध्यायमें जो भेद कहा तो वहां यह दिखाया कि तप यज्ञादि रजोगुणी तामसी न करने सात्त्विकी करने क्योंकि सतोगुणी पुरुष का ज्ञान में अधिकारहै और इस जगहं अठारहवें अध्यायमें जो यह भेद कार्यकारणका सत्त्वादि भेद करके कहा और सबका फल सुख तीनप्रकारका कहतेहैं यहां यह दिखाते हैं कि कर्ता कर्म करणादि फलसहित सब त्रिगुणात्मक हैं आत्माका किसी से कुछ किसीप्रकार का वास्तव सम्बन्ध नहीं आविद्यक सम्बन्धहै इस श्लोक के आधे में प्रतिज्ञा है और आधे में सतोगुणी सुख का लक्षणहै + अ० + हे अर्जुन! १ अब २ तो ३ सुख को ४ तीनप्रकारका ५ मुझ से ६ सुन ७ प्रथम सतोगुणी सुखको डेढ़ श्लोक में कहताहूं + जिस सात्त्विकी सुख में ८ वृत्तिको + अभ्यास से ९ अर्थात् शनैः शनैः नित्य प्रतिदिन बढ़ाता हुआ + रमता है १० जो सो + दुःखों के अन्तको ११। १२ प्राप्त होताहै १३ अर्थात् उसको फिर दुःख नहीं होता दुःखके पार हो जाताहै सब शास्त्रों के पढ़ने सुननेका और कर्मों के अनुष्ठान करनेका यही फल है कि सतोगुणीवृत्ति प्रधानहोकर सदा सतोगुणी सुख बनारहे इसी सुखमें रमनेसे जल्दी अनिर्वाच्य अप्रमेय परात्पर परमानन्दस्वरूप आत्माकी प्राप्तिहोती है ३६॥

यत्तदग्रेविषमिवपरिणामेऽमृतोपमम् ॥ तत्सुखं सात्त्विकंप्रोक्तमात्मबुद्धिप्रसादजम् ॥ ३७ ॥

यत् १ अग्रे २ विषम् ३ इव ४ तत् ५ परिणामे ६ आत्मबुद्धिप्रसादजम् ७ अमृतोपमम् ८ तत् ९ सुखम् १० सात्त्विकम् ११ प्रोक्तम् १२॥३७॥ अ० + जो १ सुख + प्रथम प्रारम्भ समय २ विषवत् ३।४ प्रतीत होताहै + सो ५ पीछे ६ अपने अन्तःकरण के प्रसाद से ७ अमृतकी सदृश ८ है + सोई ९ सुख १० सतोगुणी ११ कहा है १२ तात्पर्य वैराग्य आत्मध्यान ज्ञान समाधि समय और शरीर इन्द्रिय अन्तःकरण प्राण के निरोधमें प्रथमदुःख प्रतीतहोताहै जब अन्तःकरण की वृत्ति रज तम कम होजाती है अर्थात् दया क्षमा कोमलता सत्य संतोष धीरज शम दम उपरति तितिक्षा श्रद्धा सावधानता मुक्तिकी इच्छा विवेक वैराग्यादि ये वृत्ति जब प्रधान होतीहैं उससमयका सुख अमृतके सदृश इसवास्ते कहा कि यह सुख वास्तव सच्चिदानन्दको दिखादेताहै बुद्धिकी प्रसन्नता इसीको कहते

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

है कि अन्तःकरणको रज तम दूरहोकर यहसुख प्रकटहोताहै इस सुखकी अवधि के सामने रजोगुणी तमोगुणी सुख जो आगे कहेंगे वह तुच्छहै और इस सुख की बड़ाई में शास्त्र और अनुभव दोनों प्रमाणहैं जीतेजी इस सुखकी अवधिका अनुभव करसक्ताहै आत्मनिष्ठ और योगी इस सुखकी अवधिको अनुभव करसक्ते हैं जीतेजी और रजोगुणी सुखकी अवधिमें शास्त्र पुराणादि प्रमाण हैं जीतेजी उस सुखकी अवधिका अनुभव प्रत्यक्ष नहीं होसक्ता ॥ ३७॥

विषयेन्द्रियसंयोगाद्यत्तदग्रेऽमृतोपमम् ॥ परिणामेविषमिवतत्सुखंराजसंस्मृतम् ॥ ३८ ॥

यत् १ विषयेन्द्रियसंयोगात् २ तत् ३ अग्रे ४ अमृतोपमम् ५ परिणामे ६ विषम् ७ इव ८ तत् ९ सुखम् १० राजसम् ११ स्मृतम् १२॥ ३८॥ उ० + रजोगुणी सुखको कहते हैं + अ० + जो १ सुख शब्दादि विषय और श्रोत्रादि इन्द्रियों के संबन्धसे २ अर्थात् सुनने देखने बोलने स्त्रीसंगादि में जो सुख होताहै + सो ३ प्रथम क्षण भोगसमय ४ अमृतकी बराबरहै ५ और + भोगके पश्चात् ६ विषकी बराबर ७ । ८ है जो सुख + सो ९ सुख १० रजोगुणी ११ कहाहै १२ तात्पर्य विषके खानेसे तो प्राणी एक बेरही मरताहै और शब्दादि विषयों के भोगनेसे बारंबार मरताहै अष्टावक्रजी महात्माने कहाहै कि हे प्यारे ! जो मुक्तहुआ चाहताहै तो विषयों को विषवत् त्याग + सावयव भगवत् मूर्त्ति और सावयव वैकुण्ठलोकादि की जो इच्छा रखते हैं वे इसी रजोगुणी सुखकी अवधिको चाहते हैं उसको सतोगुणीका दिव्य सुख समझना चाहिये क्योंकि वह सुख श्रवण दर्शनादि से होताहै तमोगुणी सुख और मलिन रजोगुणी सुख कि जो इसलोक में स्त्रीआदि के संबन्धसे होताहै इससे सावयव लोकजन्य सुख श्रेष्ठहै पुराणादि में इसहेतुसे माहात्म्य लिखाहै जो कोई शुद्ध सच्चिदानन्द निराकार ब्रह्मकी उपासना करनेको समर्थ नहीं हैं उनको चाहिये कि मूर्त्तिमान् राम कृष्णादि की उपासना कियाकरैं जो निष्काम करेंगे तो अन्तःकरण शुद्धि द्वारा मोक्षहोगा और जो मन्द सुगन्ध शीतलपवन खानेकी इच्छासे वा मणि माणिक्यादि सौंदर्यता देखने की इच्छा से सावयव भगवत् मूर्त्तिका ध्यान करते हैं तो जैसे इस लोकके भोगी वैसेही वे रहे ॥ ३८ ॥

यदग्रेचानुबन्धेचसुखंमोहनमात्मनः ॥ निद्रालस्यप्रमादोत्थंतत्तामसमुदाहृतम् ॥ ३९ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

यत् १ सुखम् २ निद्रालस्यप्रमादोत्थम् ३ च ४ अग्रे ५ च ६ अनुबन्धे ७ आत्मनः ८ मोहनम् ९ तत् १० तामसम् ११ उदाहृतम् १२ ॥ ३९ ॥ उ० + तमोगुणी सुखको कहते हैं + अ० + जो १ सुख २ निद्रा आलस्य प्रमाद से उत्पन्न होताहै ३ अर्थात् खेल मनोराज्य हिंसा लड़ाई विषादि क्रोधादि जानलेना + और ४ पहले ५ और ६ पीछे ७ आत्माको ८ मोहकरनेवाला ९ सो १० तमोगुणी ११ कहाहै १२ तात्पर्य निद्रा आलस्य मनोराज्य क्रोधादि समय न प्रथम सुख होताहै न पीछे जीवको सुखकी भ्रान्ति रहती है असंख्यात पशु जो आदमी की सूरतमें हैं वे इसी तमोगुणी सुखकी भ्रान्ति में मरजाते हैं कभी किसी काल में रजोगुणी सुखका अनुभव क्रियाहोगा और सतोगुणी सुखकी [illegible]थ भी ऐसे पुरुषों के पास नहीं आती जैसे रजोगुणी इस सुखको तुच्छ समझते हैं ऐसेही सतोगुणी पुरुष तमोगुणी रजोगुणी दोनों सुखों को तुच्छ समझता है और ब्रह्मज्ञानी शुद्धानन्दका जाननेवाला तीनों सुखोंको तुच्छ जानताहै तीनों गुण सबमें रहते हैं जिसके तमोगुण प्रधान रज सतोगुण कम उसको तमोगुणी कहते हैं रजोगुणी में दो भेद हैं जो इसी लोकके शब्दादि विषयों में तत्पर रहते हैं वे बुरे कहेजाते हैं और जो परलोक में रूप रसादि विषयों को भोगते हैं वा इस लोक से वेदोक्त भोग भोगते हैं वे अच्छे कहेजाते हैं सतोगुणी भी दो प्रकारके हैं एक ब्रह्मज्ञानरहित योगी और एक ज्ञानसहित योगी ये दोनों रजोगुणी श्रेष्ठहैं ब्रह्मज्ञानरहित योगीसे ब्रह्मवित् श्रेष्ठहै तमोगुणी सबसे निकृष्टहै ॥ ३९ ॥

नतदस्तिपृथिव्यांवादिविदेवेषुवापुनः ॥ सत्त्वंप्रकृतिजैर्मुक्तंयदेभिःस्यात्त्रिभिर्गुणैः ॥ ४० ॥

पृथिव्याम् १ वा २ दिवि ३ वा ४ देवेषु ५ पुनः ६ यत् ७ सत्त्वम् ८ एभिः ९ त्रिभिः १० गुणैः ११ प्रकृतिजैः १२ मुक्तम् १३ स्यात् १४ तत् १५ न १६ अस्ति १७ ॥ ४० ॥ + उ० + जो जो क्रिया कारक फल देखने सुनने में आताहै सबको त्रिगुणात्मक जानना योग्यहै + अ० + पृथिवी में १ वा २ स्वर्ग में ३ वा ४ देवतोंमें ५ । ६ जो ७ पदार्थ ८ इन तीन गुणों करके ९ । १० । ११ कि जो + मायासे उत्पन्न हुयेहैं १२ रहित १३ हो १४ सो १५ नहीं १६ है १७ तात्पर्य एक शुद्ध सच्चिदानन्दस्वरूप नित्यमुक्त आत्मा स्थूल सूक्ष्म कारण शरीरों से पृथक् तीनों अवस्थाका साक्षी त्रिगुणरहित है उसमें पृथक् सब पदार्थ इस लोक परलोक के जो जो देखने सुननेमें आते हैं मायामात्र हैं इसमायाने सबको भ्रान्त

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

कर रक्खाहै देवता सतोगुण में भ्रान्त मनुष्य रजोगुण में पशु तमोगुणमें भ्रान्त है जो मनुष्य सतोगुण में भ्रान्तहै वह पशुकी बराबर है ॥ ४० ॥

ब्राह्मणक्षत्रियविशांशूद्राणांचपरंतप ॥ कर्माणि प्रविभक्तानि स्वभावप्रभवैर्गुणैः ॥ ४१ ॥

परंतप १ ब्राह्मणक्षत्रियविशाम् २ च ३ शूद्राणाम् ४ कर्माणि ५ गुणैः ६ स्वभावप्रभवैः ७ प्रविभक्तानि ८ ॥ ४१ ॥ + उ० + यह गुणोंकी भ्रान्ति कि जो पीछे कहे बिना [illegible] बन्ध के नहीं दूरहोती और बिना अज्ञान दूरहुये परमानन्दस्वरूप आत्माका साक्षात्कार नहीं होता इसवास्ते अज्ञानकी निवृत्तिके लिये ब्राह्मणादि अपने अपने धर्म का अनुष्ठान करें कि जो धर्म ब्राह्मणादिका आगे कहना है + अ० + हे अर्जुन! १ ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्यों के २ और ३ शूद्रोंके ४ कर्म ५ प्रकृति से उत्पत्ति है जिनकी ६ गुणों करके ७ पृथक् पृथक् ८ हैं अज्ञानकी निवृत्तिके लिये उनका अनुष्ठान करना चाहिये इस वास्ते मैं कहता हूं तात्पर्य ब्राह्मणादि के कर्म गुणों के अनुसार पृथक् पृथक् हैं सोई दिखाते हैं सत्त्वगुण जिसमें प्रधान सो ब्राह्मण रजोगुण जिसमें प्रधान और सत्त्वगुण उसमें कम हो तम सत्त्वसे भी कमहो सो क्षत्रिय रजोगुण प्रधानहो जिसमें तमोगुण कमहो सत्त्व उसमें भी कमहो सो वैश्य तमोगुणप्रधान है जिसमें सो शूद्र स्पष्टार्थ होनेके लिये एक यंत्र लिखे देते हैं जिस गुण के नीचे तीनका अंक उसको प्रधान जानना जिस के नीचे दोका अंक उसको उस से कम जानना जिसके नीचे एक का अंक उसको उससे भी कम जानना जैसे क्षत्रिय वैश्य ये दोनों रजप्रधान हैं भेद इन दोनों में यहहै कि क्षत्रिय में सत्त्व सिवाय तम कमहै वैश्य में तम सिवाय सत्त्व कमहै परमार्थ में तो यही चार विभागहैं और लौकिक व्यवहार में अनेक जातिहैं उसमेंही ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्यभीहैं इसद्वीपमें हिन्दू लोगोंकी यह रीतिहैं कि ब्राह्मण को जातिकी अपेक्षा में बड़ा समझते हैं क्षत्रिय को उस से कम वैश्य को उससे कम और फिर अनेक जाति हैं शूद्र व्यवहार में किसीका नाम नहीं कोई कोई कायस्थों को शूद्र कहते हैं परन्तु समस्त ब्राह्मणादि आचार्य लोगोंका इसमें सम्मत नहीं सिवाय इसके व्यवहारमें सब लोग उनको कायस्थही कहते हैं और उनका व्यवहार चालचलन क्रिया धर्म

+	ब्राह्मण	+	३	सत्त्व	+	क्षत्रिय	+	३	सत्त्व	+	वैश्य	+	३	सत्त्व	+	शूद्र	+
			२	रज				२	रज				२	रज			
			१	तम				१	तम				१	तम			

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्यों से कम नहीं मद्य मांस खाने पीने से यह शंका नहीं हो सक्ती है कि कायस्थ शूद्र हैं क्योंकि ब्राह्मण क्षत्रिय बहुत खाते हैं और बहुत कायस्थ मद्य मांसको छूतेभी नहीं जैसे क्षत्रिय ब्राह्मण वैश्य श्रौत स्मार्त्त काम करते हैं वैसेही वे करते हैं और जो नहीं करते तो सब ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य भी नहीं करते यह कायस्थ शब्द संस्कृत है और जो इनकी जाति के भेद भटनागर माथुरादि हैं वेभी सब संस्कृत पद हैं इसी हेतु से अंत्यजभी नहीं होसक्ते लौकिक में बड़ाई द्रव्य ऐश्वर्य्य हुक्म सौन्दर्य्यता लौकिक विद्यादि करके होतीहै और परमार्थ में भगवद्भजनादि शुभकर्म करनेसे और ज्ञानविज्ञानसे बड़ाई है यह कोई नहीं कह सक्ता कि कायस्थ भगवद्भजन करनेसे मुक्त न हों तात्पर्य यह कि कायस्थ एक जाति है जैसे ब्राह्मण क्षत्री बनिये राजपूत थे जाति हैं व्यवहार में बहुत जाति हैं परमार्थ में चार ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र व्यवहार में राजपूत तगीदिको भी चारवर्ण में समझते हैं जाट गूजरादिको कोई क्षत्रिय कोई शूद्र कोई अंत्यज कहते हैं यवनादि को म्लेच्छ कहते हैं यह सब व्यवहार की बोलचाल है जैसे मुसल्मान वर्णाश्रमी को काफर कहतेहैं ऐसेही हिन्दू मुसल्मानों को म्लेच्छ कहते हैं परमार्थ दृष्टि में सब द्वीपों के निवासी गुणों की तारतम्यतासे ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्रहैं क्योंकि सब त्रिगुणात्मकहैं और सब मजा का स्वामी एकही है वह समझै यह बात कैसे समझ में आवे कि ऐसे स्वामी ने अन्यद्वीपनिवासियों के वास्ते परलोक का साधन न कहाहो आगे जो श्रीभगवान् ब्राह्मणादिका धर्म्म कहेंगे वह ऐसा साधारण है कि अबतक उस धर्म्मका किसी एकही जाति में प्रचार नहीं शबदमादि मुसल्मान अँगरेजोंमें विशेष देखने में आते हैं शम दमादि धारण करनेसे यह लोग पापके भागी न होंगे इसीप्रकार खेती बनज शूरतादिका यह नियम नहीं कि शूरतादि धर्म क्षत्रियही में हों अन्य में न हों प्रत्युत जो व्यवहारमें क्षत्रिय कहे जाते हैं उनमें शूरतादि नहीं क्योंकि उनका राज्य बहुत दिनों से जातारहा ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र परमार्थदृष्टि में परलोक का साधन करनेके लिये वे हैं कि जो पीछे यंत्र में लिखे हैं व्यवहार में वे कोई जातिहों व्यवहार में जो ब्राह्मणादि कहजाते हैं इनकी व्यवस्था यहहै कि जिस काल में समस्त मनुष्यों के चार विभाग किये गये थे तो वह विभाग कोई दिन ऐसा चला कि ब्राह्मण का पुत्र सत्त्वप्रधान शूद्रका पुत्र तमप्रधान होता रहा वीर्य क्रियामें बिगाड़ न हुआ अब इस समय में न वीर्यका ठिकाना है न क्रियाका और न यह नियम रहा कि ब्राह्मण जाति में सत्त्वप्रधानही उ-

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

स्पन्नहो ब्राह्मण रजप्रधान देखने में आते हैं म्लेच्छ शूद्र सत्त्वप्रधान देखने में आते हैं जो तमप्रधान को वेद पढ़ाया जावे तो वह कब पढ़ सक्ताहै और सत्त्व-प्रधान से टहल कराई जावे तो वह कब करसक्ता है तात्पर्य्य व्यवहार में तो यही समझना कि जैसा प्रचारहै अर्थात् ब्राह्मण कैसाही कुपात्रहो उसीके जिमाने से लौकिक दृष्टि में सूतक पाप दूर होता है परमार्थ में यह समझना कि जिसमें शमदमादि होंगे मुक्तिका भागी वह होगा मुमुक्षु का कल्याण भी उसी से होगा तदुक्तं महाभारते अर्थात् सोई महाभारत में कहाहै वाक्यवादकी कुछ अपेक्षा नहीं। श्लोक। नजातिःकारणंतात गुणाःकल्याणकारणम् ॥ वृत्तिस्थमपि चांडालं तं देवाब्राह्मणंविदुः + इस श्लोक का अर्थ यह है कि भीष्मजी राजा युधिष्ठिर से कहते हैं कि हे तात! मुक्तिमें जाति कारण नहीं शमदमादि गुण कारणहै जो शमादि गुण चांडाल में भी वर्तेंगे तो देवता उस चांडालको ब्राह्मण कहेंगे जो व्यवहारिक ब्राह्मण शमदमादि साधनों करके युक्त हो तो वह सबसे श्रेष्ठहै उसमें कोई शङ्का नहीं करसक्ता + अविद्योवासविद्योवा ब्राह्मणोमामकीतनुः ॥ अद्यापिश्रूयतेयोपा द्वारावत्यामहर्निशम् + इस श्लोक का स्पष्ट अर्थ है कि ब्रह्म का जाननेवाला विद्यावान् पढ़ा हुआ हो वा न पढ़ाहो ब्रह्मविद् ब्रह्मही है "ब्रह्मविद्ब्रह्मैव भवति" यह श्रुति है ब्राह्मण भगवत् स्वरूप होना तो बहुत कठिन है दशरुपये महीने की नौकरीभी उसको मिलनी कठिनहै सिवाय इसके ऐसेही वाक्यों में हठ करने से शास्त्र से बड़ा विरोध आता है मूर्खोंको मूर्ख ही पसन्द करता है इस देश में जो अन्यद्वीपनिवासियों का राज्य हुआ ब्राह्मणादि वर्ण उनके दास गुलाम बने उसमें कारण ऐसेही ऐसे मूर्ख हुये शास्त्रका पढ़ना सुनना छोड़ दिया मूर्खों के कहने पर चलने लगे जो पुरुष काम क्रोध लोभादि में फँसा हुआहै उसके कहने को सच्चा समझना कितनी बड़ी मूर्खता है यह कब समझ आवै है कि ऐसे आदमी धोखा न दें और जो पोथी बहुत दिनों से उनके ही पास रही हैं क्या आश्चर्य है कि उन पोथियों में कुछ का कुछ न बनादियाहो विशेष क्या लिखें इसीको विचारना चाहिये वारंवार ॥ ४१ ॥

शमोदमस्तपःशौचंक्षांतिरार्जवमेवच ॥ ज्ञानंविज्ञानमास्तिक्यंब्रह्मकर्मस्वभावजम् ॥ ४२ ॥

शमः १ दमः २ तपः ३ शौचम् ४ क्षान्तिः ५ आर्जवम् ६ एव ७ च ८ ज्ञानम् ९ विज्ञानम् १० आस्तिक्यम् ११ ब्रह्मकर्म १२ स्वभावजम् १३ ॥ ४२ ॥ + उ० +

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Coll...

ब्राह्मणों का कर्म कहते हैं जिसमें शमादि गुण होंगे सोई ब्राह्मण है दुनियां के व्यवहार में वह कोई जाति हो जो ब्राह्मण बना चाहे वह शमादि कर्मों का अनुष्ठान करे + अ० + अन्तःकरण का निरोध १ इन्द्रियोंका निरोध २ विचार करना वा व्रतादि करके शरीरका निरोध करना ३ बाहर भीतर पवित्र ४ क्षमा ५ कोमलता ६ और ७। ८ शास्त्राचार्य द्वारा ज्ञान ९ अनुभव १० विश्वास ११ वेदशास्त्राचार्यादि वाक्य में यह + ब्राह्मण का कर्म १२ स्वाभाविक है १३ अर्थात् पूर्व संस्कार से यह लक्षण ब्राह्मण में अपने आप बे यत्न होते हैं ब्राह्मण की निष्ठा सदा इन्हीं कर्मों में रहती है इस समय में वीर्य और क्रिया का तो ठिकाना नहीं और जो यह लक्षण भी न दीखेंगे तो कहो कैसे उसको ब्राह्मण जानकर उसके वाक्यपर निश्चय किया जावे शमादि कर्म ब्राह्मणों के साधारण हैं और प्रतिग्रह लेना सूतक पातक में जीमना रसोई करना विवाहादि में समधी के घर आना जाना इस प्रकार के कर्म असाधारण हैं इन कर्मोंमें अधिकार उन्हीं ब्राह्मणोंका है कि जो लौकिक व्यवहार में ब्राह्मण कहे जाते हैं सिवाय उनके अन्य जातिको शोभा नहीं देते ॥ ४२ ॥

शौर्य्यंतेजोधृतिर्दाक्ष्यंयुद्धेचाप्यपलायनम् ॥ दानमीश्वरभावश्चक्षात्रंकर्मस्वभावजम् ॥ ४३ ॥

शौर्य्यम् १ तेजः २ धृतिः ३ दाक्ष्यम् ४ युद्धे ५ च ६ अपि ७ अपलायनम् ८ दानम् ९ ईश्वरभावः १० च ११ क्षात्रम् १२ कर्म १३ स्वभावजम् १४ ॥ ४३ ॥ + उ० + क्षत्रियोंका स्वाभाविक कर्म कहते हैं + शूरता १ प्रागल्भ्यता २ धैर्य ३ चतुरता ४ युद्धमें ५। ६। ७ पीछे को भागना नहीं ८ देना सुपात्रों का ९ नियामकशक्ति १०। ११ क्षत्रियों का कर्म १२। १३ यह + स्वाभाविक है १४ विचार करो ये सब लक्षण आज कल अंगरेजों में वर्तमान हैं जैसे इन कर्मों में अधिकार उन को था कि जो व्यवहारमें क्षत्रिय जाति हैं उन्होंसे यह कर्म न होसके जिन्हों ने कर्म किये प्रत्यक्ष देख लो राज्यका भोग करते हैं इसीप्रकार शम दमादि साधनसंपन्न होगा सो वेसन्देह परमानन्द ब्रह्मसुखको भोगेगा जो कोई यह शङ्का करे कि ये म्लेच्छ हैं उनको राज्य का अधिकार नहीं मरकर सब नरकगामी होंगे आप्तकाम विद्वान् इस बात को कभी नहीं पसन्द करेंगे सत्त्वादिगुणों की तारतम्यता से सद्गति दुर्गति सब जीवन को होती है और इस लोक में सदा न पुण्यात्मा रहते हैं न पापात्मा अधिकार की व्यवस्था में यह भी सुनाजाता है

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

कि चिकित्सा वैद्यकविद्या के पढ़ने करने का अधिकार ब्राह्मण कोही है अब विचारो कि व्यवहार में हिकमत वैद्यक किनकी अच्छी है और ब्राह्मण जाति से अन्य जो वैद्यक करते हैं उससे रोगकी निवृत्ति होती है वा नहीं इसीप्रकार सब कर्मों की व्यवस्था है ॥ ४३ ॥

कृषिगोरक्ष्यवाणिज्यं वैश्यकर्मस्वभावजम् ॥ परिचर्यात्मकंकर्मशूद्रस्यापिस्वभावजम् ॥ ४४ ॥

कृषि–गोरक्ष्य–वाणिज्यम् १ वैश्यकर्म २ स्वभावजम् ३ परिचर्यात्मकम् ४ कर्म ५ शूद्रस्य ६ अपि ७ स्वभावजम् ८ ॥ ४४ ॥ + उ० + आधे श्लोक में वैश्यका कर्म अर्द्ध मंत्रमें शूद्रका कर्म कहते हैं + अ० + खेती, गौ की रक्षा, वनज करना १ वैश्यका कर्म २ स्वाभाविक ३ है और + टहल करनी ४ यह + कर्म ५ शूद्रका ६ । ७ स्वाभाविक ८ है तात्पर्य शूद्र वैश्य क्षत्रियों को चाहियें कि शम दमादि संपन्न ब्राह्मण की यथा अधिकार यथाशक्ति सेवाकरै तब सबके धर्म बनेरहेंगे ॥ ४४ ॥

स्वेस्वेकर्मण्यभिरतःसंसिद्धिंलभतेनरः ॥ स्वकर्मनिरतःसिद्धिंयथाविन्दतितच्छृणु ॥ ४५ ॥

स्वे १ स्वे २ कर्मणि ३ अभिरतः ४ नरः ५ संसिद्धिम् ६ लभते ७ स्वकर्मनिरतः ८ सिद्धिम् ९ यथा १० विन्दति ११ तत् १२ शृणु १३ ॥ ४५ ॥ + उ० + अपने अपने कर्मोंका अनुष्ठान करते हैं उसका फल कहते हैं + अ० + अपने १ अपने २ कर्म्म में ३ प्रीति करनेवाला ४ नर ५ अंतःकरण शुद्धिद्वारा भगवत्प्रसादसे + मोक्षको ६ प्राप्त होताहै ७ अपने कर्ममें निरन्तर प्रीतिकरने वाला ८ मोक्षको ९ जैसे १० प्राप्त होताहै ११ सो १२ सुन १३ ॥ ४५ ॥

यतःप्रवृत्तिर्भूतानांयेनसर्वमिदंततम् ॥ स्वकर्मणातमभ्यर्च्यसिद्धिंविन्दतिमानवः ॥ ४६ ॥

यतः १ भूतानाम् २ प्रवृत्तिः ३ येन ४ इदम् ५ सर्वम् ६ ततम् ७ तम् ८ स्वकर्मणा ९ अभ्यर्च्य १० मानवः ११ सिद्धिम् १२ विन्दति १३ ॥ ४६ ॥ + उ० + आधे मंत्रमें तटस्थलक्षण ईश्वरका कह फिर आधे श्लोकमें उसी की भक्ति करनेका फल कहते हैं + अ० + जिससे १ भूतोंकी २ प्रवृत्ति ३ अर्थात् जिस

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

की सत्तासे सब जगत् चेष्टा करताहै और+जिस करके ४ यह ५ सर्व ६ जगत् +व्याप्त ७ होरहाहै+ तिस अन्तर्यामी ईश्वरको ८ अपने कर्म करके ९ अर्थात् अपने कर्मसे आराधन करके १० प्राणी ११ अन्तःकरणशुद्धिद्वारा उसी अन्तर्यामी की कृपासे ज्ञाननिष्ठहोकर + परमानन्दस्वरूप आत्माको १२ प्राप्त होता है १३ तात्पर्य समस्त जगत् में आनन्द पूर्ण होरहा है कोई पदार्थ ऐसा नहीं कि जिसमें आनन्द न हो और वह आनन्दही साक्षात् भगवत् का स्वरूप है जिस की तनकसी छायामें त्रिलोकी आनन्दहै ॥ ४६ ॥

श्रेयान्स्वधर्मोविगुणःपरधर्मात्स्वनुष्ठितात् ॥ स्वभावनियतंकर्मकुर्वन्नाप्नोतिकिल्बिषम् ॥ ४७ ॥

स्वनुष्ठितात् १ परधर्मात् २ स्वधर्मः ३ विगुणः ४ श्रेयान् ५ स्वभावनियतम् ६ कर्म ७ कुर्वन् ८ किल्बिषम् ९ न १० आप्नोति ११ ॥ ४७ ॥ + उ० + अपने धर्ममें अवगुण समझकर पराये धर्मका जो अनुष्ठान करते हैं उनको पाप होताहै अर्थात् जो प्रवृत्तिधर्म के योग्यहैं वे निवृत्तिधर्म को श्रेष्ठ समझकर जो निवृत्ति धर्म अनुष्ठान किया चाहें तो अन्तःकरण में रजोगुण तमोगुणभर रहने से निवृत्तिधर्मका अनुष्ठान कब होसक्ता है प्रवृत्तिधर्म को भी छोड़कर दोनों ओरसे भ्रष्ट होजाते हैं और जो निवृत्तिधर्म के योग्यहैं वे कुसंगके वशसे वा और किसी संस्कार से अपने धर्म को छोड़ प्रवृत्तिधर्म का अनुष्ठान करेंगे तो फिर गईहुई रजोगुणी तमोगुणी वृत्ति उसके अन्तःकरण में प्रवेश होजावेगी इसीको पाप कहते हैं इस वास्ते अपनेही धर्मका अनुष्ठान करना चाहिये + अ० + सुन्दर १ पराये धर्मसे २ अपना धर्म ३ गुणरहित ४ भी + श्रेष्ठ ५ अपने गुणके अनुसार जिसका नियम किया गयाहै उस कर्मको ६ । ७ करता हुआ ८ पापको ९ नहीं १० प्राप्त होता ११ तात्पर्य जैसे विषमें रहनेवाला जीव विष खाकर नहीं मरता इसी प्रकार अपने गुणके अनुसार कर्म करताहुआ बन्धको नहीं प्राप्त होता मेवा तस्मैका भोजन बहुत सुन्दर है परन्तु ज्वरवाले के कामका नहीं ॥ ४७ ॥

सहजंकर्मकौन्तेयसदोषमपिनत्यजेत् ॥ सर्वारम्भाहिदोषेणधूमेनाग्निरिवावृताः ॥ ४८ ॥

कौंतेय १ सहजम् २ कर्म ३ सदोषम् ४ अपि ५ न ६ त्यजेत् ७ सर्वारंभाः ८ हि ९ दोषेण १० आवृताः ११ धूमेन १२ अग्निः १३ इव १४ ॥ ४८ ॥ +

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

उ० + कोई कर्म शुभ अशुभ ऐसा नहीं कि जिसमें कुछ दोष न हो इसवास्ते + अ० + हे अर्जुन ! १ स्वभावके अनुसार जो गुण अपने में प्रधान हो सत्त्व वा रज वा तम वैसेही कर्म्म शमादि वा परिचर्या युद्ध कृषि आदि कर्म २ । ३ दोष सहित ४ भी ५ है परन्तु यावत् अन्तःकरण शुद्ध न हो तावत् उनको + नहीं ६ त्यागना ७ समस्त कर्म्म ८ । ९ किसी न किसी + दोष करके १० मिलेहुयेहैं ११ धूम करके १२ अग्नि १३ जैसे १४ गुण दोषका फूल कांटे की तरह संग है बुद्धिमान् को चाहिये कि धर्म में कांटेवत् दोषपर दृष्टि न दे गुणग्राही रहे ॥ ४८ ॥

असक्तबुद्धिःसर्वत्रजितात्माविगतस्पृहः ॥ नैष्कर्म्यसिद्धिंपरमांसंन्यासेनाधिगच्छति ॥ ४९ ॥

सर्वत्र १ असक्तबुद्धिः २ जितात्मा ३ विगतस्पृहः ४ परमाम् ५ नैष्कर्म्यसिद्धिम् ६ संन्यासेन ७ अधिगच्छति ८ ॥ ४९ ॥ + उ० + इसप्रकार कर्म करे + अ० + सर्व्वत्र शुभ अशुभ पाप पुण्य जनक किसी कर्म्म में १ जिसकी बुद्धि आसक्त नहीं २ जीता हुआ है कार्य्य कारण संघात जिसका ३ दूर होगई है इसलोक परलोक के पदार्थों की इच्छा जिसकी ४ सो + परम ५ निष्कामता के अवधिको ६ सब त्याग करके ७ प्राप्त होताहै ८ तात्पर्य्य आनन्दस्वरूप आत्मा निष्क्रियकी प्राप्ति सब पदार्थों के त्याग करने से होती है सिवाय आनन्दस्वरूप आत्मा के किसी के पंथ मत सम्प्रदाय में आसक्त नहीं होना यही परमसिद्धि है ॥ ४९ ॥

सिद्धिंप्राप्तोयथाब्रह्म तथाप्नोतिनिबोधमे ॥ समासेनैवकौन्तेयनिष्ठाज्ञानस्ययापरा ॥ ५० ॥

यथा १ सिद्धिम् २ प्राप्तः ३ ब्रह्म ४ आप्नोति ५ तथा ६ कौंतेय ७ या ८ ज्ञानस्य ९ परा १० निष्ठा ११ समासेन १२ एव १३ मे १४ निबोध १५ ॥ ५० ॥ + उ० + परानिष्ठा ज्ञानकी श्रीभगवान् अब आगे पांच श्लोकों में कहेंगे इस वास्ते अर्जुन को सम्बोधन करके कहते हैं कि हे कौंतेय ! चैतन्यहो चित्तको एकाग्र कर परम सिद्धान्त को सुन + जैसे १ सब कर्म्मों का यथा अधिकार अनुष्ठान करके और उनका फल त्याग करके नैष्कर्म्य की + सिद्धिको २ प्राप्त हुआ ३ ब्रह्मको ४ प्राप्त होताहै ५ तैसे ६ हे अर्जुन ! ७ जो ८ ज्ञानकी ९ परा १० निष्ठा ११ है सो + संक्षेप से १२ ही १३ मुझ से सुन १४ ॥ ५० ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalaka...

बुद्ध्याविशुद्धयायुक्तो धृत्यात्मानंनियम्यच ॥
शब्दादीन्विषयांस्त्यक्त्वारागद्वेषौव्युदस्यच ॥५१॥

विशुद्धया १ बुद्ध्या २ युक्तः ३ च ४ धृत्या ५ आत्मानम् ६ नियम्य ७ शब्दादीन् ८ विषयान् ९ त्यक्त्वा १० च ११ रागद्वेषौ १२ व्युदस्य १३ ॥ ५१ ॥ + उ० + सोई ज्ञान की परानिष्ठा श्रीभगवान् कहते हैं + अ० + सतोगुणी बुद्धि करके युक्त १।२।३ और ४ सतोगुणी + धृति करके ५ कार्य्य कारण संघातको ६ निरोधकर ७ शब्दादि विषयों को ८। ९ त्याग करके १० और ११ रागद्वेषको १२ दूरकरके १३ ब्रह्मको प्राप्त होताहै तीसरे श्लोकके साथ इसका सम्बन्ध है तात्पर्य्य शब्दादि के त्याग में देहयात्रामात्र क्रियाका निषेध नहीं शरीरका निरोध यहहै कि शौच स्नानादि समय तो अवश्य उठना रात्रिके बीचमें डेढ़प्रहर सोना सिवाय इसके एकजगह एकान्त आसनपर विना आश्रय सीधा बैठकर आत्मा का ध्यान करना चाहिये संन्यासी एक जगह जो न रहैं तो चार गौकोस से सिवाय न चलैं ॥ ५१ ॥

विविक्तसेवीलघ्वाशीयतवाक्कायमानसः ॥ ध्यानयोगपरोनित्यंवैराग्यंसमुपाश्रितः ॥ ५२ ॥

विविक्तसेवी १ लघ्वाशी २ यतवाक्कायमानसः ३ नित्यम् ४ ध्यानयोगपरः ५ वैराग्यम् ६ समुपाश्रितः ७ ॥ ५२ ॥ अ० + वन जंगल पहाड़ नदी के किनारे इत्यादि देशमें कि जिसजगह स्त्री चोर बालक मूर्ख सिंह सर्पादिका भय संबन्ध न हो ऐसे देशके सेवनकरनेका स्वभावहै जिसका १ ऐसाहो + दोभाग अन्नकरके और एक भाग जल करके पूर्णकरे और एक भाग श्वासके आने जाने के लिये अवशेष खाली रक्खे तात्पर्य थोड़ीसी क्षुधा बनी रहै अर्थात् कम भोजन करने का स्वभाव है जिसका उसको लघ्वाशी कहते हैं २ जीते हुयेहैं वाक् शरीर मन जिसके अर्थात् जो लक्षण सत्रहवें अध्याय में सतोगुणी तपका लिखाहै उसीप्रकार वर्तते हैं ३ आत्मध्यानयोगको अर्थात् निदिध्यासन को परात्पर जानकर + नित्य ४ ध्यानयोगपरायण रहतेहैं ५ नित्यशब्द कहनेका यह तात्पर्य है कि पढ़ना पढ़ाना जप पाठादि कर्मोंका त्याग चाहिये ज्ञाननिष्ठको + वैराग्यका ६ बहुत अच्छीतरह आश्रय कर रक्खा है ७ सिवाय परमानन्द स्वरूप आत्मा के यावत् पदार्थ इस लोक परलोकके देखे सुने हैं सबको अनित्य दुःखदायी अनात्म धर्म

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

वाला जानकर किसी में न कुछ प्रीति करता है न द्वेष करता है परम ज्ञाननिष्ठ का यह लक्षण है ॥ ५२॥

अहंकारंबलंदर्पंकामंक्रोधंपरिग्रहम् ॥ विमुच्य निर्ममःशान्तोब्रह्मभूयायकल्पते ॥ ५३ ॥

अहंकारम् १ बलम् २ दर्पम् ३ कामम् ४ क्रोधम् ५ परिग्रहम् ६ विमुच्य ७ निर्ममः ८ शान्तः ९ ब्रह्मभूयाय १० कल्पते ११ ॥ ५३ ॥ अ० + देहादिमें अहंबुद्धि अर्थात् हम विरक्त संन्यासी ब्राह्मण जगत् के गुरु श्रीमान् विद्यावाले हैं ऐसा ऐसा अहङ्कार १ + बल से किसी का बुरा भला करना विद्याके बलसे दूसरे का मत खण्डन करना २ विद्या विरक्त धन ऐश्वर्यादि का मनमें गर्व रखना ३ इस लोक परलोक के पदार्थों की इच्छा ४ नास्तिकादिके साथ द्वेष ५ देहयात्रा से सिवाय संचय करना ६ जो ऊपर कहे इन सब अहङ्कारादि को मन से त्याग कर ७ संन्यासादि धर्म और अद्वैतवादमतादि में + ममतारहित ८ भूतादि कालकी चिंतारहित ९ पुरुष + ब्रह्म को १० प्राप्तवत् मानकर यह कहा जाता है कि ब्रह्मको प्राप्त होता है वास्तव ब्रह्म सदा एकरस है ॥ ५३ ॥

ब्रह्मभूतःप्रसन्नात्मानशोचतिनकांक्षति ॥ समः सर्वेषुभूतेषुमद्भक्तिंलभतेपराम् ॥ ५४ ॥

ब्रह्मभूतः १ प्रसन्नात्मा २ न ३ शोचति ४ न ५ कांक्षति ६ सर्वेषु ७ भूतेषु ८ समः ९ पराम् १० मद्भक्तिम् ११ लभते १२ ॥ ५४ ॥ उ० + ब्रह्मको जो प्राप्त होताहै उसका फल निरूपण करतेहैं दो श्लोकों में + अ० + ब्रह्मस्वरूप हुआ १ प्रसन्नचित्त है जिसका २ सो बीतीहुई बातों का + नहीं ३ शोचकरता है ४ आगे को कुछ नहीं ५ चाहताहै ६ सब भूतों में ७ । ८ सम ९ है जो श्रीभगवान् कहतेहैं कि वह मेरी पराभक्ति को १० । ११ प्राप्त होताहै १२ सातवें अध्याय में चार प्रकार की भक्ति कही है चारों में जो पीछे परे कही उसको पराभक्ति कहते हैं ज्ञानकी परानिष्ठा कही वा पराभक्ति कही बात एकही है इस जगह पाषाणादि मूर्त्तियों का पूजनादि और रामकृष्णादि सावयव मूर्त्तिमान् भगवत् की भक्ति इस जगह भक्ति नहीं ज्ञाननिष्ठा का नाम यहां भक्ति है यह पराभक्ति फल है और सेवा पूजादि साधनहैं प्रकरण देखकर अर्थ समझना चाहिये इस अध्याय में पचासके श्लोकमें श्रीभगवान्ने स्पष्ट कहाहै कि हे अर्ज्जुन ! ज्ञानकी परानिष्ठा

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection

मुझ से सुन और वह प्रकरण अब तक समाप्त नहीं हुआ पचपन के श्लोक में समाप्त होगा वहां तक ज्ञाननिष्ठा का वर्णन है ॥ ५४॥

भक्त्यामामभिजानाति यावान्यश्चास्मितत्त्वतः॥
ततोमांतत्त्वतोज्ञात्वाविशतेतदनन्तरम् ॥ ५५ ॥

तत्त्वतः १ यावान् २ च ३ यः ४ अस्मि ५ माम् ६ भक्त्या ७ अभिजानाति ८ ततः ९ तत्त्वतः १० माम् ११ ज्ञात्वा १२ तदनन्तरम् १३ विशते १४॥५५॥उ०+ श्रीभगवान् कहते हैं कि जो मेरी यथार्थ स्वरूप है वह इसी ज्ञाननिष्ठा से कि जो पीछे चार श्लोकोंमें कही जाना जाताहै और सब वेद विधि इसका साधनहै + अ० + वास्तव १ जैसा २ और ३ जो ४ हूं मैं ५ वैसा + मुझ को ६ ज्ञान-लक्षणा + भक्तिकरके ७ भलेप्रकार जानताहै ८ पीछे उसके ९ अर्थात् + यथार्थ १० मुझको ११ जानकर १२ फिर १३ मुझमेंही + मिल जाताहै १४ तात्पर्य जैसे परमानन्दस्वरूप आत्मा उपाधिसहित और उपाधिरहित है सो ज्ञाननिष्ठा से ही जाना जाता है जो आत्माका जानना वही उस में मिलनाहै पहिले जानना और पीछे उसमें मिलना यह एक बोली की रीतिहै ब्रह्म का जाननेवाला ब्रह्म स्वरूप ही है यह वेदार्थ है ॥ ५५ ॥

सर्वकर्माण्यपिसदाकुर्वाणोमद्व्यपाश्रयः ॥
त्प्रसादादवाप्नोतिशाश्वतंपदमव्ययम् ॥ ५६ ॥

सदा १ सर्वकर्माणि २ मद्व्यपाश्रयः ३ कुर्वाणः ४ अपि ५ मत्प्रसादात् ६ अव्ययम् ७ शाश्वतम् ८ पदम् ९ अवाप्नोति १०॥ ५६ ॥ उ० + ज्ञाननिष्ठा भगवत्की कृपासे प्राप्त होतीहै जब प्रथम वेदोक्त निष्काम कर्म करे वह परमपद का मार्ग श्रीभगवान् दिखाते हैं + अ० + सदा १ सब कर्मों को २ मुझ भगवत् का आश्रयलेकर ३ करता हुआ ४ निश्चय ५ भगवत्प्रसाद से ६ निर्विकार नित्यपदको ७। ८। ९ प्राप्त होताहै १० तात्पर्य प्रभुको आश्रय लेकर यथाशक्ति देशकाल वस्तुके अनुसार निष्काम कर्म करना चाहिये विना आश्रय कर्मों का निर्वाह कठिन है और इस समय में तो सिवाय परमेश्वर के और किसी कर्म धर्म का भरोसा नहीं केवल उसी करुणाकर की कृपासे सब अनर्थ दूर होसक्ते हैं और परमपद परमानन्द स्वरूप आत्माकी प्राप्ति होनी उसी की कृपाका फल समझना चाहिये अकृत उपासकको ज्ञाननिष्ठाका कभी परिपाक नहीं होता॥५६॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

चेतसासर्वकर्माणिमयिसंन्यस्यमत्परः ॥ बुद्धि योगमुपाश्रित्यमच्चित्तःसततंभव ॥ ५७ ॥

मत्परः १ चेतसा २ सर्वकर्माणि ३ अपि ४ संन्यस्य ५ बुद्धियोगम् ६ उपाश्रित्य ७ सततम् ८ मच्चित्तः ९ भव १० ॥ ५७ ॥ अ० + मुझमें परायण होकर १ चित्त २ सब कर्मोंको ३ मेरे विषय ४ त्याग करके ५ और + ज्ञानयोग को ६ आश्रय करके ७ सदा ८ मुझमें चित्तवाला ९ हो १० अर्थात् तेरा चित्त सदा मुझमें ही लगा रहै ऐसाही तात्पर्य यह कि सब धर्म कर्म वास्ते अन्तःकरण की शुद्धिके हैं जिसका अन्तःकरण शुद्ध होजाताहै उसपर परमेश्वर प्रसन्न होते हैं तब ज्ञानमें निष्ठा होती है फिर उस ज्ञाननिष्ठा के परिपाकार्थ कर्मोंका त्याग अवश्यहै यह प्रभुकी आज्ञाहै प्रभुकी आज्ञासे कर्मोंका त्याग करना यही प्रभुमें कर्मोंका संन्यास करना कर्मोंका संन्यास करके फिर निरन्तर भक्ति करनी चाहिये ज्ञानयोग का आश्रय यह है कि हरिभक्ति से मुझको ज्ञाननिष्ठा अवश्य प्राप्त होगी ऐसे ज्ञाननिष्ठाकी आशा रखनी यही ज्ञानयोगका आश्रय करनाहै इस प्रकरण में यही अर्थ है ज्ञानयोग को आश्रय करनेका ॥ ५७ ॥

मच्चित्तःसर्वदुर्गाणिमत्प्रसादात्तरिष्यसि ॥ अथ चेत्त्वमहंकारान्नश्रोष्यसिविनंक्ष्यसि ॥ ५८ ॥

मच्चित्तः १ सर्वदुर्गाणि २ मत्प्रसादात् ३ तरिष्यसि ४ अथ ५ चेत् ६ त्वं ७ अहंकारात् ८ न ९ श्रोष्यसि १० विनंक्ष्यसि ११ ॥ ५८ ॥ अ० + मुझमें चित्त लगाकर १ सब दुर्गमों को २ मेरे प्रसादसे ३ तरजायगा तू ४ और ५ जो ६ तू ७ अहंकार से ८ नहीं ९ सुनेगा १० नाश होजायगा तू ११ तात्पर्य परमेश्वर मोक्षमार्ग का सुगम उपाय अपनी भक्ति बताते हैं जो वर्णाश्रम के अहंकार से भक्तिका आदर न करेंगे तो उनका पुरुषार्थ भ्रष्ट होजायगा विना प्रसाद प्रभुके अपने मतलबको न पहुँचेंगे हरिकी कृपा ऐसा पदार्थ है कि कैसा ही कठिन पदार्थ हो भगवद्भक्त को सुलभ होजाताहै भगवान्की आज्ञा माननी यही भक्तिहै चतुरता का भक्तिमें कुछ काम नहीं ॥ ५८ ॥

यदहंकारमाश्रित्यनयोत्स्यइतिमन्यसे ॥ मिथ्यैवव्यवसायस्तेप्रकृतिस्त्वांनियोक्ष्यति ॥ ५९ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

यत् १ अहंकारम् २ आश्रित्य ३ इति ४ मन्यसे ५ न ६ योत्स्ये ७ ते ८ एष ९ व्यवसायः १० मिथ्या ११ प्रकृतिः १२ त्वाम् १३ नियोक्ष्यति १४॥ ५९॥ अ०+जिस अहंकार को १। २ आश्रय करके ३ यह ४ तू मानताहै ५ कि+नहीं ६ युद्धकरूंगा मैं ७ तेरा ८ यह ९ निश्चय १० झूठा ११ है तेरा स्वभाव १२ तुझसे १३ युद्ध करावैगा १४ तात्पर्य जिसका जो धर्म है उसको उसीका अनुष्ठान करनाचाहिये अन्यधर्म का अनुष्ठान उससे नहीं होसकेगा जैसे अर्जुन क्षत्रियहै भिक्षा मांगनी उससे कठिनहै क्योंकि क्षत्रियमें रजोगुण प्रधान होता है वह शूरतादि धर्म मेंही प्रेरताहै और वही अन्तःकरणकी शुद्धिका हेतुहै॥ ५९॥

स्वभावजेनकौन्तेयनिबद्धःस्वेनकर्मणा। कर्तुंनेच्छसियन्मोहात्करिष्यस्यवशोऽपितत्॥ ६०॥

कौन्तेय १ स्वभावजेन २ स्वेन ३ कर्मणा ४ निबद्धः ५ यत् ६ कर्तुम् ७ न ८ इच्छसि ९ मोहात् १० अवशः ११ तत् १२ अपि १३ करिष्यसि १४॥ ६०॥ अ०+हे अर्जुन! १ स्वाभाविक २ अपने ३ कर्म्म करके ४ बँधा हुआ ५ जो ६ युद्ध+करने को ७ नहीं ८ इच्छा करताहै तू ९ अविवेकसे १० अवशहुआ ११ सोई १२। १३ युद्ध+करेगा तू १४ तात्पर्य्य इस समय तेरे अन्तःकरणमें सतोगुणी वृत्तिका आविर्भाव होरहा है कि जिससे तुझको दया आरही है युद्ध अच्छा नहीं लगता भिक्षा मांगना प्रिय प्रतीत होताहै जब यह वृत्ति तिरोभाव होगी रजोगुणी वृत्ति कि जो विशेष करके तेरे अन्तःकरण में प्रधान रहती है उसका जब आविर्भाव होगा उससमय यह दया तेरी सब जाती रहैगी रजोगुण के वश होकर अवश्य युद्ध करेगा तू॥ ६०॥

ईश्वरःसर्वभूतानांहृद्देशेऽर्जुनतिष्ठति॥ भ्रामयन्सर्वभूतानियन्त्रारूढानिमायया॥ ६१॥

अर्जुन १ ईश्वरः २ सर्व्वभूतानाम् ३ हृद्देशे ४ तिष्ठति ५ सर्व्वभूतानि ६ मायया ७ भ्रामयन् ८ यन्त्रारूढानि ९॥ ६१॥ उ०+प्रकृति के वश जीव है और प्रकृति ईश्वर के वशहै सोई कहते हैं कि+अ०+हे अर्जुन! १ ईश्वर २ सब भूतों के ३ हृदयमें ४ विराजमान है ५ सब भूतोंको ६ माया करके ७ भ्रमा रहाहै ८ कैसे हैं वे भूत कि जैसे+यन्त्रमें आरूढ़ अर्थात् कलमें लगीहुई पुतली को बाजीगर खिलारी नचाताहै तात्पर्य्य जीव स्वतन्त्र नहीं शास्त्रमार्गको छोड़

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

अपनी बुद्धि से बुरे भले कर्मों को नहीं जानसक्ता श्रुति स्मृति ही ईश्वरकी आज्ञा हैं जो दोनों को सत्य समझकर वेदोक्त मार्ग पर चलता रहेगा उसको ईश्वर सब बखेड़ों से छुड़ाकर परमानन्द प्राप्त कर देंगे और जो अपनी चतुराई चलावेगा वह बेसंदेह धोखा खावेगा ॥ ६१ ॥

तमेवशरणंगच्छसर्वभावेनभारत ॥ तत्प्रसादात्परांशांतिंस्थानंप्राप्स्यसिशाश्वतम् ॥ ६२ ॥

भारत १ सर्वभावेन २ तम् ३ एव ४ शरणम् ५ गच्छ ६ तत्प्रसादात् ७ परा- म् ८ शांतिम् ९ शाश्वतम् १० स्थानम् ११ प्राप्स्यसि १२ ॥ ६२ ॥ उ० + जब कि जीव स्वतन्त्र नहीं तो उसको अवश्य परमेश्वर का आश्रय चाहिये इस हेतु से हे अर्जुन! तू भी परमेश्वरकी शरण ले + अ + हे अर्जुन! १ सब भाव करके २ अर्थात् तन मन धन करके + तिस ३ ही ४ रक्षा करनेवाले को ५ प्राप्त हो ६ अर्थात् उसी अन्तर्यामी की शरण हो + उन अन्तर्यामी के प्रसादसे ७ परम शान्ति को ८।९ और + नित्य स्थान को १०।११ प्राप्त होगा तू १२ ॥ ६२ ॥

इतितेज्ञानमाख्यातंगुह्याद्गुह्यतरंमया ॥ विमृश्यैतदशेषेणयथेच्छसितथाकुरु ॥ ६३ ॥

इति १ मया २ गुह्यात् ३ गुह्यतरम् ४ ज्ञानम् ५ आख्यातम् ६ ते ७ एतत् ८ अशेषेण ९ विमृश्य १० यथा ११ इच्छसि १२ तथा १३ कुरु १४ ॥ ६३ ॥ अ० + यह १ मैंने २ गुप्त से ३ अतिगुप्त ४ ज्ञान ५ कहा ६ तुझसे ७ इस ८ समस्तको ९ विचार करके १० जैसी ११ तेरी इच्छा हो १२ तैसाकर १३ । १४ तात्पर्य्य ग्रन्थको आदि से अन्तलों भलेप्रकार विचारना चाहिये तब ग्रन्थ का तात्पर्य्य प्रतीत होता है दो चार पत्र वा दो चार अध्याय के विचारने से वक्ता का तात्पर्य नहीं जाना जाता है प्रत्युत मूर्ख लोग पूर्वपक्ष को सिद्धान्त समझ बैठते हैं क्योंकि बहुत जगह पूर्वपक्ष कई २ पत्रों से होता है इसी हेतु से साधनों को सिद्धान्त समझ बैठते हैं बहुत लोग ॥ ६३ ॥

सर्वगुह्यतमंभूयःशृणुमेपरमंवचः ॥ इष्टोऽसिमेदृढमितिततोवक्ष्यामितेहितम् ॥ ६४ ॥

सर्वगुह्यतमम् १ मे २ परमम् ३ वचः ४ भूयः ५ शृणु ६ इति ७ दृढम् ८ मे ९

CC-0. Digitized by eGangotri

इष्टः १० असि ११ ततः १२ ते १३ हितम् १४ वक्ष्यामि १५ ॥ ६४ ॥ उ० + जो तुझ से समस्त गीताशास्त्र का विचार न होसके इस वास्ते मैं ही समस्त गीता का सार दो श्लोकों में कहता हूं तू मेरा प्यारा है तेरे हित के वास्ते वारंवार कहवाहूं + अ० + प्रथम तो कर्ममार्ग ही बतलाना गुप्त है और भक्तिमार्ग उससे भी गुप्ततर है और ज्ञाननिष्ठा सब से गुप्ततमहै ऐसे गुप्ततम १ मेरे २ परं ३ वचन को ४ फिर ५ सुन ६ अत्यन्त ७ । ८ मेरा ९ प्यारा १० है तू ११ इस वास्ते १२ तेरे १३ हित के लिये १४ कहूंगा १५ ॥ ६४ ॥

मन्मनाभवमद्भक्तोमद्याजीमांनमस्कुरु ॥ मामेवैष्यसिसत्यंतेप्रतिजानेप्रियोऽसिमे ॥ ६५ ॥

मन्मना १ मद्भक्तः २ मद्याजी ३ भव ४ मत् ५ नमस्कुरु ६ माम् ७ एव ८ एष्यसि ९ ते १० सत्यम् ११ प्रतिजाने १२ मे १३ प्रियः १४ असि १५ ॥ ६५ ॥ उ० + इस मंत्र में कर्मनिष्ठाका सार कहते हैं + अ० + मुझमें मनवाला १ हो अर्थात् मुझ परमेश्वर में मनलगा और + मेराभक्त २ हो अर्थात् मेरी भक्तिकर और + मेरा पूजन करनेवाला ३ हो तू ४ अर्थात् मेरा पूजनकर और + मुझको ५ नमस्कार कर ६ मुझको ७ ही ८ प्राप्त होगा ९ तुझ से १० सत्य ११ प्रतिज्ञा करताहूं मैं १२ मेरा १३ प्यारा १४ है तू १५ तात्पर्य ज्ञाननिष्ठा का साधन कर्मनिष्ठाहै कर्मों में भगवद्भक्ति सारहै सो दो प्रकार की है अन्तरंग बहिरंग नमस्कार पूजनादि बहिरंगहै भगवत्में मन लगाना आदि अन्तरंग यावत् परमेश्वरके स्वरूप में भले प्रकार मनन लगे तावत् अष्ट मंत्रों का जप भगवद्भक्तों की सेवा शास्त्रको श्रवण करता रहै यद्यपि ज्ञानके साधन बहुत हैं परन्तु सबमें ये तीन सार हैं भगवद्भक्ति साधुसेवा शास्त्र का श्रवण और तीनों में भी साधुसेवा सार है कि जिस के प्रतापसे सब साधन हो जाते हैं ये तीनों साधन सुगम प्रत्यक्ष फल देने वाले हैं और इस समय में इनका ही अनुष्ठान हो सक्ता है यज्ञादि कर्म और वर्णाश्रम विहित धर्म का अनुष्ठान होना कठिन है साधुसेवादि साधनों में जो प्रतिबन्ध है सो दिखाते हैं बहुत जीव भगवत् से विमुख तो इस वास्ते हैं कि निराकार एकरस नित्यमुक्त शुद्ध सच्चिदानन्द स्वरूप भगवत् का तो उनकी समझ में नहीं आता दुराग्रह अश्रद्धा मन्दभाग्य कम समझ से और राम कृष्णादि साकार भगवत् रूप को मनुष्य समझते हैं और उस स्वरूप में नाना प्रकार की तर्क करते हैं भगवद्भक्ति में यही प्रतिबन्ध है यावत् भगवत् का स्वरूप शुद्ध सच्चिदानन्द नित्य-

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

मुक्त शास्त्र की रीतिपूर्वक समझ में न आवे तावत् मूर्त्तिमान् ईश्वर की उपासना आवश्यक है और शास्त्र के श्रवण से इस हेतु से विमुख हैं कि ब्रह्मविद्या वेदांत शास्त्र उपनिषद् सांख्य पातंजलादि शास्त्र तो उनकी समझ में आते नहीं प्रत्युत बहुत लोग यह भी नहीं जानते कि उन पोथियों में क्या बात है और रामायण महाभारत श्रीमद्भागवतादि ग्रन्थों को कहानी बताते हैं उन ग्रन्थों के तात्पर्य को इतना तो समझतेही नहीं कि जैसे समुद्रमेंसे एक बूंद जल होता है यावत् वेदान्त शास्त्रका अर्थ भलेप्रकार समझ में न आवे तावत् महाभारतादि ग्रन्थों को श्रवण करनाचाहिये और साधुसेवासे इसवास्ते विमुखहैं कि साधुको कम जाति और वे विद्या वे स्वरूप जानकर सच्ची सेवा साधुओंकी नहींकरते अनेक मान बड़ाई अहंकारादिमें फँसे रहते हैं जैसे आप रहते हैं साधुओंको भी अपनीही सदृश जानते हैं मन्दभाग होनेसे उनके शुभकर्म पूजा पाठ जप शमदमादि वैराग्य विद्यापर दृष्टि नहीं जाती गुण देखने की आंखों से अंधे हैं कुकर्मों से कौवे कीसी दृष्टि उनकी हो रही है और एक बड़ा आश्चर्य यहहै कि साधुको तो वेदोक्त निर्दोष तलाश करते हैं और जो पुत्र मित्रादि में हजारोंदोष भरे हुये हैं उनको मोक्षका साधन समझते हैं मूर्ख यह नहीं समझते कि निर्दोष महात्मा निर्दोषों को ही मिलते हैं मुझ से निर्भागोंको दर्शन भी नहीं देते और बहुत लोग ऐसी साधुसेवा करते हैं कि जहांतक उनसे हो सके साधुओं की बुराई करनी और साधुओं को दुःखदेना इसी को मोक्षका साधन समझते हैं तात्पर्य इस समयमें साधु बहुत हैं हंस कीसी चाल जिनकी है उनको दीखते हैं और जिनकी कौवे कीसी दृष्टि है उनको न कभी साधु मिलेंगे न शास्त्रार्थ इनकीसमझमें आवेगा न भगवद्भक्ति उनसे हो सकेगी जैसे माता अपने पुत्रके मुखपर दुष्टों की दृष्टि बचने के लिये स्याही की बिन्दी लगा देती है इसी प्रकार जो कदाचित् किसी साधु में कोई दोष अपने दोषसे प्रतीत हो तो उस दोष को स्याही की बिन्दीवत् समझना चाहिये भगवद्भक्त भगवान् के पुत्रकी सदृश हैं ॥ ६५ ॥

सर्वधर्मान्परित्यज्यमामेकंशरणंव्रज ॥ अहंत्वां सर्वपापेभ्योमोक्षयिष्यामिमाशुच ॥ ६६ ॥

सर्वधर्मान् १ परित्यज्य २ माम् ३ एकम् ४ शरणम् ५ व्रज ६ अहम् ७ त्वाम् ८ सर्वपापेभ्यः ९ मोक्षयिष्यामि १० माशुच ११ ॥ ६६ ॥ उ० + समस्त गीता में कर्म्मनिष्ठा और ज्ञाननिष्ठा का वर्णन है कर्मनिष्ठा का सा-

CC-0. Digitized by eGangotri. Kanpur

र्थ तो पिछले मन्त्र में कहा अब ज्ञाननिष्ठा का सारसंक्षेप इस मन्त्र में कहते हैं + अ० + सब धर्मों को १ त्यागकर २ मुझ एक शरणको ३।४।५ प्राप्त हो ६ मैं ७ तुझको ८ सब पापों से ९ छुड़ाऊंगा १० मत शोचकर ११ तात्पर्य्य शरीर इन्द्रिय प्राण अन्तःकरण के जो जो धर्महैं उन सब धर्मों को त्याग कर जो आश्रय लेना चाहिये सो कहते हैं शरण और एक, ये दोनों मैं शब्द के विशेषण हैं, शरणं ग्रहरक्षित्रोरित्यमरः अमरकोश में शरणका अर्थ ग्रह अर्थात् आश्रय और रक्षा करनेवाला ये दो अर्थ हैं श्रीभगवान् कहते हैं कि मुझको प्राप्त हो कैसाहूं मैं कि, एक अर्थात् अद्वैत, कभी किसी काल में जिस में दूसरा नहीं और फिर कैसा हूं मैं कि आश्रय शरण हूं का स्त्री करनेवाला हूं द्वितीयाद्वैभयंभवति दूसरे से अवश्य भय होता है यह वेदने कहा है इस वास्ते तू अद्वैत प्राप्तहो वह रक्षा करनेवालाहै वहां भय नहीं वही आश्रयहै इस मन्त्र का तात्पर्य्य वेसन्देह अभेद में है और कहने सुननेमें इसका तात्पर्य्यार्थ भेद में प्रतीत होताहै जहांतक वाणी है तहांतक व्यवहारिक द्वैत है परमार्थ में द्वैत नहीं सिवाय इसके अक्षरार्थ से भी इस श्लोकका अर्थ अद्वैत विषय है सो भी सुनो अहम् शब्द और माम् शब्द ये दोनों अस्मत् शब्दके प्रयोग हैं श्रीभगवान् स्पष्ट कहते हैं कि अहम् यह शब्द अर्थात् केवल माया अविद्यारहित शुद्ध अहङ्कार अर्थात् अहम्ब्रह्मास्मि यह महावाक्यार्थ यह निष्ठा तुझको संसार से छुड़ावेगी शरीरादि के जो धर्म उनके त्याग में मत शोचकर यह अर्थ गीताभाष्य में बहुत विस्तारपूर्व्वक सिद्धान्त अभेद अद्वैत ज्ञाननिष्ठा में किया है क्योंकि सब धर्मोंका त्याग धर्मनिष्ठ से नहीं होसक्ता ज्ञानी से ही होसक्ता है व्याकरणकी रीतिसे युष्मत् अस्मत् शब्दों के अर्थको और शब्द धर्म्म अर्थ धर्म्मको जो समझते हैं—वे ॥ माम् ॥ अहम् ॥ त्वाम् ॥ त्वम् ॥ इन शब्दोंके अर्थको समझेंगे और जो किसी को यह हठ और निश्चयहै कि इस मन्त्र का अर्थभी भेदमें है तो उसको उचित है कि कहेहुये का अनुष्ठान करे हमको भगवद्भक्ति से विरोध नहीं भेदवादी को यदि ज्ञाननिष्ठा से विरोध है उसमें भी हमको लाभ है क्योंकि अज्ञानी बना रहेगा तो सेवा करेगा ज्ञानी बन बैठेगा तो हमको क्या लाभ होगा ज्ञाननिष्ठाका उपदेश तो दूसरे के लाभार्थ है श्रद्धा करो वा मत करो ॥ अश्रद्धावान्को ज्ञानका उपदेश करना निषेध करते हैं श्रीभगवान् ॥६६॥ टी० + पांच श्लोकोंका अर्थ अन्यप्रकार दूसरे ढंगसे लिखते हैं उस रीतिसे अर्थ शीघ्र समझमें आवेगा पण्डित शङ्करलाल विष्णुनागर ब्राह्मण की बेटी बीबी जानकीने समस्त गीताका अर्थ

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

उसी रीतसे लिखा है उस टीकाका नाम जानकीविनिर्मिता प्रसिद्ध है ॥ ६६ ॥

१ + २ । ४ + ३ । ५ + ६ । ७ १०८ + ९

इदन्तेनातपस्कायनाभक्तायकदाचन ॥ नचाशु

। ११ । १६ । १२ । ३४ । १३ । १५

श्रूषवेचाच्यंनचमांयोऽभ्यसूयति ॥ ६७ ॥

	वि०	प०		अ०	
१	१	इदम्	१	यः	१
				गीता शास्त्र	+
६	१	ते	२	तुमने	२
४	१	अतपस्काय	३	जिसके तप न हो उस बहिर्मुख को	३
अ		न	४	नहीं	४
				सुनाना चाहिये	+
अ		न	५	न	५
४	१	अभक्ताय	६	अभक्त को	६
				जो गुरु भगवत् का	+
				भक्त नहो उसको	+
	अ	कदाचन्	७	कभी	७
				सुनाना न चाहिये	
	अ	च	८	और	८
				जो	+
४	१	अशुश्रूषवे	९	शुश्रूषा टहल न करे अथवा जिसको उसकी सुनने की इच्छा न हो	९
	अ	न	१०	नहीं	१०
	१	वाच्यम्	११	कहना योग्य है	११
				अर्थात् पूर्वोक्तों को सुनाना न चाहिये	+
अ		च	१२	और	१२
१	१	यः	१३	जो	१३

टी० जो मूढ़ के अनधिकारी कहे गये इस टीका के अनधिकारी हैं ॥ ६७ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar

१	१	माम्	१४	मुझको	१५
				अर्थात् मेरा	+
क	१	अभ्यसूयति	१५	निन्दा करता है	१५
				उसको भी	+
अ		न	१६	नहीं	१६
				सुनाना योग्य है यह मेरी आज्ञा है	+

उ० तपस्वी भक्त शुश्रूषु जिज्ञासु निन्दारहित इस गीताशास्त्र के पढ़ने सुनने के अधिकारी हैं ऐसे अधिकारियों को जो यह गीता पढ़ाते सुनाते हैं उनकी महिमा दो श्लोकों में कहते हैं ॥ ६७॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

१। २। ३। ४। ५। +

यइमम्परमंगुह्यमद्भक्तेष्वभिधास्यति॥ भक्तिंमयि

८। १०। ११ व १२ व १३। १४

परांकृत्वामामेवैष्यत्यसंशयः॥ ६८॥

	वि०	पं०		अ०	
१	१	यः	१	जो	१
२	७	इमम्	२	इस	२
३	३	परमम्	३	परम	३
२	१	गुह्यम्	४	गुन	४
७	ब	मद्भक्तेषु	६	मेरे भक्तों के विषय	५
क	१	अभिधास्यति	६	धारण करावेगा	६
				अर्थात् गीता का अर्थ भलेप्रकार प्रेम पूर्वक विना लोभ जो भगवद्भक्तों को समझावेगा सो	+
७	१	मयि	७	मुझमें	७
२	१	परमि	८	परा	८
२	१	भक्तिम्	९	भक्ति	९
क	१	कृत्वा	१०	करके	१०
२	१	माम्	११	मुझको	११
अ		एव	१२	ही	१२
क	१	एष्यति	१३	प्राप्त होगा	१३
१	१	असंशयः	१४	नहीं है संशय इसमें	१४

टी० तात्पर्य गीताशास्त्रको जो पढ़ाते हैं वे परमभक्त महानुभाव हैं॥ ६८॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mi

७। ३ ० + ६। २ + ४। ६
नचतस्मान्मनुष्येषुकश्चिन्मेप्रियकृत्तमः ॥ भ
८। १३। १०। ९ + ११। १२। १।
विताऽनचमेतस्मादन्यःप्रियतरोभुवि ॥ ६९ ॥

	वि०	प०	१	अ०	
७	१	भुवि	१	पृथिवी के ऊपर	१
अ		कश्चित्	२	कोई	२
५	१	तस्मात्	३	तिससे	३
				अर्थात् गीता पढ़ानेवाले से	
				सिवाय	+
६	१	मे	४	मुझको	४
१	१	प्रियकृत्तमः	५	अत्यन्त प्रसन्न करनेवाला	५
७	ब	मनुष्येषु	६	मनुष्यों में	६
अ		नच	७	नहीं	७
क	१	भविता	८	है	८
				और	+
५	१	तस्मात्	९	तिससे	९
				अर्थात् गीता पढ़ानेवाले से	+
६	७	मे	१०	मुझको	१०
१	१	अन्यः	११	दूसरा अन्य	११
१	२	प्रियतरः	१२	प्यारा विशेष	१२
अ		नच	१३	नहीं	१३

टी० तात्पर्य जो गीताका अर्थ जानते हैं उनको कुछ कर्त्तव्य नहीं वेदकी विधि उनपर है उनको इस श्लोक के पदार्थों की इच्छा भी नहीं ऐसे जो महात्मा किसी को विना प्रयोजन दुःख विक्षेप सहकर गीताशास्त्र पढ़ावें सुनावें तो वेसन्देह उनसे सिवाय परमेश्वर को और कौन प्यारा लगेगा ऐसे महात्मा भगवत् का नित्य अवतार कहलाते हैं ॥ ६९ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

६ । ७।१।२ । ३ । ५ + ४ ६

अध्येष्यतेचयइमंधर्म्यंसंवादमावयोः ॥ ज्ञान

१८+१०+११।१२+ । १३।१४।१५।

यज्ञेनतेनाहमिष्टःस्यामितिमेमतिः ॥ ७० ॥

	वि०	प०		अ०	
१		यः	१	जो	१
२	१	इमम्	२	इस	२
२	२	धर्म्यम्	३	धर्म के मिलेहुये	३
६	२	आवयोः	४	मेरे और तेरे	४
२	१	संवादम्	५	संवादको	५
क्रि	१	अध्येष्यते	६	पढ़ेगा	६
अ		च	७		७
३	१	तेन	८	तिसने	८
३	१	ज्ञानयज्ञेन	९	ज्ञानयज्ञ से	९
				मुझको प्रसन्न किया अर्थात् जैसा ज्ञानयज्ञ से मैं प्रसन्न होता हूं वैसे गीता पढ़नेवाले से	+
१	१	अहम्	१०	मैं	१०
१	१	इष्टः	११	प्रसन्न	११
क्रि	१	स्याम्	१२	होता हूं	१२
अ		इति	१३	यह	१३
६	१	मे	१४	मेरी	१४
१	१	मतिः	१५	समझ	१५
				है	+

टी० चकारः पादपूर्णार्थम् ७ तात्पर्य चतुर्थ अध्याय में बारह यज्ञ प्रभुने कहे सब यज्ञों से ज्ञानयज्ञको बड़ा कहा क्योंकि ज्ञान में सब कर्म्म की समाप्ति है

CC-0. Digitized by eGangotri

गीताको जो पढ़ते हैं उनके कर्म भी सफल होजाते हैं गीताका पढ़ना पाठकरना यही सबसे बड़ाकर्म है इसी एक शुभकर्म से भगवत् पूजा कियेगये होकर प्रसन्न होजाते हैं॥ ७० ॥

प्र० + जो गीताशास्त्र को श्रवण करते हैं उनकी स्तुति श्रीमहाराज अपने मुखसे करते हैं ॥

५+ ४+ ३। ६+ ७।१।२। ८।९।

श्रद्धावाननसूयश्चशृणुयादपियोनरः ॥ सोऽपि

१०। ११+ १३+ १४ १५

मुक्तःशुभाँल्लोकान्प्राप्नुयात्पुण्यकर्मणाम् ॥७१॥

	नि०	प०		अ०	
१	१	नः	१	जो	१
२	१	नरः	२	पुरुष	२
अ		च	३		३
१	१	अनसूयः	४	निन्दारहित	४
१	१	श्रद्धावान्	५	श्रद्धासहित	५
[illegible]	१	शृणुयात्	६	सुने	६
अ		अपि	७	भी	७
१	१	सः	८	सो	८
अ		अपि	९	भी	९
		—		सब झगड़ों से	+
१	१	मुक्तः	१०	छूट	१०
६	ब	पुण्यकर्मणाम्	११	धर्मात्माओं के	११
२	ब	शुभान्	१२	शुभलोकों को	१२
२	ब	लोकान्	१३		१३
क	१	प्राप्नुयात्	१४	प्राप्तहोगा	१४

टी० चकारः पादपूर्णार्थम् ३ ॥ ७१ ॥

कच्चिदेतच्छ्रुतंपार्थ त्वयैकाग्रेणचेतसा ॥ कच्चिद

ज्ञानसंमोहःप्रणष्टस्तेधनञ्जय ॥ ७२ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

पार्थ १ त्वया २ एकाग्रेण ३ चेतसा ४ कच्चित् ५ एतत् ६ श्रुतम् ७ प्रनष्टम् ८ ते ९ अज्ञानसंमोहः १० कच्चित् ११ प्रणष्टः १२ ॥ ७२ ॥ उ० + परम करुणा की खानि श्रीभगवान् अर्जुनसे इस श्लोकमें यह पूछते हैं कि हे अर्जुन ! इस उपदेश से तुम्हारा अज्ञान नाशहुआ वा नहीं जो अज्ञान नाश न हुआहो तो फिर दूसरे प्रकार से उपदेश करूं यह अपनी कृपा और आचार्यों का धर्म दिखाया है जबतक शिष्यका अज्ञान दूर न हो तबतक गुरुको चाहिये कि फिर बारंबार दूसरे प्रकारसे उपदेश करें यह आचार्योंका धर्म है + अ० + हे अर्जुन ! १ तुमने २ एकाग्र १ चित्त करके ४ कुछ ५ यह ६ कि जो मैंने उपदेश किया + सुना ७ अर्थात् तुम्हारी समझ में आया वा नहीं + आवृत्तिरस तुम्हारा ९ तत्त्वज्ञानका विपर्यय वा अज्ञानसंमोह १० कुछ ११ नाशहुआ १२ वा नहीं + आवृत्तिरसकृदुपदेशात् शारीरकभाष्य का यह सूत्रहै तात्पर्य इसका यह कि जबतक अज्ञान भले प्रकार नाश न हो तबतक बारंबार वेदान्तशास्त्रका श्रवणकरे मननकरे से अज्ञान मननसे संशय निदिध्यासनसे विपर्ययका नाश होताहै ॥ ७२ ॥

अर्जुन उवाच ॥ नष्टोमोहःस्मृतिर्लब्धात्वत्प्रसादान्मयाऽच्युत ॥ स्थितोऽस्मिगतसन्देहःकरिष्येवचनंतव ॥ ७३ ॥

अच्युत १ त्वत्प्रसादात् २ मोहः ३ नष्टः ४ मया ५ स्मृतिः ६ लब्धा ७ गतसन्देहः ८ स्थितः ९ अस्मि १० तव ११ वचनम् १२ करिष्ये १३ ॥ ७३ ॥ उ० + अज्ञान संशय विपर्ययरहित कृतार्थ हुआ अर्जुन श्रीभगवान् से कहता है कि आपकी कृपासे मेरा अज्ञान और संशय विपर्यय असंभावना विपरीत भावना प्रमाणगत प्रमेयगत सब नाशहुये और आपकी कृपा से मैं कृतकृत्य हुआ अब मुझको कुछ करनेके योग्य नहीं मैं अक्रिय असंगहूं + अ० + हे अविनाशी ! १ आपकी कृपासे २ मोह ३ मेरा + नाश ४ हुआ और + मुझको ५ अपने स्वरूप की + स्मृति ६ प्राप्तहुई ७ अब + सन्देहरहित ८ स्थित ९ हूं मैं १० आपके ११ वचनको १२ करूंगा १३ ॥ टी० + चौथे अध्याय में अर्जुनने कहाथा कि आपका जन्म तो अब हुआहै और इस जगह अविनाशी कहा यह ज्ञानका प्रतापहै १ मूलाज्ञान समस्त संसारकी जड़ २ स्मरण याद ६ क्रमसमझ यह समझतेहैं कि अर्जुनने यह कहा कि आपके वचनको करूंगा अर्थात् युद्ध करूंगा और विद्वान् यह समझते

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Coll

हैं कि अर्जुन ने यह कहा कि आपका वचन करूंगा अर्थात् जो आपने कहा उसी प्रकार अनुष्ठान करूंगा अर्थात् जो आपने कहा मुझको कुछ कर्त्तव्य नहीं यह युद्धादि ज्ञानियों की दृष्टिमें है इस आपके उपदेश का अनुष्ठान करूंगा जो अर्जुन को कुछ युद्धादि कर्त्तव्यरहा तो कृतकृत्य का अर्थ क्या किया जावेगा ॥ ७३ ॥

सञ्जयउवाच ॥ इत्यहंवासुदेवस्यपार्थस्यचमहात्मनः ॥ संवादमिममश्रौषमद्भुतंरोमहर्षणम् ॥ ७४॥

इति १ वासुदेवस्य २ महात्मनः ३ पार्थस्य ४ च ५ इमम् ६ अद्भुतम् ७ रोमहर्षणम् ८ संवादम् ९ अहम् १० अश्रौषम् ११ ॥ ७४ ॥ + अ० + संजय धृतराष्ट्र से कहताहै कि + अ० + इस प्रकार १ श्रीकृष्णचन्द्र २ महात्मा ३ और अर्जुन को ४ । ५ यह ६ अद्भुत ७ रोमका हर्ष करने वाला ८ संवाद ९ मैंने १० सुना ११ ॥ ७४ ॥

व्यासप्रसादाच्छ्रुतवानेतद्गुह्यमहंपरम् ॥ योगं योगेश्वरात्कृष्णात्साक्षात्कथयतःस्वयम् ॥ ७५ ॥

एतत् १ परम् २ योगम् ३ गुह्यम् ४ स्वयम् ५ साक्षात् ६ कथयतः ७ योगेश्वरात् ८ कृष्णात् ९ व्यासप्रसादात् १० श्रुतवान् ११ अहम् १२ ॥ ७५ ॥ + अ० + यह १ परम् २ योग ३ गुप्त ४ आप ५ साक्षात् ६ कहते हुये ७ योगेश्वर ८ श्रीकृष्णचन्द्र महाराज से ९ व्यासजी के प्रसादसे १० सुना ११ मैंने १२ तात्पर्य यह ब्रह्मविद्या परमयोगहै और गुप्तहै महात्मा इसको गुप्त रखते हैं साधनचतुष्टय सम्पन्नसे कहते हैं पहले यह विद्या ब्रह्मलोक में ही थी मुनीश्वरों ने तप करके इस लोकमें इस विद्या का प्रचार कियाहै ब्रह्मविद्याने आकाश में आनकर मुनीश्वरों से यह कहा कि मर्त्यलोकमें तब आऊंगी मैं कि जब तुम मुझको पुत्री की सदृश समझ कर अधिकारी को दो मुनीश्वरों ने यह वाक्य अंगीकार किया तब ब्रह्मविद्या इसलोक में आई सिवाय इस द्वीपके और किसी द्वीपमें नहीं और सिवाय ब्रह्मलोक के और किसी लोकमें नहीं जो इसविद्या को लालच या आशा से अनधिकारीको पढ़ाते सुनाते हैं वे अधम हैं क्योंकि कंगालभी अपनी पुत्री अनधिकारीको नहीं देता जो पुरुष लालचसे सीखते हैं इस विद्याको सो विद्या भोगके लिये है मुक्तिके लिये नहीं जैसे वर्णसङ्कर पुत्र इसीलोक की शोभाहै ॥ ७५ ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

राजन्संस्मृत्यसंस्मृत्यसंवादमिममद्भुतम् ॥ केशवार्जुनयोःपुण्यंहृष्यामिचमुहुर्मुहुः ॥ ७६ ॥

राजन् १ इदम् २ केशवार्जुनयोः ३ पुण्यम् ४ अद्भुतम् ५ संवादम् ६ संस्मृत्य ७ पुनः ८ संस्मृत्य ९ मुहुर्मुहुः १० हृष्यामि ११ ॥ ७६ ॥ + अ० + हे राजन्! १ इस २ केशव अर्जुन के ३ पुण्यरूप ४ अद्भुत ५ संवाद को ६ स्मरण करके ७ फिर स्मरण करके ९ वारंवार १० आनन्द होताहूं मैं ११ तात्पर्य हे राजन्! श्री कृष्णचन्द्र अर्जुन का यह संवाद पुण्यरूपहै इसके श्रवणमात्रसे पुण्य होताहै इस वास्ते मुझको वारंवार आनन्द होताहै स्मरण करनेसे परमानन्द होताहै ॥ ७६ ॥

तच्चसंस्मृत्यसंस्मृत्यरूपमत्यद्भुतंहरेः ॥ विस्मयोमेमहान्राजन्हृष्यामिचपुनःपुनः ॥ ७७ ॥

तत् १ हरेः २ संस्मृत्य ३ अद्भुतम् ३ रूपम् ४ संस्मृत्य ५ च ६ संस्मृत्य ७ मे ८ महान् ९ विस्मयः १० ११ राजन् १२ पुनः १३ पुनः १४ हृष्यामि १५ ॥ ७७ ॥ + अ० + तिस १ श्रीमहाराजके २ अति अद्भुत ३ रूपको ४ अर्थात् विश्वरूपको + स्मरण करके ५ फिर ६ स्मरण करके ७ मुझको ८ बड़ा आश्चर्य १० होताहै + और ११ हे राजन्! १२ क्षण क्षण प्रति १३।१४ हर्षित होताहूं १५ तात्पर्य हे राजन्! वह अद्भुत विश्वरूप श्रीमहाराजका मुझको वारंवार याद आताहै और उसका जब मैं ध्यान करताहूं मेरे रोम खड़े होजातेहैं मुझको बड़ा आनन्द होताहै वह रूप बड़ा आश्चर्यित है ॥ ७७ ॥

यत्रयोगेश्वरःकृष्णोयत्रपार्थोधनुर्धरः ॥ तत्रश्रीर्विजयोभूतिर्ध्रुवानीतिर्मतिर्मम ॥ ७८ ॥

यत्र १ योगेश्वरः २ कृष्णः ३ यत्र ४ धनुर्धरः ५ पार्थः ६ तत्र ७ श्रीः ८ विजयः ९ भूतिः १० नीतिः ११ ध्रुवा १२ मम १३ मतिः १४ ॥ ७८ ॥ + अ० + जिस सेनामें ४ धनुषधारी ५ अर्जुन ६ हैं + उसी सेना में ७ लक्ष्मी ८ विजय ९ ऐश्वर्य १० न्याय ११ है यह + मेरी १२ निश्चय १३ मति १४ है + तात्पर्य संजय धृतराष्ट्रसे कहताहै कि हे राजन्! तुम्हारे पुत्रोंकी जय न होगी अपनी विजयकी आशा छोड़ो जिसतरफ श्रीकृष्णचन्द्र महाराजहैं उनकी विजय होगी

CC-0. Digitized by eGangotri. K

जिनकर्म कोटि श्रीभगवान् की है वे सदा इसलोक और परलोक में परमानन्द भोगते हैं यह सिद्धान्त है ॥ ७८ ॥

इति श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सुब्रह्मविद्यायांयोगशास्त्रेश्रीकृष्णार्जुनसंवादे मोक्षसंन्यासयोगोनामाष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥

समस्तगीता का सार सम्मति का मंगलाचरण ॥

परमानन्द परमात्मा जीव आत्मा से अभिन्न है परमानन्द की इच्छा वाला सदा परमानन्द की उपासना किया करे परमानन्दमें सबका सम्मत है ब्रह्मवादी ज्ञानी उपासक कर्मी विषयी बालक मूर्ख पशु सब मतवाले पंथायी सम्प्रदायी दिन रात्रि आनन्द के लिये यत्न करते हैं सर्व कर्म बुरे भले ईश्वर के भजन तक सब की बोली से साधन हैं और आनन्द फल हैं सब यह कहते हैं कि हम बात में बड़ा आनन्द है कि जो हम कहते हैं करते हैं इस हेतुसे आनन्द सबसे बड़ा और परात्पर पदार्थ है सबको प्रिय है किसी का आनन्द से वैर नहीं बात भी वही सच है कि जिसको विद्वान् श्रुतियुक्तिसहित कहें और अनुभव समझ में आवे बहुत लोग तो ऐसा कहते हैं कि वह बेत वेदशास्त्रमें तो लिखी है परन्तु समझ में नहीं आती इस वास्ते उनको निश्चय नहीं होता सबका अनुष्ठान करने में मन कच्चा रहता है और बहुत लोग ऐसा कहते हैं कि वह बात समझ में तो आवे हैं परन्तु वेदविरुद्ध है इस वास्ते वह बात अच्छी नहीं समझी जाती इस जगह वह बात लिखी जाती है कि जो वेदोक्त भी हो और अनुभव समझमें भी आवे जिस आनन्द के वास्ते सब यत्न करते हैं वह आनन्द अपना आपा आत्मा ही है और सदा प्राप्त है अज्ञान से कण्ठभूषणवत् उसको अप्राप्त अपने से जुदा मान कर उसकी प्राप्ति के लिये नानाप्रकार के लौकिक वैदिक यत्न करते हैं जो वह अज्ञान जाता रहै तो आनन्द सदा प्राप्तहै यह बात विद्वान् वेदोक्त कहते हैं परंतु यह बात किसी किसीकी समझ में रजोगुण तमोगुण प्रधान होने से नहीं आती उस रजोगुण तमोगुण दूरहोने के लिये उनका कारण अज्ञानका स्वरूप सुनो अज्ञान सत्त्व रज तम तीन गुणोंवाला है संसार में स्थूल सूक्ष्म जितने पदार्थ हैं सब इन तीनगुणोंका कार्य हैं परमानन्द इन तीनगुणोंसे परे है देवता मनुष्य पशुआदि

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

इन तीनगुणों में मोहित होकर तमोगुणी रजोगुणी सतोगुणी आनन्द को जिस सुखका लक्षण अठारहवें अध्याय में ३७। ३८। ३९ के श्लोकों में निरूपण हुआ है बड़ा समझते हैं परमानन्द को नहीं जानते परमानन्द को ज्ञानी महापुरुष जानते हैं रजोगुणी आनन्द दो प्रकार का है अच्छा बुरा सावयव भगवत् मूर्त्ति वैकुण्ठ स्वर्गादि में जो आनन्द मानते हैं वह आनन्द अच्छा है लौकिक पदार्थों में जो आनन्द मानते हैं सो बुरा है कोई कोई मतवाले रजोगुणी आनन्द को ही परानन्द मानते हैं और कोई मतवाले सतोगुणी आनन्द को परे से परे मानते हैं तमोगुणी आनन्दको क्षणिक तुच्छ अल्प समझते हैं यह कहते हैं कि तमोगुणी आनन्द से परलोकसम्बन्धी रजोगुणी आनन्द अच्छा है इसीवास्ते उसको अच्छा कहते हैं इस बात में लौकिक वैदिक दोनों पुरुषों का सम्मत है और रजोगुणी आनन्द की अवधि को जो परेसे परे मानते हैं इस बात में केवल वैदिक मार्गवालों का सम्मत है यौक्तिक लोगोंका सम्मत नहीं है विशेषता आनन्द के दृष्टान्त से समझो तमोगुणी आनन्द रजोगुणी सतोगुणी परमानन्द जैसे तीन घड़ों में जल है एकमें मैला दूसरे में सामान्य करके दीखताहै तीसरे में भलेप्रकार दीखता है इसी तमोगुण में सुख प्रतीत नहीं होता रजोगुण में सामान्य करके प्रतीत होताहै सतोगुण में भलेप्रकार प्रतीत होताहै तीनोंगुण में दर्पण मुखवत् आनन्द की छाया प्रतीत होती है जिसकी वह छाया है वा[illegible] नन्द वही है सो नित्य है जितना जल निर्मल ठहरा हुआ होगा उतनाही मुख अच्छा दीखेगा इसीप्रकार जितनी अन्तःकरण की वृत्ति निर्मल और स्थिति होगी उतनाही सुख सिवाय प्रतीत होगा आनन्दकी प्राप्ति में अन्तःकरण की निर्मलता और स्थिति कारणहै कोई पदार्थ सावयव इसलोक परलोकका कारण नहीं वृत्ति पदार्थ के संबन्धसे भी स्थिति होती और विचार ज्ञानसे भी होती है परन्तु पदार्थ के सम्बन्धसे जो स्थिति होतीहै वह क्षण क्षणमें नाश होती रहतीहै इसहेतुसे पदार्थजन्यआनन्द क्षणिक है एकरस नहीं थोड़ी देर रहता है विचार ज्ञानयोग से जो वृत्ति स्थित होती है उसमें आनन्द ठहरताहै परमानन्दके ज्ञानसे जब मूल अज्ञान का नाश होजावे तब ये तीनों वृत्ति नाशहों फिर केवल परमानन्दकी प्राप्ति सदा को होजाती है इसी परमानन्द के वास्ते सब इसी लोक परलोक के झगड़े हैं समस्त वेद की विधि निषेध को विचार देखो सबका तात्पर्य दुःख की निवृत्ति और परमानन्दकी प्राप्तिमें है शरीर इन्द्रिय मनसे बुरे भले जितने कर्म यत्न और बिना यत्नके होते हैं सबमें दुःख सुखहै किसी में दुःख बहुत सुख थोड़ा किसी में

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra

सुख बहुत दुःख थोड़ा जिस कर्ममें ४९ भाग दुःखहै और ५१ भाग सुखहै वेदमें उसकी भी स्तुति है जिस कर्म में सुख बहुत है उसके आदि में दुःख तनकहै और पीछे सुख बहुतहै और जिस कर्ममें ५१ भाग दुःखहै और ४९ भाग सुखहै उसकी निन्दाहै जिस कर्ममें सुख कमहै उसके आदिमें ही सुख प्रतीत होता है अन्तमें दुःख होता है यह व्यवस्था यहांतकहै कि ९९ वा ९८ वा ९७ भाग किसी किसी कर्म में सुखहै १ वा २ वा ३ भाग दुःखहै और किसी किसी कर्म में ९९ व ९८ व ९७ भाग दुःखहै और १ वा २ वा ३ भाग सुखहै इसी प्रकार ६०।४०।७०।३०। ८०।२०।९०।१० इत्यादि भाग से कल्पना करलेनी परमानन्द पूर्णसुख एकरस है कर्म करने से वह नहीं प्राप्तहोता क्रियाके अभावमें प्राप्तहोता है जिस कर्म में ५१ भाग दुःखहै उसकी वेदमें किसी जगह स्तुतिहोगी और ५२ भागकी अपेक्षासे किसी जगह उसकी निन्दाहोगी इसीप्रकार परमानन्दकी अपेक्षासे सब कर्मोंकी निन्दाहै जब परमानन्द प्राप्तहै तो सतोगुणी सुख उसके सामने तुच्छहै और सतोगुणी सुखके सामने रजोगुणी सुख तुच्छहै रजोगुणी सुखके सामने तमोगुणी सुख तुच्छहै मूर्ख वेदों के तात्पर्यको न समझकर सिद्धान्त की श्रुतियोंका प्रमाण देदेकर मूर्त्तिमान् परमेश्वर श्रीकृष्णचन्द्रादि और पाषाणादि मूर्त्तियों की और तीर्थ व्रतोंकी निन्दा करने लगते हैं यह नहीं समझते कि यह उपदेश कैसे पुरुषों के लिये है आप तो मल मूत्रके पात्रों में सक्तहोकर नीचों के सामने बन्दर की नाईं नाचते हैं और पुत्र स्त्री मित्रादि के साथ ममता करके उनके लिये दिन रात्रि बेटी के बैलकी नाईं घूमते हैं वहां यह नहीं समझते कि इन अनित्य दुःखदायी दुर्गन्धरूप कुपात्रों के संबन्ध से मुझको क्या प्राप्त है बहुत जीव तो ज्ञाननिष्ठा की श्रुति स्मृतियों का अर्थ सीख सीख कर्मों की निन्दा करने लगते हैं और बहुत जीव ज्ञाननिष्ठाके महत्त्वको न जानकर अपनी मूर्खता से ज्ञाननिष्ठा और ज्ञानियों से वैर बांधकर दोनोंकी निन्दा करने लगते हैं यह सब निन्दक पापात्मा हुआ पाप और दुःखके भागी होते हैं उनसे अनजान अच्छे हैं सब मतवाले आपसमें लड़ते झगड़ते हैं जैसे होसके दूसरे की निन्दा न करै वेदान्त और ज्ञाननिष्ठा और भक्ति और वेदविधिका + जाननेवाला परमानन्द देवका उपासक नित्य निर्विकार परमानन्दको भोगताहै परमानन्ददेव के उपासकों से किसी से वैर नहीं क्योंकि सबको आनन्दका उपासक जानताहै वास्तव सबका इष्टदेव परमानन्ददेव है कर्म भक्ति ज्ञान ईश्वरादि ये उसके साधन हैं आनन्दका उपासक सब कर्मों में अपने इष्टदेव परमानन्दकोही देखताहै कोई कर्म ऐसा नहीं कि जिस

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

में कुछ आनन्द न हो और जो कोई कर्म करताहै वह यही समझकर करता है कि इसमें आनन्द मिलेगा यद्यपि कर्म से यथार्थ परमानन्द की प्राप्ति नहीं परन्तु जैसे मित्रकी सदृश अन्यको देखकर वा उसके एक अंशके सदृश देखकर वा उसकी छाया देखकर वा उसकी तसवीरको देखकर वा उसके वस्त्रादिको देख सुनकर उस वास्तव मित्रका स्मरण होताहै ऐसेही सब कोमें परमानन्ददेवके उपासक अपने इष्टदेव परमानन्दकाही स्मरण ध्यान करताहै सब विषयी मत वालों से उसका सम्बन्ध है जो कोई किसी मतवाला उससे बूझे कि तुम किसके उपासक हो तुम्हारा क्या मतहै परमानन्द का उपासक यह उत्तर देताहै जिसके तुम उपासक हो उसीका मैं हूं जो तुम्हारा मत इष्टदेव है वही मेरा भी इष्टदेव है फिर वे लोग अपने मत [illegible] राम कृष्णादि को बताते हैं सब परमानन्दका उपासक कहता है कि इष्ट फल होताहै साधन इष्ट नहीं होता जिस परमानन्द के लिये तुम भक्ति करतेहो वही परब्रह्म परमात्मा प्रभु तुम्हारा परमानन्द इष्टदेव सम्पूर्ण फलोंका दाता पीछे फलमें सम्मत होजावेगा तुम लोग मूर्खतासे परमानन्दको फल और ब्रह्म परात्पर न कहो इसप्रकार बालक और विषयी मूर्खों के साथ भी [illegible] प्रयत्नहै क्योंकि परमानन्द को सब चाहते हैं परमानन्द सबका उपास्यहै इस जगह परमानन्द अपने स्वामी इष्टदेवका निरूपण और माहात्म्य संक्षेप करके कहाहै आनन्दामृतवर्षिणी में और इस परमानन्दप्रकाशिका टीकामें भी किसी किसी जगह परमानन्द की प्राप्तिका साधन और कहीं साक्षात् परमानन्दका स्वरूप माहात्म्य निरूपण कियाहै आनन्दगिरिने पढ़ने सुनने वालोंको परमानन्दकी प्राप्तिहो—परमानन्दाय नमोनमः ॥

इति श्रीस्वामीआनन्दगिरिविरचितायां श्रीभगवद्गीतोपनिषत्टीकायां

अष्टादशोऽध्यायः १८ ॥

पदच्छेदःपदार्थोक्तिर्विग्रहोवाक्ययोजना ॥ आक्षेपस्यसमाधानंव्याख्यानम्पंचलक्षणम् ॥

इति ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

[illegible] अन्नादि [illegible]

[illegible] प्राणतहै ॥

[illegible])॥

पंचोली यमुनाशंकर [illegible] नागर [illegible] टीका सहित—जिसमें तैत्तिरीय शाखा के प्रकट होने का उद्[illegible] नियम व वर्णों के रूपबन्धरूप [illegible] हरण और स्वरमात्रा व वर्णों के उच्चारण की शिक्षा का [illegible] अर्थसाधन [illegible] संहिता की उपासना व बुद्धि व लक्ष्मी की काम [illegible] [illegible] नादि की क्रियायें वर्णित हैं ॥

[illegible] योपनिषद् [illegible]

[illegible] नागर ब्राह्म[illegible] [illegible] र प्राण व प्रणव [illegible] कासहित =)॥।

पंचोली यमुनाशंकर [illegible] अच्छेप्रकार भाषा टीका सहित—जिसमें आत्मा [illegible] ब्रह्मनरूपण [illegible] उपासना की व्याख्या व संन्यासादि [illegible] आश्रमों के लक्षण [illegible] र्णितहैं ॥

उपा[illegible])॥ पु०

मुण्डक, माण्डूक्य, तैत्तिरीय, ऐतरेय, श्वेताश्वतर, ईशावास्य, केन, प्रश्न, छांदोग्य, बृहदारण्यक, कौषीतकि, ब्राह्मण और मैत्री की भाषाटीका [illegible] विप्रसाद सितारौहन्द ने रचनाकर अपने पुत्र पौत्र मित्र बान्धव योग्य अधिकारियों के लिए छपवाया है ॥

निम्नलिखित पुस्तकें भी हेडपोस्टमास्टर लखनऊ बाबू जालिमसिंहकृत भाषाटीकासहित इस यन्त्रालय में फ़रोख़्त होती हैं ॥

(१) माण्डूक्योपनिषद् भाषा टीका -)॥ पु०
(२) केनोपनिषद् भाषा टीका =) पु०
(३) ईशावास्यउपनिषद् भाषा टीका -)॥ पु०
(४) ऐतरेयोपनिषद् भाषा टीका ≡) पु०
(५) प्रश्नोपनिषद् भाषा टीका ।-) पु०
(६) मुण्डकउपनिषद् भाषा टीका ।-) पु०
(७) तैत्तिरीयोपनिषद् भाषा टीका ॥) पु०
(८) कठवल्लीउपनिषद् भाषा टीका ।=) पु०
भगवद्गीता भाषा टीका १ भाग १=) पु०
तथा २ भाग १)
अष्टावक्रगीता भाषा टीका १।)

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

[illegible] कि यह पुस्तक [illegible] पुराण स्मृति [illegible]
र्य्यादि [illegible]भूत परमरहस्य गीताशास्त्र क[illegible] [illegible]त्वान सौशील्य विनयौ-
दार्य्य सत्यस[illegible] शौर्य्यादिगुणसम्पन्न [illegible]र महानुभाव अर्जुनको परम
अधिकारी जान के [illegible]वजनित मोहना[illegible] प्रकाश अपार संसारसिन्धुकी
भगवद्भक्तिमार्ग दृष्टिगोचर कराया है वहां [illegible]गवद्गीता वज्र [illegible] वेदान्त व योग
[illegible]रक्तान्तर्गत जिसको कि अच्छे २ शास्त्रवेत्ता [illegible] लोग अपनी बुद्धिसे पार नहीं पा-
सके हैं तब मन्दबुद्धि जिनको कि केवल देशभाषाही पठनपाठन करनेकी सामर्थ्य
है वह [illegible] इसके अन्तराभिप्राय को जान सक्ते हैं और यह [illegible] ही है कि जब
तक किसी पुस्तक अथवा किसी वस्तुका अन्तराभिप्राय [illegible] बुद्धि में न
भासित हो तबतक आनन्द क्योंकर [illegible] कारण सम्पूर्ण भारतवासी भ-
[illegible] रसिकजनों के चित्तानन्दार्थ व बुद्धिबोधार्थ सन्ततधर्मधुरीण
सकलवर्णाश्रमधुरीण सर्व्वविद्याविलासी भगवद्भक्त्यनुरागी श्रीमन्मुंशीनवल-
किशोरजी (सी आई ई) ने बहुतसा धन व्ययकर [illegible] निवासि पंडित
उमादत्तजी से इस मनोरञ्जन वेदवेदान्तशास्त्रोपरि पुस्तक को श्रीशंकराचार्य्य
निर्म्मित भाष्यानुसार संस्कृत से सरल देशभाषा में [illegible] नवलभाष्य
आख्यसे प्रभातकालिक कमलसरिस प्रफुल्लित करादिया है कि जिसको भाषा-
मात्र [illegible] जाननेवाले पुरुषभी जानसक्ते हैं ॥

[illegible] समय आया तो बहुतसे विद्वज्जन [illegible] की सम्मति से
[illegible] अमूल्य व अपूर्व्व ग्रन्थके भाष्य में अधिकतर उत्तमता
उस समयपर होगी कि इस शंकराचार्य्यकृत भाष्य भाषाके साथ इस ग्रन्थके टीका-
कारों की टीका [illegible] जितनी मिलें शामिल कीजावें जिसमें उन टीकाकारों के अ-
भिप्रायको भी बोध हो इसकारण से श्रीस्वामी शंकराचार्यजी के शंकरभाष्य का
तिलक व श्रीआनन्दगिरिकृत तिलक अरु श्रीधरस्वामिकृत तिलकभी मूलश्लो-
कोंसहित इस पुस्तक में उपस्थित है ॥

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

नागर
आहरण और
संहिताकी
और

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

सर्वविद्या
नरावत
राथ सह
नक्क
निग

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi

CC-0. Digitized by eGangotri. Kamalakar Mishra Collection, Varanasi